नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य आनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर-गुरुभ्यो नमः

सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

भाग 26



आगम १९-३२

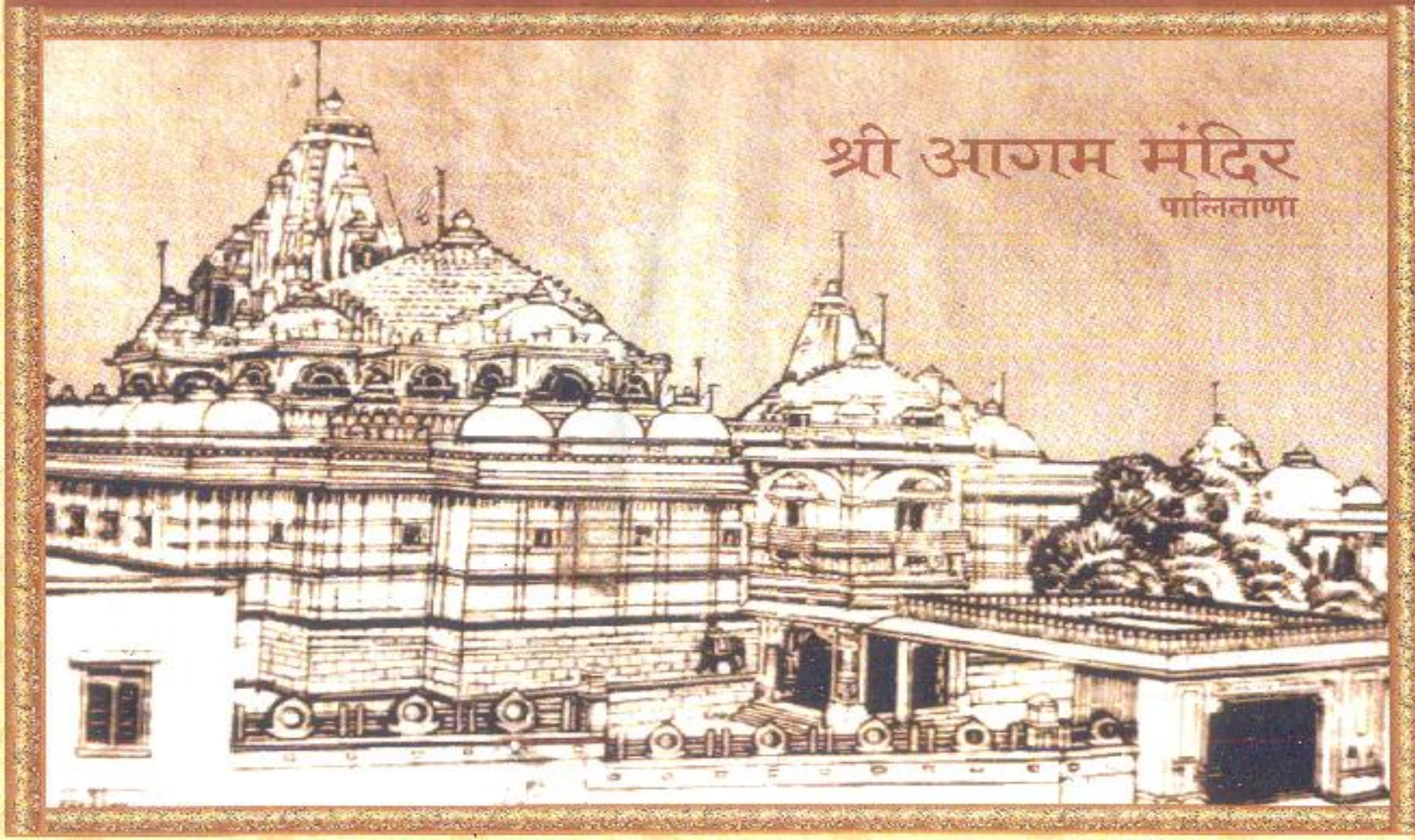
१९.निरयावलिका,२०.कल्पवतंसिका,२१.पुष्पिका,२२.पुष्पचूलिका,२३.वृष्णिदशा मूलं एवं चंद्रसूरिजी विरचिता वृत्तिः
२४.चतुःशरण,२५.आतुरप्रत्याख्यान,२६.महाप्रत्याख्यान,२७.भक्तपरिज्ञा,२८.तंदुलवैचारिक,२९.संस्तारक,
३०.गच्छाचार, ३१.गणिविज्जा,३२.देवेंद्रस्तव- मूलं एवं छाया

मूल संशोधक :- पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यश्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराजसाहेब

अभिनव-संकलनकर्ता :- आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

पूज्य शासनप्रभावक आचार्यश्री हर्षसागरसूरिजी की प्रेरणा से
'वर्धमान जैन आगम मंदिर संस्था' पालिताणा

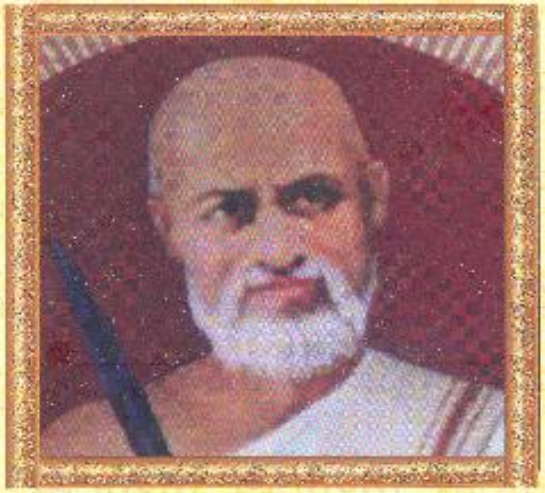
ईस प्रोजेक्ट के संपूर्ण-अनुदान-दाता



नमो नमो निम्मलदंसणस्स

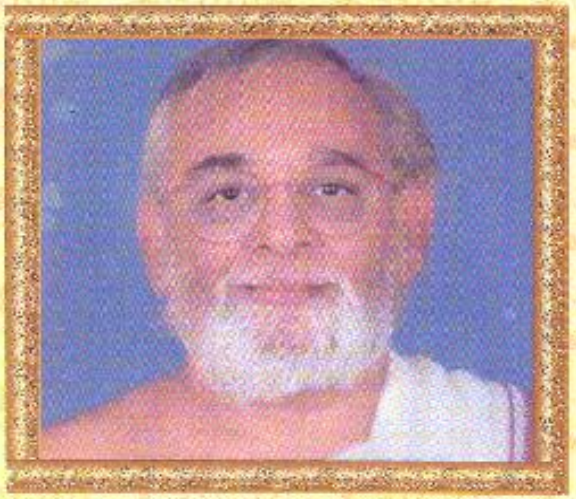
सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

मूल संशोधक



पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य
श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज

अभिनव-संकलनकर्ता



आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी
[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

प्रत-प्राप्ति और पेज-सेटिंग कर्ता : www.jainelibrary.org के चेरमन श्री प्रवीणभाई शाह, अमेरिका
मुद्रक : नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस अमदावाद Mo 9825598855 / 9825306275



आगम

वाचना शताब्दी वर्ष

[भाग-२६] श्री निरयावलिका-आदि (उपांगसूत्राणि १९-२३)
श्री चतु:शरण-आदि (९ प्रकीर्णकसूत्राणि २४-३२)

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

१९.निरयावलिका,२०.कल्पवतंसिका,२१.पुष्पिका,२२.पुष्प्चूलिका,२३.वृष्णिदशा मूलं एवं चंद्रसूरिजी विरचिता वृत्ति:
२४.चतु:शरण,२५.आतुरप्रत्याख्यान,२६.महाप्रत्याख्यान,२७.भक्तपरिज्ञा,२८.तंदुल-वैचारिक,२९.संस्तारक,३०.गच्छाचार,३१.गणिविज्जा,३२.देवेंद्रस्तव- मूलं एवं छाया

[आद्य संपादकश्री]

पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

पुन: संकलनकर्ता→ **मुनि दीपरत्नसागर** (M.Com., M.Ed., Ph.D.,श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५ 'सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि' श्रेणि भाग-२६

श्री आगमोद्धारक-वाचना-शताब्दी-वर्ष-निमित्त 'आगम-वृत्ति-मुद्रण-प्रोजेक्ट'

सामाचारी-संरक्षक, ज्ञानधनी, आगम-संशोधक, तीव्र-मेधावी, समाधिमृत्यु-प्राप्त, बहुमुखीप्रतिभाधारक

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

◆ जिन्होने शुद्ध-श्रद्धा, सम्यक्-श्रुत आराधना, यथाख्यातचारित्र के प्रति गति और अंत समय देह-ममत्व के त्याग के द्वारा कायोत्सर्ग नामक अभ्यंतर-तप कि मिशाल कायम कि है ऐसे बहुश्रुत आचार्य श्री सागरानंदसूरीश्वरजी महाराज का परिचय कराना मेरे लिए नामुमकिन है, फ़िर भी गुरुभक्ति बुद्धि से श्रद्धांजली स्वरुप एक मामुली सी झलक पैस करने का यह प्रयास मात्र है |

◆ चारित्र-ग्रहण के बाद अल्प कालमे जो अपने गुरुदेव की छत्रछाया से दूर हो गये, तो भी गुरुदेव के स्वर्ग-गमन को सिर्फ़ कर्मो का प्रभाव मानकर अपने संयम के लक्ष्य प्रति स्थिर रहते हुए अकेले ज्ञान-मार्ग कि साधना के पथ पर चले | पढाई के लिए ही कितने महिनो तक रोज एकासणा तप के साथ बारह किल्लोमिटर पैदल विहार भी किया | लेकिन अपने मंझिल पे डटे रहे, और परिणाम स्वरुप संस्कृत एवं प्राकृत भाषा का, प्राचीन लिपिओ का, व्याकरण-न्याय-साहित्य आदि का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया | जैन आगमशास्त्रो के समुद्र को भी पार कर गए|

◆ एक अकेला आदमी भी क्या नहीं कर शकता? इस प्रश्न का उत्तर हमें इस महापुरुष के जीवन और कवन से मिल गया, जब वे चल पड़े देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण के स्थापित पथ पर. बिना किसी सहाय लिए हुए सिर्फ अकेले ही "जैन-आगम-शास्त्रो" को दीर्घजीवी बनाने के लिए अनेक हस्तप्रतो से शुद्ध-पाठ तैयार किये | दो वैकल्पिक आगम, कल्पसूत्र और निर्युक्तिओ को जोड़कर ४५ आगम-शास्त्रो को संशोधित कर के संपादित किया | फिर पालीताणामें आगम मंदिर बनवाकर आरस-पत्थर के ऊपर ये सभी आगम-साहित्य को कंडारा, सूरतमें ताम्रपत्र पर भी अंकित करवाए और "आगम मंजूषा" नाम से मुद्रण भी करवा के बड़ी बड़ी पेटीमें रखवा के गाँव गाँव भेज दिए | वर्तमानकालमे सर्व प्रथमबार ऐसा कार्य हुआ |

◆ सिर्फ मूल आगम के कार्य से ही उन के कदम रुके नही थे, उन्होंने आगमो की वृत्ति, चूर्णि, निर्युक्ति, अवचूरी, संस्कृत-छाया आदि का भी संशोधन-सम्पादन किया | उपयोगी विषयो के लिए उन्होंने एक लाख श्लोक प्रमाण संस्कृत-प्राकृत नए ग्रंथो की रचना भी की | कितने ही ग्रंथो की प्रस्तावना भी लिखी | ये सम्यक्-श्रुत मुद्रित करवाने के लिए आगमोदय समिति, देवचंद लालभाई इत्यादि विभिन्न संस्था की स्थापना भी की |

◆ ज्ञानमार्ग के अलावा सम्मेतशिखर, अंतरीक्षजी, केशरियाजी आदि तीर्थरक्षा कर के सम्यक-दर्शन-आराधना का परिचय भी दिया | राजाओं को प्रतिबोध कर के और वाचनाओ द्वारा अपनी प्रवचन-प्रभावकता भी उजागर करवाई | बालदिक्षा, देवद्रव्य-संरक्षण, तिथि-प्रश्न इत्यादि विषयोमे सत्य-पक्षमें अंत तक दृढ़ रहे | जैनशासन के लिए जब जरुरत पड़ी तब अदालती कारवाईंओ का सामना भी बड़ी निडरता से किया था |

◆ सागरानंदजी के नाम से मशहूर हो चुके पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजीने अपने परिवार स्वरुप ८७० साधू-साध्वीजी भी शासन को भेट किये |

...ये थे हमारे गुरुदेव "सागरजी"... *.....मुनि दीपरत्नसागर...*

संयमैकलक्षी, उपधान-तप-प्रेरक, चारित्र-मार्ग-रागी, प्रवचन-पटु, सुपरिवार-युक्त

पूज्य गच्छाधिपतिआचार्यदेव श्री देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

*** परमपूज्य आचार्यश्री आनंदसागरसूरीश्वरजी के पाट-परंपरामे हुए तिसरे गच्छाधिपति थे पूज्य आचार्य श्री देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी, जो एक पून्यवान् आत्मा थे, दीक्षा ग्रहण के बाद अल्पकालमे ही एक शिष्य के गुरु बन गये | फ़िर क्या ! शिष्यो कि संख्या बढती चली, बढ़ते हुए पुन्य के साथ-साथ वे आखिर 'गच्छाधिपति' पद पे आरूढ़ हो गए | इस महात्मा का पुन्य सिर्फ शिष्यों तक सिमित नही था, वे जहा कहीं भी 'उपधान-तप' की प्रेरणा करते थे, तुरंत ही वहां 'उपधान' हो जाते थे | प्रवचनपटुता एवं पर्षदापुन्य के कारण उन के उपदेश-प्राप्त बहोत आत्माओने संयम-मार्ग का स्वीकार किया | खुद भी संयमैकलक्षी होने के कारण चारित्रमार्ग के रागी तो थे ही, साथसाथ ज्ञानमार्ग का स्पर्श भी उन का निरंतर रहेता था | आप कभी भी दुपहर को चले जाइए, वे खुद अकेले या शिष्य-परिवार के साथ कोई भी ग्रन्थ के अध्ययन-अध्यापनमें रत दिखाई देंगे |

*** ये तो हमने उनके जीवन के दो-तीन पहेलु दिखाए | एक और भी अनुसरणीय बात उन के जीवनमें देखने को मिली थी- 'आराधना-प्रेम'. कैसी भी शारीरिक स्थिति हो, मगर उन्होंने दोनों शाश्वती ओलीजी, [पोष}दशमी, शुक्ल पंचमी, त्रिकाल देववंदन, पर्व या पर्वतिथि के देववंदन आदि आराधना कभी नहीं छोड़ी | आखरी सालोमें जब उन को एहसास हो गया की अब 'अंतिम-आराधना' का अवसर नजदीक है, तब उन के मुहमें एक ही रटण बारबार चालु हो गया- "*अरिहंतनुं शरण, सिद्धनुं शरण, साधुनुं शरण, केवली भगवंते भाखेला धर्मनुं शरण*" इसी चार शरणो के रटण के साथ ही वे समाधि-मृत्यु-रूप सम्यक् निद्रा को प्राप्त हुए थे | ऐसे महान् सूरिवर को भावबरी वंदना |

*** मुनि दीपरत्नसागर...

◆◆◆ श्री वर्धमान जैन आगम मंदिर संस्था, पालिताणा ◆◆◆

पूज्यपाद आनंदसागर-सूरीश्वरजी की बौद्धिक-प्रतिभा का मूर्तिमंत स्वरुप ऐसी इस संस्था की स्थापना विक्रम-संवत १९९९ मे महा-वद ५ को हुइ| *पूज्य आचार्य हर्षसागरसूरिजी की प्रेरणा से* जिन की तरफ़ से इस *सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि* के लिए संपूर्ण द्रव्य-सहाय की प्राप्ति हुइ |

शिल्प-स्थापत्य, शिलोत्कीर्ण आगम और समवसरण स्थित नयनरम्य ४५ चौमुख जिन-प्रतिमाजी से सुशोभित ऐसा ये 'आगममंदिर' है, जो शत्रुंजय-गिरिराज कि तलेटीमे स्थित है | वर्तमान २४ जिनवर, २० विहरमान जिनवर और १ शाश्वत मिलाकर ४५ चौमुखजी यहा बिराजमान है | जहां ४० समवसरण की रचना मेरु पर्वत के तिनो काण्ड के वर्णो के अनुसार चार अलग-अलग रंगो के आरस-पत्थर से बना है, देवो द्वारा रचित समवसरण के शास्त्र वर्णन-अनुसार आगम-मंदिर कि समवसरण का स्थापत्य है | ऐसी अनेक विशेषता से युक्त ये आगममंदिर है |

**** मुनि दीपरत्नसागर...*

'सागर-समुदाय-एकता-संरक्षक, तीर्थ-उद्धार-कार्य-प्रवृत्त, गुणानुरागी'

इस "सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि' श्रेणि भाग १ से ४० के संपूर्ण अनुदान के प्रेरणादाता

पूज्य शासनप्रभावक आचार्य श्री हर्षसागरसूरिजी महाराज साहेब

पूज्यपाद स्व॰ गच्छाधिपति देवेन्द्रसागर-सूरीश्वरजी के विनयी शिष्य एवं दो गच्छाधिपतिओ के मुख्य सहायक के रुपमे 'सागर समुदाय' के सुचारु संचालक पूज्य हर्षसागरसूरिजी, जिन की प्रेरणा से ये "सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि" के मुद्रण के लिए संपूर्ण द्रव्यराशि प्राप्त हुई, उनका अत्यल्प परिचय यहां करेंगे| समुदाय-एकता के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते हुए ये महात्मा *समुदाय के साधु-साध्वीजी* की आवश्यकताओकी पूर्ती के लिए भी प्रवृत्त रहेते है, प्राचीन-अर्वाचीन तीर्थो के जीर्णोद्धार एवं विकाश के लिए भी उत्साहित रहेते है, ज्ञान-क्षेत्र अछूता न रहे इसीलिए अनुमोदना, अनुदान एवं समय मिलने पर शास्त्र-वांचनमें भी रूचि रखते है | समुदाय के जरूरतमंद साध्वीजी भगवंतो के आवास का विषय हो या साध्वीजी के विहारमें मजदूर का वेतन चुकाना हो, ऐसे छोटे-छोटे कार्यो के प्रति भी उन का लक्ष्य रहेता है | दर्शन-शुद्धि के लिए जब उन्होंने समग्र भारतवर्ष के १०० साल तक के पुराने जिनालयो में १८ अभिषेक की प्रेरणा की, उस वक्त लगभग सभी अभिषेक-सामग्री की द्रव्य-शुद्धि का ख़याल रखते हुए अपनी मेधावी बुद्धि का परिचय दिया था, साथमे अनुकंपा भाव से पुजारी या विधि करानेवाले को यत्किंचित् बहुमान प्रगट करते हुए कुछ धन-राशि प्रदान करवाई |

ऐसे बहुगुण-संपन्न महात्मा पूज्य आचार्यश्री हर्षसागर-सूरिजी को हम भावभरी वंदना करते हुए इस श्रुतकार्य का प्रारंभ करने जा रहे है |

**** मुनि दीपरत्नसागर*

[कात्रज]पूना, कपडवंज, प्रभासपाटण आदि स्थानोमे आगममंदिर के प्रेरक, कर्मग्रंथ अभ्यासु, निस्पृह महात्मा

पूज्यपाद गच्छाधिपति आचार्य श्री दौलतसागर-सूरीश्वरजी महाराज साहेब

(एवं) अजातशत्रु, स्वाध्याय-रसिक, प्रशांतमूर्ती और अपने गुरु के प्रीतिपात्र

परम पूज्य आचार्य श्री नंदीवर्धनसागर-सूरिजी महाराज साहेब

इस पवित्र श्रुत-कार्यमे दोनो सूरिवरो का स्मरण करते हुए कोटि कोटि वंदना के साथ

.....मुनि दीपरत्नसागर

---------- ***** अथ उपांगसूत्रस्य अनुक्रम: आरभ्यते ***** ----------

मूलाङ्का: २० [१९] निरयावलिका उपाङ्ग-[८]-सूत्रस्य विषयानुक्रम दीप-अनुक्रमा: २१

मूलांक	अध्ययनं	पृष्ठांक:		मूलांक:	अध्ययनं	पृष्ठांक:		मूलांक:	अध्ययनं	पृष्ठांक:
००१	[१] काल:	१४		०२०	[२] सुकाल:	०५०		०२१	[३-१०] कृष्ण, सुकृष्ण आदि	०५०

मूलाङ्का: २+१ [२०] कल्पवतंसिका उपाङ्ग-[९]-सूत्रस्य विषयानुक्रम दीप-अनुक्रमा: ५

००१	[१] पद्म	०५२		००२/१	[२] महापद्म	०५३		००२	[३-१०] भद्र, सुभद्र आदि	०५३

मूलाङ्का: ६+२ [२१] पुष्पिका उपाङ्ग-[१०]-सूत्रस्य विषयानुक्रम दीप-अनुक्रमा: ११

००१	[१] चन्द्र:	०५७		००८	[४]बहुपुत्रिका	०७२		०११	[७-१०] दत्त,शिव आदि	०८७
००४	[२] सूर्य:	०६४		००९	[५]पूर्णभद्र:	०८६			---------	---
००७	[३] शुक्र:	०६५		०१०	[६]माणिभद्र:	०८६			---------	---

मूलाङ्का: १+१ [२२] पुष्पचूलिका उपाङ्ग-[११]-सूत्रस्य विषयानुक्रम दीप-अनुक्रमा: ३

०१-०३	[१-१०] भूता/(श्री) आदि दश	०८९		-----	----------	-----		-----	----------	------

मूलाङ्का: १+१ [२३] वृष्णिदशा उपाङ्ग-[१२]-सूत्रस्य विषयानुक्रम दीप-अनुक्रमा: ४

००१	[१] निषध	०९३		०९०	[२-१२] मायनि आदि ११	१००		----	----------	----

---------- ***** [८-१२] उपांगसूत्रस्य अनुक्रम: परिसमाप्त: ***** ----------

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलितानि..आगमसूत्राणि-[१९-३२], उपांगसूत्र-[८-१२] मूलं एवं वृत्ति:, प्रकीर्णकसूत्र-[१-९] मूलं एवं छाया:

---------- *** अथ प्रकीर्णकसूत्रस्य अनुक्रम: आरभ्यते [1] *** ----------

मूलाङ्का: ६३	[२४] 'चतु:शरण' प्रकीर्णकसूत्रस्य विषयानुक्रम							दीप-अनुक्रमा: ६३		
मूलांक::	गाथा	पृष्ठांक:		मूलांक:	गाथा	पृष्ठांक:		मूलांक:	गाथा	पृष्ठांक:
००१	आवश्यक-अर्थाधिकार:	१०३		००८	मंगल-आदि	१०४		०१०	चतु:शरणम्	१०४
०४९	दुष्कृत् गर्हा	१०९		०५५	सुकृत् अनुमोदना	११०		०५९	उपसंहार:	१११
मूलाङ्का: १+७०	[२५] 'आतुरप्रत्याख्यान प्रकीर्णकसूत्रस्य विषयानुक्रम							दीप-अनुक्रमा: ७१		
००१	प्रथमा प्ररुपणा	११३		०११	प्रतिक्रमणादि आलोचना	११५		०३४	आलोचनादायक व ग्राहक	११९
०३७	असमाधिमरणं	११९		०४६	पंडितमरण एवं आराधनादि	१२१		०७०	उपसंहार:	१२४
मूलाङ्का: १४२	[२६] 'महाप्रत्याख्यान प्रकीर्णकसूत्रस्य विषयानुक्रम							दीप-अनुक्रमा: १४२		
००१	मङ्गलं	१२६		००३	व्युत्सर्जन, क्षमापनादि	१२६		००८	निन्दा-गर्हा आदि	१२७
०१३	भावना	१२७		०१८	मिथ्यात्वत्याग, आलोचनादि	१२८		०३७-	विविधं धर्मोपदेशादि	१३१
मूलाङ्का: १७२+प्र०१	[२७] 'भक्तपरिज्ञा प्रकीर्णकसूत्रस्य विषयानुक्रम							दीप-अनुक्रमा: १७३		
००१	मङ्गलं, ज्ञानमहत्ता	१४६		००५	शाश्वत, अशाश्वत सुखं	१४७		००८	मरणस्य भेदानि	१५०
०१२	आलोचना, प्रायश्चित्	१४८		०२४	व्रत-सामायिक-आरोपणं	१४९		०३४-	आचरणा,क्षमापना आदि	१५१
मूलाङ्का: २०+१३९	[२८] 'तन्दुलवैचारिक' प्रकीर्णकसूत्रस्य विषयानुक्रम							दीप-अनुक्रमा: १६१		
मूलांक:	सूत्र//गाथा	पृष्ठांक:		मूलांक:	सूत्र//गाथा	पृष्ठांक:		मूलांक:	सूत्र//गाथा	पृष्ठांक:
००१	मङ्गलं-द्वाराणि	१७१		००४	गर्भ-प्रकरणं	१७१		०४३	जीवस्य दश-दशा	१८३
०५८	धर्मोपदेश: एवं तस्य फ़लम्	१९४		०६५	देहसंहननं-आहारादि	१९६		०७५	काल-प्रमाणं	१९७
०९६	अनित्य-अशुचित्वादि	२०४		११७	उपदेश:, उपसंहार:	२०७		---	----------	-----

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलितानि..आगमसूत्राणि-[१९-३२], उपांगसूत्र-[८-१२] मूलं एवं वृत्ति:, प्रकीर्णकसूत्र-[१-९] मूलं एवं छाया:

---------- *** अथ प्रकीर्णकसूत्रस्य अनुक्रम: आरभ्यते [2] *** ----------

मूलाङ्का: १२१ [२९] 'संस्तारक' प्रकीर्णकसूत्रस्य विषयानुक्रम दीप-अनुक्रमा: १२१

मूलांक:	गाथा	पृष्ठांक:		मूलांक:	गाथा	पृष्ठांक:		मूलांक:	गाथा	पृष्ठांक:
००१	मङ्गलं, संस्तारकगुणा:	२१६		०३१	संस्तारकस्वरुपम्, लाभं	२१९		०५६	संस्तारकस्य द्रष्टांता:	२२३
८९-१३३	भावना	२२८		-----	----------	-----		-----	----------	-----

मूलाङ्का: १३७ [३०] 'गच्छाचार' प्रकीर्णकसूत्रस्य विषयानुक्रम दीप-अनुक्रमा: १३७

००१	मङ्गलं-आदि:	२३३		००३	गच्छ-संवसमानस्य-गुणा:	२३३		००७	सूरि-स्वरुपस्य वर्णनं	२३३
०४१	गुरू-स्वरुपस्य वर्णनं	२३८		१०७	आर्या-स्वरुपस्य वर्णनं	२४६		१३४-	उपसंहार	२५०

मूलाङ्का: ८२ [३१] 'गणिविद्या' प्रकीर्णकसूत्रस्य विषयानुक्रम दीप-अनुक्रमा: ८२

००१	प्रथमं दिवस-द्वारम्	२५३		००४	द्वितियं तिथि-द्वारम्	२५३		०११	तृतीयं नक्षत्र-द्वारम्	२५४
०४१	चतुर्थं करण-द्वारम्	२५८		०४६	पंचमं ग्रह-द्वारम्	२५९		०४८	षष्ठं मुहूर्त-द्वारम्	२५९
०५६	सप्तमं शकुनबलं-द्वारम्	२६०		०६१	अष्टमं लग्न-द्वारम्	२६१		०६९	नवमं निमित्तबलं-द्वारम्	२६२

मूलाङ्का: ३०७ [३२] 'देवेन्द्रस्तव' प्रकीर्णकसूत्रस्य विषयानुक्रम दीप-अनुक्रमा: ३०७

००१	मङ्गलं, देविंद-पुच्छा	२६५		०११	भवनपति-अधिकार:	२६६		०६७	वाणव्यंतर-अधिकार:	२७३
०८१	ज्योतिष्क-अधिकार:	२७५		१६२	वैमानिक-अधिकार:	२८६		२७४	ईषत्प्राग्भारपृथ्वी	३००
३०२	जिनऋद्धि, उपसंहार:	३०४		-----	----------	-----		-----		-----

---------- ***** [१-९] प्रकीर्णकसूत्रस्य अनुक्रम: परिसमाप्त: ***** ----------

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलितानि..आगमसूत्राणि-[१९-३२], उपांगसूत्र-[८-१२] मूलं एवं वृत्ति:, प्रकीर्णकसूत्र-[१-९] मूलं एवं छाया:

इस प्रकाशन (भाग-२६) की विकास-गाथा

"सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि" के इस २६-वे भागमें हमने १४-आगमो को शामील किया है | जिसमे पांच उपांगसूत्र और नव प्रकीर्णकसूत्र है | उपांग सूत्र की यह प्रत सबसे पहले "निरयावलिका" के नामसे सन १९२२ (विक्रम संवत १९७८) में आगमोदय समिति द्वारा प्रकाशित हुई | इस प्रतमे पांच उपांग सूत्र एक-साथ शामिल किये गये थे, १९-निर्यावलिका, २०-कल्पवतंसिका, २१-पुष्पिका, २२-पुष्पचूलिका और वृष्णिदशा तथा चतु:शरण आदि दश प्रकिर्णाको की प्रत संस्कृत-छाया के साथ सन १९२७ (विक्रम संवत १९ ८३) में आगमोदय समिति द्वारा प्रकाशित हुई, संपादक-महोदय थे पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब | उन दश प्रकीर्णकमे से ९ प्रकीर्णको को ये २६-वे भागमे हमने रक्खे है| २४.चतु:शरण, २५.आतुरपरत्याख्यान, २६.महाप्रत्याख्यान, २७.भक्तपरिज्ञा, २८.तंदुलवैचारिक, २९.संस्तारक, ३०.गच्छाचार, ३१.गणिविज्जा और ३२.देवेंद्रस्तव.

✤ हमारा ये प्रयास क्यों? ✤ आगम की सेवा करने के हमें तो बहोत अवसर मिले, ४५-आगम सटीक भी हमने ३० भागोमे १२५०० से ज्यादा पृष्ठोमें प्रकाशित करवाए है, किन्तु लोगो की *[पूर्वाचार्य]* पूज्य श्री के प्रति श्रद्धा तथा प्रत स्वरुप प्राचीन प्रथा का आदर देखकर हमने इसी प्रत को स्केन करवाई, उसके बाद एक स्पेशियल फोरमेट बनवाया, जिसमे बीचमे पूज्यश्री संपादित प्रत ज्यों की त्यों रख दी, ऊपर शीर्षस्थानमे आगम का नाम, फिर अध्ययन और मूलसूत्र के क्रमांक आदि लिख दिए, ताँकि पढ़नेवाले को प्रत्येक पेज पर कौनसा अध्ययन एवं सूत्र चल रहे है उसका सरलता से ज्ञान हो शके, बायीं तरफ आगम का क्रम और इसी प्रत का सूत्रक्रम दिया है, उसके साथ वहाँ 'दीप अनुक्रम' भी दिया है, जिससे हमारे प्राकृत, संस्कृत, हिंदी गुजराती, इंग्लिश आदि सभी आगम प्रकाशनोमें प्रवेश कर शके | हमारे अनुक्रम तो प्रत्येक प्रकाशनोमें एक सामान और क्रमशः आगे बढते हुए ही है, इसीलिए सिर्फ क्रम नंबर दिए है, मगर प्रत में गाथा और सूत्रो के नंबर अलग-अलग होने से हमने जहां सूत्र है वहाँ कौंस [-] दिए है और जहां गाथा है वहाँ ||-|| ऐसी दो लाइन खींची है या फिर गाथा शब्द लिख दिया है |

हमने एक अनुक्रमणिका भी बनायी है, जिसमे प्रत्येक अध्ययन आदि लिख दिये है और साथमें इस सम्पादन के पृष्ठांक भी दे दिए है, जिससे अभ्यासक व्यक्ति अपने चहिते अध्ययन या विषय तक आसानी से पहुँच शकता है | अनेक पृष्ठ के नीचे विशिष्ठ फूटनोट भी लिखी है, जहां उस पृष्ठ पर चल रहे ख़ास विषयवस्तु की, मूल प्रतमें रही हुई कोई-कोई मुद्रण-भूल की या क्रमांकन-भूल सम्बन्धी जानकारी प्राप्त होती है |

शासनप्रभावक पूज्य आचार्यश्री हर्षसागरसूरिजी म०सा० की प्रेरणासे और श्री वर्धमान जैन आगममंदिर, पालिताणा की संपूर्ण द्रव्य सहाय से ये 'सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि' भाग-२६ का मुद्रण हुआ है, हम उन के प्रति हमारा आभार व्यक्त करते है |

.....मुनि दीपरत्नसागर.

[१९] श्री निरयावलिका (उपांग)सूत्रम्

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

"निरयावलिका" मूलं एवं वृत्ति:

[मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्ति:]

[आद्य संपादकश्री]

पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

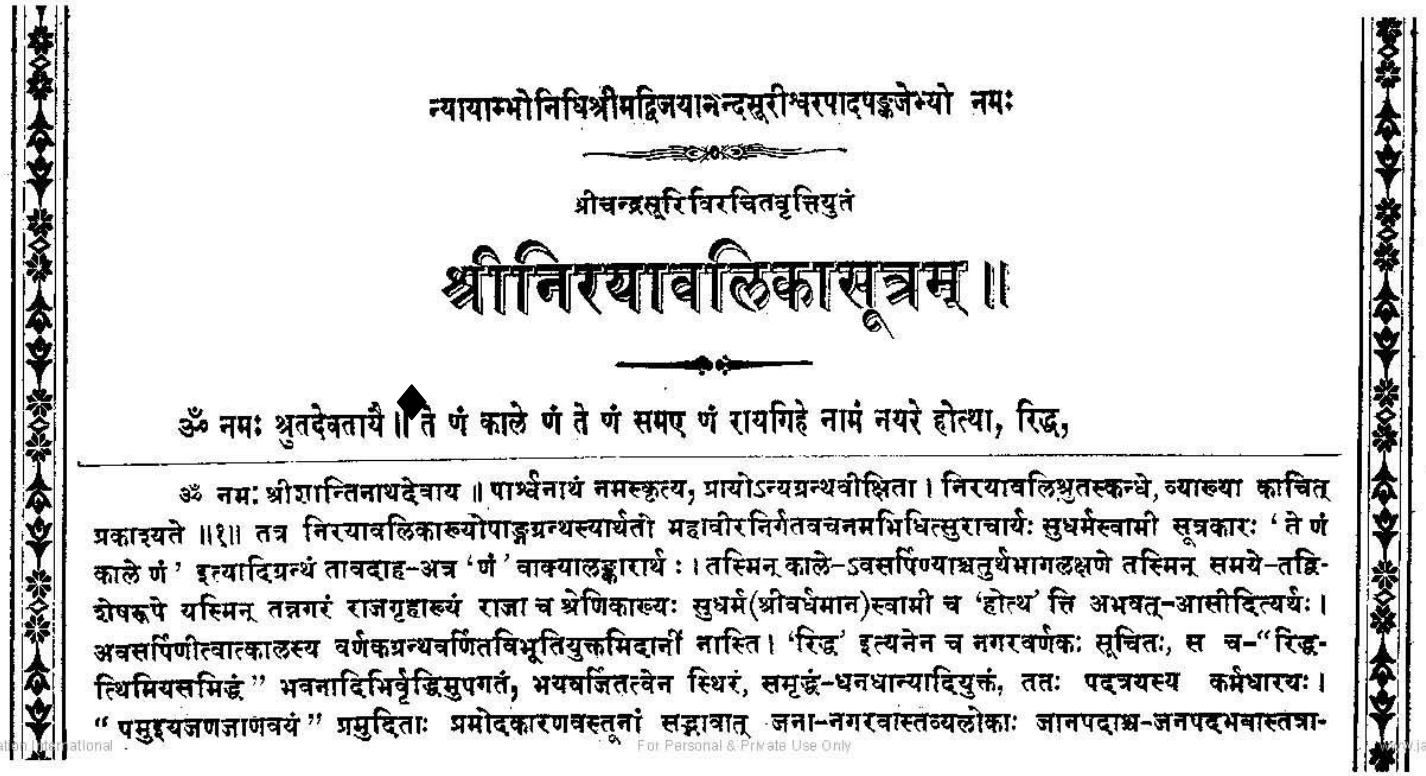
पुन: संकलनकर्ता→ मुनि दीपरत्नसागर (M.Com., M.Ed., Ph.D.,श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५ 'सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि' श्रेणि भाग-२६

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१९],उपांगसूत्र-[०८] निरयावलिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्ति:



न्यायाम्भोनिधिश्रीमद्विजयानन्दसूरीश्वरपादपङ्कजेभ्यो नमः

श्रीचन्द्रसूरिविरचितवृत्तियुतं

श्रीनिरयावलिकासूत्रम् ॥

ॐ नमः श्रुतदेवतायै ॥ ♦ ते णं काले णं ते णं समए णं रायगिहे नामं नयरे होत्था, रिद्ध,

ॐ नमः श्रीशान्तिनाथदेवाय ॥ पार्श्वनाथं नमस्कृत्य, प्रायोऽन्यग्रन्थवीक्षिता । निरयावलिश्रुतस्कन्धे, व्याख्या काचित् प्रकाश्यते ॥१॥ तत्र निरयावलिकाख्योपाङ्गग्रन्थस्यार्थतो महावीरनिर्गतवचनमभिधित्सुराचार्यः सुधर्मस्वामी सूत्रकारः ‘ते णं काले णं’ इत्यादिग्रन्थं तावदाह-अत्र ‘णं’ वाक्यालङ्कारार्थः । तस्मिन् काले-ऽवसर्पिण्याश्चतुर्थभागलक्षणे तस्मिन् समये-तद्विशेषरूपे यस्मिन् तन्नगरं राजगृहाख्यं राजा च श्रेणिकाख्यः सुधर्म(श्रीवर्धमान)स्वामी च ‘होत्थ’ त्ति अभवत्-आसीदित्यर्थः । अवसर्पिणीत्वात्कालस्य वर्णकग्रन्थवर्णितविभूतियुक्तमिदानीं नास्ति । ‘रिद्ध’ इत्यनेन च नगरवर्णकः सूचितः, स च-“रिद्धत्थिमियसमिद्धं” भवनादिभिर्वृद्धिमुपगतं, भयवर्जितत्वेन स्थिरं, समृद्धं-धनधान्यादियुक्तं, ततः पदत्रयस्य कर्मधारयः । “पमुइयजणजाणवयं” प्रमुदिताः प्रमोदकारणवस्तूनां सद्भावात् जना-नगरवास्तव्यलोकाः जानपदाश्च-जनपदभवास्तत्रा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

♦ मूलसूत्र-१

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१९],उपांगसूत्र-[०८] निरयावलिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [२]

(उत्तरपुरिच्छिमे दिसीभाए) गुणसिलए, चेइए, वन्नउ, असोगवरपायवे पुढविसिलापट्टए ◆ ते णं काले णं ते णं समए णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी अज्जसुहम्मे नामं अणगारे जातिसंपन्ने जहा केसि जाव

याताः सन्तो यस्मिन् तत् प्रमुदितजनजानपदम्। “उत्ताणनयणपेच्छणिज्जं” सौभाग्यातिशयात् उत्तानैः अनिमिषैः नयनैः-लोचनैः प्रेक्षणीयं यत्तत्तथा। “पासाइयं” चित्तप्रसत्तिकारि। “दरिसणिज्जं” यत् पश्यच्चक्षुः श्रमं न गच्छति। ‘अभिरूवं’ मनोज्ञरूपम्। “पडिरूवं” द्रष्टारं द्रष्टारं प्रति रूपं यस्य तत्तथेति। तस्मिन् “उत्तरपुरिच्छिमे दिसीभाए गुणसिलए नामं चेइए होत्था” चैत्यं-व्यन्तरायतनम् ‘वन्नओ’ त्ति चैत्यवर्णको वाच्यः-“चिराईए पुव्वपुरिसपन्नत्ते” चिरः-चिरकालः आदिः-निवेशो यस्य तत् चिरादिकम् अत एव पूर्वपुरुषैः-अतीतनरैः प्रज्ञप्तम्-उपादेयतया प्रकाशितं पूर्वपुरुषप्रज्ञप्तम्। “सच्छत्ते सज्झए सघंटे सपडागे कयवेयद्दीए” कृतवितर्दिकं-रचितवेदिकं “लाउल्लोइयमहिए” लाइयं-यद्भूमेश्छगणादिना उपले-पनम्, उल्लोइयं-कुडयमालानां सेटिकादिभिः संमृष्टीकरणं, ततस्ताभ्यां महितमिव महितं पूजितं यत्तत्तथेति। तत्र च गुण-शिलकचैत्ये अशोकवरपादपः समस्ति, “तस्स णं हेट्ठा खंधासन्ने, एत्थ णं महं एगे पुढविसिलापट्टए पन्नत्ते, विक्खंभा-यामसुप्पमाणे आईणगरूयबूरनवणीयतूलफासे” आजिनकं-चर्ममयं वस्त्रं, रूतं-प्रतीतं, बूरो-वनस्पतिविशेषः, नवनीतं-म्रक्षणं, तूलम्-अर्कतूलं, तद्वत् स्पर्शो यस्य स तथा, कोऽर्थः? कोमलस्पर्शयुक्तः। ‘पासाईए जाव पडिरूवे’ त्ति। ‘ते णं काले णं’ इत्यादि, ‘जाइसंपन्ने’ उत्तममातृकपक्षयुक्त इति बोद्धव्यम्, अन्यथा मातृकपक्षसंपन्नत्वं पुरुषमात्रस्यापि स्यात् इति नास्योत्कर्षः कश्चि-दुक्तो भवेत्, उत्कर्षाभिधानार्थं चास्य विशेषणकलापोपादानं चिकीर्षितमिति। एवं “कुलसंपन्ने,” नवरं कुलं-पैतृकः पक्षः। “बलसंपन्ने” बलं-संहननविशेषसमुत्थः प्राणः। ‘जहा केसि’ त्ति केसि (शि) वर्णको वाच्यः, स च “विणयसंपन्ने” लाघवं

१ वाच्यविशेष० इति वा पाठः

॥ १ ॥

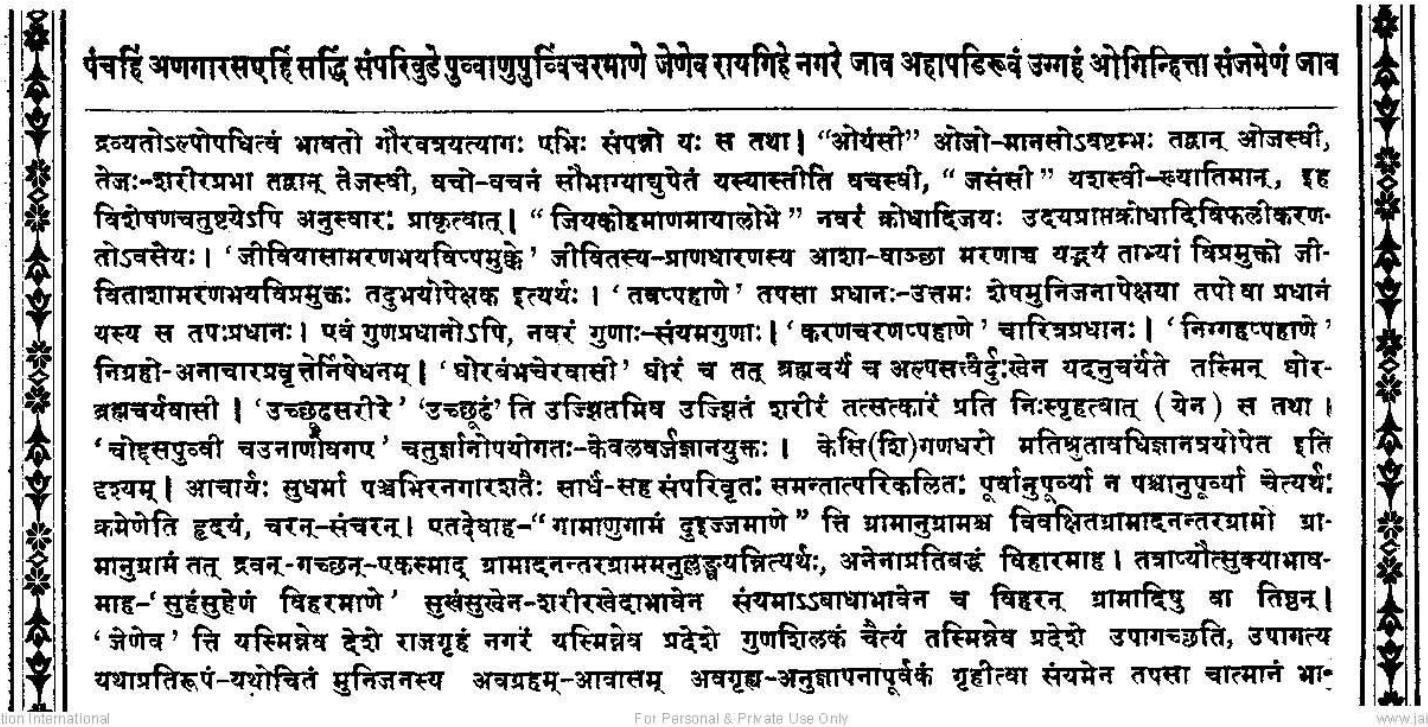
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

◆मूलसूत्र-२

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१९],उपांगसूत्र-[०८] निरयावलिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [–]

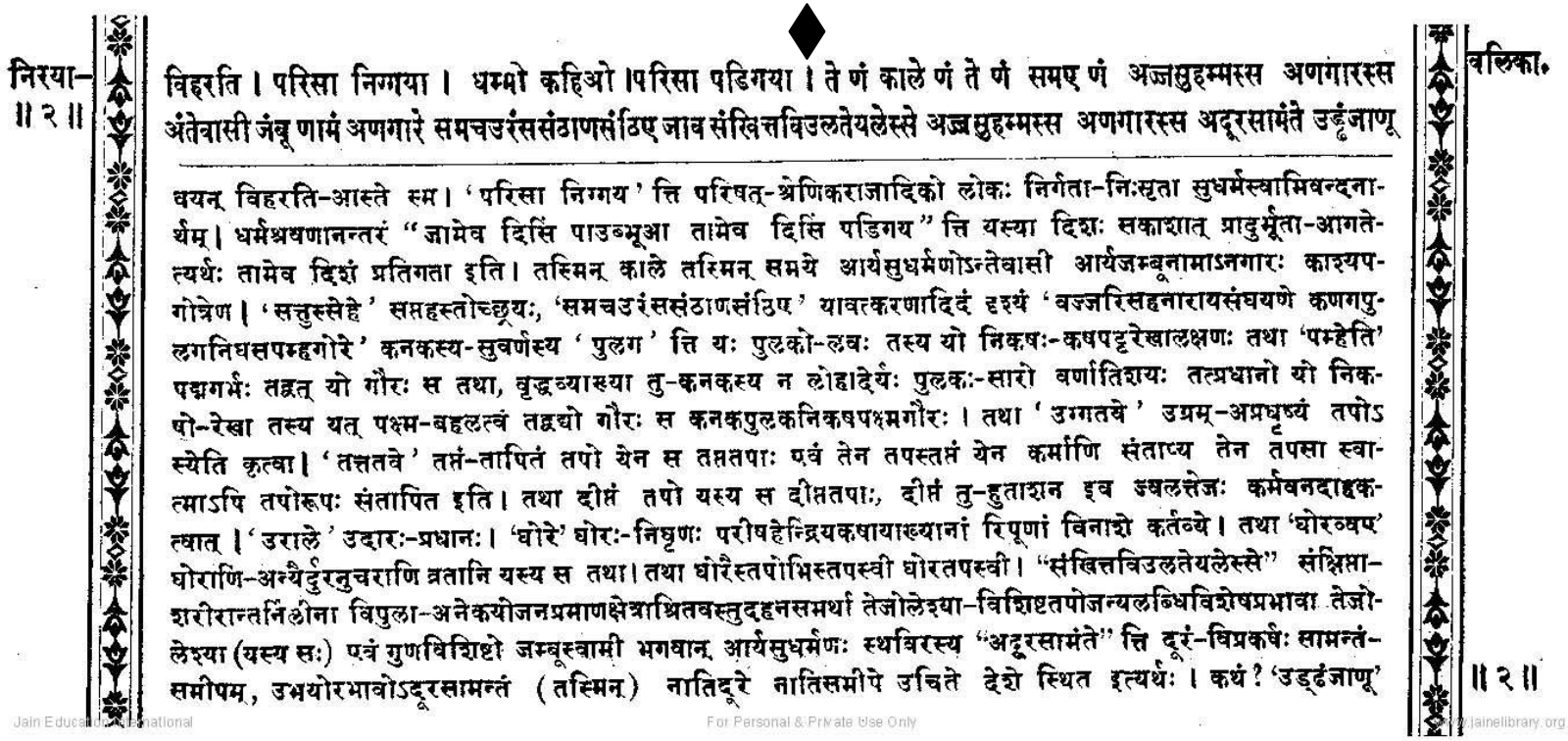
दीप अनुक्रम [२]



पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जेणेव रायगिहे नगरे जाव अहापडिरूवं उग्गहं ओगिन्हित्ता संजमेणं जाव

द्रव्यतोऽल्पोपधित्वं भावतो गौरवत्रयत्यागः एभिः संपन्नो यः स तथा। "ओयंसी" ओजो-मानसोऽवष्टम्भः तद्वान् ओजस्वी, तेजः-शरीरप्रभा तद्वान् तेजस्वी, वचो-वचनं सौभाग्यादुपेतं यस्यास्तीति वचस्वी, "जसंसी" यशस्वी-ख्यातिमान्, इह विशेषणचतुष्टयेऽपि अनुस्वारः प्राकृतत्वात्। "जियकोहमाणमायालोभे" नवरं क्रोधादिजयः उदयप्राप्तक्रोधादिविफलीकरणतोऽवसेयः। 'जीवियासामरणभयविप्पमुक्के' जीवितस्य-प्राणधारणस्य आशा-वाञ्छा मरणाच्च यद्भयं ताभ्यां विप्रमुक्तो जीविताशामरणभयविप्रमुक्तः तदुभयोपेक्षक इत्यर्थः। 'तवप्पहाणे' तपसा प्रधानः-उत्तमः शेषमुनिजनापेक्षया तपो वा प्रधानं यस्य स तपःप्रधानः। एवं गुणप्रधानोऽपि, नवरं गुणाः-संयमगुणाः। 'करणचरणप्पहाणे' चारित्रप्रधानः। 'निग्गहप्पहाणे' निग्रहो-अनाचारप्रवृत्तेर्निषेधनम्। 'घोरबंभचेरवासी' घोरं च तत् ब्रह्मचर्यं च अल्पसत्त्वैर्दुःखेन यदनुचर्यते तस्मिन् घोरब्रह्मचर्यवासी। 'उच्छूढसरीरे' 'उच्छूढं' ति उज्झितमिव उज्झितं शरीरं तत्सत्कारं प्रति निःस्पृहत्वात् (येन) स तथा। 'चोद्दसपुव्वी चउनाणोवगए' चतुर्ज्ञानोपयोगतः-केवलवर्जज्ञानयुक्तः। केसि(शि)गणधरो मतिश्रुतावधिज्ञानत्रयोपेत इति दृश्यम्। आचार्यः सुधर्मा पञ्चभिरनगारशतैः सार्ध-सह संपरिवृतः समन्तात्परिकलितः पूर्वानुपूर्व्या न पश्चानुपूर्व्या चेत्यर्थः क्रमेणेति हृदयं, चरन्-संचरन्। एतदेवाह-"गामाणुगामं दुइज्जमाणे" त्ति ग्रामानुग्रामश्च विवक्षितग्रामादनन्तरग्रामो ग्रामानुग्रामं तत् द्रवन्-गच्छन्-एकस्माद् ग्रामादनन्तरग्राममनुल्लङ्घयन्नित्यर्थः, अनेनाप्रतिबद्धं विहारमाह। तत्राप्यौत्सुक्याभावमाह-'सुहंसुहेणं विहरमाणे' सुखंसुखेन-शरीरखेदाभावेन संयमाऽऽबाधाभावेन च विहरन् ग्रामादिषु वा तिष्ठन्। 'जेणेव' त्ति यस्मिन्नेव देशे राजगृहं नगरं यस्मिन्नेव प्रदेशे गुणशिलकं चैत्यं तस्मिन्नेव प्रदेशे उपागच्छति, उपागत्य यथाप्रतिरूपं-यथोचितं मुनिजनस्य अवग्रहम्-आवासम् अवगृह्य-अनुज्ञापनापूर्वकं गृहीत्वा संयमेन तपसा चात्मानं भा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



निरया- ॥ २ ॥

विहरति । परिसा निग्गया । धम्मो कहिओ ।परिसा पडिगया । ते णं काले णं ते णं समए णं अज्जसुहम्मस्स अणगारस्स अंतेवासी जंबू णामं अणगारे समचउरंससंठाणसंठिए जाव संखित्तविउलतेयलेस्से अज्जसुहम्मस्स अणगारस्स अदूरसामंते उड्ढंजाणू

वयन् विहरति-आस्ते स्म। 'परिसा निग्गय' त्ति परिषत्-श्रेणिकराजादिको लोकः निर्गता-निःसृता सुधर्मस्वामिवन्दनार्थम्। धर्मश्रवणानन्तरं "जामेव दिसिं पाउब्भूआ तामेव दिसिं पडिगय" त्ति यस्या दिशः सकाशात् प्रादुर्भूता-आगतेत्यर्थः तामेव दिशं प्रतिगता इति। तस्मिन् काले तस्मिन् समये आर्यसुधर्मणोऽन्तेवासी आर्यजम्बूनामाऽनगारः काश्यपगोत्रेण। 'सत्तुस्सेहे' सप्तहस्तोच्छ्रयः, 'समचउरंससंठाणसंठिए' यावत्करणादिदं दृश्यं 'वज्जरिसहनारायसंघयणे कणगपुलगनिघसपम्हगोरे' कनकस्य-सुवर्णस्य 'पुलग' त्ति यः पुलको-लवः तस्य यो निकषः-कषपट्टरेखालक्षणः तथा 'पम्हेति' पद्मगर्भः तद्वत् यो गौरः स तथा, वृद्धव्याख्या तु-कनकस्य न लोहादेर्यः पुलकः-सारो वर्णातिशयः तत्प्रधानो यो निकषो-रेखा तस्य यत् पक्ष्म-बहलत्वं तद्वद्यो गौरः स कनकपुलकनिकषपक्ष्मगौरः। तथा 'उग्गतवे' उग्रम्-अप्रधृष्यं तपोऽस्येति कृत्वा। 'तत्ततवे' तप्तं-तापितं तपो येन स तप्ततपाः एवं तेन तपस्तप्तं येन कर्माणि संताप्य तेन तपसा स्वात्माऽपि तपोरूपः संतापित इति। तथा दीप्तं तपो यस्य स दीप्ततपाः, दीप्तं तु-हुताशन इव ज्वलत्तेजः कर्मवनदाहकत्वात्। 'उराले' उदारः-प्रधानः। 'घोरे' घोरः-निघृणः परीषहेन्द्रियकषायाख्यानां रिपूणां विनाशे कर्तव्ये। तथा 'घोरव्वए' घोराणि-अन्यैर्दुरनुचराणि व्रतानि यस्य स तथा। तथा घोरैस्तपोभिस्तपस्वी घोरतपस्वी। "संखित्तविउलतेयलेस्से" संक्षिप्ता-शरीरान्तर्निलीना विपुला-अनेकयोजनप्रमाणक्षेत्राश्रितवस्तुदहनसमर्था तेजोलेश्या-विशिष्टतपोजन्यलब्धिविशेषप्रभावा तेजोलेश्या (यस्य सः) एवं गुणविशिष्टो जम्बूस्वामी भगवान् आर्यसुधर्मणः स्थविरस्य "अदूरसामंते" त्ति दूरं-विप्रकर्षः सामन्तं-समीपम्, उभयोरभावोऽदूरसामन्तं (तस्मिन्) नातिदूरे नातिसमीपे उचिते देशे स्थित इत्यर्थः। कथं? 'उड्ढंजाणू'

वलिका.

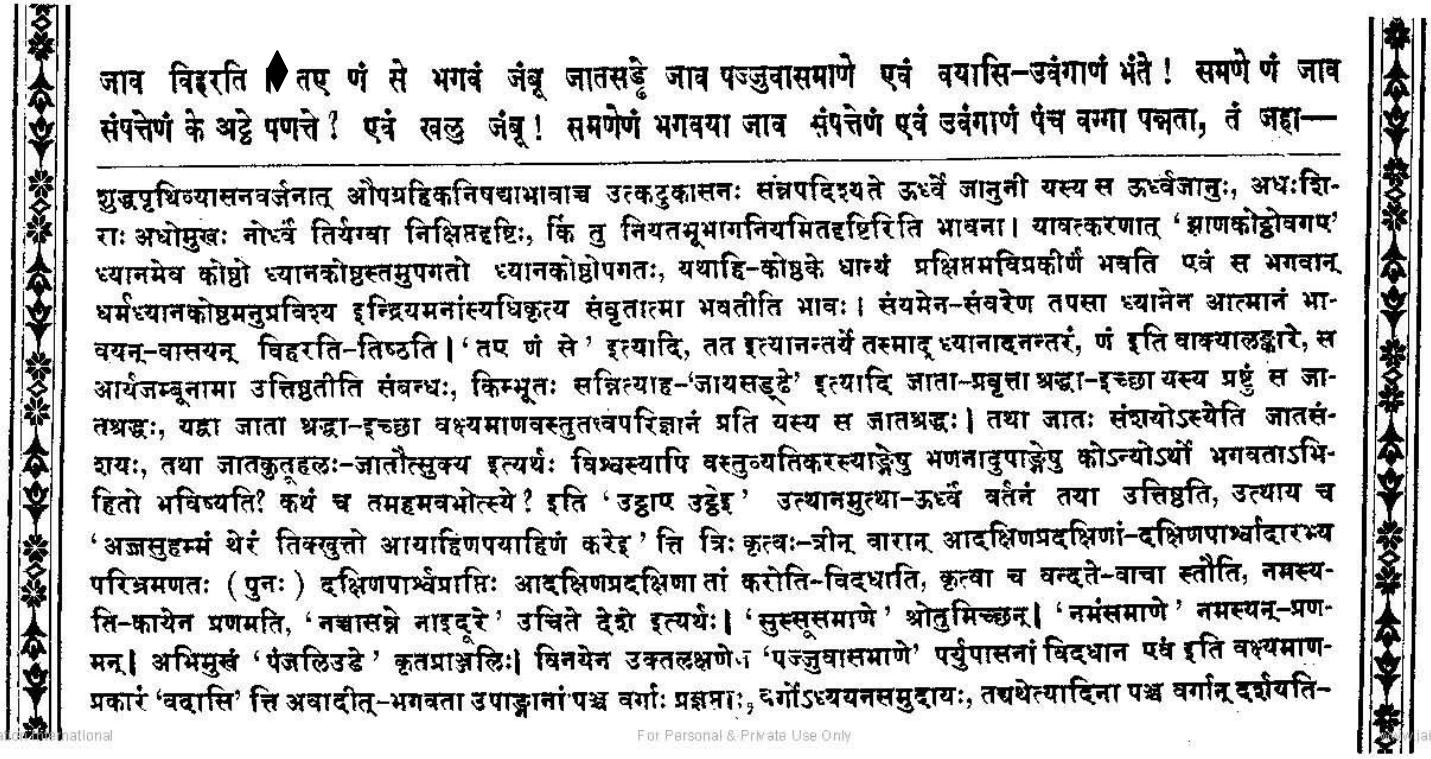
॥ २ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

◆ मूलसूत्र-३

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [४]



जाव विहरति ◆ तए णं से भगवं जंबू जातसड्ढे जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासि–उवंगाणं भंते! समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते? एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं एवं उवंगाणं पंच वग्गा पन्नता, तं जहा—

शुद्धपृथिव्यासनवर्जनात् औपग्रहिकनिषद्याभावाच्च उत्कटुकासनः सन्नुपदिश्यते ऊर्ध्वे जानुनी यस्य स ऊर्ध्वजानुः, अधःशिराः अधोमुखः नोर्ध्वं तिर्यग्वा निक्षिप्तदृष्टिः, किं तु नियतभूभागनियमितदृष्टिरिति भावना। यावत्करणात् 'झाणकोट्ठोवगए' ध्यानमेव कोष्ठो ध्यानकोष्ठस्तमुपगतो ध्यानकोष्ठोपगतः, यथाहि-कोष्ठके धान्यं प्रक्षिप्तमविप्रकीर्णं भवति एवं स भगवान् धर्मध्यानकोष्ठमनुप्रविश्य इन्द्रियमनांस्यधिकृत्य संवृतात्मा भवतीति भावः। संयमेन-संवरेण तपसा ध्यानेन आत्मानं भावयन्-वासयन् विहरति-तिष्ठति। 'तए णं से' इत्यादि, तत इत्यानन्तर्ये तस्माद् ध्यानादनन्तरं, णं इति वाक्यालङ्कारे, स आर्यजम्बूनामा उत्तिष्ठतीति संबन्धः, किम्भूतः सन्नित्याह-'जायसड्ढे' इत्यादि जाता-प्रवृत्ता श्रद्धा-इच्छा यस्य प्रष्टुं स जातश्रद्धः, यद्वा जाता श्रद्धा-इच्छा वक्ष्यमाणवस्तुतत्त्वपरिज्ञानं प्रति यस्य स जातश्रद्धः। तथा जातः संशयोऽस्येति जातसंशयः, तथा जातकुतूहलः-जातौत्सुक्य इत्यर्थः विश्वस्यापि वस्तुव्यतिकरस्याङ्गेषु भणनादुपाङ्गेषु कोऽन्योऽर्थो भगवताऽभिहितो भविष्यति? कथं च तमहमवभोत्स्ये? इति 'उट्ठाए उट्ठेइ' उत्थानमुत्था-ऊर्ध्वं वर्तनं तया उत्तिष्ठति, उत्थाय च 'अज्जसुहम्मं थेरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ' त्ति त्रिः कृत्वः-त्रीन् वारान् आदक्षिणप्रदक्षिणां-दक्षिणपार्श्वादारभ्य परिभ्रमणतः (पुनः) दक्षिणपार्श्वप्राप्तिः आदक्षिणप्रदक्षिणा तां करोति-विदधाति, कृत्वा च वन्दते-वाचा स्तौति, नमस्यति-कायेन प्रणमति, 'नच्चासन्ने नाइदूरे' उचिते देशे इत्यर्थः। 'सुस्सूसमाणे' श्रोतुमिच्छन्। 'नमंसमाणे' नमस्यन्-प्रणमन्। अभिमुखं 'पंजलिउडे' कृतप्राञ्जलिः। विनयेन उक्तलक्षणेन 'पज्जुवासमाणे' पर्युपासनां विदधान एवं इति वक्ष्यमाणप्रकारं 'वदासि' त्ति अवादीत्-भगवता उपाङ्गानां पञ्च वर्गाः प्रज्ञप्ताः, वर्गोऽध्ययनसमुदायः, तथथेत्यादिना पञ्च वर्गान् दर्शयति-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

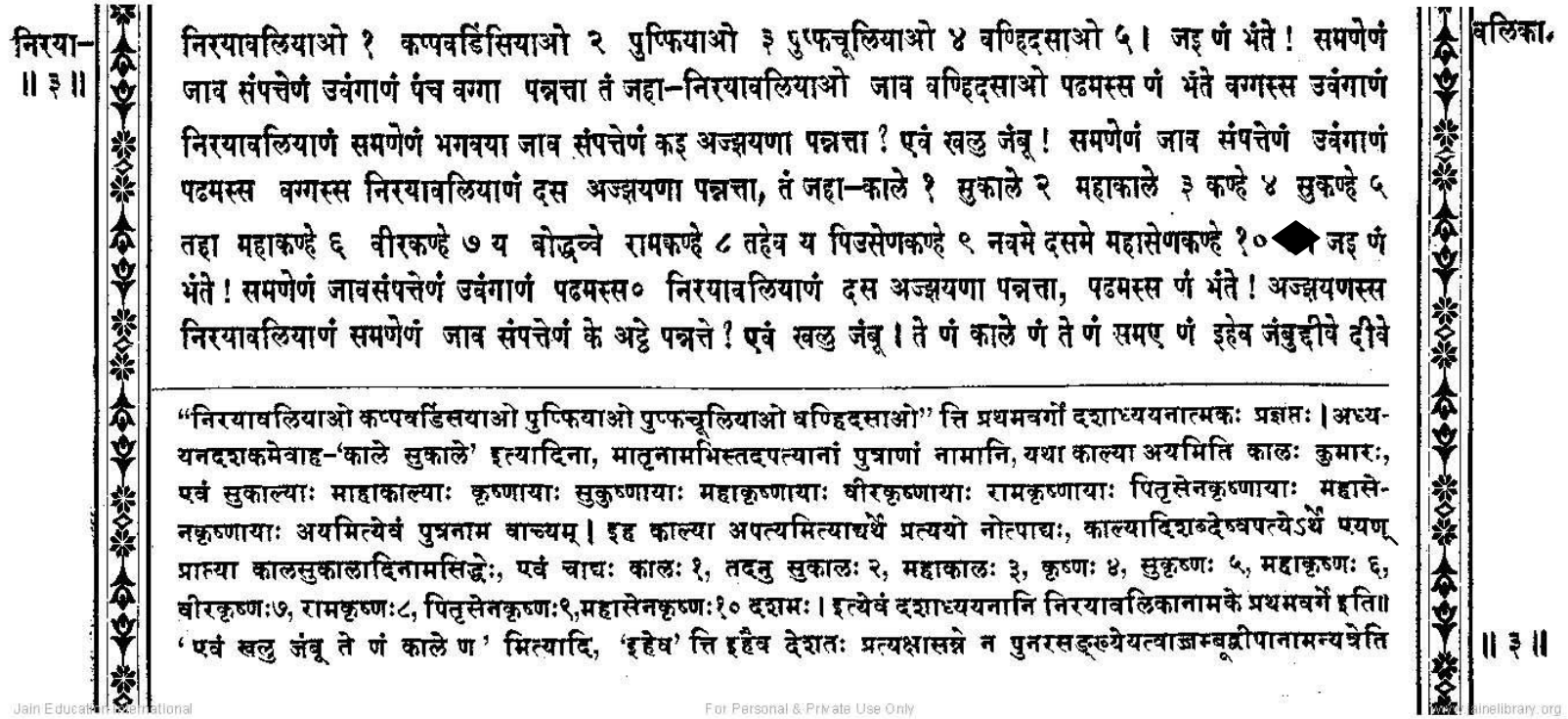
◆ मूलसूत्र-४

***अत्र निरयावलिका-आदि पञ्च उपांगानि पञ्च वर्गाः रुपेण आख्याताः [निरयावलिका आदि जो पांच उपांग है, उन पांचो को यहां सूत्रकारश्री ने पांच 'वर्ग्ग रूपसे दिखाया है, इन पांचो कि वृत्ति एवं हस्तप्रत, सभी संप्रदायकी मुद्रित प्रते वगैरेह भी एक साथ प्राप्त होती है , इससे ये दुविधा रहेति है कि ये पांचो आगम भिन्न है या एक हि उपांग के पांच वर्ग्ग है |

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१९],उपांगसूत्र-[०८] निरयावलिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [४]



निरया- ॥ ३ ॥

निरयावलियाओ १ कप्पवडिंसियाओ २ पुप्फियाओ ३ पुप्फचूलियाओ ४ वण्हिदसाओ ५। जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं उवंगाणं पंच वग्गा पन्नत्ता तं जहा–निरयावलियाओ जाव वण्हिदसाओ पढमस्स णं भंते वग्गस्स उवंगाणं निरयावलियाणं समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं कइ अज्झयणा पन्नत्ता ? एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं उवंगाणं पढमस्स वग्गस्स निरयावलियाणं दस अज्झयणा पन्नत्ता, तं जहा–काले १ सुकाले २ महाकाले ३ कण्हे ४ सुकण्हे ५ तहा महाकण्हे ६ वीरकण्हे ७ य बोद्धव्वे रामकण्हे ८ तहेव य पिउसेणकण्हे ९ नवमे दसमे महासेणकण्हे १०◆ जइ णं भंते ! समणेणं जावसंपत्तेणं उवंगाणं पढमस्स० निरयावलियाणं दस अज्झयणा पन्नत्ता, पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स निरयावलियाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पन्नत्ते ? एवं खलु जंबू ! ते णं काले णं ते णं समए णं इहेव जंबुद्दीवे दीवे

“निरयावलियाओ कप्पवडिंसयाओ पुप्फियाओ पुप्फचूलियाओ वण्हिदसाओ” त्ति प्रथमवर्गो दशाध्ययनात्मकः प्रज्ञप्तः। अध्ययनदशकमेवाह–‘काले सुकाले’ इत्यादिना, मातृनामभिस्तदपत्यानां पुत्राणां नामानि, यथा काल्या अयमिति कालः कुमारः, एवं सुकाल्याः माहाकाल्याः कृष्णायाः सुकृष्णायाः महाकृष्णायाः वीरकृष्णायाः रामकृष्णायाः पितृसेनकृष्णायाः महासेनकृष्णायाः अयमित्येवं पुत्रनाम वाच्यम्। इह काल्या अपत्यमित्यार्थे प्रत्ययो नोत्पाद्यः, काल्यादिशब्देष्वपत्येऽर्थे पयण् प्राप्त्या कालसुकालादिनामसिद्धेः, एवं चाद्यः कालः १, तदनु सुकालः २, महाकालः ३, कृष्णः ४, सुकृष्णः ५, महाकृष्णः ६, वीरकृष्णः७, रामकृष्णः८, पितृसेनकृष्णः९,महासेनकृष्णः१० दशमः। इत्येवं दशाध्ययनानि निरयावलिकानामके प्रथमवर्गे इति॥ ‘एवं खलु जंबू ते णं काले ण’ मित्यादि, ‘इहेव’ त्ति इहैव देशतः प्रत्यक्षासन्ने न पुनरसङ्ख्येयत्वाज्जम्बूद्वीपानामन्यत्रेति

वलिका. ॥ ३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

◆ मूलसूत्र-५,

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१९],उपांगसूत्र-[०८] निरयावलिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [५]

भारहे वासे चंपा नामं नयरी होत्था, रिद्ध, पुन्नभद्दे चेइए, तत्थ णं चंपाए नयरीए सेणियस्स रन्नो पुत्ते चेल्लणाए देवीअत्तए कूणिए नामं राया होत्था, महता, तस्स णं कूणियस्स रन्नो पउमावई नामं देवी होत्था, सोमाल जाव विहरइ।

भावः। भारते वर्षे-क्षेत्रे चम्पा एषा नगरी अभूत्। रिद्धेत्यनेन 'रिद्धत्थिमियसमिद्धे'त्यादि दृश्यं, व्याख्या तु प्राग्वत्। तत्रोत्तरपुर्वदिग्भागे पूर्णभद्रनामकं चैत्यं व्यन्तरायतनम्। 'कुणिए नामं राय' त्ति कूणिकनामा श्रेणिकराजपुत्रो राजा 'होत्थ' त्ति अभवत्। तद्वर्णको "महयाहिमवंतमहंतमलयमंदरमहिंदसारेत्यादि पसंतडिंबडमरं रज्जं पसाहेमाणे विहरइ" इत्येतदन्तः, तत्र महाहिमवानिव महान् शेषराजापेक्षया, तथा मलयः-पर्वतविशेषो, मन्दरो-मेरुः, महेन्द्रः-शक्रादिदेवराजः, तद्वत्सारः-प्रधानो यः स तथा। तथा प्रशान्तानि डिम्बानि-विघ्ना डमराणि च-राजकुमारादिकृता विद्वरा यस्मिंस्तत्तथा (राज्यं) प्रसाधयन्-पालयन् विहरति-आस्ते स्म। कूणिकदेव्याः पद्मावतीनाम्न्या वर्णको यथा-'सोमाल जाव विहरइ' यावत्करणादेवं दृश्यम् "सुकुमालपाणिपाया अहीणपंचिंदियसरीरा" अहीनानि-अन्यूनानि लक्षणतः स्वरूपतो वा पञ्चापीन्द्रियाणि यस्मिंस्तत् तथाविधं शरीरं यस्याः सा तथा। "लक्खणवंजणगुणोववेया" लक्षणानि-स्वस्तिकचक्रादीनि व्यञ्जनानि-मषीतिलकादीनि तेषां यो गुणः-प्रशस्तता तेन उपपेता-युक्ता या सा तथा, उप अप इता इतिशब्दत्रयस्य स्थाने शकन्ध्वादिदर्शनात् उपपेतेति स्यात्। "माणुम्माणप्पमाणपडिपुन्नसुजायसव्वंगसुंदरंगी" तत्र मानं-जलद्रोणप्रमाणता, कथं? जलस्थातिभृते कुण्डे पुरुषे निवेशिते यज्जलं निःसरति तद्यदि द्रोणमानं भवति तदा स पुरुषो मानप्राप्त उच्यते, तथा उन्मानम्-अर्धभारप्रमाणता, कथं? तुलारोपितः पुरुषो यद्यर्धभारं तुलयति तदा स उन्मानप्राप्त उच्यते, प्रमाणं तु स्वाङ्गुलेनाष्टोत्तरशतोच्छ्रायिता, ततश्च मानोन्मानप्रमाणैः प्रतिपूर्णानि-अन्यूनानि सुजातानि सर्वाणि अङ्गानि-शिरःप्रभृतीनि यस्मिंस्तत् तथाविधं सुन्दरम् अङ्ग-शरीरं यस्याः सा तथा। "ससिसोमाकारकंतपियदंसणा" शशिवत्सौम्याकारं कान्तं च-कमनीयम् अत एव प्रियं प्रेक्षणां दर्शनं-रूपं यस्याः सा तथा। अत एव सुरूपा स्वरूपतः सा पद्मावती देवी 'कुणिएण सद्धिं उरालाइं

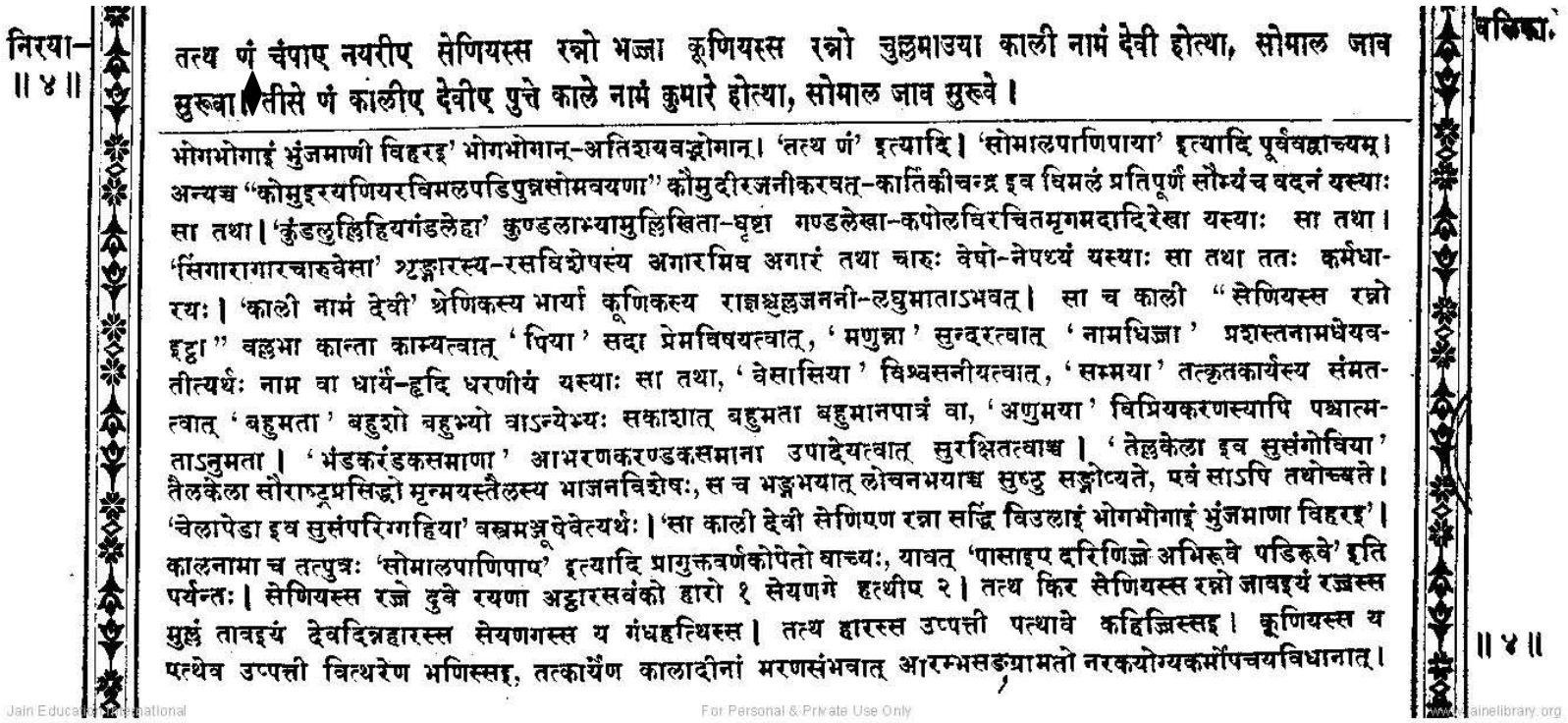
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ कालकुमारस्य कथा आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१९],उपांगसूत्र-[०८] निरयावलिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [५]



निरया- ॥ ४ ॥

तत्थ णं चंपाए नयरीए सेणियस्स रन्नो भज्जा कूणियस्स रन्नो चुल्लमाउया काली नामं देवी होत्था, सोमाल जाव सुरूवा। तीसे णं कालीए देवीए पुत्ते काले नामं कुमारे होत्था, सोमाल जाव सुरूवे।

भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरइ' भोगभोगान्-अतिशयवद्भोगान्। 'तत्थ णं' इत्यादि। 'सोमालपाणिपाया' इत्यादि पूर्ववद्वाच्यम्। अन्यच्च "कोमुइरयणियरविमलपडिपुन्नसोमवयणा" कौमुदीरजनीकरवत्-कार्तिकीचन्द्र इव विमलं प्रतिपूर्णं सौम्यं च वदनं यस्याः सा तथा। 'कुंडलुल्लिहियगंडलेहा' कुण्डलाभ्यामुल्लिखिता-घृष्टा गण्डलेखा-कपोलविरचितमृगमदादिरेखा यस्याः सा तथा। 'सिंगारागारचारुवेसा' शृङ्गारस्य-रसविशेषस्य अगारमिव अगारं तथा चारुः वेषो-नेपथ्यं यस्याः सा तथा ततः कर्मधारयः। 'काली नामं देवी' श्रेणिकस्य भार्या कूणिकस्य राज्ञश्चुल्लजननी-लघुमाताऽभवत्। सा च काली "सेणियस्स रन्नो इट्ठा" वल्लभा कान्ता काम्यत्वात् 'पिया' सदा प्रेमविषयत्वात्, 'मणुन्ना' सुन्दरत्वात् 'नामधिज्जा' प्रशस्तनामधेयवतीत्यर्थः नाम वा धार्यं-हृदि धरणीयं यस्याः सा तथा, 'वेसासिया' विश्वसनीयत्वात्, 'सम्मया' तत्कृतकार्यस्य संमतत्वात् 'बहुमता' बहुशो बहुभ्यो वाऽन्येभ्यः सकाशात् बहुमता बहुमानपात्रं वा, 'अणुमया' चित्प्रियकरणस्यापि पश्चात्मताऽनुमता। 'भंडकरंडकसमाणा' आभरणकरण्डकसमाना उपादेयत्वात् सुरक्षितत्वाच्च। 'तेल्लकेला इव सुसंगोविया' तैलकेला सौराष्ट्रप्रसिद्धो मृन्मयस्तैलस्य भाजनविशेषः, स च भङ्गभयात् लोचनभयाच्च सुष्ठु सङ्गोप्यते, एवं साऽपि तथोच्यते। 'चेलापेडा इव सुसंपरिग्गहिया' वस्त्रमञ्जूषेवेत्यर्थः। 'सा काली देवी सेणिएण रन्ना सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरइ'। कालनामा च तत्पुत्रः 'सोमालपाणिपाए' इत्यादि प्रागुक्तवर्णकोपेतो वाच्यः, यावत् 'पासाइए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे' इति पर्यन्तः। सेणियस्स रन्ने दुवे रयणा अट्ठारसवंको हारो १ सेयणगे हत्थीए २। तत्थ किर सेणियस्स रन्नो जावइयं रज्जस्स मुल्लं तावइयं देवदिन्नहारस्स सेयणगस्स य गंधहत्थिस्स। तत्थ हारस्स उप्पत्ती पत्थावे कहिज्जिस्सइ। कूणियस्स य पत्थेव उप्पत्ती वित्थरेण भणिस्सइ, तत्कार्यंण कालादीनां मरणसंभवात् आरम्भसङ्ग्रामतो नरकयोग्यकर्मोपचयविधानात्।

वग्गो. ॥ ४ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

♦मूलसूत्र-६

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [६]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१९],उपांगसूत्र-[०८] निरयावलिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्ति:

नवरं कूणिकस्तदा कालादिदशकुमारान्वितचम्पायां राज्यं चकार, सर्वेऽपि च ते दोगुन्दुगदेवा इव कामभोगपरायणाश्चत्रिंशाख्या देवाः फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं वरतरूणिसंपिणिहिएहिं बत्तीसइपत्तनिबद्धेहिं नाडएहिं उवगिज्जमाणा भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरंति। हल्लविहल्लनामाणो कूणियस्स चिल्लणादेवीअंगजाया दो भायरा अन्नेऽवि अत्थि। अहुणा हारस्स उप्पत्ती भन्नइ–इत्थ सक्को सेणियस्स भगवंतं पइ निच्चलभत्तिस्स पसंसं करेइ। तओ सेडुयस्स जीवदेवो तब्भत्तिरंजिओ सेणियस्स तुट्ठो संतो अट्ठारसवंकं हारं देइ, दोन्नि य वट्टगोलके देइ। सेणिएण सो हारो चेल्लणाए दिन्नो पिय त्ति काउं, वट्टदुगं सुनंदाए अभयमंतिजणणीए। ताए रुट्ठाए किं अहं चेडरूवं ति काऊण अच्छोडिया भग्गा, तत्थ एगम्मि कुंडलजुयलं एगम्मि वत्थजुयलं तुट्ठाए गहियाणि। अन्नया अभओ सामिं पुच्छइ—'को अपच्छिमो रायरिसि' त्ति। सामिणा उदायिणो वागरिओ, अओ परं बद्धमउडा न पव्वयंति। ताहे अभएण रज्जं दिज्जमाणं न इच्छियं ति पच्छा सेणिओ चिंतेइ 'कोणियस्स दिज्जिहि' त्ति हल्लस्स हत्थी दिन्नो सेयणगो विहल्लस्स देवदिन्नो हारो, अभएण वि पव्वयंतेण सुनंदाए खोमजुयलं कुंडलजुयलं च हल्लविहल्लाणं दिन्नाणि। महया विहवेण अभओ नियजणणीसमेओ पव्वइओ। सेणियस्स चेलणादेवीअंगसमुब्भूया तिन्नि पुत्ता कूणिओ हल्लविहल्ला य। कूणियस्स उप्पत्ती एत्थेव भणिस्सइ। कालीमहाकालीपमुहदेवीणं अन्नासिं तणया सेणियस्स बहवे पुत्ता कालपमुहा संति। अभयम्मि गहियव्वए अन्नया कोणिओ कालाईहिं दसहिं कुमारेहिं समं मंतेइ—'सेणियं सेच्छाविग्घकारयं बंधित्ता पक्कारसभाए रज्जं करेमो' त्ति, तेहिं पडिस्सुयं, सेणिओ बद्धो, पुव्वन्हे अवरन्हे य कससयं दवावेइ सेणियस्स कूणिओ पुव्वभवे वेरियत्तणेण चेल्लणाए कयाइ भोयं न देइ भत्तं वारियं पाणियं न देइ। ताहे चेल्लणा कहऽवि कुम्मासे बालेहिं बंधित्ति सयारंवसुरं पवेसेइ। सा किर धोव्वइ सयवारे सुरा पाणियं सव्वं होइ, तीए पहावेण सो वेयणं न वेएइ। अन्नया तस्स पउमावईदेवीए पुत्तो एवं पिओ अत्थि, मायाए सो भणिओ–

१ 'डोयं' प्रत्यन्तरे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१९],उपांगसूत्र-[०८] निरयावलिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [६]

"दुरात्मन्! तव अंगुली किमिए वमंती पिया मुहे काऊण अत्थियाओ, इयरहा तुमं रोवंतो चेव चिट्ठेसु"। ताहे चित्तं मणागुवसंतं जायं मंए पिया एवं वसणं पाविओ, तस्स अधिई जाया, भुंजंतओ चेव उट्ठाय परसुहत्थगओ, अन्ने भणंति लोहदंडं गहाय, 'नियलाणि भंजामि' त्ति पहाविओ। रक्खवालगो नेहेण भणइ—'एसो सो पावो लोहदंडं परसुं वा गहाय एइ' त्ति। सेणिएण चिंतियं–'न नज्जइ केण कुमारेण मारेहि?'। तउ तालपुडगं विसं खइयं। जाव एइ ताव मओ। सुट्ठुयरं अधिई जाया। ताहे मयकिच्चं काऊण घरमागओ रज्जधुरामुक्कत्तीओ तं चेव चिंतंतो अच्छइ। एवं कालेण विसोगो जाओ। पुणरवि सयणआसणाईए पिहसंतिए दट्ठूण अधिई होइ। तउ रायगिहाओ निग्गंतु चंपं रायहाणिं करेइ। एवं चंपाए कूणिओ राया रज्जं करेइ नियगभायपमुहसयणसंजोगओ। इह निरयावलियासुयखंधे कूणिकवक्तव्यता आदावुल्लिखिता। तत्साहाय्यकरणप्रवृत्तानां कालादीनां कुमाराणां दशानामपि सङ्ग्रामे रथमुशलाख्ये प्रभूतजनक्षयकरणेन नरकयोग्यकर्मोपार्जनसंपादनान्नरकगामितया 'निरयाउ' त्ति प्रथमाध्ययनस्य कालादिकुमारवक्तव्यताप्रतिबद्धस्य एतन्नाम। अथ रथमुशलाख्यसङ्ग्रामस्योत्पत्तौ किं निबन्धनम्। अत्रोच्यते-एवं किलायं सङ्ग्रामः संजातः—चम्पायां कूणिको राजा राज्यं चकार। तस्य चानुजौ हल्लविहल्लाभिधानौ भ्रातरौ पितृदत्तसेचनकाभिधाने गन्धहस्तिनि समारूढौ दिव्यकुण्डलादिव्यवसनदिव्यहारविभूषितौ विलसन्तौ दृष्ट्वा पद्मावत्यभिधाना कूणिकराजस्य भार्या कदाचिद्दन्तिनोऽपहाराय तं कूणिकराजं प्रेरितवती—"कर्णविषलग्नकृतोऽतोऽयमेव कुमारो राजा तत्त्वतः, न त्वं, यस्येदृशा विलासाः"। प्रज्ञाप्यमानाऽपि सा न कथञ्चिदस्यार्थस्योपरमति, तत्प्रेरितकूणिकराजेन तौ याचितौ। तौ च तद्भयाद्वैशाल्यां नगर्यां स्वकीयमातामहस्य चेटकाभिधानस्य राज्ञोऽन्तिके सहस्तिकौ सान्तःपुरपरिवारितौ गतवन्तौ। कूणिकेन च दूतप्रेषणेन तौ याचितौ। न च तेन प्रेषितौ, कूणिकस्य तयोश्च तुल्यमातृकत्वात्। ततः कूणिकेन भणितं–'यदि न प्रेषयसि तदा युद्धसज्जो भव'। तेनापि

१ 'तओ तुमए' प्रत्यन्तरे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [६]

ततेणं से काले कुमारे अन्नया कयाइ तिहिं दंतीसहस्सेहिं तिहिं रहसहस्सेहिं तिहिं आससहस्सेहिं तिहिं मणुयकोडीहिं गरुलवूहे। एक्कारसमेणं खंडेणं कूणिएणं

भणितम्—'एष सज्जोऽस्मि'। ततः कूणिकेन सह कालादयो दश स्वीया भिन्नमातृका भ्रातरो राजानश्चेटकेन सह सङ्ग्रामाय याताः। तत्रैकैकस्य त्रीणि त्रीणि हस्तिनां सहस्राणि, एवं रथानामश्वानां च, मनुष्याणां च प्रत्येकं तिस्रस्तिस्रः कोट्यः। कूणिकस्याप्येवमेव। तत्र एकादशभागीकृतराज्यस्य कूणिकस्य कालादिभिः सह निजेन एकादशांशेन सङ्ग्रामे काल उपगतः। एतमर्थं वक्तुमाह-'तए णं से काले' इत्यादिना। एनं च व्यतिकरं ज्ञात्वा चेटकेनाप्यष्टादश गणराजानौ मेलिताः, तेषां चेटकस्य च प्रत्येकमेवमेव हस्त्यादिबलपरिमाणं, ततो युद्धं संप्रलग्नम्। चेटकराजस्य तु प्रतिपन्नव्रतत्वेन दिनमध्ये एकमेव शरं मुञ्चति अमोघबाणश्च सः। तत्र च कूणिकसैन्ये गरुडव्यूहः चेटकसैन्ये (च) सागरव्यूहो विरचितः। ततश्च कूणिकस्य कालो दण्डनायको निजबलान्वितो युध्यमानस्तावद्गतो यावच्चेटकः, ततस्तेन एकशरनिर्घातेनासौ निपातितः १। भग्नं च कूणिकबलम्, गते च द्वे अपि बले निजं निजमावासस्थानम्। द्वितीयेऽह्नि सुकालो नाम दण्डनायको निजबलान्वितो युध्यमानस्तावद्गतो यावच्चेटकः, एवं सोऽप्येकशरेण निपातितः २। एवं तृतीयेऽह्नि महाकालः, सोऽप्येवम् ३। चतुर्थेऽह्नि कृष्णकुमारस्तथैव ४, पञ्चमे सुकृष्णः ५, षष्ठे महाकृष्णः ६, सप्तमे वीरकृष्णः ७, अष्टमे रामकृष्णः ८, नवमे पितृसेनकृष्णः ९ दशमे पितृमहासेनकृष्णः १० चेटकेनैकैकशरेण निपातिताः। एवं दशसु दिवसेषु चेटकेन विनाशिता दशापि कालादयः। एकादशे तु दिवसे चेटकजयार्थं देवताराधनाय कूणिकोऽष्टमभक्तं प्रजग्राह। ततः शक्रचमरावागतौ। ततः शक्रो बभाषे-"चेटकः श्रावक इत्यहं न तं प्रति प्रहरामि, नवरं भवन्तं संरक्षामि"। ततोऽसौ तद्रक्षार्थं वज्रप्रतिरूपकमभेद्यकवचं कृतवान्। चमरस्तु द्वौ सङ्ग्रामौ विकुर्वितवान् महाशिलाकण्टकं रथमुशलं चेति। तत्र महाशि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [७]

रन्ना सद्धिं रहमुसलं संगामं ओयाए। ♦ततेणं तीसे कालीए देवीए अन्नदा कदाइ कुडुंबजागरियं जागरमाणीए अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु ममं पुत्ते कालकुमारे तिहिं दंतिसहस्सेहिं जाव ओयाए। से मन्ने किं जतिस्सति? नो जतिस्सति? जीविस्सइ? नो जीविस्सति? पराजिणिस्सइ? णो पराजिणिस्सइ? काले णं कुमारे णं अहं जीवमाणं पासिज्जा? ओहयमण जाव झियाइ। ते णं काले णं ते णं समए णं समणे भगवं महावीरे समोसरिते। परिसा निग्गया। तते णं तीसे कालीए देवीए इमीसे कहाए लद्धट्ठाए समाणीए अयमेतारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–

लेव कण्टको जीवितभेदकत्वान्महाशिलाकण्टकः। ततश्च यत्र तृणशूकादिनाऽप्यभिहतस्याश्वहस्त्यादेर्महाशिलाकण्टकेनेवास्याहतस्य वेदना जायते, स सङ्ग्रामो महाशिलाकण्टक एवोच्यते। 'रहमुसले' त्ति यत्र रथो मुशलेन युक्तः परिधावन् महाजनक्षयं कृतवान् अतो रथमुशलः। 'ओयाए' त्ति उपयातः--संप्राप्तः। 'किं जइस्सइ' त्ति जयश्लाघां प्राप्स्यति। परा जेष्यते-- अभिभविष्यति परसैन्यं परानभिभविष्यति उत नेति कालनामानं पुत्रं जीवन्तं द्रक्ष्याम्यहं न वेत्येवम् उपहतो मनःसंकल्पो युक्तायुक्तविवेचनं यस्याः सा उपहतमनःसंकल्पा। यावत्करणात् "करयलपल्हत्थियमुही अट्टज्झाणोवगया ओमंथियवयणनयणकमला" ओमंथियं- अधोमुखीकृतं वदनं च नयनकमले च यया सा तथा। 'दीणविवन्नवयणा' दीनस्येव विवर्णं वदनं यस्याः सा तथा। 'झियाइ' त्ति आर्तध्यानं ध्यायति, 'मणोमाणसिएणं दुक्खेणं अभिभूया' मनसि जातं मानसिकं मनस्येव यद्वर्तते मानसिकं दुःखं वचनेनाप्रकाशितत्वात् तन्मनोमानसिकं तेन अबहिर्वर्तिनाऽभिभूता। 'ते णं काले णं' इत्यादि। 'अयमेयारूवे' त्ति अयमेतद्रूपो वक्ष्यमाणरूपः 'अज्झत्थिए' त्ति आध्यात्मिकः-आत्मविषयः चिन्तितः-स्मरणरूपः, प्रार्थितः-लब्धुमाशंसितः, मनोगतः-मनस्येव वर्तते यो न बहिः प्रकाशितः, संकल्पो-विकल्पः, समुत्पन्नः-प्रादुर्भूतः। तमेवाह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

♦मूलसूत्र-७

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [७]

एवं खलु समणे भगवं० पुव्वाणुपुव्विं इहमागते जाव विहरति। तं महाफलं खलु तहारूवाणं जाव विउलस्स अट्ठस्स गहणताए, तं गच्छामि णं समणं जाव पज्जुवासामि। इमं च णं एयारूवं वागरणं पुच्छिस्सामि त्तिकट्टु एवं संपेहेइ

'एवमि'त्यादि। यावत्करणात् "पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दुइज्जमाणे इहमागए इह संपत्ते इह समोसढे, इहेव चंपाए नयरीए पुन्नभद्दे चेइए अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ"। 'तं महाफलं खलु' भो देवाणुप्पिया! 'तहारूवाणं' अरहंताणं, भगवंताणं, नामगोयस्स वि सवणयाए, किमंग पुण अभिगमणवंदणनमंसणपडिपुच्छणपज्जुवासणाए! एगस्स वि आरियस्स धम्मियस्स वयणस्स सवणयाए, किमंग पुण 'विउलस्स अट्ठस्स गहणयाए' गच्छामि णं' अहं 'समणं' भगवं महावीरं वंदामि नमंसामि सक्कारेमि सम्माणेमि कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं 'पज्जुवासामि,' एवं नो पेच्चभवे हियाए सुहाए खमाए निस्सेयसाए आणुगामियत्ताए भविस्सइ 'इमं च णं एयारूवं वागरणं पुच्छिस्सामि त्तिकट्टु एवं संपेहेति' संप्रेक्षते-पर्यालोचयति, सुगमम्, नवरं 'इहमागए' त्ति चम्पायां, 'इह संपत्ते' त्ति पूर्णभद्रे चैत्ये, 'इह समोसढे' त्ति साधूचितावग्रहे, एतदेवाह-इहेव चंपाए इत्यादि। 'अहापडिरूवं' ति यथाप्रतिरूपम् उचितमित्यर्थः। 'तं' इति तस्मात्, 'महाफलं' ति महत्फलमायत्यां भवतीति गम्यं, 'तहारूवाणं' ति तत्प्रकारस्वभावानां-महाफलजननस्वभावानामित्यर्थः। 'नामगोयस्स' त्ति नाम्नो-यादृच्छिकस्याभिधानस्य, गोत्रस्य-गुणनिष्पन्नस्य 'सवणयाए' त्ति श्रवणेन, 'किमंग पुण' त्ति किंपुनरिति पूर्वोक्तार्थस्य विशेषद्योतनार्थम् अङ्गेत्यामन्त्रणे, यद्वा परिपूर्णे एष्यार्थं शब्दो विशेषणार्थः, अभिगमनं, वन्दनं-स्तुतिः, नमनं-प्रणमनं, प्रतिपृच्छनं-शरीरादिवार्ताप्रश्नं, पर्युपासनं-सेवा, तद्भावस्तत्ता तया, एकस्यापि आर्यस्य आर्यप्रणेतृकत्वात्, धार्मिकस्य धर्मप्रतिबद्धत्वात्, वन्दामि-वन्दे, स्तौमि, नमस्यामि-प्रणमामि, सत्कारयामि-आदरं करोमि वस्त्राद्यर्चनं वा, सन्मानयामि उचितप्रतिपत्त्येति। कल्याणं-कल्याणहेतुं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१९],उपांगसूत्र-[०८] निरयावलिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [७]

संपेहित्ता कोडुंबिय पुरिसे सद्दावेति २ त्ता एवं वदासि खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! धम्मियं जाणप्पवरं जुत्तमेव उवट्ठवेह, उवट्ठवित्ता जाव पच्चप्पिणंति । तते णं सा काली देवी ण्हाया कयबलिकम्मा जाव अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा बहूहिं खुज्जाहिं जाव महत्तरगविंदपरिक्खित्ता अंतेउराओ निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव बाहिरिया

मङ्गलं दुरितोपशमनहेतुं, देवं चैत्यमिव चैत्यं, पर्युपासयामि-सेवे, एतत्, नोऽस्माकं, प्रेत्यभवे-जन्मान्तरे, हिताय पथ्यान्नवत्, सुखाय-शर्मणे, क्षमाय-सङ्गतत्वाय, निःश्रेयसाय-मोक्षाय, आनुगामिकत्वाय-भवपरम्परासु सानुबन्धसुखाय, भविष्यति, इति कृत्वा-इति हेतोः, संपेक्षते पर्यालोचयति, संप्रेक्ष्य चैवमवादीत्-शीघ्रमेव 'भो देवाणुप्पिया'! धर्माय नियुक्तं धार्मिकं, यानप्रवरं, 'चाउग्घंटं आसरहं' ति चतस्रो घण्टाः पृष्ठतोऽग्रतः पार्श्वतश्च लम्बमाना यस्य स चतुर्घण्टः, अश्वयुक्तो रथोऽश्वरथस्तमश्वरथं, युक्तमेवाश्वादिभिः,उपस्थापयत-प्रगुणीकुरुत,प्रगुणीकृत्य मम समर्पयत। 'ण्हाय' त्ति कृतमज्जना, स्नानानन्तरं 'कयबलिकम्म' त्ति स्वगृहे देवतानां कृतबलिकर्मा, 'कयकोउयमंगलपायच्छित्त' त्ति कृतानि कौतुकमङ्गलान्येव प्रायश्चित्तानीव दुःस्वप्नादिव्यपोहायावश्यंकर्तव्यत्वात् प्रायश्चितानि यया सा तथा। तत्र कौतुकानि-मषीपुण्ड्रादीनि, मङ्गलादीनि-सिद्धार्थदध्यक्षतदूर्वाङ्कुरादीनि, 'सुद्धप्पावेस्साइं वत्थाइं परिहिया' 'अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा' (इति) सुगमम्, 'बहूहिं खुज्जाहिं जावे'त्यादि, तत्र कुब्जिकाभिः-वक्रजङ्घाभिः, चिलातीभिः-अनार्यदेशोत्पन्नाभिः, वामनाभिः-ह्रस्वशरीराभिः, वटभाभिः-मडहकोष्ठाभिः, बर्बरीभिः-बर्बरदेशसंभवाभिः, बकुशिकाभिः यौनकाभिः पण्हकाभिः इसिनिकाभिः वासिनिकाभिः लासिकाभिः लकुसिकाभिः द्रविडीभिः सिंहलीभिः आरबीभिः पक्वणीभिः बहुलीभिः मुसण्डीभिः शबरीभिः पारसीभिः नानादेशाभिः-बहुविधानार्यदेशोत्पन्नाभिरित्यर्थः, विदेशस्तदीयदेशापेक्षया चम्पानगरी विदेशः तस्य परिमण्डिकाभिः, 'इंगियचिंतियपत्थियवियाणियाहिं' तत्र इङ्गितेन-नयनादिचेष्टाविशेषेण चिन्तितं च-परेण हृदि स्थापितं प्रार्थितं च-अभिल-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [७]

उवट्ठाणसाला जेणेव धम्मिए जाणप्पवरे तेणेव उवागच्छइ, धम्मियं जाणप्पवरं दुरुहति २ नियगपरियालसंपरिवुडा चंपं नयरीं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छति२ जेणेव पुन्नभद्दे चेइए तेणेव उवागच्छइ २ छत्तादीए जाव धम्मियं जाणप्पवरं ठवेति २ धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहति २ बहूहिं जाव खुज्जाहिं चिलायपरिक्खित्ता जेणेव समणे भगवं [महावीरे] तेणेव उवागच्छति २ समणं भगवं [महावीरं] तिखुत्तो वंदति ७ ठिया चेव सपरिवारा सुस्सूसमाणा नमंसमाणा अभिमुहा विणएणं पंजलिउडा पज्जुवासति। तते णं समणे भगवं जाव कालीए देवीए तीसे य महतिमहालियाए धम्मकहा भाणियव्वा जाव समणोवासए वा समणोवासिया वा विहरमाणा आणाए आराहए भवति। तते णं सा काली देवी समणस्स भगवओ अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म जाव हियया समणं भगवं तिखुत्तो जाव एवं वदासि–एवं खलु भंते मम पुत्ते काले कुमारे तिहिं दंतिसहस्सेहिं जाव रहमुसलसंगामं ओयाते। से णं भंते किं जइस्सति? नो जइस्सति? जाव काले णं कुमारे अहं जीवमाणं पासिज्जा? कालीति समणे भगवं कालिं देविं एवं वयासी–एवं खलु काली! तव पुत्ते काले कुमारे तिहिं दंतिसहस्सेहिं जाव कूणिएणं रन्ना सद्धिं

षितं च विज्ञानन्ति याम्तास्तथा ताभिः, स्वस्वदेशे यन्नेपथ्यं परिधानादिरचना तद्वद्गृहीतो वेषो यकाभिस्तास्तथा ताभिः, निपुणानामधेयकुशला यास्तास्तथा ताभिः, अत एव विनीताभिः युक्तेति गम्यते, तथा चेटिकाचक्रवालेन अर्थात् स्वदेशसंभवेन वृन्देन परिक्षिप्ता या सा तथा। 'उवट्ठाणसाला' उपवेशनमण्डपः। 'दुरुहइ' आरोहति। यत्रैव श्रमणो भगवान् तत्रैवोपागता-संप्राप्ता. तदनु महावीरं त्रिःकृत्वो वन्दते–स्तुत्या, नमस्यति–प्रणमति, स्थिता चैव ऊर्ध्वस्थानेन, कृताञ्जलिपुटा अभिसंमुखा सती पर्युपास्ते। धर्मकथाश्रवणानन्तरं 'त्रिः कृत्वो' वन्दयित्वा (वन्दित्वा) एवमवादीत्–'एवं खलु भंते' इत्यादि सुगमम्। अत्र कालीदेव्याः पुत्रः कालनामा कुमारो हस्तितुरगरथपदातिरूपनिजसैन्यपरिवृतः कूणिकराजनियुक्तश्चेटकराजेन सह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रहमुसलं संगामं संगामेमाणे हयमहियपवरवीरघातितनिवडितचिंधज्झयपडागे निरालोयातो दिसातो करेमाणे चेडगस्स रन्नो सपक्खं सपडिदिसिं रहेणं पडिरहं हव्वमागते। ततेणं से चेडए राया कालं कुमारं एज्जमाणं पासति, कालं एज्जमाणं पासित्ता आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे धणुं परामुसति २ उसुं परामुसइ २ वइसाहं ठाणं ठाति २ आययकण्णायतं उसुं करेति २ कालं कुमारं एगाहच्चं कूडाहच्चं जीवियाओ ववरोवेति। तं कालगते णं काली ! काले कुमारे नो चेव णं तुमं काले कुमारं जीवमाणं

रथमुशलं सङ्ग्रामयन् सुभटैश्चेटकसत्कैर्यदस्य कृतं तदाह–'हयमहियपवरवीरघाइयनिवडियचिंधज्झयपडागे' (हतः) सैन्यस्य हतत्वात्, मथितो मानस्य मन्थनात्, प्रवरवीराः—सुभटा घातिताः–विनाशिता यस्य, तथा निपातिताभिहध्वजाः–गरुडादिचिह्नयुक्ताः केतवः पताकाश्च यस्य स तथा, ततः पदचतुष्टयस्य कर्मधारयः। अत एव 'निरालोयाओ दिसाओ करेमाणे' त्ति निर्गतालोका दिशः कुर्वन् चेटकराजः (स्य) 'सपक्खं सपडिदिसिं' ति सपक्षं–समानपार्श्वं समानवामेतरपार्श्वतया, सप्रतिदिक्–समानप्रतिदिक्कथाऽत्यर्थमभिमुख इत्यर्थः, अभिमुखागमने हि परस्परस्य समाविव दक्षिणवामपार्श्वौ भवतः, एवं विदिशावपीति। इत्येवं स कालः चेटकराजस्य रथेन प्रतिरथं 'हव्वं' शीघ्रम् आसन्नं–संमुखीनम् आगच्छन्तं दृष्ट्वा चेटकराजः तं प्रति 'आसुरुत्ते' रुष्टे कुविए चंडिक्किए 'मिसिमिसेमाणे' त्ति, तत्र आशु–शीघ्रं रुष्टः–क्रोधेन विमोहितो यः स आशुरुष्टः, आसुरं वा–असुरसत्कं कोपेन दारुणत्वात् उक्तं–भणितं यस्य स आसुरोक्तः, रुष्टो–रोषवान् 'कुविए' त्ति मनसा कोपवान्, चाण्डिक्यितो–दारुणीभूतः 'मिसिमिसेमाणे' त्ति क्रोधज्वालया ज्वलन्, 'तिवलियं भिउडिं निडाले साहट्टु' त्ति त्रिवलिकां भृकुटिं–लोचनविकारविशेषं ललाटे संहृत्य–विधाय, धनुः परामृशति, बाणं परामृशति, विशाखस्थानेन तिष्ठति, 'आययकण्णायतं' ति आकर्णान्तं बाणमाकृष्य 'एगाहच्चं' ति एकयैवाहत्या आहननं प्रहारो यत्र जीवितव्यपरोपणे तदेकाहत्यं यथा भवति एवं, कथमित्याह–'कूडाहच्चं' कूटस्येव–पाषाणमयमहामारणयन्त्रस्येव आहत्या आहननं यत्र तत्कूटाहत्यं, 'भगवतोक्तेयं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [७]

पासिहिसि। तते णं सा काली देवी समणस्स भगवओ अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म महया पुत्तसोएणं अप्फुण्णा समाणी परसुनियत्तावि चंपगलता धस त्ति धरणीतलंसि सव्वंगेहिं संनिवडिया। तते णं सा काली देवी मुहुत्तंतरेणं आसत्था समाणी उट्ठाए उट्ठेति उट्ठित्ता समणं भगवं [महावीरं] वंदइ नमंसइ २ एवं वयासी–एवमेयं भंते! तहमेयं भंते! अवितहमेयं भंते! असंदिद्धमेयं भंते! सच्चेणं एसमट्ठे से जहेतं तुब्भे वदह त्तिकट्टु समणं भगवं वंदइ नमंसइ २, तमेव धम्मियं जाणप्पवरं दुरुहति२ जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगता। ♦ भंते त्ति भगवं गोयमे जाव वंदति नमंसति २ एवं वयासी–कालेणं भंते! कुमारे तिहिं दंतिसहस्सेहिं जाव रहमुसलं संगामं संगामेमाणे चेडएणं रन्ना एगाहच्चं कूडाहच्चं जीवियाओ ववरोविते समाणे कालमासे कालं किच्चा कहिं गते? कहिं उववन्ने? गोयमाति समणे भगवं गोयमं एवं वदासि–एवं खलु गोयमा! काले कुमारे तिहिं दंतिसहस्सेहिं जाव जीवियाओ ववरोविते समाणे कालमासे कालं किच्चा चउत्थीए पंकप्पभाए पुढवीए हेमाभे नरगे दससागरोवमठिइएसु नेरइएसु नेरइयत्ताए उववन्ने। ♦ कालेणं भंते! कुमारे केरिसएहिं आरंभेहिं केरिसएहिं (समारंभेहिं केरिसएहिं) आरंभसमारंभेहिं केरिसएहिं भोगेहिं केरिसएहिं संभोगेहिं केरिसएहिं भोगसंभोगेहिं केरिसेण वा असुभकडकम्मपब्भारेणं कालमासे कालं किच्चा चउत्थीए पंकप्पभाए पुढवीए जाव नेरइयत्ताए उववन्ने? एवं खलु गोयमा! ते णं कालेणं ते णं समएणं रायगिहे नामं नयरे होत्था, रिद्धत्थिमियसमिद्धा। तत्थ णं रायगिहे नयरे सेणिए नामं राया होत्था, महया। तस्स णं सेणियस्स रन्नो नंदा नामं देवी होत्था, सोमाला जाव विहरति। तस्स णं सेणि-

व्याख्या, ''अप्फुण्णा समाणी' व्याप्ता सती। शेषं सुगमं यावत्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

♦ मूलसूत्र-८,९

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१९],उपांगसूत्र-[०८] निरयावलिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [९]

यस्स रन्नो नंदाए देवीए अत्तए अभए नामं कुमारे होत्था, सोमाले जाव सुरूवे साम० दंडे जहा चित्तो जाव रज्जधुराए चिंतए यावि होत्था। तस्स णं सेणियस्स रन्नो चेल्लणा नामं देवी होत्था, सोमाले जाव विहरइ♦ततेणं सा चिल्लणा देवी अन्नया कयाइं तंसि तारिसयंसि वासघरंसि जाव सीहं सुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा, जहा पभावती, जाव सुमिणपाढगा पडिविसज्जिता, जाव चिल्लणा से वयणं पडिच्छित्ता जेणेव सए भवणे तेणेव अणुपविट्ठा। तते णं तीसे चेल्लणाए देवीए अन्नया कयाइं तिण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अयमेयारूवे दोहले पाउब्भूए–धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव जम्मजीवियफले जाओ णं सेणियस्स रन्नो उदरवलीमंसेहिं सोल्लेहि य तलिएहि य भज्जितेहि य सुरं च जाव पसन्नं च आसाएमाणीओ जाव परिभाएमाणीओ दोहलं पविणेंति। तते णं सा चेल्लणा देवी तंसि दोहलंसि अविणिज्जमाणंसि सुक्का भुक्खा निम्मंसा ओलुग्गा ओलुग्गसरीरा नित्तेया दीणविमणवयणा पंडुइतमुही ओमंथियनयणवयणकमला जहोचियं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारं अपरिभुंजमाणी करतलमलियव्व कमलमाला ओहतमणसंकप्पा जाव झियायति। तते णं तीसे चेल्लणाए देवीए अंगपडिया-

‘सोल्लेहि य’ त्ति पक्वैः ‘तलिएहि’ त्ति स्नेहेन पक्वैः, ‘भज्जिएहि’ भ्रष्टैः ‘पसन्नं च’ द्राक्षादिद्रव्यजन्यो मनःप्रसत्तिहेतुः ‘आसाएमाणीओ’ त्ति ईषत्स्वादयन्त्यो बहु च त्यजन्त्य इक्षुखण्डादेरिव, ‘परिभाएमाणीओ’ सर्वमुपभुञ्जानाः (परस्परं ददन्त्यः) ‘सुक्क’ त्ति शुष्केव शुष्काभा रुधिरक्षयात्, ‘भुक्ख’ त्ति भोजनाकरणतो बुभुक्षितेव, ‘निम्मंसा’ मांसोपचयाभावतः, ‘ओलुग्ग’ त्ति अवरुग्णा–भग्नमनोवृत्तिः, ‘ओलुग्गसरीरा’ भग्नदेहा, निस्तेजा–गतकान्तिः दीना–विमनोवदना, पाण्डुकितमुखी–पाण्डुरीभूतवदना, ‘ओमंथिय’ त्ति अधोमुखीकृतं, उपहतमनःसङ्कल्पा–गतयुक्तायुक्तविवेचना,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

♦ मूलसूत्र-१०

***चेल्लणापुत्र कोणिकस्य गर्भावस्था, जन्म एवं राज-अवस्थाया: वृत्तान्त:

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१०]

रियातो चेल्लणं देविं सुक्कं भुक्खं जाव झियायमाणीं पासंति, पासित्ता जेणेव सेणिए राया तेणेव उवागच्छंति, २ करतलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु सेणियं रायं एवं वयासी–एवं खलु सामी ! चेल्लणा देवी न याणामो केणइ कारणेणं सुक्का भुक्खा जाव झियायति। तते णं से सेणिए राया तासिं अंगपडियारियाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म तहेव संभंते समाणे जेणेव चेल्लणा देवी तेणेव उवागच्छइ २ चिल्लणं देविं सुक्कं भुक्खं जाव झियायमाणिं पासित्ता एवं वयासी–किन्नं तुमं देवाणुप्पिए ! सुक्का भुक्खा जाव झियायसि ? तते णं सा चेल्लणा देवी सेणियस्स रण्णो एयमट्ठं णो आढाति णो परिजाणाति तुसिणीया संचिट्ठति। तते णं से सेणिए राया चिल्लणं देविं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी–किं णं अहं देवाणुप्पिए! एयमट्ठस्स नो अरिहे सवणयाए जं णं तुमं एयमट्ठं रहस्सीकरेसि? तते णं सा चेल्लणा देवी सेणिएणं रन्ना दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्ता समाणी सेणियं रायं एवं वयासी–णत्थि णं सामी ! से केति अट्ठे जस्स णं तुब्भे अणरिहा सवणयाए, नो चेवणं इमस्स अट्ठस्स सवणयाए, एवं खलु सामी! ममं तस्स ओरालस्स जाव महासुमिणस्स तिण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अयमेयारूवे दोहले पाउब्भूए धन्नातो णं तातो अम्मयाओ जाओ णं तुब्भं उदरवलिमंसेहिं सोल्लेएहि य जाव दोहलं विणेंति। तते णं अहं सामी ! तंसि दोहलंसि अविणिज्जमाणी सुक्का भुक्खा जाव झियायामि। तते णं से

'करयल० कट्टु' त्ति 'करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु सेणियं रायं एवं वयासी' स्पष्टम्। एनमर्थं नाद्रियते–अत्रार्थे आदरं न कुरुते, न परिजानीते–नाभ्युपगच्छति, कृतमौना तिष्ठति।' धन्नाओ णं कयलक्खणाओ णं सुलद्धे णं तासिं जम्मजीवियफले' 'अविणिज्जमाणंसि' त्ति अपूर्यमाणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१०]

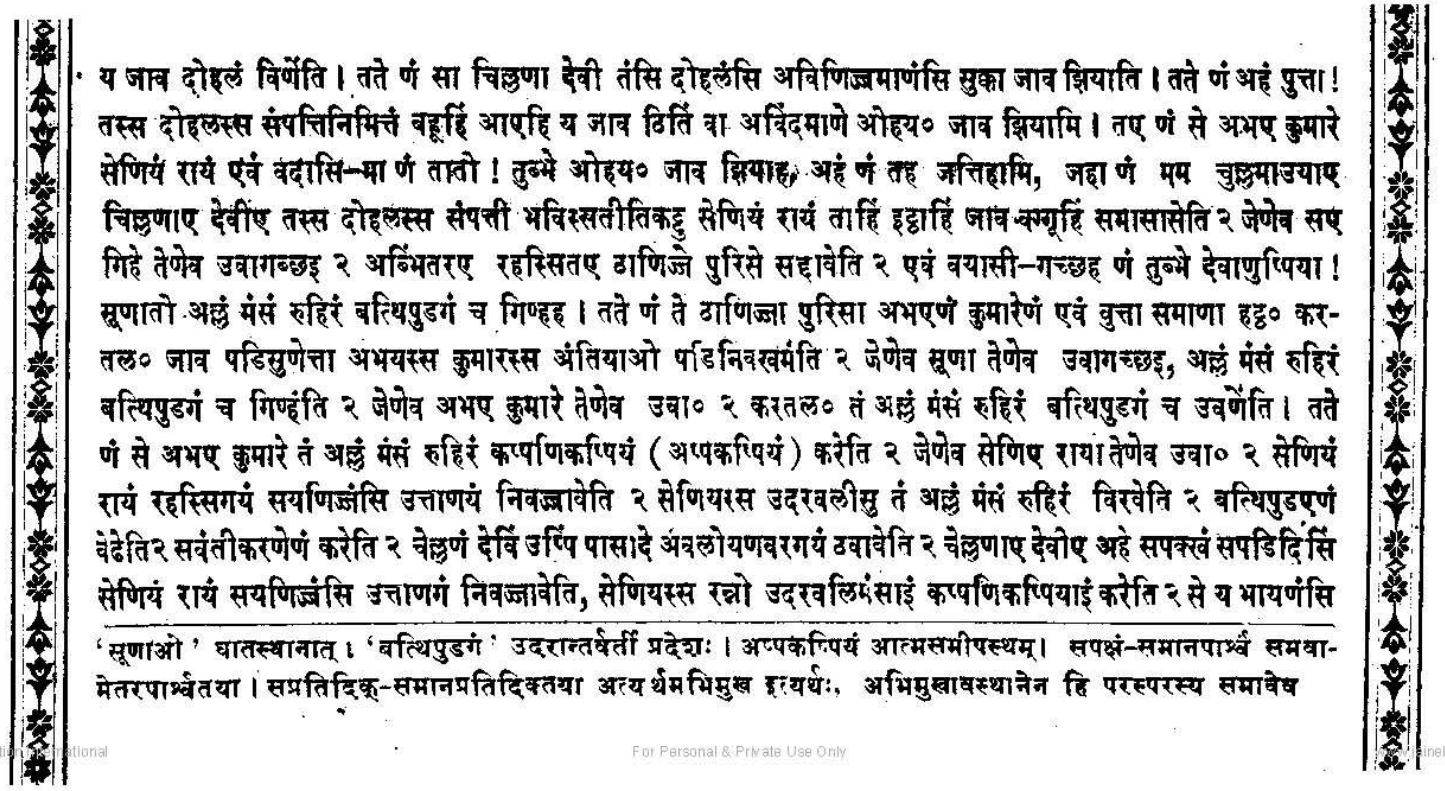
सेणिए राया चेल्लणं देविं एवं वदासि–मा णं तुमं देवाणुप्पिए ! ओहय० जाव झियायहि, अहं णं तहा जत्तिहामि जहा णं तव दोहलस्स संपत्ती भविस्सतीतिकट्टु चिल्लणं देविं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुन्नाहिं मणामाहिं ओरालाहिं कल्लाणाहिं सिवाहिं धन्नाहिं मंगल्लाहिं मियमधुरसस्सिरीयाहिं वग्गूहिं समासासेति, चिल्लणाए देवीए अंतियातो पडिनिक्खमति २ जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे निसीयति, तस्स दोहलस्स संपत्तिनिमित्तं बहूहिं आएहिं उवाएहिं य उप्पत्तियाए य वेणइयाए य कम्मियाहि य पारिणामियाहि य परिणामेमाणे २ तस्स दोहलस्स आयं वा उवायं वा ठिइं वा अविंदमाणे ओहयमणसंकप्पे जाव झियायति। इमं च णं अभए कुमारे ण्हाए जाव सरीरे, सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमति २ जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सेणिए राया तेणेव उवागच्छति, सेणियं रायं ओहय० जाव झियायमाणं पासति २ एवं वदासी–अन्नया णं तातो ! तुब्भे ममं पासित्ता हट्ठ जाव हियया भवह, किन्नं तातो ! अज्ज तुब्भे ओहय० जाव झियायह ? तं जइ णं अहं तातो ! एयमट्ठस्स अरिहे सवणयाए तो णं तुब्भे मम एयमट्ठं जहाभूतमवितहं असंदिद्धं पडिकहेह, जा णं अहं तस्स अट्ठस्स अंतगमणं करेमि। तते णं से सेणिए राया अभयं कुमारं एवं वदासि–णत्थि णं पुत्ता ! से केइ अट्ठे जस्स णं तुमं अणरिहे सवणयाए, एवं खलु पुत्ता ! तव चुल्लमाउयाए चेल्लणाए देवीए तस्स ओरालस्स जाव महासुमिणस्स तिण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं जाव जाओ णं मम उदरवलीमंसेहिं सोल्लेहि

'जत्तिहामि' त्ति यतिष्ये, 'इट्ठाहिं' इट्टाद्वीत्यादीनां व्याख्या प्रागिहैवोक्ता। 'उवट्ठाणसाला' आस्थानमण्डपः। 'ठिइं वा' स्थानं 'अविंदमाणे' अलभमानः। अंतगमनं–पारगमनं तत्संपादनेन।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१०]



य जाव दोहलं विणेंति। तते णं सा चिल्लणा देवी तंसि दोहलंसि अविणिज्जमाणंसि सुक्का जाव झियाति। तते णं अहं पुत्ता! तस्स दोहलस्स संपत्तिनिमित्तं बहूहिं आएहि य जाव ठितिं वा अविंदमाणे ओहय० जाव झियामि। तए णं से अभए कुमारे सेणियं रायं एवं वदासि–मा णं तातो! तुब्भे ओहय० जाव झियाह, अहं णं तह जत्तिहामि, जहा णं मम चुल्लमाउयाए चिल्लणाए देवीए तस्स दोहलस्स संपत्ती भविस्सतीतिकट्टु सेणियं रायं ताहिं इट्ठाहिं जाव वग्गूहिं समासासेति २ जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ २ अब्भिंतरए रहस्सितए ठाणिज्जे पुरिसे सद्दावेति २ एवं वयासी–गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! सूणातो अल्लं मंसं रुहिरं वत्थिपुडगं च गिण्हह। तते णं ते ठाणिज्जा पुरिसा अभएणं कुमारेणं एवं वुत्ता समाणा हट्ठ० करतल० जाव पडिसुणेत्ता अभयस्स कुमारस्स अंतियाओ पडिनिक्खमंति २ जेणेव सूणा तेणेव उवागच्छइ, अल्लं मंसं रुहिरं वत्थिपुडगं च गिण्हंति २ जेणेव अभए कुमारे तेणेव उवा० २ करतल० तं अल्लं मंसं रुहिरं वत्थिपुडगं च उवणेंति। तते णं से अभए कुमारे तं अल्लं मंसं रुहिरं कप्पणिकप्पियं (अप्पकप्पियं) करेति २ जेणेव सेणिए राया तेणेव उवा० २ सेणियं रायं रहस्सिगयं सयणिज्जंसि उत्ताणयं निवज्जावेति २ सेणियस्स उदरवलीसु तं अल्लं मंसं रुहिरं विरवेति २ वत्थिपुडएणं वेढेति २ सवंतीकरणेणं करेति २ चेल्लणं देविं उप्पिं पासादे अवलोयणवरगयं ठवावेति २ चेल्लणाए देवीए अहे सपक्खं सपडिदिसिं सेणियं रायं सयणिज्जंसि उत्ताणगं निवज्जावेति, सेणियस्स रन्नो उदरवलिमंसाइं कप्पणिकप्पियाइं करेति २ से य भायणंसि

'सूणाओ' घातस्थानात्। 'वत्थिपुडगं' उदरान्तर्वर्ती प्रदेशः। अप्पकप्पियं आत्मसमीपस्थम्। सपक्षं–समानपार्श्वं समवामेतरपार्श्वतया। सप्रतिदिक्–समानप्रतिदिक्तया अत्यर्थमभिमुख इत्यर्थः, अभिमुखावस्थानेन हि परस्परस्य समावेष

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१०]

पक्खिवति । तते णं से सेणिए राया अलियमुच्छियं करेति २ मुहुत्तंतरेणं अन्नमन्नेणं सद्धिं संलवमाणे चिट्ठति। तते णं से अभयकुमारे सेणियस्स रन्नो उदरवलिमंसाइं गिण्हेति २ जेणेव चिल्लणा देवी तेणेव उवागच्छइ २ चेल्लणाए देवीए उवणेति। तते णं सा चिल्लणा सेणियस्स रन्नो तेहिं उदरवलिमंसेहिं सोल्लेहिं जाव दोहलं विणेति। तते णं सा चिल्लणा देवी संपुण्णदोहला एवं संमाणियदोहला विच्छिन्नदोहला तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहति ♦ ततेणं तीसे चेल्लणाए देवीए अन्नया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि अयमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था–जइ ताव इमेणं दारएणं गब्भगएणं चेव पिउणो उदरवलिमंसाणि खाइयाणि तं सेयं खलु मए एयं गब्भं साडित्तए वा पाडित्तए वा गालित्तए वा विद्धंसित्तए वा एवं संपेहेति २ तं गब्भं बहूहिं गब्भसाडणेहि य गब्भपाडणेहि य गब्भगालणेहि य गब्भविद्धंसणेहि य इच्छति साडित्तए वा पाडित्तए वा गालित्तए वा विद्धंसित्तए वा, नो चेव णं से गब्भे सडति वा पडति वा गलति वा विद्धंसति वा। तते णं सा चिल्लणा देवी तं गब्भं जाहे नो संचाएति बहूहिं गब्भसाडणेहि य जाव गब्भपाड(विद्धंस)णेहि य साडित्तए वा जाव विद्धंसित्तए वा, ताहे संता तंता परितंता निव्विन्ना समाणा अकामिया अवसवसा अट्टवसट्टदुहट्टा तं गब्भं परिवहति ।♦ततेणं सा चिल्लणा देवी

दक्षिणवामपार्श्वे भवतः, एवं विदिशावपि। 'अयमेयारूवे' अब्भत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था। सातनं पातनं गालनं विध्वंसनमिति कर्तुं संप्रधारयति, उदरान्तर्वर्तिनः ओषधेः सातनम्–उदराद्बहिःकरणं, पातनं–गालनं रुधिरादितया कृत्वा, विध्वंसनं सर्वगर्भपरिशाटनेन, न च शाटनाद्यवस्था अस्य भवन्ति। 'संता तंता परितंता' इत्येकार्थाः खेदवाचका एते ध्वनयः। 'अट्टवसट्टदुहट्टा' (आर्त्तवशं--आर्त्तध्यानवशतामृता–गता दुःखार्त्ता च या सा) उच्चाभिराक्रोशनाभिः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

♦ मूलसूत्र-११,१२

नवण्हं मासाणं बहुपाड पुण्णाणं जाव सोमालं सुरूवं दारयं पयाया। तते णं तीसे चेल्लणाए देवीए इमे एतारूवे जाव समुप्प-
ज्जित्था–जइ ताव इमेणं दारएणं गब्भगएणं चेव पिउणो उदरवलिमंसाइं खाइयाइं, तं न नज्जइ णं एस दारए संवड्ढमाणे अम्हं
कुलस्स अंतकरे भविस्सति, तं सेयं खलु अम्हं एयं दारगं एगंते उक्कुरुडियाए उज्झावित्तए एवं संपेहेति २ दासचेडिं सद्दावेति
२ एवं वयासी–गच्छह णं तुमं देवाणुप्पिए एयं दारगं एगंते उक्कुरुडियाए उज्झाहि। तते णं सा दासचेडी चेल्लणाए देवीए एवं
वुत्ता समाणी करतल० जाव कट्टु चिल्लणाए देवीए एतमट्ठं विणएणं पडिसुणेति २ तं दारगं करतलपुडेणं गिण्हति, जेणेव
असोगवणिया तेणेव उवा० २ तं दारगं एगंते उक्कुरुडियाए उज्झाति। तते णं तेणं दारएणं एगंते उक्कुरुडियाए उज्झितेणं
समाणेणं सा असोगवणिया उज्जोविता यावि होत्था। तते णं से सेणिए राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे जेणेव असोगव-
णिया तेणेव उवा० २ तं दारगं एगंते उक्कुरुडियाए उज्झियं पासेति २ आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे तं दारगं करतलपुडेणं
गिण्हति २ जेणेव चिल्लणा देवी तेणेव उवा० २ चेल्लणं देविं उच्चावयाहिं आओसणाहिं आओसति २ उच्चावयाहिं निब्भच्छ-
णाहिं निब्भच्छेति २ एवं उद्धंसणाहिं उद्धंसेति २ एवं वयासी–किस्स णं तुमं मम पुत्तं एगंते उक्कुरुडियाए उज्झावेसि त्तिकट्टु
चेल्लणं देविं उच्चावयसवहसावितं करेति २ एवं वयासी–तुमं णं देवाणुप्पिए! एयं दारगं अणुपुव्वेणं सारक्खमाणी संगोवेमाणी
संवड्ढेहि। तते णं सा चेल्लणा देवी सेणिएणं रन्ना एवं वुत्ता समाणी लज्जिया विलिया विड्ढा करतलपरिग्गहियं सेणियस्स
रन्नो विणएणं एयमट्ठं पडिसुणेति २ तं दारगं अणुपुव्वेणं सारक्खमाणी संगोवेमाणी संवड्ढेति ♦तते णं तस्स दारगस्स एगंते

आक्रोशो निर्भर्त्सना उद्धर्षणा (एते समानार्थाः)। 'लज्जिया विलिया विड्ढा' (एतेऽपि समानार्थाः)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

♦ मूलसूत्र-१३

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१९],उपांगसूत्र-[०८] निरयावलिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१३]

उक्कुरुडियाए उज्झिज्जमाणस्स अग्गंगुलियाए कुक्कुडपिच्छएणं दूमिया यावि होत्था, अभिक्खणं अभिक्खणं पूयं च सोणियं च अभिनिस्सवेति। तते णं से दारए वेदणाभिभूए समाणे महता महता सद्देणं आरसति। तते णं सेणिए राया तस्स दारगस्स आरसितसद्दं सोच्चा निसम्म जेणेव से दारए तेणेव उवा० २ तं दारगं करतलपुडेणं गिण्हइ २ तं अग्गंगुलियं आसयंसि पक्खिवति २ पूइं च सोणियं च आसएणं आमुसति। तते णं से दारए निव्वुए निव्वेदणे तुसिणीए संचिट्ठइ, जाहे वि य णं से दारए वेदणाए अभिभूते समाणे महता महता सद्देणं आरसति ताहे वि य णं सेणिए राया जेणेव से दारए तेणेव उवा० २ तं दारगं करतलपुडेणं गिण्हति तं चेव जाव निव्वेयणे तुसिणीए संचिट्ठइ। तते णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो ततिए दिवसे चंदसूरदंसणियं करेंति जाव संपत्ते बारसाहे दिवसे अयमेयारूवं गुणनिप्फन्नं नामधिज्जं करेंति, जहा णं अम्हं इमस्स दारगस्स एगंते उक्कुरुडियाए उज्झिज्जमाणस्स अंगुलिया कुक्कुडपिच्छएणं दूमिया, तं होउ णं अम्हं इमस्स दारगस्स नामधेज्जं कूणिए। तते णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो नामधिज्जं करेंति कूणिय त्ति। तते णं तस्स कूणियस्स आणुपुव्वेणं ठितिवडियं च जहा मेहस्स जाव उप्पिं पासायवरगए विहरति। अट्ठओ दाओ ♦ तते णं तस्स कूणियस्स कुमारस्स अन्नदा पुव्वरत्ता० जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु अहं सेणियस्स रन्नो वाघाएणं नो संचाएमि सयमेव रज्जसिरिं करेमाणे पालेमाणे विहरित्तए, तं सेयं मम खलु सेणियं रायं नियलबंधणं करेत्ता अप्पाणं महता महता रायाभिसेएणं अभिसिंचावित्तए त्तिकट्टु एवं संपेहेति २ सेणियस्स रन्नो अंतराणि य छिड्डाणि य विरहाणि य पडिजागरमाणे विहरति। तते णं से कूणिए कुमारे सेणियस्स रन्नो

स्थितिपतितां–कुलक्रमायातं पुत्रजन्मानुष्ठानम्। 'अंतराणि य' अवसरान्, छिद्राणि–अल्पपरिवारादीनि, विरहो–विजनत्वम्।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

♦ मूलसूत्र-१४

अंतरं वा जाव मम्मं वा अलभमाणे अन्नदा कयाइ कालादीए दस कुमारे नियघरे सद्दावेति २ एवं वदासि–एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हे सेणियस्स रन्नो वाघाएणं नो संचाएमो सयमेव रज्जसिरिं करेमाणा पालेमाणा विहरित्तए, तं सेयं देवाणुप्पिया ! अम्हं सेणियं रायं नियलबंधणं करेत्ता रज्जं च रट्ठं च बलं च वाहणं च कोसं च कोट्ठागारं च जणवयं च एक्कारसभाए विरिंचित्ता सयमेव रज्जसिरिं करेमाणाणं पालेमाणाणं जाव विहरित्तए । तते णं ते कालादीया दस कुमारा कूणियस्स कुमारस्स एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेंति । तते णं से कूणिए कुमारे अन्नदा कदाइ सेणियस्स रन्नो अंतरं जाणति २ सेणियं रायं नियलबंधणं करेति २ अप्पाणं महता महता रायाभिसेएणं अभिसिंचावेति । तते णं से कूणिए कुमारे राजा जाते महता महता० । तते णं से कूणिए राया अन्नदा कदाइ न्हाए जाव सव्वालंकारविभूसिए चेल्लणाए देवीए पायवंदए हव्वमागच्छति ♦तते णं से कूणिए राया चेल्लणं देविं ओहय० जाव झियायमाणिं पासति २ चेल्लणाए देवीए पायग्गहणं करेति २ चेल्लणं देविं एवं वदासि–किं णं अम्मो ! तुम्हं न तुट्ठी वा न ऊसए वा न हरिसे वा नाणंदे वा ? जं णं अहं सयमेव रज्जसिरिं जाव विहरामि । तते णं सा चेल्लणा देवी कूणियं रायं एवं वयासि–कहण्णं पुत्ता ! ममं तुट्ठी वा उस्सए वा हरिसे वा आणंदे वा भविस्सति ? जं नं तुमं सेणियं रायं पियं देवयं गुरुजणगं अच्चंतनेहाणुरागरत्तं नियलबंधणं करित्ता अप्पाणं महता रायाभिसेएणं अभिसिंचावेसि । तते णं से कूणिए राया चिल्लणं देविं एवं वदासि–घातेउकामे णं अम्मो ! मम सेणिए राया, एवं मारेतुं बंधितुं निच्छुभिउकामए णं अम्मो ! ममं सेणिए राया, तं कहन्नं अम्मो ममं सेणिए

तुष्टिः उत्सवः हर्षः आनन्दः प्रमोदार्था एते शब्दाः । 'मम घातेउकामे णं' घातयितुकामः णं वाक्यालङ्कारे मां श्रेणिको राजा 'घातनं मारणं बन्धनं निच्छुभणं' एते पराभवसूचका ध्वनयः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

♦ मूलसूत्र-१५

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१९],उपांगसूत्र-[०८] निरयावलिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१५]

राया अच्चंतनेहाणुरागरत्ते ? तते णं सा चेल्लणा देवी कूणियं कुमारं एवं वदासि–एवं खलु पुत्ता ! तुमंसि मम गब्भे आभूते समाणे तिण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं ममं अयमेयारूवे दोहले पाउब्भूते–धन्नातो णं तातो अम्मयातो जाव अंगपडिचारियाओ निरवसेसं भाणियव्वं जाव जाहे वि य णं तुमं वेयणाए अभिभूते महता जाव तुसिणीए संचिट्ठसि, एवं खलु तव पुत्ता ! सेणिए राया अच्चंतनेहाणुरागरत्ते । तते णं से कूणिए राया चेल्लणाए देवीए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म चिल्लणं देविं एवं वदासि–दुट्ठु णं अम्मो ! मए कयं, सेणियं रायं पियं देवयं गुरुजणगं अच्चंतनेहाणुरागरत्तं नियलबंधणं करेतेणं, तं गच्छामि णं सेणियस्स रन्नो सयमेव नियलाणि छिंदामि त्तिकट्टु परसुहत्थगते जेणेव चारगसाला तेणेव पहारित्थगमणाए । तते णं सेणिए राया कूणियं कुमारं परसुहत्थगयं एज्जमाणं पासति २ एवं वयासि–एस णं कूणिए कुमारे अपत्थियपत्थिए जाव सिरिहिरिपरिवज्जिए परसुहत्थगए इह हव्वमागच्छति, तं न नज्जइ णं ममं केणइ कुमारेणं मारिस्सतीतिकट्टु भीए जाव संजायभए तालपुडगं विसं आसगंसि पक्खिवइ । तते णं से सेणिए राया तालपुडगविसं आसगंसि पक्खित्ते समाणे मुहुत्तंतरेणं परिणाममाणंसि निप्पाणे निच्चिट्ठे जीवविप्पजढे ओइन्ने । तते णं से कूणिए कुमारे जेणेव चारगसाला तेणेव उवागए २ सेणियं रायं निप्पाणं निच्चिट्ठं जीवविप्पजढं ओइन्नं पासति २ महता पितिसोएणं अप्फुण्णे समाणे परसुनियत्ते विव चंपगवरपादवे धस त्ति धरणीतलंसि सव्वंगेहिं संनिवडिए । तते णं से कूणिए कुमारे मुहुत्तंतरेणं

निष्प्राणः—निर्गतप्राणः, निश्चेष्टः जीवितविप्रजढः प्राणापहारसूचकाः एते । अवतीर्णो—भूमौ पतितः । ' अप्फुण्णे ' व्याप्तः सन् ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१५]

आसत्थे समाणे रोयमाणे, कंदमाणे, सोयमाणे, विलवमाणे एवं वदासि–अहो णं मए अधन्नेणं अपुन्नेणं अकयपुन्नेणं दुट्ठुकयं सेणियं रायं पियं देवयं अचंतनेहाणुरागरत्तं नियलबंधणं करेंतेणं मम मूलागं चेव णं सेणिए राया कालगते त्ति कट्टु ईसरतलवर जाव संधिवालसद्धिं संपरिवुडे रोयमाणे ३ महया इड्ढिसक्कारसमुदएणं सेणियस्स रन्नो नीहरणं करेति, बहूइं लोइयाइं मयकिच्चाइं करेंति । तते णं से कूणिए कुमारे एतेणं महया मणोमाणसिएणं दुक्खेणं अभिभूते समाणे अन्नदा कदाइ अंतेउरपरियालसंपरिवुडे सभंडमत्तोवकरणमाताए रायगिहातो पडिनिक्खमति, जेणेव चंपा नगरी तेणेव उवागच्छइ, तत्थ वि णं विपुलभोगसमितिसमन्नागए, कालेणं अप्पसोए जाए यावि होत्था♦ ततें णं से कूणिए राया अन्नया कयाइ कालादीए दस कुमारे सद्दावेति २ रज्जं च जाव जणवयं च एक्कारसभाए विरिंचति २ सयमेव रज्जसिरिं करेमाणे पालेमाणे विहरति♦ तत्थ णं चंपाए नगरीए सेणियस्स रन्नो पुत्ते चेल्लणाए देवीए अत्तए कूणियस्स रन्नो सहोयरे कणीयसे भाया वेहल्ले नामं कुमारे होत्था सोमाले जाव सुरूवे । तते णं तस्स वेहल्लस्स कुमारस्स सेणिएणं रन्ना जीवंतएणं चेव सेयणए गंधहत्थी अट्ठारसवंके हारे पुत्तदिन्ने । तए णं से वेहल्ले कुमारे सेयणएणं गंधहत्थिणा अंतेउरपरियालसंपरिवुडे चंपं नगरिं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ २ अभिक्खणं २ गंगं महानइं मज्जणयं ओयरइ । तते णं सेयणए गंधहत्थी देवीओ

'रोयमाणे त्ति' रुदन् 'कंदमाणे' वैक्लवं कुर्वन् 'सोयमाणे' शोकं कुर्वन् 'विलवमाणे' विलापान् कुर्वन् । 'नीहरणं' ति परोक्षस्य यन्निर्गमादि कार्यम् । 'मणोमाणसिएणं' ति मनसि जातं मानसिकं मनस्येव यद्वर्तते वचनेनाप्रकाशितत्वात् तत् मनोमानसिकं तेन अबहिर्वर्तिना अभिभूत: । 'अंतेउरपरियालसंपरिवुडे' । 'चंपं नगरिं मज्झं मज्झेणं' इत्यादि वाच्यम् ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

♦ मूलसूत्र-१६,१७

*** कोणिक-राज्ञ: कथा-मध्ये वेहल्लकुमारस्य कथा

सोंडाए गिण्हति २ अप्पेगइयाओ पुट्ठे ठवेंति, अप्पेगइयाओ खंधे ठवेंति, एवं अप्पे० कुंभे ठवेंति, अप्पे० सीसे ठवेंति, अप्पे० दंतमुसले ठवेंति, अप्पे० सोंडाए गहाय उड्डं वेहासं उव्विहइ, अप्पे० सोंडागयाओ अंदोलावेंति, अप्पेगइया दंतंतरेसु नीणेंति, अप्पे० सीभरेणं ण्हाणेंति, अप्पेगइयाओ अणेगेहिं कीलावणेहि कीलावेंति । तते णं चंपाए नयरीए सिंघाडगतिगचउक्कचच्चरमहापहपहेसु बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ जाव परूवेति–एवं खलु देवाणुप्पिया ! वेहल्ले कुमारे सेयणएणं गंधहत्थिणा अंतेउरं तं चेव जाव णेगेहिं कीलावणएहिं कीलावेति, तं एस णं वेहल्ले कुमारे रज्जसिरिफलं पच्चणुब्भवमाणे विहरति, नो कूणिए राया । तते णं तीसे पउमावईए देवीए इमीसे कहाए लद्धट्ठाए समाणीते अयमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था, एवं खलु वेहल्ले कुमारे सेयणएणं गंधहत्थिणा जाव अणेगेहिं कीलावणएहिं कीलावेति, तं एस णं वेहल्ले कुमारे रज्जसिरिफलं पच्चणुब्भवमाणे विहरति, नो कोणिए राया, तं किं अम्हं रज्जेण वा जाव जणवएण वा जइ णं अम्हं सेयणगे गंधहत्थी नत्थि ? तं सेयं खलु ममं कूणियं रायं एयमट्ठं विन्नवित्तए त्ति-कट्टु एवं संपेहेति २ जेणेव कूणिए राया तेणेव उवा० २ करतल जाव एवं वयासि–एवं खलु सामी वेहल्ले कुमारे सेयणएण गंधहत्थिणा जाव अणेगेहिं कीलावणाहिं कीलावेति, तं किण्हं सामी अम्हं रज्जेण वा जाव जणवएण वा जति णं अम्हं सेयणए गंधहत्थी नत्थि ? तए णं से कूणिए राया पउमावईए देवीए एयमट्ठं नो आढाति नो परिजाणति तुसिणीए संचिट्ठति । तते णं सा पउमावई देवी अभिक्खणं २ कूणियं रायं एयमट्ठं विन्नवेइ । तते णं से कूणिए राया पउमावईए देवीए अभिक्खणं २ एयमट्ठं विन्नविज्जमाणे अन्नया कयाइ वेहल्लं कुमारं सद्दावेति २ सेयणगं गंधहत्थिं अट्ठारसवंकं च हारं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जायति। तते णं से वेहल्ले कुमारे कूणियं रायं एवं वयासि–एवं खलु सामी सेणिएणं रन्ना जीवंतेणं चेव सेयणए गंधहत्थी अट्ठारसवंके य हारे दिन्ने, तं जइ णं सामी! तुब्भे ममं रज्जस्स य (जणवयस्स य) अद्धं दलह तो णं अहं तुब्भं सेयणयं गंधहत्थिं अट्ठारसवंकं च हारं दलयामि। तते णं से कूणिए राया वेहल्लस्स कुमारस्स एयमट्ठं नो आढाति नो परिजाणइ अभिक्खणं २ सेयणगं गंधहत्थिं अट्ठारसवंकं च हारं जायति। तए णं तस्स वेहल्लस्स कुमारस्स कूणिएणं रन्ना अभिक्खणं २ सेयणगं गंधहत्थिं अट्ठारसवंकं च हारं एवं अक्खिविउकामेणं गिण्हिउकामेणं उद्दालेउकामेणं ममं कूणिए राया सेयणगं गंधहत्थिं अट्ठारसवंकं च हारं तं जाव ताव ममं कूणिए राया सेयणगं गंधहत्थिं अट्ठारसवंकं च हारं गहाय अंतेउरपरियालसंपरिवुडस्स सभंडमत्तोवकरणमायाए चंपातो नयरीतो पडिनिक्खमित्ता वेसालीए नयरीए अज्जगं चेडयं रायं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, एवं संपेहेति २ कूणियस्स रन्नो अंतराणि जाव पडिजागरमाणे २ विहरति। तते णं से वेहल्ले कुमारे अन्नदा कदाइ कूणियस्स रन्नो अंतरं जाणति सेयणगं गंधहत्थिं अट्ठारसवंकं च हारं गहाय अंतेउरपरियालसंपरिवुडे सभंडमत्तोवकरणमायाए चंपाओ नयरीतो पडिनिक्खमति २ जेणेव वेसाली नगरी तेणेव उवागच्छति, वेसालीए नगरीए अज्जगं चेडयं उवसंपज्जित्ता णं विहरति। तते णं से कूणिए राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे एवं खलु वेहल्ले कुमारे ममं

'अक्खिविउकामेणं' ति स्वीकर्तुकामेन, एतदेव स्पष्टयति–'गिण्हिउकामेणं' इत्यादिना। 'तं जाव ताव न उद्दालेइ ताव ममं कूणिए राया' इत्यादि सुगमम्। 'अज्जगं' ति मातामहम्। 'संपेहेति' पर्यालोचयति। 'अंतराणि' छिद्राणि प्रतिजाग्रत्–परिभावयन् विचरति–आस्ते। 'अंतरं' प्रविरलमनुष्यादिकम्।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

असंविदितेणं सेयणगं गंधहत्थिं अट्ठारसवंकं च हारं गहाय अंतेउरपरियालसंपरिवुडे जाव अज्जयं चेडयं रायं उवसंपज्जित्ता णं विहरति, तं सेयं खलु ममं सेयणगं गंधहत्थिं अट्ठारसवंकं च हारं दूतं पेसित्तए, एवं संपेहेति २ दूतं सद्दावेति २ एवं वयासि–गच्छह णं तुमं देवाणुप्पिया ! वेसालिं नगरिं, तत्थ णं तुमं ममं अज्जं चेडगं रायं करतल० वद्धावेत्ता एवं वयासि–एवं खलु सामी ! कूणिए राया विन्नवेति, एस णं वेहल्ले कुमारे कूणियस्स रन्नो असंविदितेणं सेयणगं अट्ठारसवंकं हारं (च) गहाय हव्वमागते, तए णं तुब्भे सामी ! कूणियं रायं अणुगिण्हमाणा सेअणगं अट्ठारसवंकं च हारं कूणियस्स रन्नो पच्चप्पिणह, वेहल्लं कुमारं (च) पेसेह । तते णं से दूए कूणिए० करतल० जाव पडिसुणित्ता जेणेव सते गिहे तेणेव उवा० २ जहा चित्तो जाव वद्धावित्ता एवं वयासि–एवं खलु सामी ! कूणिए राया विन्नवेइ–एस णं वेहल्ले कुमारे तहेव भाणियव्वं जाव वेहल्लं कुमारं पेसेह । तते णं से चेडए राया तं दूयं एवं वयासि–जह चेव णं देवाणुप्पिया ! कूणिए राया सेणियस्स रन्नो पुत्ते चेल्लणाए देवीए अत्तए ममं नत्तुए तहेव णं वेहल्ले वि कुमारे सेणियस्स रन्नो पुत्ते चेल्लणाए देवीए अत्तए मम नत्तुए, सेणिएणं रन्ना जीवंतेणं चेव वेहल्लस्स कुमारस्स सेयणगे गंधहत्थी अट्ठारसवंके हारे पुव्वविदिन्ने, तं जइ णं कूणिए राया वेहल्लस्स रज्जस्स य जणवयस्स य अद्धं दलयति तो णं सेयणगं अट्ठारसवंकं हारं च कूणियस्स रन्नो पच्चप्पिणामि, वेहल्लं च कुमारं

' असंविदितेणं ' ति असंप्रति (असंविदितेन) । हव्वं ति शीघ्रम् । ' जहा चित्तो ' त्ति राजप्रश्नीये द्वितीयोपाङ्गे यथा श्वेतम्बीनगर्याश्चित्रो नाम दूतः प्रदेशिराजप्रेषितः श्रावस्त्यां नगर्यां जितशत्रुसमीपे स्वगृहान्निर्गत्य गतः तथाऽयमपि । कोणिकनामा राजा यथा एवं विहल्लकुमारोऽपि ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१७]

पेसेमि। तं दूयं सक्कारेति संमाणेति पडिविसज्जेति। तते णं से दूते चेडएणं रन्ना पडिविसज्जिए समाणे जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ २ चाउग्घंटं आसरहं दुरुहति, वेसालिं नगरिं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ २ सुभेहिं वसहीहिं पायरासेहिं जाव वद्धावित्ता एवं वदासि–(एवं खलु सामी!) चेडए राया आणवेति–जह चेव णं कूणिए राया सेणियस्स रन्नो पुत्ते चेल्लणाए देवीए अत्तए मम नत्तुए तं चेव भाणियव्वं जाव वेहल्लं च कुमारं पेसेमि, तं न देति णं सामी! चेडए राया सेयणगं अट्ठारसवंकं हारं (च), वेहल्लं (च) नो पेसेति। तते णं से कूणिए राया दुच्चं पि दूयं सद्दावित्ता एवं वयासी–गच्छह णं तुमं देवाणु० ! वेसालिं नगरिं, तत्थ णं तुमं मम अज्जगं चेडगं रायं जाव एवं वयासि–एवं खलु सामी! कूणिए राया विन्नवेइ–जाणि काणि रयणाणि समुप्पज्जंति सव्वाणि ताणि रायकुलगामीणि, सेणियस्स रन्नो रज्जसिरिं करेमाणस्स पालेमाणस्स दुवे रयणा समुप्पन्ना, तं जहा–सेयणए गंधहत्थी, अट्ठारसवंके हारे, तन्नं तुब्भे सामी! रायकुलपरंपरागयं ठिइयं अलोवेमाणा सेयणगं गंधहत्थिं अट्ठारसवंकं च हारं कूणियस्स रन्नो पच्चप्पिणह वेहल्लं कुमारं पेसेह। तते णं से दूते कूणियस्स रन्नो तहेव जाव वद्धावित्ता एवं वयासि–एवं खलु सामी! कूणए राया विन्नवेइ–जाणि काणि त्ति जाव वेहल्लं कुमारं पेसेह। तते णं से चेडए राया तं दूयं एवं वयासि–जह चेव णं देवाणुप्पिया! कूणिए राया सेणियस्स रन्नो पुत्ते चिल्लणाए देवीए अत्तए

'चाउग्घंटं' ति चतस्रो घण्टाश्चतसृष्वपि दिक्षु अवलम्बिता यस्य स चतुर्घण्टो रथः। 'सुभेहिं वसहीहिं पायरासेहिं' ति प्रातराशः आदित्योदयादावाद्यप्रहरद्वयसमयवर्ती–भोजनकालः निवासश्च–निवसनभूभागः तौ द्वावपि सुखहेतुकौ न पीडाकारिणौ ताभ्यां संप्रापो नगर्यां दृष्टश्चेटक(कोणिक)राजः 'जयविजएणं वद्धावित्ता एवं' दुतो यदवादीत्तद्दर्शयति–'एवं खलु सामी'त्यादिना। 'अलोवेमाण' त्ति एवं परंपरागतां प्रीतिमलोपयन्तः।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१७]

जहा पढमं जाव वेहल्लं च कुमारं पेसेमि, तं दूतं सक्कारेति संमाणेति पडिविसज्जेति। तते णं से दूते जाव कूणियस्स रन्नो वद्धावित्ता एवं वयासि–चेडए राया आणवेति–जह चेव णं देवाणुप्पिया! कूणिए राया सेणियस्स रन्नो पुत्ते चिल्लणाए देवीए अत्तए जाव वेहल्लं कुमारं पेसेमि, तं न देति णं सामी! चेडए राया सेयणगं गंधहत्थिं अट्ठारसवंकं च हारं, वेहल्लं कुमारं नो पेसेति। तते णं से कूणिए राया तस्स दूयस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म आसुरुत्ते २ जाव मिसिमिसेमाणे तच्चं दूतं सद्दावेति २ एवं वयासि–गच्छह णं तुमं देवाणुप्पिया! वेसालीए नयरीए चेडगस्स रन्नो वामेणं पादेणं पायपीढं अक्कमाहि अक्कमित्ता कुंतग्गेणं लेहं पणावेहि २ आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे तिवलियं भिउडिं निडाले साहट्टु चेडगं रायं एवं वयासि–हं भो चेडगराया! अपत्थियपत्थिया! दुरंत जाव परिवज्जित्ता एस णं कूणिए राया आणवेइ–पच्चप्पिणाहि णं कूणियस्स रन्नो सेयणगं अट्ठारसवंकं च हारं वेहल्लं च कुमारं पेसेहि, अहव जुद्धसज्जो चिट्ठाहि, एस णं कूणिए राया सबले सवाहणे सखंधावारे णं जुद्धसज्जे इह हव्वमागच्छति। तते णं से दूते करतल० तहेव जाव जेणेव चेडए राया तेणेव उवा० २ करतल० जाव वद्धा० २ एवं वयासि–एस णं सामी! ममं विणयपडिवत्ती, इयाणिं कूणियस्स रन्नो आणत्ति चेडगस्स रन्नो वामेणं पाएणं पादपीढं

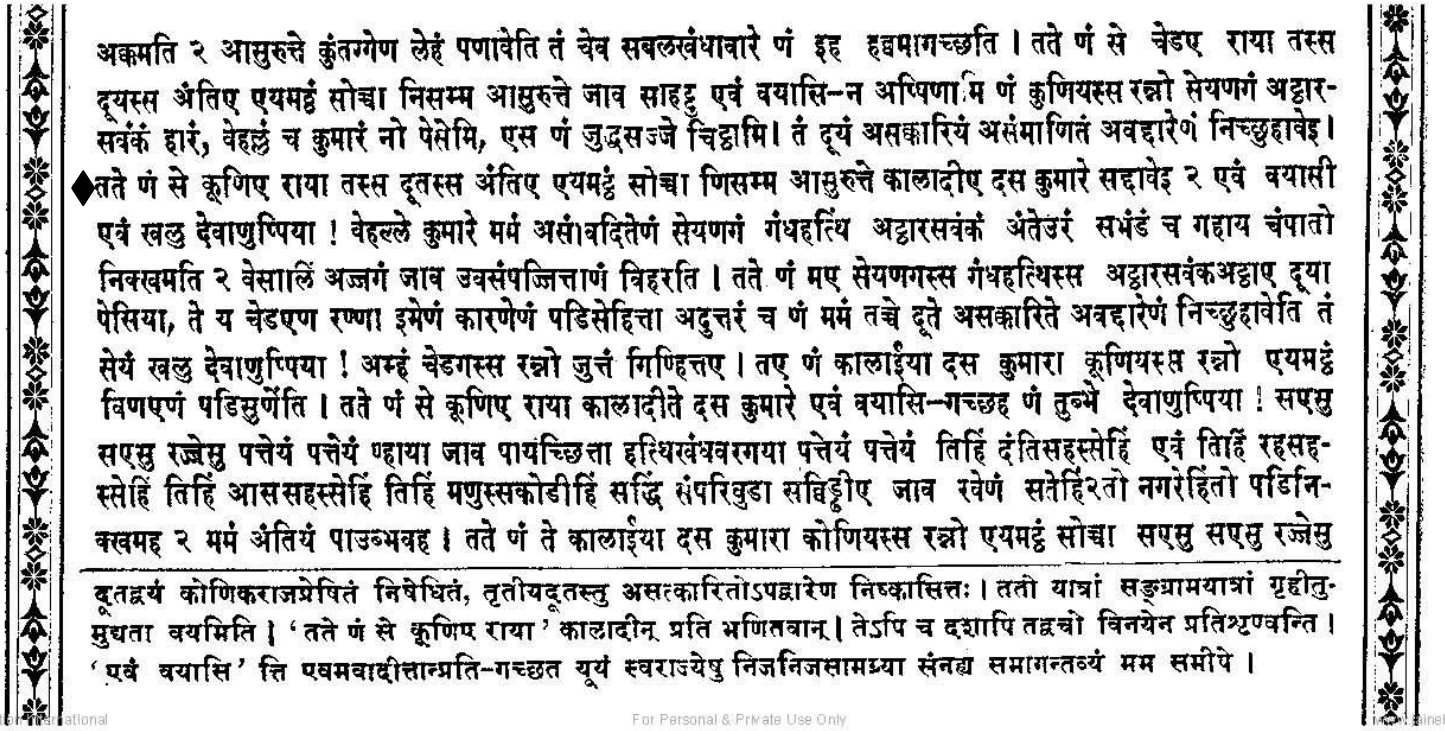
'जहा पढमं' ति रज्जस्स य जणवयस्स य अद्धं कोणियराया जइ वेहल्लस्स देइ तोऽहं सेयणगं अट्ठारसवंकं च हारं कूणियस्स पच्चप्पिणामि, वेहल्लं च कुमारं पेसेमि, न अन्नहा। तदनु द्वितीयदूतस्य समीपे एनमर्थं श्रुत्वा कोणिकराज 'आसुरुत्ते' इत्येतावद्रूप(ताकोप)वशसंपन्नः। यदसौ तृतीयदूतप्रेषणेन कारयति भाणयति च तदाह–'एवं वयासी'त्यादिना हस्तिहारसमर्पणकुमारप्रेषणस्वरूपं यदि न करोषि तदा जुद्धसज्जो भवेति दूतः प्राह। इमेणं कारणेणं ति तुल्यताऽत्र कसंबन्धेन(?)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१७]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१९],उपांगसूत्र-[०८] निरयावलिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्ति:



अक्कमति २ आसुरुत्ते कुंतग्गेण लेहं पणावेति तं चेव सबलखंधावारे णं इह हव्वमागच्छति । तते णं से चेडए राया तस्स दूयस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म आसुरुत्ते जाव साहट्टु एवं वयासि–न अप्पिणामि णं कुणियस्स रन्नो सेयणगं अट्ठारसवंकं हारं, वेहल्लं च कुमारं नो पेसेमि, एस णं जुद्धसज्जे चिट्ठामि। तं दूयं असक्कारियं असंमाणितं अवद्दारेणं निच्छुहावेइ। ♦तते णं से कूणिए राया तस्स दूतस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म आसुरुत्ते कालादीए दस कुमारे सद्दावेइ २ एवं वयासी एवं खलु देवाणुप्पिया ! वेहल्ले कुमारे ममं असंवदितेणं सेयणगं गंधहत्थिं अट्ठारसवंकं अंतेउरं सभंडं च गहाय चंपातो निक्खमति २ वेसालिं अज्जगं जाव उवसंपज्जित्ताणं विहरति । तते णं मए सेयणगस्स गंधहत्थिस्स अट्ठारसवंकअट्ठाए दूया पेसिया, ते य चेडएण रण्णा इमेणं कारणेणं पडिसेहित्ता अदुत्तरं च णं ममं तच्चे दूते असक्कारिते अवद्दारेणं निच्छुहावेति तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं चेडगस्स रन्नो जुत्तं गिण्हित्तए । तए णं कालाईया दस कुमारा कूणियस्स रन्नो एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेंति । तते णं से कूणिए राया कालादीते दस कुमारे एवं वयासि–गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! सएसु सएसु रज्जेसु पत्तेयं पत्तेयं ण्हाया जाव पायच्छित्ता हत्थिखंधवरगया पत्तेयं पत्तेयं तिहिं दंतिसहस्सेहिं एवं तिहिं रहसहस्सेहिं तिहिं आससहस्सेहिं तिहिं मणुस्सकोडीहिं सद्धिं संपरिवुडा सविड्ढीए जाव रवेणं सतेहिंतो नगरेहिंतो पडिनिक्खमह २ ममं अंतियं पाउब्भवह । तते णं ते कालाईया दस कुमारा कोणियस्स रन्नो एयमट्ठं सोच्चा सएसु सएसु रज्जेसु

दूतद्वयं कोणिकराजप्रेषितं निषेधितं, तृतीयदूतस्तु असत्कारितोऽपद्वारेण निष्कासितः । ततो यात्रां सङ्ग्रामयात्रां गृहीतुमुद्यता वयमिति । 'तते णं से कूणिए राया' कालादीन् प्रति भणितवान् । तेऽपि च दशापि तद्वचो विनयेन प्रतिशृण्वन्ति । 'एवं वयासि' त्ति एवमवादीत्तान्प्रति–गच्छत यूयं स्वराज्येषु निजनिजसामग्र्या संनह्य समागन्तव्यं मम समीपे ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

♦ मूलसूत्र-१८

***काल-आदि कुमारै: सह मिलित्वा कोणिकेन राजा चेटक सार्धं कृत-रथमूसलसंग्राम:

पत्तेयं २ ण्हाया जाव तिहिं मणुस्सकोडीहिं सद्धिं संपरिवुडा सविड्ढीए जाव रवेणं सएहिं २ तो नगरेहिंतो पडिनिक्खमंति, जेणेव अंगा जणवए जेणेव चंपा नगरी जेणेव कूणिए राया तेणेव उवागता करतल० जाव वद्धावेंति। तते णं से कूणिए राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति २ एवं वयासि–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! आभिसेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पेह, हयगयरहचातुरंगिणिं सेणं संनाहेह, ममं एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, जाव पच्चप्पिणंति। तते णं से कूणिए राया जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ जाव पडिनिग्गच्छित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जाव नरवई दुरूढे। तते णं से कूणिए राया तिहिं दंतिसहस्सेहिं जाव रवेणं चंपं नगरिं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छति २ जेणेव कालादीया दस कुमारा तेणेव उवागच्छइ २ कालाइएहिं दसहिं कुमारेहिं सद्धिं एगतो मेलायंति। तते णं से कूणिए राया तेत्तीसाए दंतिसहस्सेहिं तेत्तीसाए आससहस्सेहिं तेत्तीसाए रहसहस्सेहिं तेत्तीसाए मणुस्सकोडीहिं सद्धिं संपरिवुडे सविड्ढीए जाव रवेणं सुभेहिं वसहीपायरासेहिं नातिविगिट्ठेहिं अंतरावासेहिं वसमाणे २ अंगजणवयस्स मज्झं मज्झेणं जेणेव विदिहे जणवते जेणेव वेसाली नगरी तेणेव पहारित्थगमणाते। तते णं से चेडए राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे नवमल्लई नवलेच्छई कासीकोसलका अट्ठारस विगणरायाणो सद्दावेति २ एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया! वेहल्ले कुमारे कूणियस्स रन्नो असंविदितेणं सेयणगं अट्ठारसवंकं च हारं गहाय इहं हव्वमागते, तते णं कूणिएणं सेयणगस्स अट्ठारसवंकस्स य अट्ठाए तओ दूया पेसिया, ते य मए इमेणं

तदनु कूणिकोऽभिषेकार्हं हस्तिरत्नं निजमनुष्यैरुपस्थापयति-प्रगुणीकारयति, प्रतिकल्पयतेति पाठे सन्नाहवन्तं कुरुतेत्याज्ञां प्रयच्छति। 'तओ दूय'त्ति त्रयो दूताः कोणिकेन प्रेषिताः।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१८]

कारणेणं पडिसेहिया। तते णं से कूणिए ममं एयमट्ठं अपडिसुणमाणे चाउरंगिणीए सेणाए सद्धिं संपरिवुडे जुज्झसज्जे इहं हव्वमागच्छति, तं किन्नु देवाणुप्पिया ! सेयणगं अट्ठारसवंकं (य) कूणियस्स रन्नो पच्चप्पिणामो ? वेहल्लं कुमारं पेसेमो ? उदाहु जुज्झित्था ! तते णं नवमल्लई नवलेच्छती कासीकोसलगा अट्ठारस वि गणरायाणो चेडगं रायं एवं वदासि–न एयं सामी ! जुत्तं वा पत्तं वा रायसरिसं वा जन्नं सेयणगं अट्ठारसवंकं कूणियस्स रन्नो पच्चप्पिणिज्जति, वेहल्ले य कुमारे सरणागते पेसिज्जति, तं जइ णं कूणिए राया चाउरंगिणीए सेणाए सद्धिं संपरिवुडे जुज्झसज्जे इहं हव्वमागच्छति, तते णं अम्हे कूणिएणं रण्णा सद्धिं जुज्झामो। तते णं से चेडए राया ते नवमल्लई नवलेच्छई कासीकोसलगा अट्ठारस वि गणरायाणो एवं वदासी–जइ णं देवाणुप्पिया ! तुब्भे कूणिएणं रन्ना सद्धिं जुज्झह, तं गच्छह णं देवाणुप्पिया ! सतेसु २ रज्जेसु ण्हाया जहा कालादीया जाव जएणं विजएणं वद्धावेंति। तते णं से चेडए राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति सद्दावित्ता एवं वयासि–आभिसेक्कं जहा कूणिए जाव दुरूढे। तते णं से चेडए राया तिहिं दंतिसहस्सेहिं जहा कूणिए जाव वेसालिं नगरिं मज्झं मज्झेणं निगच्छति २ जेणेव ते नवमल्लई नवलेच्छती कासीकोसलगा अट्ठारस वि गणरायाणो तेणेव उवागच्छति। तते णं से चेडए राया सत्तावन्नाए दंतिसहस्सेहिं सत्तावन्नाए आससहस्सेहिं सत्तावन्नाए रहसहस्सेहिं सत्तावन्नाए मणुस्सकोडीएहिं सद्धिं संपरिवुडे सविड्ढीए जाव रवेणं सुभेहिं वसहीहिं पातरासेहिं नातिविगिट्ठेहिं अंतरेहिं वसमाणे २ विदेहं जणवयं मज्झं मज्झेणं जेणेव देसपंते तेणेव उवा० २ खंधावारनिवेसणं करेति २ कूणियं रायं पडिवालेमाणे जुज्झसज्जे चिट्ठइ। तते णं से कूणिए राया सविड्ढीए जाव रवेणं जेणेव देसपंते तेणेव उवा० चेडयस्स रन्नो जोयणंतरियं खंधावारनिवेसं करेति। तते णं से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१९],उपांगसूत्र-[०८] निरयावलिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१८]

दोन्नि वि रायाणो रणभूमिं सज्जावेंति २ रणभूमिं जयंति। तते णं से कूणिए तेत्तीसाए दंतिसहस्सेहिं जाव मणुस्सकोडीहिं गरुलवूहं रएइ, रइत्ता गरुलवूहेणं रहमुसलं संगामं उवायाते। तते णं से चेडए राया सत्तावन्नाए दंतिसहस्सेहिं जाव सत्तावन्नाए मणुस्सकोडीहिं सगडवूहं रएइ, रइत्ता सगडवूहेणं रहमुसलं संगामं उवायाते। तते णं ते दोण्णि वि राईणं अणीया सन्नद्ध जाव गहियाउहपहरणा मंगतितेहि फलतेहि निकट्ठाहिं असीहिं अंसागएहिं तोणेहिं सजीवेहिं धणूहिं समुक्खित्तेहिं सरेहिं समुल्लालिताहिं डाव्वाहिं ओसारियाहिं उरूघंटाहिं छिप्पत्तरेणं वज्जमाणेणं महया उक्किट्ठसीहनायबोलकलकलरवेणं समुद्दरवभूयं पिव करेमाणा सविड्ढीए जाव रवेणं हयगया हयगएहिं गयगया गयगतेहिं रहगया रहगतेहिं पायत्तिया पायत्तिएहिं अन्नमन्नेहिं सद्धिं संपलग्गा यावित्थोत्था। तते णं ते दोण्ह वि रायाणं अणिया णियगसामीसासणाणुरत्ता महता जणक्खयं जणवहं जणप्पमद्दं जणसंवट्टकप्पं नच्चंतकबंधवारभीमं रुहिरकद्दमं करेमाणा अन्नमन्नेणं सद्धिं जुज्झंति। तते णं से काले कुमारे तिहिं दंतिसहस्सेहिं जाव मणूसकोडीहिं गरुलवूहेणं एक्कारसमेणं खंधेणं कूणिएणं रण्णा सद्धिं रहमुसलं संगामं संगामेमाणे हयमहित जहा भगवता कालीए देवीए परिकहियं जाव जीवियाओ ववरोवेति। तं एयं खलु गोयमा! काले कुमारे एरिसएहिं आरंभेहिं जाव एरिसएणं असुभकडकम्मपब्भारेणं कालमासे कालं किच्चा चउत्थीए पंकप्पभाए पुढवीए हेमाभे नरए नेरइयत्ताए उववन्ने।

◆ काले णं भंते! कुमारे चउत्थीए पुढवीए अणंतरं उवट्टित्ता कहिं गच्छहिति? कहिं उववज्जिहिति? गोयमा! महाविदेहे

'मंगतिएहि' त्ति हस्तपाशितैः फलकादिभिः, 'तोणेहिं' ति इषुधिभिः, 'सजीवेहिं' ति सप्रत्यञ्चैः धनुर्भिः, नृत्यद्भिः कबन्धैः धारैश्च हस्तच्युतैः भीमं-रौद्रम्। शेषं सर्वं सुगमम्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

◆ मूलसूत्र-१९

*** कालकुमारस्य नरकगमनं, तदनन्तरम् महाविदेहे मोक्षप्राप्ति:

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१९]

वासे जाइं कुलाइं भवंति अड्ढाइं जहा दढप्पइन्नो जाव सिज्झिहिति बुज्झिहिति जाव अंतं काहिति । तं एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं निरयावलियाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते ॥

॥ पढमं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ १ ॥

♦ जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं निरयावलियाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, दोच्चस्स णं भंते अज्झयणस्स निरयावलियाणं समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं के अट्ठे पन्नत्ते ? एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नगरी होत्था । पुन्नभद्दे चेइए । कोणिए राया । पउमावई देवी । तत्थ णं चंपाए नयरीए सेणियस्स रन्नो भज्जा कोणियस्स रन्नो चुल्लमाउया सुकाली नामं देवी होत्था, सुकुमाला । तीसे णं सुकालीए देवीए पुत्ते सुकाले नामं कुमारे होत्था, सुकुमाले । तते णं से सुकाले कुमारे अन्नया कयाति तिहिं दंतिसहस्सेहिं जहा कालो कुमारो निरवसेसं तं चेव जाव महाविदेहे वासे अंतं काहिति ॥ २ ॥

♦ एवं सेसा वि अट्ठ अज्झयणा नेयव्वा पढमसरिसा, णवरं मायातो सरिसणामाओ ॥ १० ॥

॥ निरयावलियातो सम्मत्तातो । निक्खेवो सव्वेसिं भाणियव्वो तहा ॥

॥ पढमो वग्गो सम्मत्तो ॥

॥ इति निरयावलिकाख्योपाङ्गव्याख्या ॥

♦ मूलसूत्र-२०,२१

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

“कल्पवतंसिका” मूलं एवं वृत्ति:

[मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्ति:]

[आद्य संपादकश्री]

पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

पुन: संकलनकर्ता→ मुनि दीपरत्नसागर (M.Com., M.Ed., Ph.D.,श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५ **‘सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि’ श्रेणि भाग-२६**

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१]

पवइए अणगारे जाए जाव गुत्तबंभयारी। तते णं से पउमे अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमादियाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, अहिज्जित्ता बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठम जाव विहरति। तते णं से पउमे अणगारे तेणं ओरालेणं जहा मेहो तहेव धम्मजागरिया चिंता एवं जहेव मेहो तहेव समणं भगवं आपुच्छित्ता विउले जाव पाओवगते समाणे तहारूवं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं, बहुपडिपुण्णाइं पंच वासाइं सामन्नपरियाए, मासियाए संलेहणाए सट्ठिं भत्ताइं आणुपुव्वीए कालगते, थेरा ओत्तिन्ना भगवं गोयमं पुच्छइ, सामी कहेइ जाव सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता आलोइय० उड्ढं चंदिमसोहम्मे कप्पे देवत्ताए उववन्ने दो सागराइं। से णं भंते! पउमे देवे तातो देवलोगातो आउक्खएणं पुच्छा, गोयमा! महाविदेहे वासे जहा दढपइन्नो जाव अंतं काहिति। तं एवं खलु जंबू! समणेणं जाव संपत्तेणं कप्पवडिंसियाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते त्ति बेमि ॥ १ ॥

जइ णं भंते! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं कप्पवडिंसियाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, दोच्चस्स णं भंते! अज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते? एवं खलु जंबू तेणं कालेणं २ चंपा नाम नगरी होत्था, पुन्नभद्दे चेइए, कूणिए राया, पउमावई देवी। तत्थ णं चंपाए नयरीए सेणियस्स रन्नो भज्जा कोणियस्स रन्नो चुल्लमाउया सुकाली नामं देवी होत्था। तीसे णं सुकालीए पुत्ते सुकाले नामं कुमारे। तस्स णं सुकालस्स कुमारस्स महापउमा नामं देवी होत्था, सुकुमाला। तते णं सा महापउमा देवी अन्नदा कयाइं तंसि तारिसगंसि एवं तहेव महापउमे नामं दारते, जाव सिज्झिहि त्ति, नवरं ईसाणे कप्पे उववाओ उक्कोसट्ठिईओ, तं एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं०। एवं सेसा वि अट्ठ नेयव्वा। मातातो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

◆ मूलसूत्र-१

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१]

पवइए अणगारे जाए जाव गुत्तबंभयारी। तते णं से पउमे अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमादियाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, अहिज्जित्ता बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठम जाव विहरति। तते णं से पउमे अणगारे तेणं ओरालेणं जहा मेहो तहेव धम्मजागरिया चिंता एवं जहेव मेहो तहेव समणं भगवं आपुच्छित्ता विउले जाव पाओवगते समाणे तहारूवं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं, बहुपडिपुण्णाइं पंच वासाइं सामन्नपरियाए, मासियाए संलेहणाए सट्ठिं भत्ताइं आणुपुव्वीए कालगते, थेरा ओत्तिन्ना भगवं गोयमं पुच्छइ, सामी कहेइ जाव सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता आलोइय० उड्ढं चंदिमसोहम्मे कप्पे देवत्ताए उववन्ने दो सागराइं। से णं भंते ! पउमे देवे तातो देवलोगातो आउक्खएणं पुच्छा, गोयमा ! महाविदेहे वासे जहा दढपइन्नो जाव अंतं काहिति। तं एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं कप्पवडिंसियाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते त्ति बेमि ॥ १ ॥

जइ णं भंते ! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं कप्पवडिंसियाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, दोच्चस्स णं भंते! अज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते ? एवं खलु जंबू तेणं कालेणं २ चंपा नाम नगरी होत्था, पुन्नभद्दे चेइए, कूणिए राया, पउमावई देवी। तत्थ णं चंपाए नयरीए सेणियस्स रन्नो भज्जा कोणियस्स रन्नो चुल्लमाउया सुकाली नामं देवी होत्था। तीसे णं सुकालीए पुत्ते सुकाले नामं कुमारे। तस्स णं सुकालस्स कुमारस्स महापउमा नामं देवी होत्था, सुकुमाला। तते णं सा महापउमा देवी अन्नदा कयाइं तंसि तारिसगंसि एवं तहेव महापउमे नामं दारते, जाव सिज्झिहि त्ति, नवरं ईसाणे कप्पे उववाओ उक्कोसट्ठिईओ, तं एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं० । एवं सेसा वि अट्ठ नेयव्वा। माताओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

◆ मूलसूत्र-२,३

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [३]

पवइए अणगारे जाए जाव गुत्तबंभयारी। तते णं से पउमे अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमादियाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, अहिज्जित्ता बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठम जाव विहरति। तते णं से पउमे अणगारे तेणं ओरालेणं जहा मेहो तहेव धम्मजागरिया चिंता एवं जहेव मेहो तहेव समणं भगवं आपुच्छित्ता विउले जाव पाओवगते समाणे तहारूवं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं, बहुपडिपुण्णाइं पंच वासाइं सामन्नपरियाए, मासियाए संलेहणाए सट्ठिं भत्ताइं आणुपुव्वीए कालगते, थेरा ओत्तिन्ना भगवं गोयमं पुच्छइ, सामी कहेइ जाव सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता आलोइय० उड्ढं चंदिमसोहम्मे कप्पे देवत्ताए उववन्ने दो सागराइं। से णं भंते! पउमे देवे तातो देवलोगातो आउक्खएणं पुच्छा, गोयमा! महाविदेहे वासे जहा दढपइन्नो जाव अंतं काहिति। तं एवं खलु जंबू! समणेणं जाव संपत्तेणं कप्पवडिंसियाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते त्ति बेमि॥ १॥

जइ णं भंते! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं कप्पवडिंसियाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, दोच्चस्स णं भंते! अज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते? एवं खलु जंबू तेणं कालेणं २ चंपा नाम नगरी होत्था, पुन्नभद्दे चेइए, कूणिए राया, पउमावई देवी। तत्थ णं चंपाए नयरीए सेणियस्स रन्नो भज्जा कोणियस्स रन्नो चुल्लमाउया सुकाली नामं देवी होत्था। तीसे णं सुकालीए पुत्ते सुकाले नामं कुमारे। तस्स णं सुकालस्स कुमारस्स महापउमा नामं देवी होत्था, सुकुमाला। तते णं सा महापउमा देवी अन्नदा कयाइं तंसि तारिसगंसि एवं तहेव महापउमे नामं दारते, जाव सिज्झिहि त्ति, नवरं ईसाणे कप्पे उववाओ उक्कोसट्ठिईओ, तं एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं०। एवं सेसा वि अट्ठ नेयव्वा। मातातो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मूलसूत्र-४,५

पवइए अणगारे जाए जाव गुत्तबंभयारी। तते णं से पउमे अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमादियाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, अहिज्जित्ता बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठम जाव विहरति। तते णं से पउमे अणगारे तेणं ओरालेणं जहा मेहो तहेव धम्मजागरिया चिंता एवं जहेव मेहो तहेव समणं भगवं आपुच्छित्ता विउले जाव पाओवगते समाणे तहारूवं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं, बहुपडिपुण्णाइं पंच वासाइं सामन्नपरियाए, मासियाए संलेहणाए सट्ठिं भत्ताइं आणुपुव्वीए कालगते, थेरा ओत्तिन्ना भगवं गोयमं पुच्छइ, सामी कहेइ जाव सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता आलोइय० उड्ढं चंदिमसोहम्मे कप्पे देवत्ताए उववन्ने दो सागराइं। से णं भंते! पउमे देवे तातो देवलोगातो आउक्खएणं पुच्छा, गोयमा! महाविदेहे वासे जहा दढपइन्नो जाव अंतं काहिति। तं एवं खलु जंबू! समणेणं जाव संपत्तेणं कप्पवडिंसियाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते त्ति बेमि ॥ १ ॥

जइ णं भंते! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं कप्पवडिंसियाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, दोच्चस्स णं भंते! अज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते? एवं खलु जंबू तेणं कालेणं २ चंपा नाम नगरी होत्था, पुन्नभद्दे चेइए, कूणिए राया, पउमावई देवी। तत्थ णं चंपाए नयरीए सेणियस्स रन्नो भज्जा कोणियस्स रन्नो चुल्लमाउया सुकाली नामं देवी होत्था। तीसे णं सुकालीए पुत्ते सुकाले नामं कुमारे। तस्स णं सुकालस्स कुमारस्स महापउमा नामं देवी होत्था, सुकुमाला। तते णं सा महापउमा देवी अन्नदा कयाइं तंसि तारिसगंसि एवं तहेव महापउमे नामं दारते, जाव सिज्झिहि त्ति, नवरं ईसाणे कप्पे उववाओ उक्कोसट्ठिईओ, तं एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं०। एवं सेसा वि अट्ठ नेयव्वा। मातातो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

[२१] श्री पुष्पिका (उपांगसूत्रम्-१०)

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

“पुष्पिका” मूलं एवं वृत्ति:

[मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्ति:]

[आद्य संपादकश्री]

पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

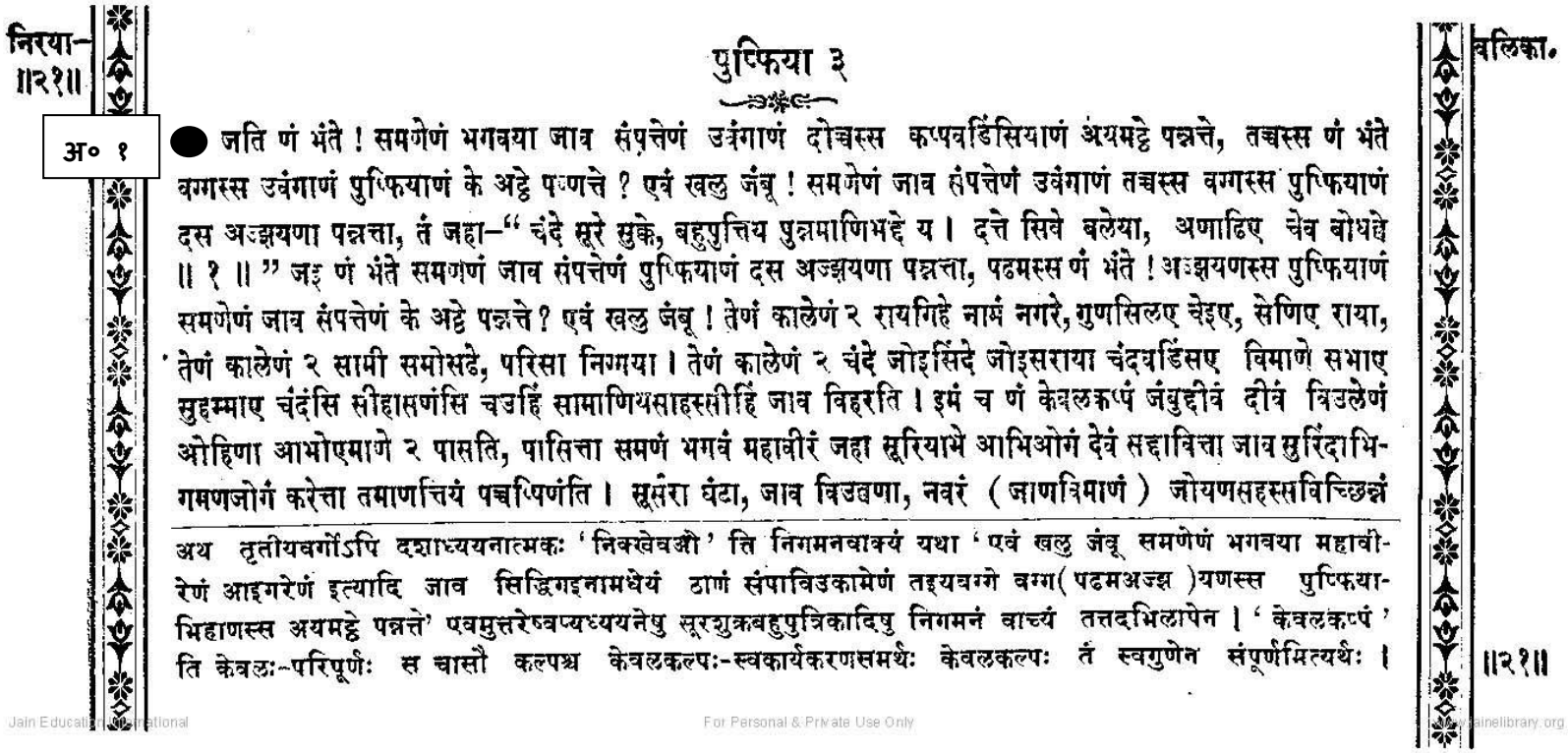
पुन: संकलनकर्ता→ मुनि दीपरत्नसागर (M.Com., M.Ed., Ph.D.,श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५ **‘सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि’ श्रेणि भाग-२६**

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित.आगमसूत्र-[२१], उपांगसूत्र-[१०] पुष्पिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१-३]



निरया- ॥२१॥

पुप्फिया ३

वलिका॰

अ॰ १

● जति णं भंते ! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं उवंगाणं दोच्चस्स कप्पवडिंसियाणं अयमट्ठे पन्नत्ते, तच्चस्स णं भंते वग्गस्स उवंगाणं पुप्फियाणं के अट्ठे पण्णत्ते ? एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं उवंगाणं तच्चस्स वग्गस्स पुप्फियाणं दस अज्झयणा पन्नत्ता, तं जहा–" चंदे सूरे सुक्के, बहुपुत्तिय पुन्नमाणिभद्दे य । दत्ते सिवे बलेया, अणाढिए चेव बोधव्वे ॥ १ ॥ " जइ णं भंते समणेणं जाव संपत्तेणं पुप्फियाणं दस अज्झयणा पन्नत्ता, पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स पुप्फियाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पन्नत्ते ? एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं २ रायगिहे नामं नगरे, गुणसिलए चेइए, सेणिए राया, तेणं कालेणं २ सामी समोसढे, परिसा निग्गया । तेणं कालेणं २ चंदे जोइसिंदे जोइसराया चंदवडिंसए विमाणे सभाए सुहम्माए चंदंसि सीहासणंसि चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं जाव विहरति । इमं च णं केवलकप्पं जंबुद्दीवं दीवं विउलेणं ओहिणा आभोएमाणे २ पासति, पासित्ता समणं भगवं महावीरं जहा सूरियाभे आभिओगं देवं सद्दावित्ता जाव सुरिंदाभिगमणजोगं करेत्ता तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति । सूसरा घंटा, जाव विउव्वणा, नवरं (जाणविमाणं) जोयणसहस्सविच्छिन्नं

अथ तृतीयवर्गोऽपि दशाध्ययनात्मकः 'निक्खेवओ' त्ति निगमनवाक्यं यथा 'एवं खलु जंबू समणेणं भगवया महावीरेणं आइगरेणं इत्यादि जाव सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपाविउकामेणं तइयवग्गे वग्ग(पढमअज्झ)यणस्स पुप्फियाभिहाणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते' एवमुत्तरेष्वप्यध्ययनेषु सूरशुक्रबहुपुत्रिकादिषु निगमनं वाच्यं तत्तदभिलापेन । 'केवलकप्पं' ति केवलः-परिपूर्णः स चासौ कल्पश्च केवलकल्पः-स्वकार्यकरणसमर्थः केवलकल्पः तं स्वगुणेन संपूर्णमित्यर्थः ।

॥२१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अध्ययनं-१- 'चन्द्र' आरभ्यते [मूलसूत्र १-३]

अद्धतेवट्ठिजोयणसमूसियं महिंदज्झतो पणुवीसं जोयणमूसितो सेसं जहा सूरियाभस्स जाव आगतो नट्टविही तहेव पडिगतो। भंते त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं भंते पुच्छा कूडागारसालासरीरं अणुपविट्ठा पुढभवो एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं २ सावत्थी नाम नयरी होत्था, कोट्ठए चेइए, तत्थ णं सावत्थीए नयरीए अंगती नामं गाहावती होत्था, अड्ढे जाव अपरिभूते। तते णं से अंगती गाहावती सावत्थीए नयरीए बहूणं नगरनिगम० जहा आणंदो। तेणं कालेणं २ पासे णं अरहा पुरिसादाणीए आदिकरे जहा महावीरो नवुस्सेहे सोलसेहिं समणसाहस्सीहिं अट्ठतीसा जाव कोट्ठते समोसढे, परिसा निग्गया। ततेणं से अंगती गाहावती इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठे जहा कत्तिओ सेट्ठी तहा निग्गच्छति

'कूडागारसालादिट्ठंतो' त्ति कस्मिंश्चिदुत्सवे कस्मिंश्चिन्नगरे बहिर्भागप्रदेशे महती देशिकलोकवसनयोग्या शाला–गृहविशेषः समस्ति। तत्रोत्सवे रममाणस्य लोकस्य मेघवृष्टिर्भवितुमारब्धा, ततस्तद्भयेन त्रस्तबहुजनस्तस्यां शालायां प्रविष्टः, एवमयमपि देवविरचितो लोकः प्रचुरः स्वकार्यं नाट्यकरणं तत्संहृत्यानन्तरं स्वकीयं देवशरीरमेवानुप्रविष्टः इत्ययं शालादृष्टान्तार्थः। 'अड्ढे जाव' त्ति अड्ढे दित्ते वित्ते विच्छिन्नविउलभवणसयणासणजाणवाहणाइन्ने बहुधणबहुजायरूवे आओगपओगसंपउत्ते विच्छड्डियपउरभत्तपाणे बहुदासीदासगोमहिसगवेलगप्पभूए इति यावच्छब्दसंगृहीतम्। 'जहा आणंदो' त्ति उपासकदशाङ्गोक्तः श्रावक आनन्दनामा, स च बहूणं ईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियनगरनिगमसेट्ठिसत्थवाहाणं बहुसु कज्जेसु य कारणेसु य मंतेसु य कुडुंबेसु य निच्छिएसु य ववहारेसु य आपुच्छणिज्जे पडिपुच्छणिज्जे सव्वकज्जवड्ढावए सयस्स वि य णं कुडुंबस्स मेढीभूए होत्था। 'पुरिसादाणीय' त्ति पुरुषैरादीयते पुरुषादानीयः। नवहस्तोच्छ्रयः–नवहस्तोच्चः। अट्ठतीसाए अज्जियासहस्सेहिं संपरिवुडे इति यावत्करणात् दृश्यम्। हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए इत्यादि वाच्यम्।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१-३]

निरया- ॥२२॥

जाव पज्जुवासति, धम्मं सोच्चा निसम्म जं नवरं देवाणुप्पिया ! जेट्ठपुत्तं कुडुंबे ठावेमि । तते णं अहं देवाणुप्पियाणं जाव पव्वयामि, जहा गंगदत्तो तहा पव्वतिते जाव गुत्तबंभयारी । तते णं से अंगती अणगारे पासस्स अरहतो तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जति २ बहूहिं चउत्थ जाव भावेमाणो बहूइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणति २ अद्धमासियाए संलेहणाए तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता विराहियसामन्ने कालमासे कालं किच्चा चंदवडिंसए विमाणे उववाते सभाते देवसयणिज्जंसि देवदूसंतरिए चंदे जोइसिंदत्ताए उववन्ने । तते णं से चंदे जोइसिंदे जोइसिराया अहुणोवन्ने

देवाणुप्पियाणं अंतिए पव्वयामि । यथा गङ्गदत्तो भगवत्यङ्गोक्तः, स हि किंपाकफलोवमं मुणिय विसयसोक्खं जलबुब्बुयसमाणं कुसग्गबिंदुचंचलं जीवियं च नाऊणमधुवं चइत्ता हिरण्णं विपुलधणकणगरयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवालरत्तरयणमाइयं विच्छडइत्ता दाणं दाइयाणं परिभाइत्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइओ जहा तहा अंगई वि गिहनायगो परिच्चइय सव्वं पव्वइओ जाओ य पंचसमिओ तिगुत्तो अममो अकिंचणो गुत्तिदिओ गुत्तबंभयारी इत्येवं यावच्छब्दात् दृश्यम् । चउत्थछट्ठट्ठमदसमदुवालसमासद्धमासखवणेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहूइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणइ । 'विराहियसामन्ने' त्ति श्रामण्यं-व्रतं, तद्विराधना चात्र न मूलगुणविषया, किं तूत्तरगुणविषया, उत्तरगुणाश्च पिण्डविशुद्धयादयः, तत्र कदाचित् द्विचत्वारिंशद्दोषविशुद्धाहारस्य ग्रहणं न कृतं कारणं विनाऽपि, बालग्लानादिकारणेऽशुद्धमपि गृह्णन्न दोषवानिति, पिण्डस्याशुद्धतादौ विराधितश्रमणता ईर्यादिसमित्यादिशोधनेऽनादरः कृतः, अभिग्रहाश्च गृहीताः कदाचिद्भग्ना भवन्तीति शुण्ठ्यादिसन्निधिपरिभोगमङ्गक्षालनपादक्षालनादि च कृतवानित्यादिप्रकारेण सम्यगपालने व्रतविराधनेति, सा च नालोचिता गुरुसमीपे इत्यनालोचितातिचारो मृत्वा कृतानशनोऽपि ज्योतिष्केन्द्रे चन्द्ररूपतयोत्पन्नः ।

वलिका. ॥२२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१-३]

समाणे पंचविहाए पज्जत्तीए पज्जत्तीभावं गच्छइ, तं जहा–आहारपज्जत्तीए, सरीरपज्जत्तीए, इंदियपज्जत्तीए, सासोसासपज्जत्तीए, भासा(मण)पज्जत्तीए। चंदस्स णं भंते ! जोइसिंदस्स जोइसरन्नो केवइयं कालं ठिती पन्नत्ता ? गोयमा ! पलिओवमं वाससयसहस्समब्भहियं । एवं खलु गोयमा ! चंदस्स जाव जोतिसरन्नो सा दिव्वा देविड्ढी । चंदे णं भंते! जोइसिंदे जोइसिराया ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं चइत्ता कहिं गच्छिहिति २ ? गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति। एवं खलु जंबू समणेणं० निक्खेवओ ॥ १ ॥

अ० २ ● जइ णं भंते ! समणेणं भगवया जाव पुप्फियाणं पढमस्स अज्झयणस्स जाव अयमट्ठे पन्नत्ते, दोच्चस्स णं भंते ! अज्झयणस्स पुप्फियाणं समणेणं भगवता जाव संपत्तेणं के अट्ठे पन्नत्ते ? एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं २ रायगिहे नामं, गुणसिलए चेइए, सेणिए राया, समोसरणं, जहा चंदो तहा सूरोऽवि आगओ जाव नट्टविहिं उवदंसित्ता पडिगतो। पुव्वभवपुच्छा, सावत्थी नगरी, सुपतिट्ठे नामं गाहावई होत्था, अड्ढे, जहेव अंगती जाव विहरति, पासो समोसढो, जहा अंगती तहेव पव्वइए, तहेव विराहियसामन्ने जाव महाविदेहे वासे सिज्झहिति जाव अंतं०, खलु जंबू ! समणेणं० निक्खेवओ ॥ २ ॥

अ० ३ ● जइ णं भंते ! समणेणं भगवता जाव संपत्तेणं उक्खेवओ भाणियव्वो, रायगिहे नगरे, गुणसिलए चेइए, सेणिए राया,

'निक्खेवओ' त्ति निगमनं, तच्च प्रागुपदर्शितम् ॥ तच्चे अज्झयणे शुक्रवक्तव्यताऽभिधीयते—'उक्खेवओ' त्ति उत्क्षेपः–प्रारम्भवाक्यं, यथा–जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं दोच्चस्स अज्झयणस्स पुप्फियाणं अयमट्ठे पन्नत्ते, तच्चस्स णं अज्झयणस्स भंते ! पुप्फियाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पन्नत्ते ? एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं २ रायगिहे नयरे इत्यादि।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अध्ययनं-१- 'चन्द्र' आरभ्यते [मूलसूत्र १-३]

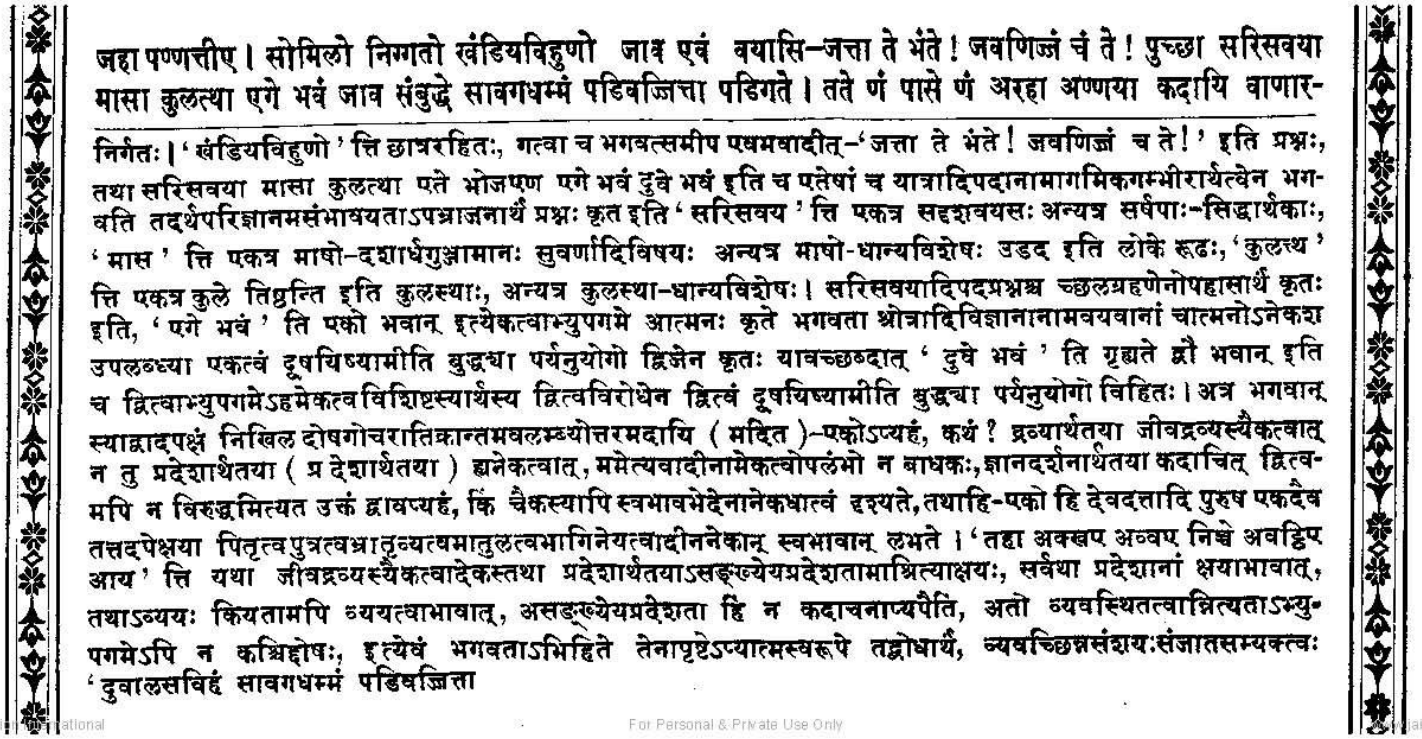
अध्ययनं-२- 'सूर्य' आरब्धं एवं परिसमाप्तं [मूलसूत्र ४]

अध्ययनं-३- 'शक्र' आरभ्यते [मूलसूत्र ५-७]

सामी समोसढे, परिसा निग्गया । तेणं कालेणं २ सुक्के महग्गहे सुक्कवडिंसए विमाणे सुक्कंसि सीहासणंसि चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं जहेव चंदो तहेव आगओ, नट्टविहिं उवदंसित्ता पडिगतो, भंते त्ति कूडागारसाला । पुव्वभवपुच्छा । एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं २ वाणारसी नामं नयरी होत्था । तत्थ णं वाणारसीए नयरीए सोमिले नामं माहणे परिवसति, अड्ढे जाव अपरिभूते रिउव्वेय जाव सुपरिनिट्ठिते । पासे० समोसढे । परिसा पज्जुवासति । तए णं तस्स सोमिलस्स माहणस्स इमीसे कहाए लद्धट्ठस्स समाणस्स इमे एतारूवे अज्झत्थिए–एवं पासे अरहा पुरिसादाणीए पुव्वाणुपुव्विं जाव अंबसालवणे विहरति । तं गच्छामि णं पासस्स अरहतो अंतिए पाउब्भवामि । इमाइं च णं एयारूवाइं अट्ठाइं हेऊइं

। 'तहेवागओ' त्ति रायगिहे सामिसमीवे । 'रिउव्वेय जाव' इति ऋग्वेदयजुर्वेदसामवेदाथर्वणवेदानाम् इतिहासपञ्चमानाम् इतिहासः–पुराणं, निर्घण्टषष्ठानां–निर्घण्टो–नामकोशः, साङ्गोपाङ्गानाम् अङ्गानि–शिक्षादीनि उपाङ्गानि–तदुक्तप्रपञ्चनपराः प्रबन्धाः, सरहस्यानाम्–पेदम्पर्ययुक्तानां धारकः–प्रवर्तकः वारकः–अशुद्धपाठनिषेधकः पारगः–पारगामि षडङ्गवित्, षष्टितन्त्रविशारदः षष्टितन्त्रं–कापिलीयशास्त्रं षडङ्गवेदकत्वमेव व्यनक्ति, सङ्ख्याने–गणितस्कन्धे शिक्षाकल्पे–शिक्षायामक्षरस्वरूपनिरूपके शास्त्रे कल्पे–तथाविधसमाचारप्रतिपादके व्याकरणे–शब्दलक्षणे छन्दसि–गद्यपद्यवचनलक्षणनिरुक्तप्रतिपादके ज्योतिषामयने–ज्योतिःशास्त्रे अन्येषु च ब्राह्मणकेषु शास्त्रेषु सुपरिनिष्ठितः सोमिलनामा ब्राह्मणः स च पार्श्वजिनागमं श्रुत्वा कुतूहलवशाज्जिनसमीपं गतः सन् 'इमाइं च णं' इति इमान्–एतद्रूपान् 'अट्ठाइं' ति अर्थान् अर्थ्यमानत्वादधिगम्यमानत्वादित्यर्थः । 'हेऊइं' ति हेतून् अन्तर्वर्तिन्यास्तदीयज्ञानसंपदो गमकान्, 'पसिणाइं' ति यात्रायापनीयादीन् प्रश्नान् पृच्छ्यमानत्वात्, 'कारणाइं' ति कारणानि–विवक्षितार्थनिश्चयजनकानि व्याकरणानि–प्रत्युत्तरतया व्याक्रियमाणत्वादेषामिति, 'पुच्छिस्सामि' त्ति प्रश्नयिष्ये इति कृत्वा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



जहा पण्णत्तीए। सोमिलो निग्गतो खंडियविहुणो जाव एवं वयासि–जत्ता ते भंते! जवणिज्जं चं ते! पुच्छा सरिसवया मासा कुलत्था एगे भवं जाव संबुद्धे सावगधम्मं पडिवज्जित्ता पडिगते। तते णं पासे णं अरहा अण्णया कदायि वाणार-

निर्गतः। 'खंडियविहुणो' त्ति छात्ररहितः, गत्वा च भगवत्समीपं एवमवादीत्–'जत्ता ते भंते! जवणिज्जं च ते!' इति प्रश्नः, तथा सरिसवया मासा कुलत्था एते भोजपूर्ण एगे भवं दुवे भवं इति च एतेषां च यात्रादिपदानामागमिकगम्भीरार्थत्वेन भगवति तदर्थपरिज्ञानमसंभावयताऽपभ्राजनार्थं प्रश्नः कृत इति 'सरिसवय' त्ति एकत्र सदृशवयसः अन्यत्र सर्षपाः–सिद्धार्थकाः, 'मास' त्ति एकत्र माषो–दशार्धगुञ्जामानः सुवर्णादिविषयः अन्यत्र माषो-धान्यविशेषः उडद इति लोके रूढः, 'कुलत्थ' त्ति एकत्र कुले तिष्ठन्ति इति कुलस्थाः, अन्यत्र कुलस्था–धान्यविशेषः। सरिसवयादिपदप्रश्नश्च च्छलग्रहणेनोपहासार्थं कृतः इति, 'एगे भवं' ति एको भवान् इत्येकत्वाभ्युपगमे आत्मनः कृते भगवता श्रोत्रादिविज्ञानानामवयवानां चात्मनोऽनेकश उपलब्ध्या एकत्वं दूषयिष्यामीति बुद्ध्या पर्यनुयोगो द्विजेन कृतः यावच्छब्दात् 'दुवे भवं' ति गृह्यते द्वौ भवान् इति च द्वित्वाभ्युपगमेऽहमेकत्वविशिष्टस्यार्थस्य द्वित्वविरोधेन द्वित्वं दूषयिष्यामीति बुद्ध्या पर्यनुयोगो विहितः। अत्र भगवान् स्याद्वादपक्षं निखिलदोषगोचरातिक्रान्तमवलम्ब्योत्तरमदायि (मदित)–एकोऽप्यहं, कथं? द्रव्यार्थतया जीवद्रव्यस्यैकत्वात् न तु प्रदेशार्थतया (प्रदेशार्थतया) ह्यनेकत्वात्, ममेत्यवादीनामेकत्वोपलंभो न बाधकः, ज्ञानदर्शनार्थतया कदाचित् द्वित्वमपि न विरुद्धमित्यत उक्तं द्वावप्यहं, किं चैकस्यापि स्वभावभेदेनानेकधात्वं दृश्यते, तथाहि-एको हि देवदत्तादि पुरुष एकदैव तत्तदपेक्षया पितृत्वपुत्रत्वभ्रातृव्यत्वमातुलत्वभागिनेयत्वादीननेकान् स्वभावान् लभते। 'तहा अक्खए अव्वए अवट्ठिए आय' त्ति यथा जीवद्रव्यस्यैकत्वादेकस्तथा प्रदेशार्थतयाऽसङ्ख्येयप्रदेशतामाश्रित्याक्षयः, सर्वथा प्रदेशानां क्षयाभावात्, तथाऽव्ययः कियतामपि व्ययत्वाभावात्, असङ्ख्येयप्रदेशता हि न कदाचनाप्यपैति, अतो व्यवस्थितत्वान्नित्यताऽभ्युपगमेऽपि न कश्चिद्दोषः, इत्येवं भगवताऽभिहिते तेनापृष्टेऽप्यात्मस्वरूपे तद्बोधार्थं, व्यवच्छिन्नसंशयःसंजातसम्यक्त्वः 'दुवालसविहं सावगधम्मं पडिवज्जित्ता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निरया- ॥२४॥

सीओ नगरीओ अंबसालवणातो चेइयाओ पडिनिक्खमति २ बहिया जणवयविहारं विहरति। तते णं से सोमिले माहणे अण्णदाकदायि असाहुदंसणेण य अपज्जुवासणताए य मिच्छत्तपज्जवेहिं परिवड्ढमाणेहिं २ सम्मत्तपज्जवेहिं परिहायमाणेहिं मिच्छत्तं च पडिवन्ने। तते णं तस्स सोमिलस्स माहणस्स अण्णदा कदायि पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंबजागरियं जागरमाणस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु अहं वाणारसीए नयरीए सोमिले नामं माहणे अच्चंतमाहणकुलप्पसूए। तते णं मए वयाइं चिण्णाइं वेदा य अहीया दारा आहूया पुत्ता जणिता इट्ठीओ संमाणीओ पसुवधा कया जन्ना जेट्ठा दक्खिणा दिन्ना अतिही पूजिता अग्गीहूया जूया निक्खित्ता, तं सेयं खलु ममं इदाणिं कल्लं जाव जलंते वाणारसीए नयरीए बहिया बहवे अंबारामा रोवावित्तए, एवं माउलिंगा बिल्ला कविट्ठा चिंचा पुप्फारामा रोवावित्तए, एवं संपेहेति संपेहित्ता कल्लं जाव जलंते वाणारसीए नयरीए बहिया अंबारामे य जाव पुप्फारामे य रोवावेति। तते णं

सट्ठाणमुवगओ सोमिलमाहणो' 'असाहुदंसणेणं' ति असाधवः–कुदर्शनिनो भागवततापसादयः तद्दर्शनेन साधूनां च–सुश्रमणानामदर्शनेन तत्र तेषां देशान्तरविहरणेनादर्शनतः, अत एवापर्युपासनतस्तदभावात्, अतो मिथ्यात्वपुद्गलास्तस्य प्रवर्धमानतां गताः सम्यक्त्वपुद्गलाश्चापचीयमानास्त एवैभिः कारणैर्मिथ्यात्वं गतः, तदुक्तम्–"मइभेया पुव्वोगाहसंसग्गीए य अभिनिवेसेणं चउहा खलु मिच्छत्तं, साहूणंऽदंसणेणहवा ॥ १ ॥" अतो अत्र असाहुदंसणेणं इत्युक्तम्। 'अज्झत्थिए जाव' त्ति आध्यात्मिकः–आत्मविषयः चिन्तितः–स्मरणरूपः प्रार्थितः–लघुमाशंसितः मनोगतो–मनस्येव वर्तते, यो न बहिः प्रकाशितः सङ्कल्पो–विकल्पः समुत्पन्नः–प्रादुर्भूतः, तमेवाह–एवमित्यादि 'वयाइं चिण्णाइं' व्रतानि–नियमास्ते च शौचसंतोषतपःस्वाध्यायादीनां प्रणिधानानि वेदाध्ययनादि कृतं च, ततो ममेदानीं लौकिकधर्मस्थानाचरणयाऽऽरामारोपणं कर्तुं श्रेयः तेन वृक्षारोपणमिति, अत एवाह—'अंबारामे य' इत्यादि।

वलिका. ॥२४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

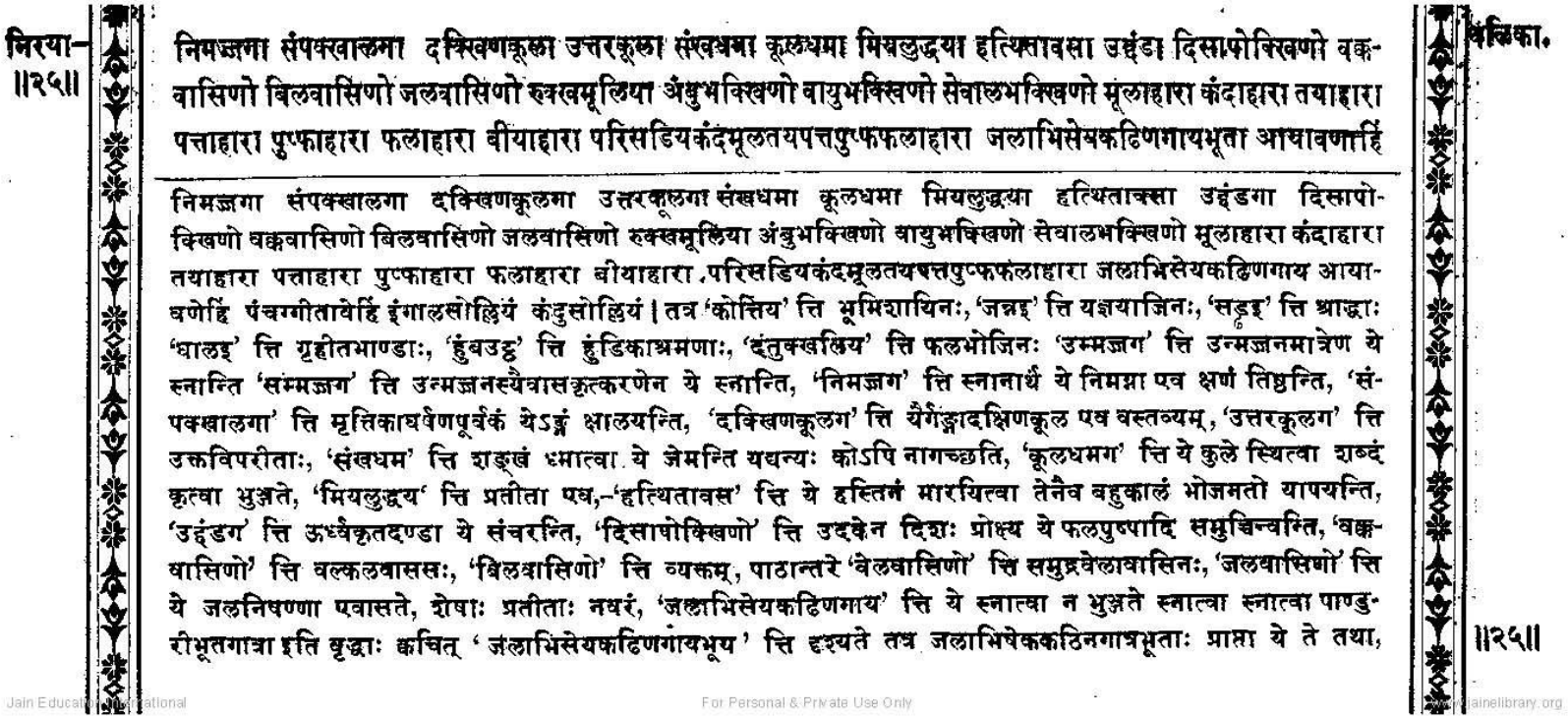
बहवे अंबारामा य जाव पुप्फारामा य अणुपुव्वेणं सारक्खिज्जमाणा संगोविज्जमाणा संवड्ढिज्जमाणा आरामा जाता किण्हा किण्हाभासा जाव रम्मा महामेहनिकुरंबभूता पत्तिया पुप्फिया फलिया हरियगरेरिज्जमाणसिरिया अतीव २ उवसोभेमाणा २ चिट्ठंति। तते णं तस्स सोमिलस्स माहणस्स अण्णदा कदायि पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंबजागरियं जागरमाणस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु अहं वाणारसीए णयरीए सोमिले नामं माहणे अच्चंतमाहणकुलप्पसूते, तते णं मए वयाइं चिण्णाइं जाव जूवा णिक्खित्ता, तते णं मए वाणारसीए नयरीए बहिया बहवे अंबारामा जाव पुप्फारामा य रोवाविया, तं सेयं खलु ममं इदाणिं कल्लं जाव जलंते सुबहुं लोहकडाहकडुच्छुयं तंबियं तावसभंडं घडाविता विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं मित्तनाइ० आमंतित्ता तं मित्तनाइणियग०विउलेणं असण जाव सम्माणित्ता तस्सेव मित्त जाव जेट्ठपुत्तं कुडुंबे ठावेत्ता तं मित्तनाइ जाव आपुच्छित्ता सुबहुं लोहकडाहकडुच्छुयं तंबियतावसभंडगं गहाय जे इमे गंगाकूला वाणपत्था तावसा भवंति, तं जहा–होत्तिया पोत्तिया कोत्तिया जण्णई सड्ढई थालई हुंबउट्ठा दंतुक्खलिया उम्मज्जगा संमज्जगा

कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जलंते सूरिए इत्यादि वाच्यम्। "मित्तनाइनियगसंबंधिपरियणं पि य आमंतित्ता विउलेणं असणपाणखाइमसाइमेणं भोयावित्ता सम्माणित्ता" इति अत्र मित्राणि–सुहृदः ज्ञातयः–समानजातयः निजकाः–पितृव्यादयः संबन्धिनः–श्वशुरपुत्रादयः परिजनो–दासीदासादिः तमामंत्र्य विपुलेन भोजनादिना भोजयित्वा सत्कारयित्वा वस्त्रादिभिः संमानयित्वा गुणोत्कीर्तनतः ज्येष्ठपुत्रं कुटुम्बे स्थापयित्वाऽधिपतित्वेन गृहीतलोहकटाहाद्युपकरणः। 'वाणपत्थ' त्ति वने भवा वानी प्रस्थानं प्रस्था–अवस्थितिः वानी प्रस्था येषां ते वानप्रस्थाः अथवा 'ब्रह्मचारी गृहस्थश्च, वानप्रस्थो यतिस्तथा।' इति चत्वारो लोकप्रतीता आश्रमाः, एतेषां च तृतीयाश्रमवर्तिनो वानप्रस्थाः, 'होत्तिय' त्ति अग्निहोतृकाः, 'पोत्तिय' त्ति वस्त्रधारिणः, कोत्तिया जन्नई सड्ढई थालई हुंबउट्ठा दंतुक्खलिया उम्मज्जगा सम्मज्जगा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [५-७]



निरया- ॥२५॥

निमज्जगा संपक्खालगा दक्खिणकूला उत्तरकूला संखधमा कूलधमा मियलुद्धया हत्थितावसा उद्दंडा दिसापोक्खिणो वक्कवासिणो बिलवासिणो जलवासिणो रुक्खमूलिया अंबुभक्खिणो वायुभक्खिणो सेवालभक्खिणो मूलाहारा कंदाहारा तयाहारा पत्ताहारा पुप्फाहारा फलाहारा बीयाहारा परिसडियकंदमूलतयपत्तपुप्फफलाहारा जलाभिसेयकढिणगायभूता आयावणाहिं

निमज्जगा संपक्खालगा दक्खिणकूलगा उत्तरकूलगा संखधमा कूलधमा मियलुद्धया हत्थितावसा उद्दंडगा दिसापोक्खिणो वक्कवासिणो बिलवासिणो जलवासिणो रुक्खमूलिया अंबुभक्खिणो वायुभक्खिणो सेवालभक्खिणो मूलाहारा कंदाहारा तयाहारा पत्ताहारा पुप्फाहारा फलाहारा बीयाहारा ,परिसडियकंदमूलतयपत्तपुप्फफलाहारा जलाभिसेयकढिणगाय आयावणेहिं पंचग्गीतावेहिं इंगालसोल्लियं कंदुसोल्लियं । तत्र 'कोत्तिय' त्ति भूमिशायिनः, 'जन्नइ' त्ति यज्ञयाजिनः, 'सड्ढइ' त्ति श्राद्धाः 'थालइ' त्ति गृहीतभाण्डाः, 'हुंबउट्ठ' त्ति हुंडिकाश्रमणाः, 'दंतुक्खलिय' त्ति फलभोजिनः 'उम्मज्जग' त्ति उन्मज्जनमात्रेण ये स्नान्ति 'सम्मज्जग' त्ति उन्मज्जनस्यैवासकृत्करणेन ये स्नान्ति, 'निमज्जग' त्ति स्नानार्थं ये निमग्ना एव क्षणं तिष्ठन्ति, 'संपक्खालगा' त्ति मृत्तिकाद्यर्षणपूर्वकं येऽङ्गं क्षालयन्ति, 'दक्खिणकूलग' त्ति यैर्गङ्गादक्षिणकूल एव वस्तव्यम्, 'उत्तरकूलग' त्ति उक्तविपरीताः, 'संखधम' त्ति शङ्खं ध्मात्वा ये जेमन्ति यद्यन्यः कोऽपि नागच्छति, 'कूलधमग' त्ति ये कुले स्थित्वा शब्दं कृत्वा भुञ्जते, 'मियलुद्धय' त्ति प्रतीता एव,–'हत्थितावस' त्ति ये हस्तिनं मारयित्वा तेनैव बहुकालं भोजमतो यापयन्ति, 'उद्दंडग' त्ति ऊर्ध्वकृतदण्डा ये संचरन्ति, 'दिसापोक्खिणो' त्ति उदकेन दिशः प्रोक्ष्य ये फलपुष्पादि समुच्चिन्वन्ति, 'वक्कवासिणो' त्ति वल्कलवाससः, 'बिलवासिणो' त्ति व्यक्तम्, पाठान्तरे 'वेलवासिणो' त्ति समुद्रवेलावासिनः, 'जलवासिणो' त्ति ये जलनिषण्णा एवासते, शेषाः प्रतीताः नवरं, 'जलाभिसेयकढिणगाय' त्ति ये स्नात्वा न भुञ्जते स्नात्वा स्नात्वा पाण्डुरीभूतगात्रा इति वृद्धाः क्वचित् ' जलाभिसेयकढिणगायभूय ' त्ति दृश्यते तत्र जलाभिषेककठिनगात्रभूताः प्राप्ता ये ते तथा,

वर्तिका. ॥२५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [५-७]

पंचग्गीतावेहिं इंगालसोल्लियं कंदुसोल्लियं पिव अप्पाणं करेमाणा विहरंति। तत्थ णं जे ते दिसापोक्खिया तावसा तेसिं अंतिए दिसापोक्खियत्ताए पव्वइत्तए पव्वयिते वि य णं समाणे इमं एयारूवं अभिग्गहं अभिगिन्हिस्सामि–कप्पति मे जावज्जीवाए छट्ठं छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं दिसाचक्कवालेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहातो पगिज्झिय २ सूराभिमुहस्स आतावण-भूमीए आतावेमाणस्स विहरित्तए त्ति कट्टु एवं संपेहेइ २ कल्लं जाव जलंते सुबहुं लोहं जाव दिसापोक्खियतावसत्ताए पव्वइए २ वि य णं समाणे इमं एयारूवं अभिग्गहं जाव अभिगिन्हित्ता पढमं छट्ठक्खमणं उवसंपज्जित्ता णं विहरति। तते णं सोमिले माहणे रिसी पढमछट्ठक्खमणपारणंसि आयावणभूमीए पच्चोरुहति २ वागलवत्थनियत्थे जेणेव सए उडए तेणेव उवा० २ किढिणसंकाइयं गेण्हति २ पुरच्छिमं दिसिं पुक्खेति, पुरच्छिमाए दिसाए सोमे महाराया पत्थाणे पत्थियं अभिरक्खउ सोमिलमाहणरिसिं अभि० २ जाणि य तत्थ कंदाणि य मूलाणि य तयाणि य पत्ताणि य पुप्फाणि य

'इंगालसोल्लियं' ति अङ्गारैरिव पक्वम्, 'कंदुसोल्लियं' ति कन्दुपक्वमिवेति। 'दिसाचक्कवालएणं तवोकम्मेणं' ति एकत्र पारणके पूर्वस्यां दिशि यानि फलादीनि तान्याहृत्य भुङ्क्ते, द्वितीये तु दक्षिणस्यामित्येवं दिक्चक्रवालेन तत्र तपःकर्मणि पारणककरणं तत्तपःकर्म दिक्चक्रवालमुच्यतेतेन तपःकर्मणेति। 'वागलवत्थनियत्थे' त्ति वल्कलं–वल्कः तस्येदं वाल्कलं तद्रूपं निवसितं येन स वाल्कलवस्त्रनिवसितः। 'उडए' त्ति उटजः–तापसाश्रमगृहम्। 'किढिण' त्ति वंशमयस्तापसभाज-नविशेषः ततश्च तयोः सांकायिकं–भारोद्वहनयन्त्रं किढिणसांकायिकम्। 'महाराय' त्ति लोकपालः। 'पत्थाणे पत्थियं' ति प्रस्थाने परलोकसाधनमार्गे प्रस्थितं–प्रवृत्तं फलाद्याहरणार्थं, गमने वा प्रवृत्तम्। सोमिलब्रिजऋषिम्।

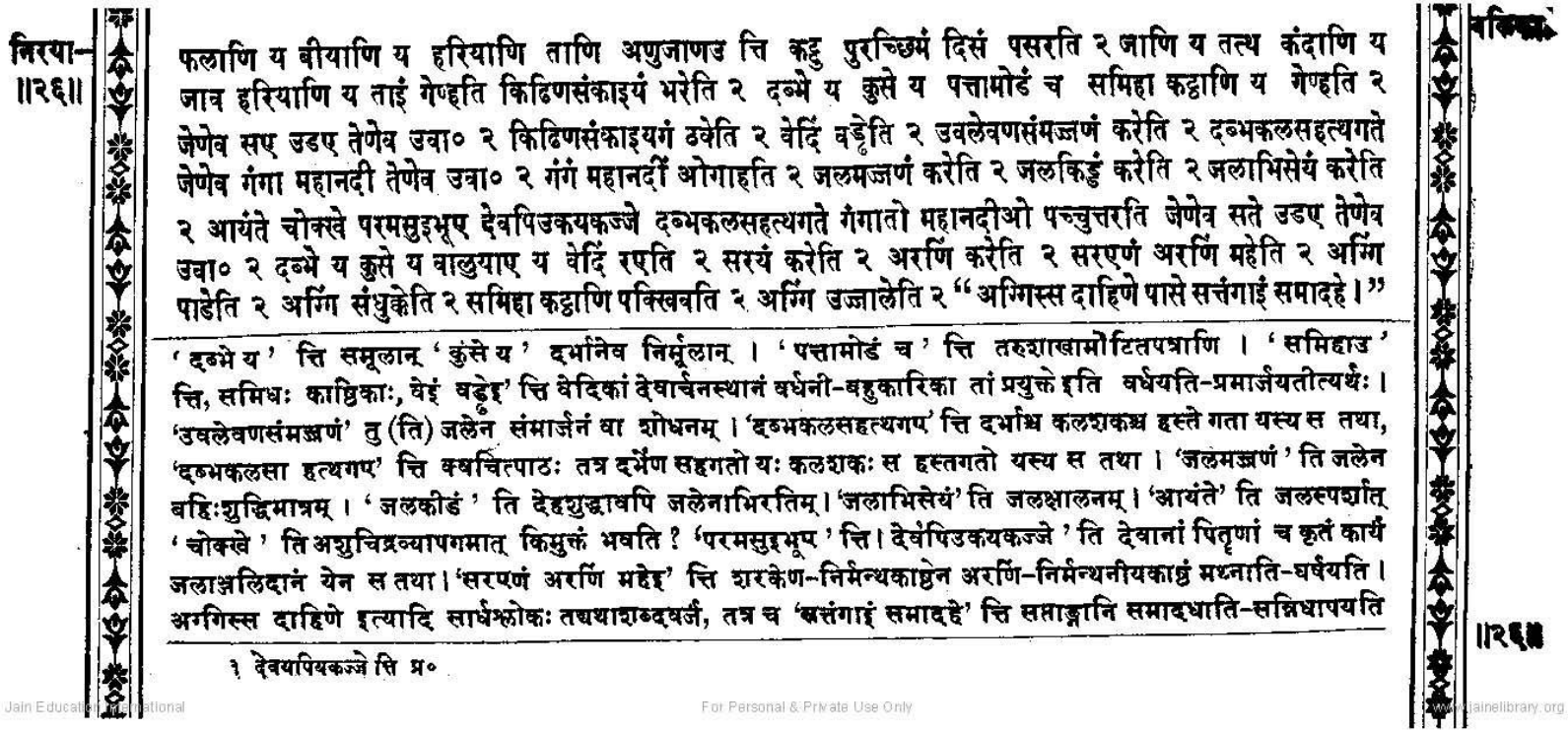
१ कढिण प्र०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२१]उपांगसूत्र-[१०] पुष्पिका मूलं एवंचन्द्रसूरि-विरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [५-७]



निरया- ॥२६॥

फलाणि य बीयाणि य हरियाणि ताणि अणुजाणउ त्ति कट्टु पुरच्छिमं दिसं पसरति २ जाणि य तत्थ कंदाणि य जाव हरियाणि य ताइं गेण्हति किढिणसंकाइयं भरेति २ दब्भे य कुसे य पत्तामोडं च समिहा कट्ठाणि य गेण्हति २ जेणेव सए उडए तेणेव उवा० २ किढिणसंकाइयगं ठवेति २ वेदिं वड्ढेति २ उवलेवणसंमज्जणं करेति २ दब्भकलसहत्थगते जेणेव गंगा महानदी तेणेव उवा० २ गंगं महानदीं ओगाहति २ जलमज्जणं करेति २ जलकिड्डं करेति २ जलाभिसेयं करेति २ आयंते चोक्खे परमसुइभूए देवपिउकयकज्जे[1] दब्भकलसहत्थगते गंगातो महानदीओ पच्चुत्तरति जेणेव सते उडए तेणेव उवा० २ दब्भे य कुसे य वालुयाए य वेदिं रएति २ सरयं करेति २ अरणिं करेति २ सरएणं अरणिं महेति २ अग्गिं पाडेति २ अग्गिं संधुक्केति २ समिहा कट्ठाणि पक्खिवति २ अग्गिं उज्जालेति २ “अग्गिस्स दाहिणे पासे सत्तंगाइं समादहे।”

‘दब्भे य’ त्ति समूलान् ‘कुसे य’ दर्भानेव निर्मूलान् । ‘पत्तामोडं च’ त्ति तरुशाखामोटितपत्राणि । ‘समिहाउ’ त्ति, समिधः काष्ठिकाः, वेइं वड्ढेइ’ त्ति वेदिकां देवार्चनस्थानं वर्धनी-बहुकारिका तां प्रयुक्ते इति वर्धयति-प्रमार्जयतीत्यर्थः । ‘उवलेवणसंमज्जणं’ तु (ति) जलेन संमार्जनं वा शोधनम् । ‘दब्भकलसहत्थगए’ त्ति दर्भाश्च कलशकश्च हस्ते गता यस्य स तथा, ‘दब्भकलसा हत्थगए’ त्ति क्वचित्पाठः तत्र दर्भेण सहगतो यः कलशकः स हस्तगतो यस्य स तथा । ‘जलमज्जणं’ ति जलेन बहिःशुद्धिमात्रम् । ‘जलकीडं’ ति देहशुद्धावपि जलेनाभिरतिम् । ‘जलाभिसेयं’ ति जलक्षालनम् । ‘आयंते’ ति जलस्पर्शात् ‘चोक्खे’ ति अशुचिद्रव्यापगमात् किमुक्तं भवति ? ‘परमसुइभूए’ त्ति । देवैपिउकयकज्जे’ ति देवानां पितृणां च कृतं कार्यं जलाञ्जलिदानं येन स तथा । ‘सरएणं अरणिं महेइ’ त्ति शरकेण-निर्मन्थकाष्ठेन अरणिं-निर्मन्थनीयकाष्ठं मथ्नाति-घर्षयति । अग्गिस्स दाहिणे इत्यादि सार्धश्लोकः तथाशब्दवर्जं, तत्र च ‘सत्तंगाइं समादहे’ त्ति सप्ताङ्गानि समादधाति-सन्निधापयति

१ देवयपियकज्जे त्ति प्र०

॥२६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तं जहा–"सकथं वक्कलं ठाणं सिज्जं भंडं कमंडलुं। दंडदारुं तहप्पाणं अह ताइं समादहे॥" मधुणाय घएण य तंदुलेहि य अग्गिं हुणइ, चरुं साधेति २ बलिं वइस्सदेवं करेति २ अतिहिपूयं करेति २ तओ पच्छा अप्पणा आहारं आहारेति। तते णं सोमिले माहणरिसी दोच्चं छट्ठक्खमणपारणगंसि तं चेव सव्वं भाणियव्वं जाव आहारं आहारेति, नवरं इमं नाणत्तं–दाहिणाए दिसाए जमे महाराया पत्थाणे पत्थियं अभिरक्खउ सोमिलं माहणरिसिं जाणि य तत्थ कंदाणि य जाव अणुजाणउ त्ति कट्टु दाहिणं दिसिं पसरति। एवं पच्चत्थिमे णं वरुणे महाराया जाव पच्चत्थिमं दिसिं पसरति। उत्तरे णं वेसमणे महाराया जाव उत्तरं दिसिं पसरति। पुव्वदिसागमेणं चत्तारि वि दिसाओ भाणियव्वाओ जाव आहारं आहारेति। तते णं तस्स सोमिलमाहणरिसिस्स अण्णया कयायि पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि अणिच्च जागरियं जागरमाणस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु अहं वाणारसीए नगरीए सोमिले नामं माहणरिसी अच्चंतमाहणकुलप्पसूए, तते णं मए वयाइं चिण्णाइं जाव जूवा निक्खित्ता। तते णं मम वाणारसीए जाव पुप्फारामा य जाव रोविता। तते णं मए सुबहुलोह जाव घडावित्ता जाव जेट्ठपुत्तं ठावित्ता जाव जेट्ठपुत्तं आपुच्छित्ता सुबहुलोह जाव गहाय मुंडे जाव पव्वइए वि य णं समाणे छट्ठं छट्ठेणं

सकथं १ वल्कलं २ स्थानं ३ शय्याभाण्डं ४ कमण्डलुं ५ दण्डदारुं ६ तथात्मानमिति ७। तत्र सकथं–तत्समयप्रसिद्ध उपकरणविशेषः, स्थानं–ज्योतिःस्थानम् पात्रस्थानं वा, शय्याभाण्डं–शय्योपकरणं, कमण्डलुः–कुण्डिका, दण्डदारु–दण्डकः, आत्मा प्रतीतः। 'चरुं साहेति' त्ति चरुः–भाजनविशेषः तत्र पच्यमानं द्रव्यमपि चरुरेव तं चरुं बलिमित्यर्थः साधयति–रन्धयति। 'बलिं वइस्सदेवं करेइ' त्ति बलिना वैश्वानरं पूजयतीत्यर्थः। 'अतिहिपूयं करेइ' त्ति अतिथेः–आगन्तुकस्य पूजां करोतीति 'जाव गहा' कडुच्छुयतंबियभायणं गहाय दिसापोक्खियतावसत्तए पव्वइए प्रव्रजितेऽपि षष्ठाक्षितपःकरणेन दिशः प्रे-

१ वेयं प्र० २ प्रव्रजित्वेऽपि प्र०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जाव विहरति । तं सेयं खलु ममं इयाणिं कल्लं पादु० जाव जलंते बहवे तावसे दिट्ठा भट्ठे य पुव्वसंगतिए य परियायसंगतिए अ आपुच्छित्ता आसमसंसियाणि य बहूइं सत्तसयाइं अणुमाणइत्ता वागलवत्थनियत्थस्स कढिणसंकाइयगहितसभंडोवकरणस्स कट्ठमुद्दाए मुहं बंधित्ता उत्तरदिसाए उत्तराभिमुहस्स महपत्थाणं पत्थावेइत्तए एवं संपेहेति २ कल्लं जाव जलंते बहवे तावसे य दिट्ठा भट्ठे य पुव्वसंगतिते य तं चेव जाव कट्ठमुद्दाए मुहं बंधति, बंधित्ता अयमेतारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हति जत्थेव णं अम्हं जलंसि वा एवं थलंसि वा दुग्गंसि वा निन्नंसि वा पव्वतंसि वा विसमंसि वा गड्डाए वा दरीए वा पक्खलिज्ज वा पवडिज्ज वा नो खलु मे कप्पति पच्चुट्ठित्तए त्ति कट्टु अयमेयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हति, उत्तराए दिसाए उत्तराभिमुह पत्थाणं (महपत्थाणं) पत्थिए से सोमिले माहणरिसी पुव्वावरण्हकालसमयंसि जेणेव असोगवरपायवे तेणेव उवागते, असोगवरपायवस्स अहे कढिणसंकाइयं ठवेति २ वेदिं वड्ढेइ २ उवलेवणसंमज्जणं करेति २ दब्भकलसहत्थगते जेणेव गंगा महानई जहा सिवो जाव गंगातो महानईओ पच्चुत्तरइ, जेणेव असोगवरपायवे तेणेव उवा० २ दब्भेहि य कुसेहि य वालुयाए वेदि रतेति, रतित्ता सरगं करेति २

क्षितत्वादिविधिं च कृत्वा पारणादिकमाचरितवान् । इदानीं च इदं मम श्रेयः कर्तुं, तदेवाह-'जाव जलंते' सूरिए दृष्टान् आभाषितान् आपृच्छ्य, बहूनि सत्त्वशतानि समनुमान्य संभाष्य, गृहीतनिजभाण्डोपकरणस्योत्तरदिगभिमुखं गन्तुं मम युज्यते इति संप्रेक्ष्यते चेतसि । 'कट्ठमुद्दाए मुहं बंधइत्ता' यथा काष्ठं काष्ठमयः पुत्तलको न भाषते एवं सोऽपि मौनावलम्बी जातः यद्वा मुखरन्ध्राच्छादकं काष्ठखण्डमुभयपार्श्वच्छिद्रद्वयप्रेषितदवरकान्वितं मुखबन्धनं काष्ठमुद्रा तया मुखं बध्नाति। जलस्थलादीनि सुगमानि, एतेषु स्थानेषु स्खलितस्य प्रतिपतितस्य वा न तत उत्थातुं मम कल्पते। महाप्रस्थानं पदं ति मरणकालभावि कर्तुं ततः प्रस्थितः-कर्तुमारब्धः । 'पुव्वावरण्हकालसमयंसि' त्ति पाश्चात्यापराण्हकालसमयः-दिनस्य चतुर्थप्रहरलक्षणः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

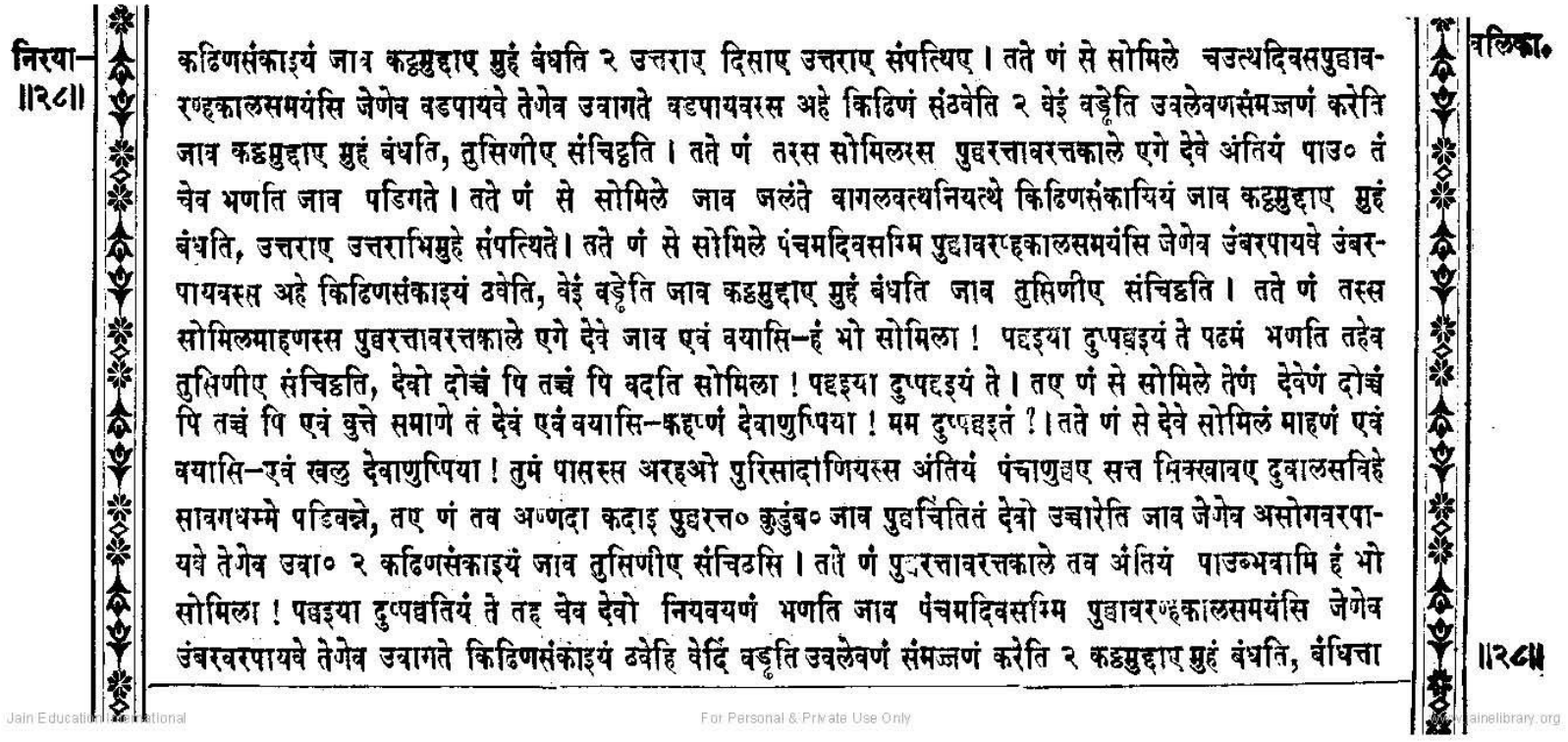
प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [५-७]

जाव बलिं वइस्सदेवं करेति २ कट्ठमुद्दाए मुहं बंधति तुसिणीए संचिट्ठति । तते णं तस्स सोमिलमाहणरिसिस्स पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि एगे देवे अंतियं पाउब्भूते । तते णं से देवे सोमिलं माहणं एवं वयासि–हं भो सोमिलमाहणा ! पव्वइया दुपव्वइतं ते । तते णं से सोमिले तस्स देवस्स दोच्चं पि तच्चं पि एयमट्ठं नो आढाति नो परिजाणइ जाव तुसिणीए संचिट्ठति । तते णं से देवे सोमिलेणं माहणरिसिणा अणाढाइज्जमाणे जामेव दिसिं पाउब्भूते तामेव जाव पडिगते । तते णं से सोमिले कल्लं जाव जलंते वागलवत्थनियत्थे कढिणसंकाइयं गहियग्गिहोत्तभंडोवकरणे कट्ठमुद्दाए मुहं बंधति २ उत्तराभिमुहे संपत्थिते । तते णं से सोमिले बितियदिवसम्मि पुव्वावरण्हकालसमयंसि जेणेव सत्तिवन्ने अहे कढिणसंकाइयं ठवेति २ वेदिं वड्ढेति २ जहा असोगवरपायवे जाव अग्गिं हुणति, कट्ठमुद्दाए मुहं बंधति, तुसिणीए संचिट्ठति । तते णं तस्स सोमिलस्स पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि एगे देवे अंतियं पाउब्भूए । तते णं से देवे अंतलिक्खपडिवन्ने जहा असोगवरपायवे जाव पडिगते । तते णं से सोमिले कल्लं जाव जलंते वागलवत्थनियत्थे कढिणसंकाइयं गेण्हति २ कट्ठमुद्दाए मुहं बंधति २ उत्तरदिसाए उत्तराभिमुहे संपत्थिते । तते णं से सोमिले ततियदिवसम्मि पुव्वावरण्हकालसमयंसि जेणेव असोगवरपायवे तेणेव उवा० २ असोगवरपायवस्स अहे कढिणसंकाइयं ठवेति, वेदिं वड्ढेति जाव गंगं महानदिं पच्चुत्तरति २ जेणेव असोगवरपायवे तेणेव उवा० २ वेदिं रएति २ कट्ठमुद्दाए मुहं बंधति २ तुसिणीए संचिट्ठति । तते णं तस्स सोमिलस्स पुव्वरत्तावरत्तकाले एगे देवे अंतियं पाउ० तं चेव भणति जाव पडिगते । तते णं से सोमिले जाव जलंते वागलवत्थनियत्थे

'पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि' त्ति पूर्वरात्रो-रात्रेः पूर्वभागः, अपररात्रो-रात्रेः पश्चिमभागः तल्लक्षणो यः कालसमयः-कालरूपसमयः स तथा तत्र रात्रिमध्यान्हे (मध्यरात्रे) इत्यर्थः । अन्तिकं-समीपं, प्रादुर्भूतः । इत ऊर्ध्वं सर्वं निगदसिद्धं जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



निरया- ॥२८॥

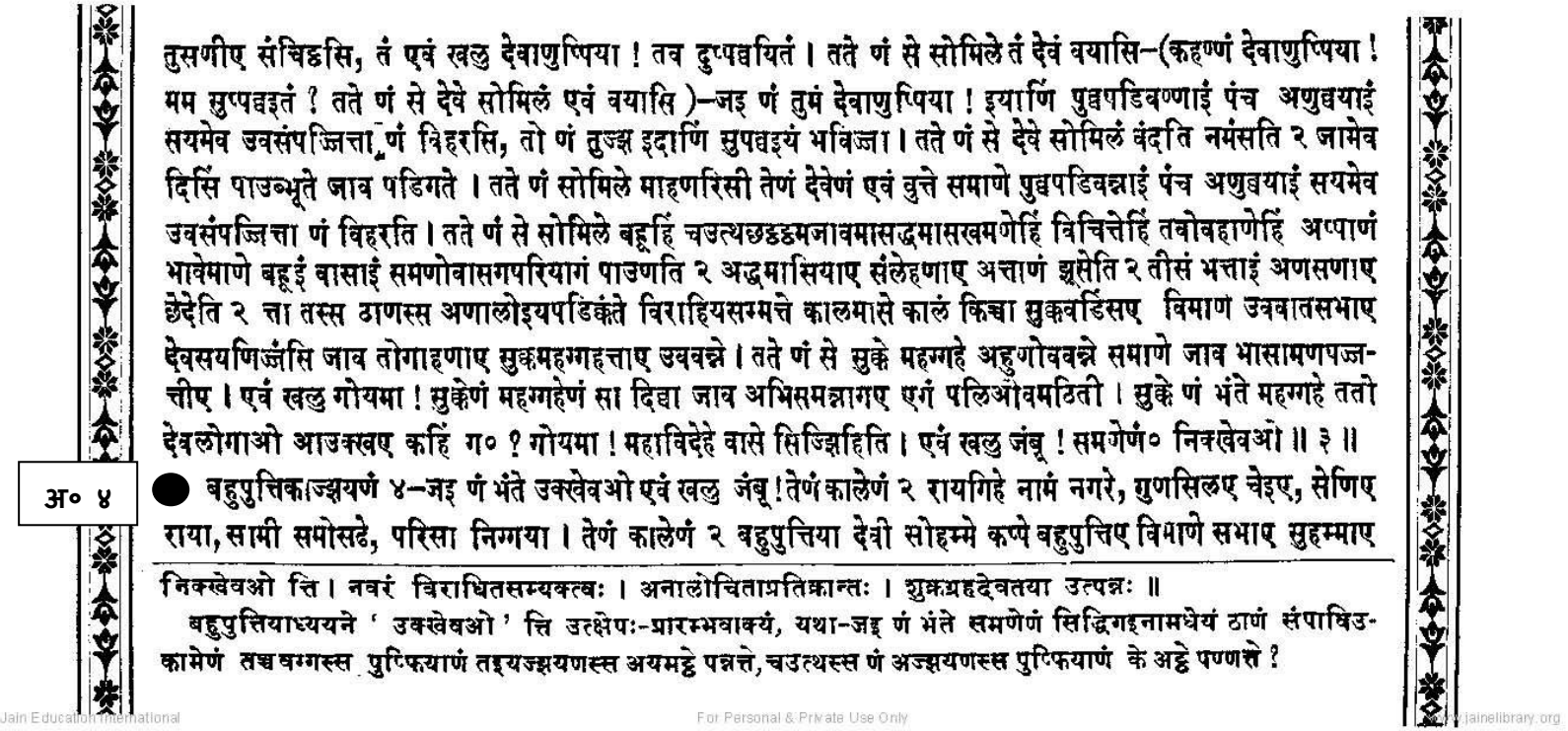
कढिणसंकाइयं जाव कट्ठमुद्दाए मुहं बंधति २ उत्तराए दिसाए उत्तराए संपत्थिए। तते णं से सोमिले चउत्थदिवसपुव्वावरण्हकालसमयंसि जेणेव वडपायवे तेणेव उवागते वडपायवस्स अहे किढिणं संठवेति २ वेइं वड्ढेति उवलेवणसंमज्जणं करेति जाव कट्ठमुद्दाए मुहं बंधति, तुसिणीए संचिट्ठति। तते णं तस्स सोमिलस्स पुव्वरत्तावरत्तकाले एगे देवे अंतियं पाउ० तं चेव भणति जाव पडिगते। तते णं से सोमिले जाव जलंते वागलवत्थनियत्थे किढिणसंकायियं जाव कट्ठमुद्दाए मुहं बंधति, उत्तराए उत्तराभिमुहे संपत्थिते। तते णं से सोमिले पंचमदिवसम्मि पुव्वावरण्हकालसमयंसि जेणेव उंबरपायवे उंबरपायवस्स अहे किढिणसंकाइयं ठवेति, वेइं वड्ढेति जाव कट्ठमुद्दाए मुहं बंधति जाव तुसिणीए संचिट्ठति। तते णं तस्स सोमिलमाहणस्स पुव्वरत्तावरत्तकाले एगे देवे जाव एवं वयासि–हं भो सोमिला! पव्वइया दुप्पव्वइयं ते पढमं भणति तहेव तुसिणीए संचिट्ठति, देवो दोच्चं पि तच्चं पि वदति सोमिला! पव्वइया दुप्पव्वइयं ते। तए णं से सोमिले तेणं देवेणं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्ते समाणे तं देवं एवं वयासि–कहण्णं देवाणुप्पिया! मम दुप्पव्वइयं?। तते णं से देवे सोमिलं माहणं एवं वयासि–एवं खलु देवाणुप्पिया! तुमं पासस्स अरहओ पुरिसादाणियस्स अंतियं पंचाणुव्वइए सत्त सिक्खावइए दुवालसविहे सावगधम्मे पडिवन्ने, तए णं तव अण्णदा कदाइ पुव्वरत्त० कुडुंब० जाव पुव्वचिंतितं देवो उच्चारेति जाव जेणेव असोगवरपायवे तेणेव उवा० २ कढिणसंकाइयं जाव तुसिणीए संचिट्ठसि। तते णं पुव्वरत्तावरत्तकाले तव अंतियं पाउब्भवामि हं भो सोमिला! पव्वइया दुप्पव्वतियं ते तह चेव देवो नियवयणं भणति जाव पंचमदिवसम्मि पुव्वावरण्हकालसमयंसि जेणेव उंबरवरपायवे तेणेव उवागते किढिणसंकाइयं ठवेहि वेदिं वड्ढति उवलेवणं संमज्जणं करेति २ कट्ठमुद्दाए मुहं बंधति, बंधित्ता

वलिका० ॥२८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [५-७]



तुसणीए संचिट्ठसि, तं एवं खलु देवाणुप्पिया ! तव दुप्पवयितं । तते णं से सोमिले तं देवं वयासि–(कहण्णं देवाणुप्पिया ! मम सुप्पवइतं ? तते णं से देवे सोमिलं एवं वयासि)–जइ णं तुमं देवाणुप्पिया ! इयाणिं पुव्वपडिवण्णाइं पंच अणुव्वयाइं सयमेव उवसंपज्जित्ता णं विहरसि, तो णं तुज्झ इदाणिं सुपव्वइयं भविज्जा । तते णं से देवे सोमिलं वंदति नमंसति २ जामेव दिसिं पाउब्भूते जाव पडिगते । तते णं सोमिले माहणरिसी तेणं देवेणं एवं वुत्ते समाणे पुव्वपडिवन्नाइं पंच अणुव्वयाइं सयमेव उवसंपज्जित्ता णं विहरति । तते णं से सोमिले बहूहिं चउत्थछट्ठमजावमासद्धमासखमणेहिं विचित्तेहिं तवोवहाणेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहूइं वासाइं समणोवासगपरियागं पाउणति २ अद्धमासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेति २ तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेति २ त्ता तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते विराहियसम्मत्ते कालमासे कालं किच्चा सुक्कवडिंसए विमाणे उववातसभाए देवसयणिज्जंसि जाव तोगाहणाए सुक्कमहग्गहत्ताए उववन्ने । तते णं से सुक्के महग्गहे अहुणोववन्ने समाणे जाव भासामणपज्जत्तीए । एवं खलु गोयमा ! सुक्केणं महग्गहेणं सा दिव्वा जाव अभिसमन्नागए एगं पलिओवमठिती । सुक्के णं भंते महग्गहे ततो देवलोगाओ आउक्खए कहिं ग० ? गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति । एवं खलु जंबू ! समणेणं० निक्खेवओ ॥ ३ ॥

अ० ४

● बहुपुत्तिकाज्झयणं ४–जइ णं भंते उक्खेवओ एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं २ रायगिहे नामं नगरे, गुणसिलए चेइए, सेणिए राया, सामी समोसढे, परिसा निग्गया । तेणं कालेणं २ बहुपुत्तिया देवी सोहम्मे कप्पे बहुपुत्तिए विमाणे सभाए सुहम्माए

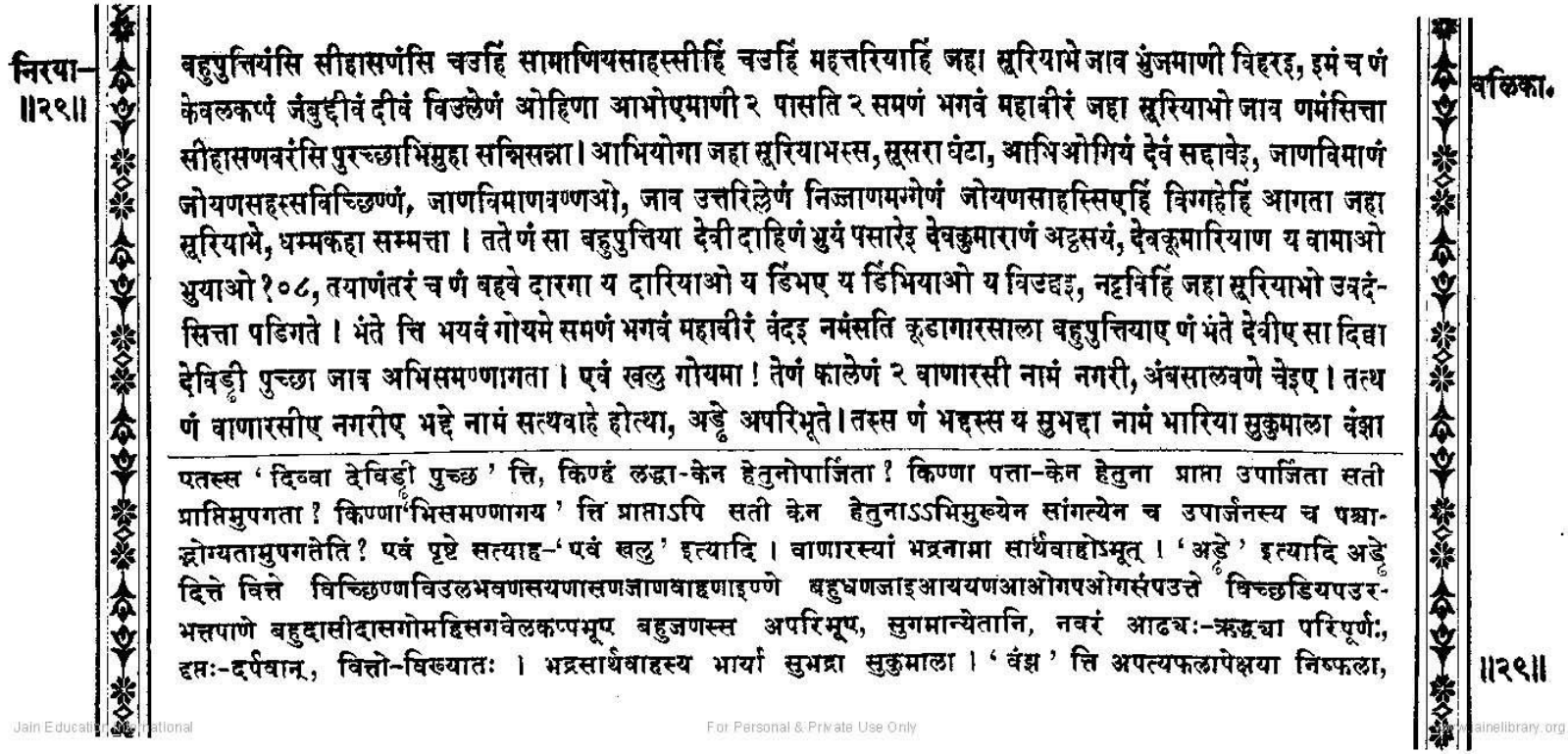
निक्खेवओ त्ति । नवरं विराधितसम्यक्त्वः । अनालोचिताप्रतिक्रान्तः । शुक्रग्रहदेवतया उत्पन्नः ॥

बहुपुत्तियाध्ययने ‘ उक्खेवओ ’ त्ति उत्क्षेपः–प्रारम्भवाक्यं, यथा–जइ णं भंते समणेणं सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपाविउकामेणं तच्चवग्गस्स पुप्फियाणं तइयज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, चउत्थस्स णं अज्झयणस्स पुप्फियाणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अध्ययनं-३- ‘शक्र’ परिसमाप्तं

अध्ययनं-४ ‘बहुपुत्रिका’ आरभ्यते [मूलसूत्र ८]



निरया- ॥२९॥

बहुपुत्तियंसि सीहासणंसि चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं चउहिं महत्तरियाहिं जहा सूरियाभे जाव भुंजमाणी विहरइ, इमं च णं केवलकप्पं जंबुद्दीवं दीवं विउलेणं ओहिणा आभोएमाणी २ पासति २ समणं भगवं महावीरं जहा सूरियाभो जाव णमंसित्ता सीहासणवरंसि पुरच्छाभिमुहा सन्निसन्ना। आभियोगा जहा सूरियाभस्स, सूसरा घंटा, आभिओगियं देवं सद्दावेइ, जाणविमाणं जोयणसहस्सविच्छिण्णं, जाणविमाणवण्णओ, जाव उत्तरिल्लेणं निज्जाणमग्गेणं जोयणसाहस्सिएहिं विग्गहेहिं आगता जहा सूरियाभे, धम्मकहा सम्मत्ता। तते णं सा बहुपुत्तिया देवी दाहिणं भुयं पसारेइ देवकुमाराणं अट्ठसयं, देवकुमारियाण य वामाओ भुयाओ १०८, तयाणंतरं च णं बहवे दारगा य दारियाओ य डिंभए य डिंभियाओ य विउव्वइ, नट्टविहिं जहा सूरियाभो उवदंसित्ता पडिगते। भंते त्ति भयवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसति कूडागारसाला बहुपुत्तियाए णं भंते देवीए सा दिव्वा देविड्ढी पुच्छा जाव अभिसमण्णागता। एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं २ वाणारसी नामं नगरी, अंबसालवणे चेइए। तत्थ णं वाणारसीए नगरीए भद्दे नामं सत्थवाहे होत्था, अड्ढे अपरिभूते। तस्स णं भद्दस्स य सुभद्दा नामं भारिया सुकुमाला वंझा

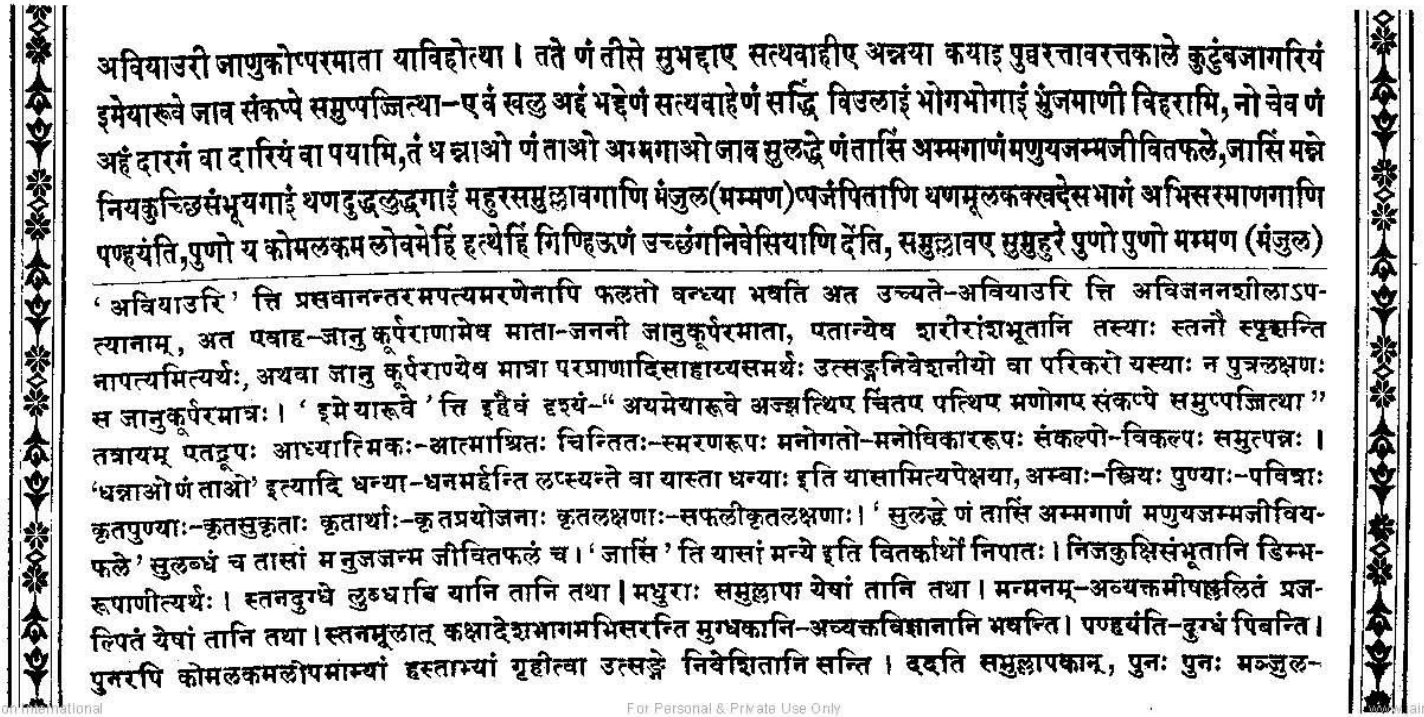
एतस्स 'दिव्वा देविड्ढी पुच्छ' त्ति, किण्हं लद्धा-केन हेतुनोपार्जिता? किण्णा पत्ता-केन हेतुना प्राप्ता उपार्जिता सती प्राप्तिमुपगता? किण्णा 'भिसमण्णागय' त्ति प्राप्ताऽपि सती केन हेतुनाऽऽभिमुख्येन सांगत्येन च उपार्जनस्य च पश्चाद्भोग्यतामुपगतेति? एवं पृष्टे सत्याह-'एवं खलु' इत्यादि। वाणारस्यां भद्रनामा सार्थवाहोऽभूत्। 'अड्ढे' इत्यादि अड्ढे दित्ते वित्ते विच्छिण्णविउलभवणसयणासणजाणवाहणाइण्णे बहुधणजाइआययणआओगपओगसंपउत्ते विच्छडियपउरभत्तपाणे बहुदासीदासगोमहिसगवेलकप्पभूए बहुजणस्स अपरिभूए, सुगमान्येतानि, नवरं आढ्यः-ऋद्ध्या परिपूर्णः, दृप्तः-दर्पवान्, वित्तो-विख्यातः। भद्रसार्थवाहस्य भार्या सुभद्रा सुकुमाला। 'वंझ' त्ति अपत्यफलापेक्षया निष्फला,

वलिका. ॥२९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [८]



अवियाउरी जाणुकोप्परमाता याविहोत्था। तते णं तीसे सुभद्दाए सत्थवाहीए अन्नया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकाले कुटुंबजागरियं इमेयारूवे जाव संकप्पे समुप्पज्जित्था–एवं खलु अहं भद्देणं सत्थवाहेणं सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरामि, नो चेव णं अहं दारगं वा दारियं वा पयामि,तं धन्नाओ णं ताओ अम्मगाओ जाव सुलद्धे णं तासिं अम्मगाणं मणुयजम्मजीवितफले,जासिं मन्ने नियकुच्छिसंभूयगाइं थणदुद्धलुद्धगाइं महुरसमुल्लावगाणि मंजुल(मम्मण)प्पजंपिताणि थणमूलकक्खदेसभागं अभिसरमाणगाणि पण्हयंति,पुणो य कोमलकमलोवमेहिं हत्थेहिं गिण्हिऊणं उच्छंगनिवेसियाणि देंति, समुल्लावए सुमुहुरे पुणो पुणो मम्मण (मंजुल)

'अवियाउरि' त्ति प्रसवानन्तरमपत्यमरणेनापि फलतो वन्ध्या भवति अत उच्यते-अवियाउरि त्ति अविजननशीलाऽपत्यानाम्, अत एवाह–जानु कूर्परागामेव माता-जननी जानुकूर्परमाता, एतान्येव शरीरांशभूतानि तस्याः स्तनौ स्पृशन्ति नापत्यमित्यर्थः, अथवा जानु कूर्पराण्येव मात्रा परप्राणादिसाहाय्यसमर्थः उत्सङ्गनिवेशनीयो वा परिकरो यस्याः न पुत्रलक्षणः स जानुकूर्परमात्रः। 'इमेयारूवे' त्ति इहैवं दृश्यं–" अयमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था " तत्रायम् एतद्रूपः आध्यात्मिकः-आत्माश्रितः चिन्तितः-स्मरणरूपः मनोगतो-मनोविकाररूपः संकल्पो-विकल्पः समुत्पन्नः। 'धन्नाओ णं ताओ' इत्यादि धन्या-धनमर्हन्ति लप्स्यन्ते वा यास्ता धन्याः इति यासामित्यपेक्षया, अम्बाः-स्त्रियः पुण्याः-पवित्राः कृतपुण्याः-कृतसुकृताः कृतार्थाः-कृतप्रयोजनाः कृतलक्षणाः-सफलीकृतलक्षणाः। 'सुलद्धे णं तासिं अम्मगाणं मणुयजम्मजीवियफले' सुलब्धं च तासां मनुजजन्म जीवितफलं च। 'जासिं' ति यासां मन्ये इति वितर्कार्थो निपातः। निजकुक्षिसंभूतानि डिम्भरूपाणीत्यर्थः। स्तनदुग्धे लुब्धानि यानि तानि तथा। मधुराः समुल्लापा येषां तानि तथा। मन्मनम्–अव्यक्तमीषल्ललितं प्रजल्पितं येषां तानि तथा। स्तनमूलात् कक्षादेशभागमभिसरन्ति मुग्धकानि–अव्यक्तविज्ञानानि भवन्ति। पण्हयंति–दुग्धं पिबन्ति। पुनरपि कोमलकमलोपमाभ्यां हस्ताभ्यां गृहीत्वा उत्सङ्गे निवेशितानि सन्ति। ददति समुल्लापकान्, पुनः पुनः मञ्जुल-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्पभणिए अहं णं अधण्णा अपुण्णा अकयपुण्णा एत्तो एगमवि न पत्ता ओहय० जाव झियाइ। तेणं कालेणं २ सुव्वताओ णं अज्जाओ इरियासमिताओ भासासमिताओ एसणासमिताओ आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिताओ उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाणपारिट्ठावणासमियाओ मणगुत्तीओ वयगुत्तीओ कायगुत्तीओ गुत्तिंदियाओ गुत्तबंभयारिणीओ बहुस्सुयाओ बहुपरियाराओ[1] पुव्वाणुपुव्विं चरमाणीओ गामाणुगामं दूइज्जमाणीओ जेणेव वाणारसी नगरी तेणेव उवागयाओ, उवागच्छित्ता अहापडिरूवं उग्गहं २ संजमेणं तवसा विहरंति। तते णं तासिं सुव्वयाणं अज्जाणं एगे संघाडए वाणारसीनगरीए उच्चनीयमज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अडमाणे भद्दस्स सत्थवाहस्स गिहं अणुपविट्ठे। तते णं सुभद्दा सत्थवाही तातो अज्जातो एज्जमाणीओ पासति २ हट्ठ० खिप्पामेव आसणाओ अब्भुट्ठेति २ सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ २ वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता विउलेणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाभित्ता एवं वयासि–एवं खलु अहं अज्जाओ! भद्देणं सत्थवाहेणं सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरामि,

प्रभणितान् मञ्जुलं-मधुरं प्रभणितं-भणतिर्येषु ते तथा तान्, इह सुमधुरानित्यभिधाय यन्मञ्जुलप्रभणितानित्युक्तं तत्पुनरुक्तमपि न दुष्टं संभ्रमभणितत्वादस्येति। 'एत्तो' त्ति विभक्तिपरिणामादेषाम्-उक्तविशेषणवतां डिम्भानां मध्यादेकतरमपि-अन्यतरविशेषणमपि डिम्भं न प्राप्ता इत्युपहतमनःसङ्कल्पा भूमिगतदृष्टिका करतलपर्यस्तितमुखी ध्यायति। अथानन्तरं यत्संपन्नं तदाह-'तेणं कालेण'मित्यादि। गृहेषु समुदानं-भिक्षाटनं गृहसमुदानं भैक्षं, तन्निमित्तमटनम्। साध्वीसंघाटको भद्रसार्थवाहगृहमनुप्रविष्टः। तद्भार्या चेतसि चिन्तितवती (एवं वयासि) यथा-विपुलान-समृद्धान् भोगान् भोगभोगान्-अतिशयवतः शब्दादीन् उपभुञ्जाना विहरामि-तिष्ठामि

१ बहुपरियातो प्र०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [८]

नो चेव णं अहं दारगं वा दारियं वा पयामि, तं धन्नाओ णं ताओ अम्मगाओ जाव एत्तो एगमवि न पत्ता, तं तुब्भे अज्जाओ! बहुणायातो बहुपढियातो बहूणि गामागरनगर जाव सण्णिवेसाइं आहिंडह, बहूणं राईसरतलवर जाव सत्थवाहप्पभितीणं गिहाइं अणुपविसह, अत्थि से केति कहिं चि विज्जापओए वा मंतप्पओए वा वमणं वा विरेयणं वा बत्थिकम्मं वा ओसहे वा भेसज्जे वा उवलद्धे जेणं अहं दारगं वा दारियं वा पयाएज्जा? तते णं ताओ अज्जाओ सुभद्दं सत्थवाहिं एवं वयासी–अम्हे णं देवाणुप्पिए! समणीओ निग्गंथीओ इरियासमियाओ जाव गुत्तबंभचारीओ, नो खलु कप्पति अम्हं एयमट्ठं कण्णेहिं विणिसामित्तए, किमंग पुण उद्दिसित्तए वा समायरित्तए वा अम्हे णं देवाणुप्पिए! णवरं तव विचित्तं केवलिपण्णत्तं धम्मं परिकहेमो। तते णं सुभद्दा सत्थवाही तासिं अज्जाणं अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा तातो अज्जातो तिक्खुत्तो वंदति नमंसति एवं वदासी–सद्दहामि णं अज्जाओ! निग्गंथं पावयणं पत्तियामि रोएमि णं अज्जाओ निग्गंथीओ! एवमेयं तहमेयं अवितहमेयं जाव सावगधम्मं पडिवज्जए।

केवलं तथापि डिम्भादिकं न प्रजन्ये–न जनितवती अहं, केवलं ता एव स्त्रियो धन्या यासां पुत्रादि संपद्यत इति खेदपरायणा 'हवति' (उहं धतैं)। तदत्रार्ये यूयं किमपि जानीध्वे न वेति? यद्विषये परिज्ञानं संभावयति तदेव विद्यामन्त्रप्रयोगादिकं वक्तुमाह। केवलिप्रज्ञप्तधर्मश्च–"जीवदय सच्चवयणं, परधणपरिवज्जणं सुसीलं च। खंती पंचिंदियनिग्गहो य धम्मस्स मूलाइं॥१॥" इत्यादिकः। 'एवमेयं' ति एवमेतदिति साध्वीवचने प्रत्या (त्यया) विष्करणम्। एतदेव स्फुटयति–'तहमेयं भंते!' तथैवैतथथा भगवत्यः प्रतिपादयन्ति यदेतद्यूयं वदथ तथैवैतत्। 'अवितहमेयं' ति सत्यमेतदित्यर्थः। 'असंदिद्धमेयं' ति संदेहवर्जितमेतत्। एतान्येकार्थान्यत्यादरप्रदर्शनायोक्तानि सत्योऽयमर्थो यद्यूयं वदथ इत्युक्त्वा वदन्ते–वाग्भिः स्तौति, नमस्यति कायेन प्रणमति, वंदित्ता नमंसित्ता सावगधम्मं पडिवज्जइ देवगुरुधर्मप्रतिपत्तिं कुरुते।

१ वाग्भिश्च प्र०। २ नमस्यति च प्र०। ३ प्रणमति च प्र०।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [८]

अहासुहं देवा० ! मा पडिबंधं। तते णं सा सुभद्दा सत्थ० तासिं अज्जाणं अंतिए जाव पडिवज्जति २ तातो अज्जातो वंदइ नमंसइ पडिविसज्जति। तते णं सुभद्दा सत्थ० समणोवासिया जाया जाव विहरति। तते णं तीसे सुभद्दाए समणोवासियाए अण्णदा कदायि पुव्वरत्त० कुडुंब० अयमेया० जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु अहं [सु] भद्देणं सत्थ० विउलाइं भोगभोगाइं जाव विहरामि, नो चेव णं अहं दारगं वा २, तं सेयं खलु ममं कल्लं पा० जाव जलंते भद्दस्स आपुच्छित्ता सुव्वयाणं अज्जाणं अंतिए अज्जा भवित्ता अगाराओ जाव पव्वइत्तए, एवं संपेहेति २ त्ता कल्ले जेणेव भद्दे सत्थवाहे तेणेव उवागते, करतल० एवं वयासी–एवं खलु अहं देवाणुप्पिया ! तुब्भेहिं सद्धिं बहूइं वासाइं विउलाइं भोग जाव विहरामि, नो चेव णं दारगं वा दारियं वा पयामि, तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! तुब्भेहिं अणुण्णाया समाणी सुव्वयाणं अज्जाणं जाव पव्वइत्तए। तते णं से भद्दे सत्थवाहे सुभद्दं सत्थ० एवं वदासी–मा णं तुमं देवाणुप्पिया ! इदाणिं मुंडा जाव पव्वयाहि, भुंजाहि ताव देवाणुप्पिए ! मए सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं, ततो पच्छा भुत्तभोई सुव्वयाणं अज्जाणं जाव पव्वयाहि। तते णं सुभद्दा सत्थ० भद्दस्स एयमट्ठं नो आढाति नो परिजाणति तुहिं पि तच्चं पि भद्दा सत्थ० एवं वदासी–इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी जाव पव्वइत्तए। तते णं से भद्दे स० जाहे नो संचाएति बहूहिं आघवणाहि य एवं पन्नवणाहि य सण्णवणा० विण्णवणाहि य

यथासुखं देवानुप्रिये ! अत्रार्थे मा प्रतिबन्धं-प्रतिघातरूपं प्रमादं मा कृथाः। 'आघवणाहि य' त्ति आख्यापनाभिश्च सामान्यतः प्रतिपादनैः। 'पण्णवणाहि य' त्ति प्रज्ञापनाभिश्च–विशेषतः कथनैः। 'सण्णवणाहिय' त्ति संज्ञापनाभिश्च–संबोधनाभिः। 'विन्नवणाहि य' त्ति विज्ञापनाभिश्च–विज्ञप्तिकाभिः सप्रणयप्रार्थनैः। चकाराः समुच्चयार्थाः।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [८]

आघवित्तए वा जाव विण्णवित्तए वा ताहे अकामते चेव सुभद्दाए निक्खमणं अणुमण्णित्था। तते णं से भद्दे स० विउलं असणं ४ उवक्खडावेति, मित्तनाति० ततो पच्छा भोयणवेलाए जाव मित्तनाति० सक्कारेति सम्माणेति, सुभद्दं सत्थ० ण्हायं जाव पायच्छित्तं सव्वालंकारविभूसियं पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं दुरुहेति। ततो सा सुभद्दा सत्थ० मित्तनाइ जाव संबंधिसंपरिवुडा सविड्ढीए जाव रवेणं वाणारसीनगरीए मज्झं मज्झेणं जेणेव सुव्वयाणं अज्जाणं उवस्सए तेणेव उवा० २ पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं ठवेति, सुभद्दं सत्थवाहिं सीयातो पच्चोरुहेति। तते णं भद्दे सत्थवाहे सुभद्दं सत्थवाहिं पुरतो काउं जेणेव सुव्वया अज्जा तेणेव उवा २ सुव्वयाओ अज्जाओ वंदति नमंसति २ एवं वदासी– एवं खलु देवाणुप्पिया सुभद्दा सत्थवाही मम भारिया इट्ठा कंता जाव मा णं वातिता पित्तिया सिंभिया सन्निवातिया विविहा रोयातंका फुसंतु, एस णं देवाणुप्पिया! संसारभउव्विग्गा भीया जम्मणमरणाणं, देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडा भवित्ता जाव पव्वयाति, तं एयं अहं देवाणुप्पियाणं सीसिणिभिक्खं दलयामि, पडिच्छंतु णं देवाणुप्पिया! सीसिणीभिक्खं। अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंध। तते णं सा सुभद्दा स० सुव्वयाहिं अज्जाहिं एवं वुत्ता समाणी हट्ठा २ सयमेव आभरणमल्लालंकारं ओमुयइ २ सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेति २ जेणेव सुव्वयातो अज्जाओ तेणेव उवा २ सुव्वयाओ

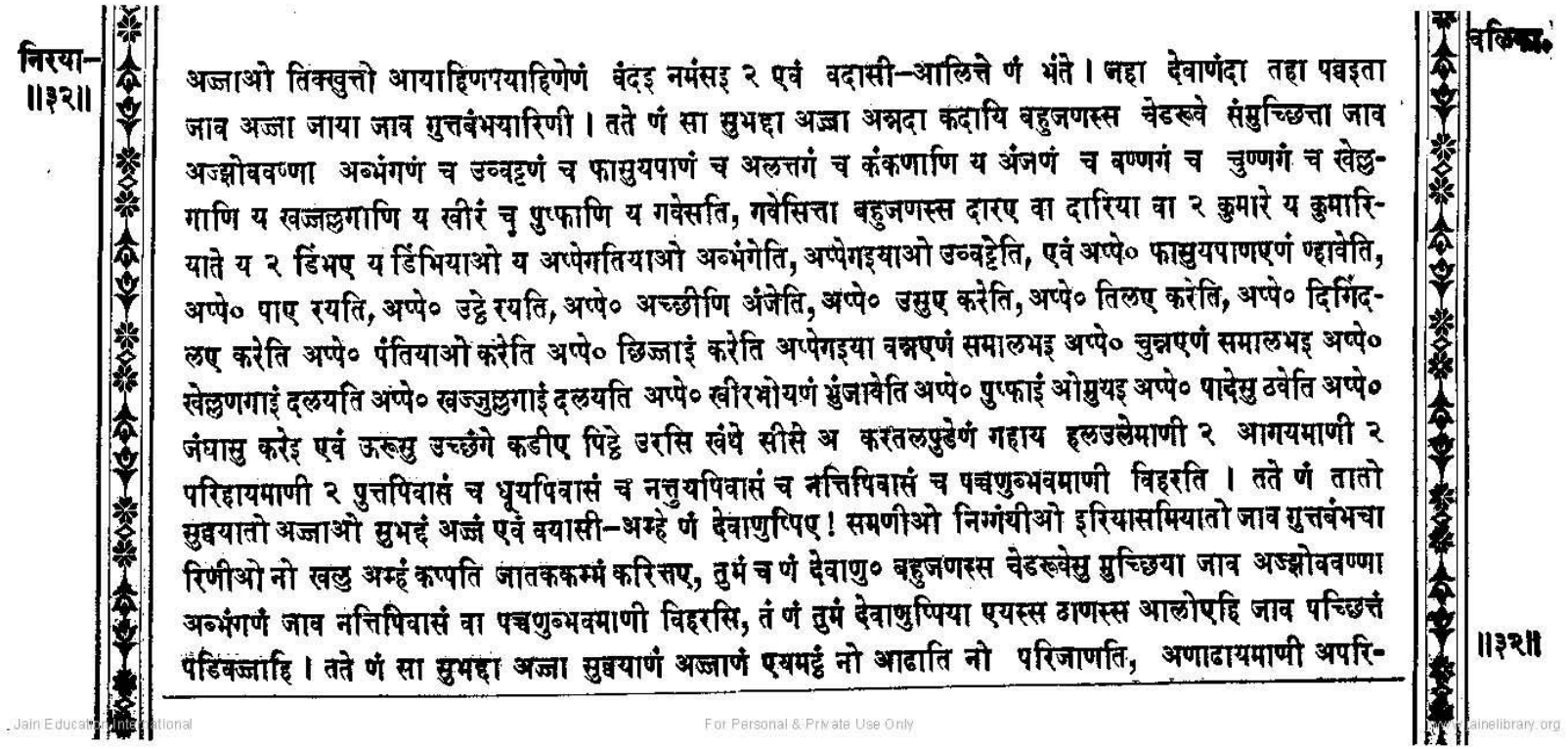
'आघवित्तए' त्ति आख्यातुं वा प्रज्ञापयितुं वा संज्ञापयितुं वा विज्ञापयितुं वा न शक्नोतीति प्रक्रमः सुभद्रां भार्यां व्रतग्रहणानिषेधयितुं 'ताहे' इति तदा 'अकामए चेव' अनिच्छन्नेव सार्थवाहो निष्क्रमण-व्रतग्रहणोत्सवं अनुमनितवान् (अनुमतवान्) इति। किं बहुना? मुंडा भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइति। इत उर्ध्वं सुगमम्।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२१]उपांगसूत्र-[१०] पुष्पिका मूलं एवंचन्द्रसूरि-विरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [८]

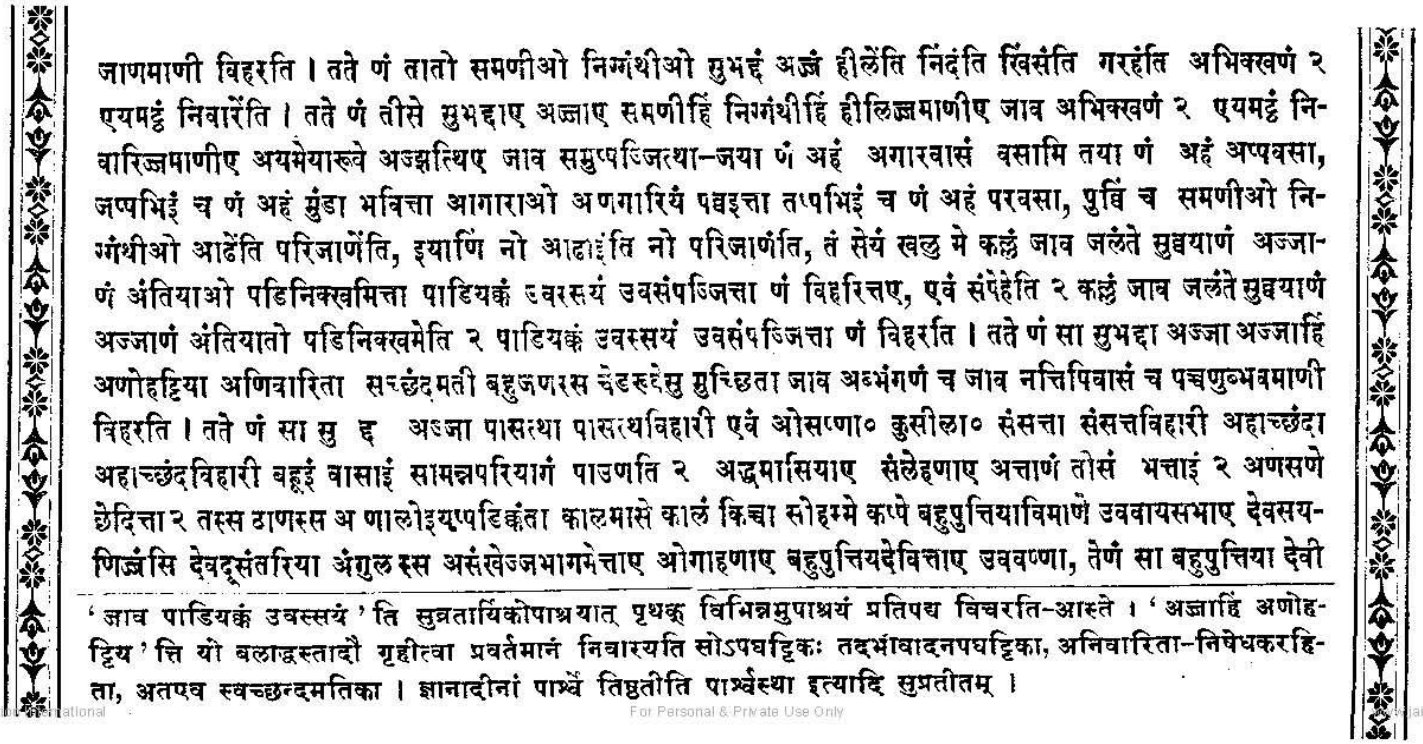


निरया- ॥३२॥

अज्जाओ तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणेणं वंदइ नमंसइ २ एवं वदासी–आलित्ते णं भंते। जहा देवाणंदा तहा पव्वइता जाव अज्जा जाया जाव गुत्तबंभयारिणी। तते णं सा सुभद्दा अज्जा अन्नदा कदायि बहुजणस्स चेडरूवे संमुच्छित्ता जाव अज्झोववण्णा अब्भंगणं च उव्वट्टणं च फासुयपाणं च अलत्तगं च कंकणाणि य अंजणं च वण्णगं च चुण्णगं च खेल्लगाणि य खज्जलुगाणि य खीरं च पुप्फाणि य गवेसति, गवेसित्ता बहुजणस्स दारए वा दारिया वा २ कुमारे य कुमारियाते य २ डिंभए य डिंभियाओ य अप्पेगतियाओ अब्भंगेति, अप्पेगइयाओ उव्वट्टेति, एवं अप्पे० फासुयपाणएणं ण्हावेति, अप्पे० पाए रयति, अप्पे० उट्टे रयति, अप्पे० अच्छीणि अंजेति, अप्पे० उसुए करेति, अप्पे० तिलए करेति, अप्पे० दिगिंदलए करेति अप्पे० पंतियाओ करेति अप्पे० छिज्जाइं करेति अप्पेगइया वन्नएणं समालभइ अप्पे० चुन्नएणं समालभइ अप्पे० खेल्लणगाइं दलयति अप्पे० खज्जुल्लगाइं दलयति अप्पे० खीरभोयणं भुंजावेति अप्पे० पुप्फाइं ओमुयइ अप्पे० पादेसु ठवेति अप्पे० जंघासु करेइ एवं ऊरूसु उच्छंगे कडीए पिट्ठे उरसि खंधे सीसे अ करतलपुडेणं गहाय हलउलेमाणी २ आगयमाणी २ परिहायमाणी २ पुत्तपिवासं च धूयपिवासं च नत्तुयपिवासं च नत्तिपिवासं च पच्चणुब्भवमाणी विहरति। तते णं तातो सुव्वयातो अज्जाओ सुभद्दं अज्जं एवं वयासी–अम्हे णं देवाणुप्पिए! समणीओ निग्गंथीओ इरियासमियातो जाव गुत्तबंभचारिणीओ नो खलु अम्हं कप्पति जातककम्मं करित्तए, तुमं च णं देवाणु० बहुजणस्स चेडरूवेसु मुच्छिया जाव अज्झोववण्णा अब्भंगणं जाव नत्तिपिवासं वा पच्चणुब्भवमाणी विहरसि, तं णं तुमं देवाणुप्पिया एयस्स ठाणस्स आलोएहि जाव पच्छित्तं पडिवज्जाहि। तते णं सा सुभद्दा अज्जा सुव्वयाणं अज्जाणं एयमट्ठं नो आढाति नो परिजाणति, अणाढायमाणी अपरि-

वलिया. ॥३२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



जाणमाणी विहरति । तते णं तातो समणीओ निग्गंथीओ सुभद्दं अज्जं हीलेंति निंदंति खिंसंति गरहंति अभिक्खणं २ एयमट्ठं निवारेंति । तते णं तीसे सुभद्दाए अज्जाए समणीहिं निग्गंथीहिं हीलिज्जमाणीए जाव अभिक्खणं २ एयमट्ठं निवारिज्जमाणीए अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–जया णं अहं अगारवासं वसामि तया णं अहं अप्पवसा, जप्पभिइं च णं अहं मुंडा भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइत्ता तप्पभिइं च णं अहं परवसा, पुव्विं च समणीओ निग्गंथीओ आढेंति परिजाणेंति, इयाणिं नो आढाइंति नो परिजाणंति, तं सेयं खलु मे कल्लं जाव जलंते सुव्वयाणं अज्जाणं अंतियाओ पडिनिक्खमित्ता पाडियक्कं उवस्सयं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए, एवं संपेहेति २ कल्लं जाव जलंते सुव्वयाणं अज्जाणं अंतियातो पडिनिक्खमेति २ पाडियक्कं उवस्सयं उवसंपज्जित्ता णं विहरति । तते णं सा सुभद्दा अज्जा अज्जाहिं अणोहट्टिया अणिवारिता सच्छंदमती बहुजणस्स चेडरूवेसु मुच्छिता जाव अब्भंगणं च जाव नत्तिपिवासं च पच्चणुब्भवमाणी विहरति । तते णं सा सु द्द अज्जा पासत्था पासत्थविहारी एवं ओसण्णा० कुसीला० संसत्ता संसत्तविहारी अहाच्छंदा अहाच्छंदविहारी बहूइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणति २ अद्धमासियाए संलेहणाए अत्ताणं तोसं भत्ताइं २ अणसणे छेदित्ता २ तस्स ठाणस्स अणालोइयप्पडिक्कंता कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे बहुपुत्तियाविमाणे उववायसभाए देवसयणिज्जंसि देवदूसंतरिया अंगुलस्स असंखेज्जभागमेत्ताए ओगाहणाए बहुपुत्तियदेवित्ताए उववण्णा, तेणं सा बहुपुत्तिया देवी

'जाव पाडियक्कं उवस्सयं' ति सुव्रतार्यिकोपाश्रयात् पृथक् विभिन्नमुपाश्रयं प्रतिपद्य विचरति-आस्ते । 'अज्जाहिं अणोहट्टिय' त्ति यो बलाद्धस्तादौ गृहीत्वा प्रवर्तमानं निवारयति सोऽपघट्टिकः तद्भावादनपघट्टिका, अनिवारिता–निषेधकरहिता, अतएव स्वच्छन्दमतिका । ज्ञानादीनां पार्श्वे तिष्ठतीति पार्श्वस्था इत्यादि सुप्रतीतम् ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अहुणोववन्नमित्ता समाणी पंचविहाए पज्जत्तीए जाव भासामणपज्जत्तीए । एवं खलु गोयमा ! बहुपुत्तियाए देवीए सा दिव्वा देविड्ढी जाव अभिसमण्णागता । से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ बहुपुत्तिया देवी २ ? गोयमा ! बहुपुत्तिया णं देवी णं जाहे जाहे सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो उवत्थाणियणं करेइ ताहे २ बहवे दारए य दारियाए य डिंभए य डिंभियाओ य विउव्वइ २ जेणेव सक्के देविंदे देवराया तेणेव उवा० २ सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवज्जुइं दिव्वं देवाणुभागं उवदंसेति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चति बहुपुत्तिया देवी २ । बहुपुत्तियाणं भंते ! देवीणं केवइयं कालं ठिती पण्णत्ता ? गोयमा ! चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता । बहुपुत्तिया णं भंते ! देवी तातो देवलोगाओ आउक्खएणं ठितिक्खएणं भवक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छिहिति ? कहिं उववज्जिहिति ? गोयमा ! इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे विंझगिरिपायमूले विभेलसंनिवेसे माहणकुलंसि दारियत्ताए पच्चायाहिति । तते णं तीसे दारियाए अम्मापियरो एक्कारसमे दिवसे वितिक्कंते जाव बारसेहिं दिवसेहिं वितिक्कंतेहिं अयमेयारूवं नामधिज्जं करेंति–होऊ णं अम्हं इमीसे दारियाए नामधिज्जं सोमा । तते णं सोमा उम्मुक्कबालभावा विण्णतपरिणयमेत्ता जोव्वणगमणुपत्ता रूवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा जाव भविस्सति । तते णं तं सोमं दारियं अम्मापियरो उम्मुक्कबालभावं विण्णयपरिणयमित्तं जोव्वणगमणुप्पत्तं पडिकुविएणं सुक्केणं

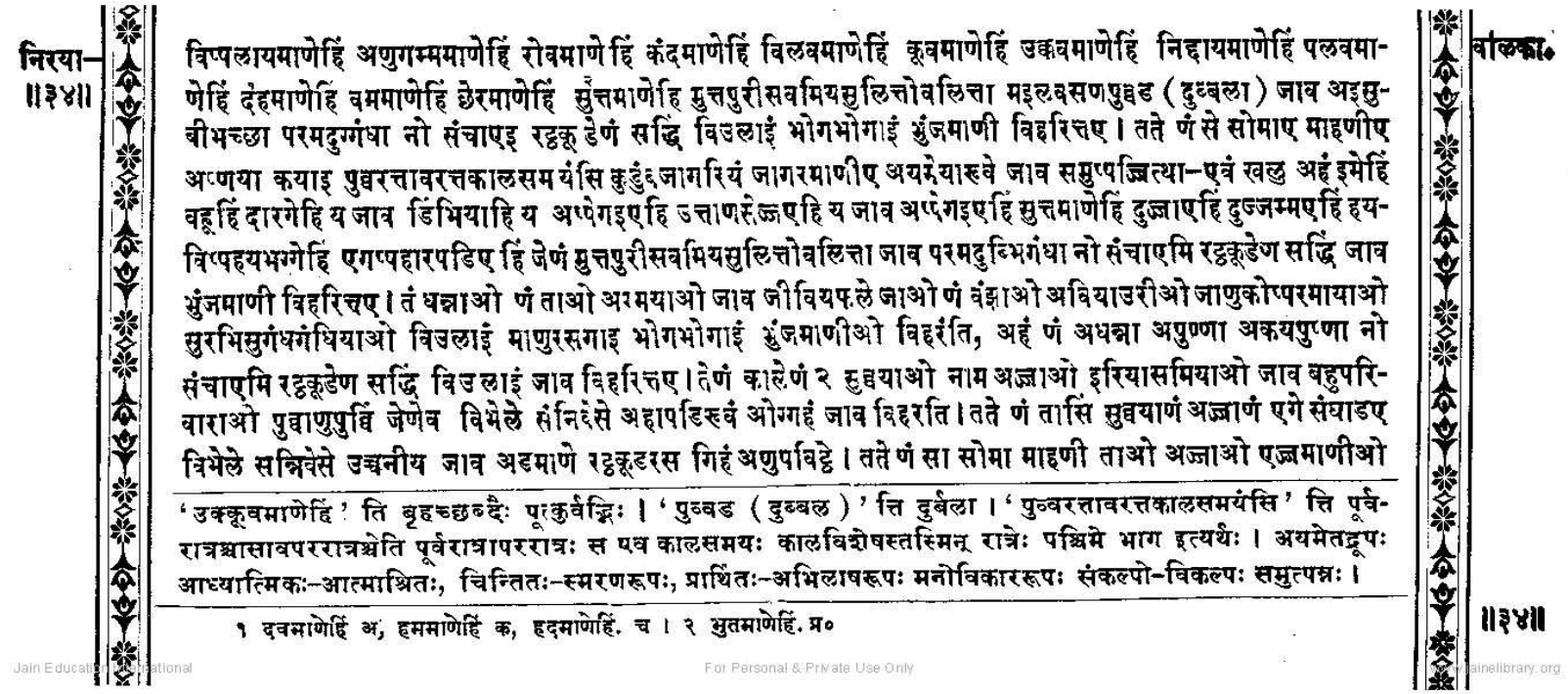
'उवत्थाणियं करेइ' त्तिउपस्थानं–प्रत्यासत्तिगमनं तत्र प्रेक्षणककरणाय यदाविधत्ते । 'दिव्वं देविड्ढिं' ति देवर्द्धिः–परिवारादिसंपत्, देवद्युतिः–शरीराभरणादीनां दीप्तियोगः, देवानुभागः–अद्भुतवैक्रियशरीरादिशक्तियोगः, तदेतत्सर्वं दर्शयति–। 'विन्नयपरिणयमेत्त' त्ति विज्ञका परिणतमात्रोपभोगेषु अत एव यौवनोद्गममनुप्राप्ता । 'रूवेण य' त्ति रूपम्–आकृतिः यौवनं–तारुण्यं लावण्यं चेह स्पृहणीयता, चकारात् गुणग्रहः गुणाश्च मृदुत्वौदार्यादयः, एतैरुत्कृष्टा–उत्कर्षवती शेषस्त्रीभ्यः, अत एव उत्कृष्टमनोहरशरीरा चापि भविष्यति । 'विन्नयपरिणयमित्तं पडिकुविएणं सुक्केणं' ति प्रतिकूजितं–प्रतिभाषितं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पडिरूवएणं नियगस्स भायणिज्जस्स रट्ठकूडयस्स भारियत्ताए दलयिस्सति । सा णं तस्स भारिया भविस्सति इट्ठा कंता जाव भंडकरंडगसमाणा तिल्लकेला इव सुसंगोविआ चेलपेला(डा) इव सुसंपरिहिता रयणकरंडगतो विव सुसारक्खिया सुसंगोविता माणंसीयं जाव विविहा रोयातंका फुसंतु । तते णं सा सोमा माहणी रट्ठकूडेणं सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी संवच्छरे २ जुयलगं पयायमाणी सोलसेहिं संवच्छरेहिं बत्तीसं दारगरूवे पयाति । तते णं सा सोमा माहणी तेहिं बहूहिं दारगेहि य दारियाहि य कुमारएहि य कुमारियाहि य डिंभएहि य डिंभियाहि य अप्पेगइएहि उत्ताणसेज्जएहि य अप्पेगइएहि य थणियाएहि य अप्पेगइएहि पीहगपाएहिं अप्पे० परंगणएहिं अप्पेगइएहिं परक्कममाणेहिं अप्पेगइएहिं पक्खोलणएहिं अप्पे० थणं मग्गमाणेहिं अप्पे० खीरं मग्गमाणेहिं अप्पे० खिल्लणयं मग्गमाणेहिं अप्पेगइएहिं खज्जगं मग्गमाणेहिं अप्पे० कूरं मग्गमाणेहिं पाणियं मग्गमाणेहिं हसमाणेहिं रूसमाणेहिं अक्कोसमाणेहिं अक्कुस्समाणेहिं हणमाणेहिं हम्ममाणेहिं

यत् शुक्लं द्रव्यं तेन कृत्वा प्रभूतमपि वाञ्छितं देयद्रव्यं दत्त्वा प्रभूताभरणादिभूषितं कृत्वाऽनुकूलेन विनयेन प्रियभाषणतया भवद्योग्येयमित्यादिना ‘ इट्ठा ’ वल्लभा, ‘ कंता ’ कमनीयत्वात्, ‘ पिया ’ सदा प्रेमविषयत्वात्, ‘ मणुण्णा ’ सुन्दरत्वात्, एवं ‘ संमया अणुमया ’ इत्यादि दृश्यम् । आभरणकरण्डकसमानोपादेयत्वादिना । तैलकेला सौराष्ट्रप्रसिद्धो मृन्मयस्तैलस्य भाजनविशेषः, स च भङ्गभयाल्लोठनभयाच्च सुष्ठु संगोप्यते एवं साऽपि तथोच्यते । ‘ चेलपेडा इवे ’ति वस्त्रमञ्जूषेवेत्यर्थः । ‘ रयणकरंडग ’ इति इन्द्रनीलादिरत्नाश्रयः सुसंरक्षितः सुसंगोपितश्च क्रियते । ‘ जुयलगं ’ दारकदारिकादिरूपं प्रजनितवती । पुत्रकैः पुत्रिकाभिश्च वर्षदशकादिप्रमाणतः कुमारकुमारिकादिव्यपदेशभाक्त्वं डिम्भडिम्भिकाश्च लघुतरतया प्रोच्यन्ते । अप्येके केचन ‘ परंगणेहिं ’ ति नृत्यद्भिः । ‘ परक्कममाणेहिं ’ ति उल्ललद्भिः । ‘ पक्खोलणएहिं ’ ति प्रस्खलद्भिः । हसद्भिः, रुष्यद्भिः,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



निरया- ॥३४॥

विप्पलायमाणेहिं अणुगम्ममाणेहिं रोवमाणेहिं कंदमाणेहिं विलवमाणेहिं कूवमाणेहिं उक्कवमाणेहिं निद्दायमाणेहिं पलवमाणेहिं देहमाणेहिं वममाणेहिं छेरमाणेहिं सुत्तमाणेहिं मुत्तपुरीसवमियसुलित्तोवलित्ता मइलवसणपुवड (दुब्बला) जाव अइसुबीभच्छा परमदुग्गंधा नो संचाएइ रट्ठकूडेणं सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरित्तए। तते णं से सोमाए माहणीए अण्णया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंबजागरियं जागरमाणीए अयमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु अहं इमेहिं बहूहिं दारगेहि य जाव डिंभियाहि य अप्पेगइएहिं उत्ताणसेज्जएहि य जाव अप्पेगइएहिं सुत्तमाणेहिं दुज्जाएहिं दुज्जम्मएहिं हयविप्पहयभग्गेहिं एगप्पहारपडिए हिं जेणं मुत्तपुरीसवमियसुलित्तोवलित्ता जाव परमदुब्भिगंधा नो संचाएमि रट्ठकूडेण सद्धिं जाव भुंजमाणी विहरित्तए। तं धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव जीवियफले जाओ णं वंझाओ अवियाउरीओ जाणुकोप्परमायाओ सुरभिसुगंधगंधियाओ विउलाइं माणुस्सगाइ भोगभोगाइं भुंजमाणीओ विहरंति, अहं णं अधन्ना अपुण्णा अकयपुण्णा नो संचाएमि रट्ठकूडेण सद्धिं विउलाइं जाव विहरित्तए। तेणं कालेणं २ सुव्वयाओ नाम अज्जाओ इरियासमियाओ जाव बहुपरिवाराओ पुव्वाणुपुव्विं जेणेव विभेले संनिवेसे अहापडिरूवं ओग्गहं जाव विहरंति। तते णं तासिं सुव्वयाणं अज्जाणं एगे संघाडए विभेले सन्निवेसे उच्चनीय जाव अडमाणे रट्ठकूडस्स गिहं अणुपविट्ठे। तते णं सा सोमा माहणी ताओ अज्जाओ एज्जमाणीओ

'उक्कूवमाणेहिं' ति बृहच्छब्दैः पूत्कुर्वद्भिः। 'पुव्वड (दुब्बल)' त्ति दुर्बला। 'पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि' त्ति पूर्वरात्रश्चासावपररात्रश्चेति पूर्वरात्रापररात्रः स एव कालसमयः कालविशेषस्तस्मिन् रात्रेः पश्चिमे भाग इत्यर्थः। अयमेतद्रूपः आध्यात्मिकः–आत्माश्रितः, चिन्तितः–स्मरणरूपः, प्रार्थितः–अभिलाषरूपः मनोविकाररूपः संकल्पो–विकल्पः समुत्पन्नः।

१ दवमाणेहिं अ, हममाणेहिं क, हदमाणेहिं. च। २ भुतमाणेहिं. प्र०

वालका० ॥३४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पासति २ हट्ठ० खिप्पामेव आसणाओ अब्भुट्ठेति २ सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छति २ वंदइ, नमंसइ, विउलेणं असण ४ पडिलाभित्ता एवं वयासी–एवं खलु अहं अज्जाओ रट्ठकूडेणं सद्धिं विउलाइं जाव संवच्छरे २ जुगलं पयामि, सोलसहिं संवच्छरेहिं बत्तीसं दारगरूवे पयाया, तते णं अहं तेहिं बहूहिं दारएहि य जाव डिंभियाहि य अप्पेगतिएहिं उत्ताणसिज्जएहिं जाव भुत्तमाणेहिं दुज्जातेहिं जाव नो संचाएमि विहरत्तए, तमिच्छाणि णं अज्जाओ तुम्हं अंतिए धम्मं निसामित्तए। तते णं तातो अज्जातो सोमाते माहणीए विचित्तं जाव केवलिपण्णत्तं धम्मं परिकहेति। तते णं सा सोमा माहणी तासिं अज्जाणं अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठ जाव हियया तातो अज्जाओ वंदइ नमंसइ २ त्ता एवं वयासी–सद्दहामि णं अज्जाओ! निग्गंथं पावयणं जाव अब्भुट्ठेमि णं अज्जातो निग्गंथं पावयणं एवमेयं अज्जातो जाव से जहेयं तुब्भे वयह जं नवरं अज्जातो! रट्ठकूडं आपुच्छामि। तते णं अहं देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडा जाव पव्वयामि। अहासुहं देवाणुप्पिए! मा पडिबंधं। तते णं सा सोमा माहणी तातो अज्जातो वंदइ नमंसइ २ त्ता पडिविसज्जेति। तते णं सा सोमा माहणी जेणेव रट्ठकूडे तेणेव उवागता करतल एवं वयासी–एवं खलु मए देवाणुप्पिया! अज्जाणं अंतिए धम्मे निसंते से वि य णं धम्मे इच्छिते जाव अभिरुचिते, तते णं अहं देवाणुप्पिया! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाया सुव्वयाणं अज्जाणं जाव पव्वइत्तए। तते णं से रट्ठकूडे सोमं माहणिं एवं वयासी–मा णं तुमं देवाणुप्पिए! इदाणिं मुंडा भवित्ता जाव पव्वयाहि, भुंजाहि ताव देवाणुप्पिए! मए सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं, ततो पच्छा भुत्तभोई सुव्वयाणं अज्जाणं अंतिए मुंडा जाव पव्वयाहि। तते णं सा सोमा माहणी रट्ठकूडस्स एयमट्ठं पडिसुणेति। तते णं सा सोमा माहणी ण्हाया जाव सरीरा चेडियाचक्कवालपरिकिण्णा साओ गिहाओ पडिनिक्खमति २ विभेलं संनिवेसं मज्झं मज्झेणं जेणेव सुव्वयाणं अज्जाणं उवस्सए तेणेव उवा० २ सुव्वयाओ अज्जाओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२१]उपांगसूत्र-[१०] पुष्पिका मूलं एवंचन्द्रसूरि-विरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [८]

वंदइ नमंसइ पज्जुवासइ । तते णं ताओ सुव्वयाओ अज्जाओ सोमाए माहणीए विचित्तं केवलिपण्णत्तं धम्मं परिकहेंति जहा जीवा बज्झंति । तते णं सा सोमा माहणी सुव्वयाणं अज्जाणं अंतिए जाव दुवालसविहं सावगधम्मं पडिवज्जइ २ सुव्वयाओ अज्जाओ वंदइ नमंसइ २ त्ता जामेव दिसिं पाउब्भूआ तामेव दिसं पडिगता । तते णं सा सोमा माहणी समणोवासिया जाया अभिगत जाव अप्पाणं भावेमाणी विहरति । तते णं ताओ सुव्वयाओ अज्जाओ अण्णदा कदाइ विभेलाओ संनिवेसाओ पडिनिक्खमंति, बहिया जणवयविहारं विहरंति । तते णं ताओ सुव्वयाओ अज्जाओ अण्णदा कदायि पुव्वाणु० जाव विहरंति । तते णं सा सोमा माहणी इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणी हट्ठा ण्हाया तहेव निग्गया जाव वंदइ नमंसइ २ धम्मं सोच्चा जाव नवरं रट्ठकूडं आपुच्छामि, तते णं पव्वयामि । अहासुहं० । तते णं सा सोमा माहणी सुव्वयं अज्जं वंदइ नमंसइ २ सुव्वयाणं अंतियाओ पडिनिक्खमइ २ जेणेव सए गिहे जेणेव रट्ठकूडे तेणेव उवा० २ करतलपरिग्गह० तहेव आपुच्छइ जाव पव्वइत्तए । अहासुहं देवाणुप्पिए ! मा पडिबंधं । तते णं रट्ठकूडे विउलं असणं तहेव जाव पुव्वभवे सुभद्दा जाव अज्जा जाता, इरियासमिता जाव गुत्तबंभयारीणी । तते णं सा सोमा अज्जा सुव्वयाणं अज्जाणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ २ बहूहिं छट्ठट्ठम(दसम)दुवालस जाव भावेमाणी बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणति २ मासियाए संलेहणाए सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता आलोइयपडिक्कंता समाहिपत्ता कालमासे कालं किच्चा सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो सामाणियदेवत्ताए उववज्जिहिति, तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं दोसागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता, तत्थ णं सोमस्स वि देवस्स दोसागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । से णं भंते सोमे देवे ततो देवलोगाओ आउक्खएणं जाव चयं चइत्ता कहिं गच्छिहिति ? कहिं उववज्जिहिति ? गोयमा ! महाविदेहे वासे जाव अंतं काहिति । एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अयमट्ठे पण्णत्ते ॥ ४ ॥

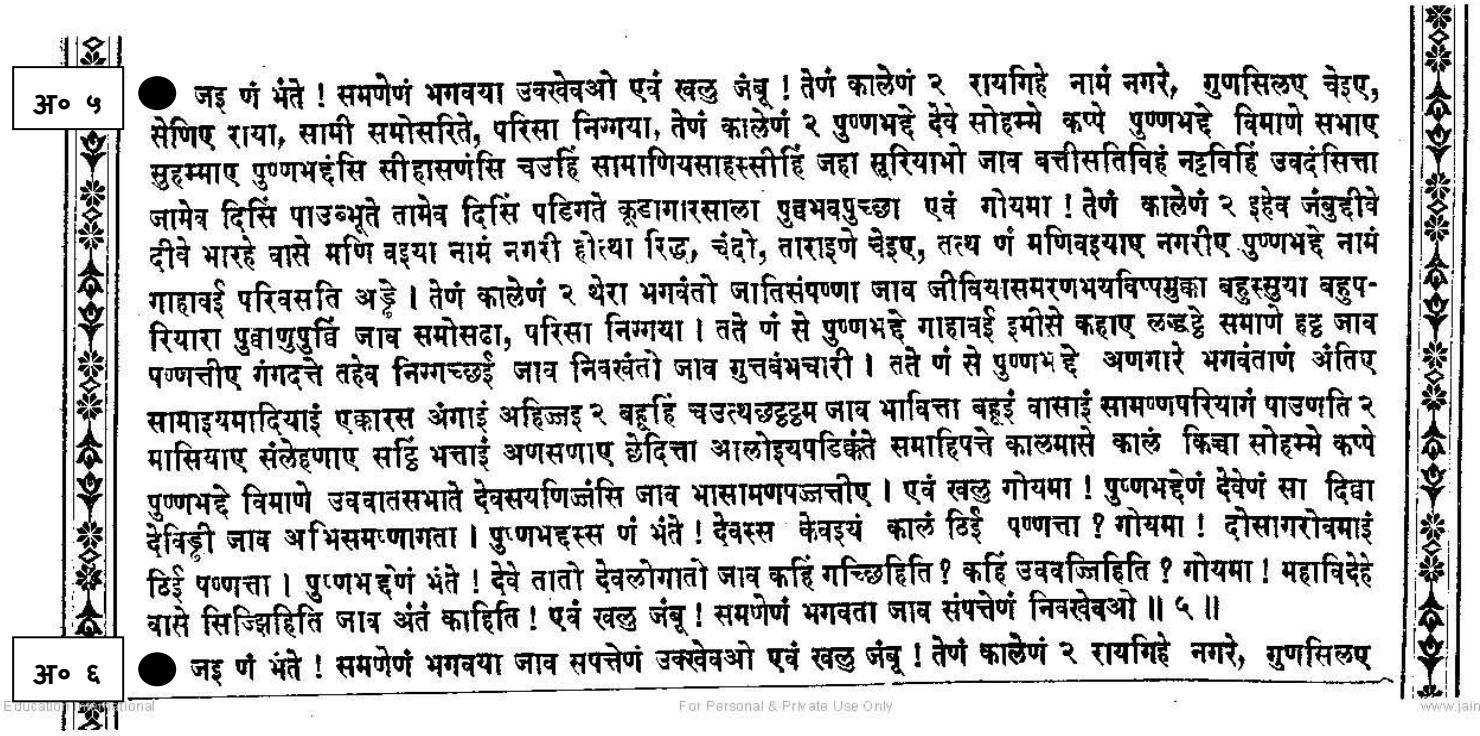
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अध्ययनं-४ ‘बहुपुत्रिका’ परिसमाप्तं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२१]उपांगसूत्र-[१०] पुष्पिका मूलं एवंचन्द्रसूरि-विरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [९]



अ० ५

● जइ णं भंते ! समणेणं भगवया उक्खेवओ एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं २ रायगिहे नामं नगरे, गुणसिलए चेइए, सेणिए राया, सामी समोसरिते, परिसा निग्गया, तेणं कालेणं २ पुण्णभद्दे देवे सोहम्मे कप्पे पुण्णभद्दे विमाणे सभाए सुहम्माए पुण्णभद्दंसि सीहासणंसि चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं जहा सूरियाभो जाव बत्तीसतिविहं नट्टविहिं उवदंसित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूते तामेव दिसिं पडिगते कूडागारसाला पुव्वभवपुच्छा एवं गोयमा ! तेणं कालेणं २ इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे मणि वइया नामं नगरी होत्था रिद्ध, चंदो, ताराइणे चेइए, तत्थ णं मणिवइयाए नगरीए पुण्णभद्दे नामं गाहावई परिवसति अड्ढे । तेणं कालेणं २ थेरा भगवंतो जातिसंपण्णा जाव जीवियासमरणभयविप्पमुक्का बहुस्सुया बहुपरियारा पुव्वाणुपुव्विं जाव समोसढा, परिसा निग्गया । तते णं से पुण्णभद्दे गाहावई इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठ जाव पण्णत्तीए गंगदत्ते तहेव निग्गच्छई जाव निवखंतो जाव गुत्तबंभचारी । तते णं से पुण्णभद्दे अणगारे भगवंताणं अंतिए सामाइयमादियाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ २ बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठम जाव भावित्ता बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणति २ मासियाए संलेहणाए सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे पुण्णभद्दे विमाणे उववातसभाते देवसयणिज्जंसि जाव भासामणपज्जत्तीए । एवं खलु गोयमा ! पुण्णभद्देणं देवेणं सा दिव्वा देविड्ढी जाव अभिसमण्णागता । पुण्णभद्दस्स णं भंते ! देवस्स केवइयं कालं ठिई पण्णत्ता ? गोयमा ! दोसागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । पुण्णभद्देणं भंते ! देवे तातो देवलोगातो जाव कहिं गच्छिहिति ? कहिं उववज्जिहिति ? गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अंतं काहिति ! एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवता जाव संपत्तेणं निक्खेवओ ॥ ५ ॥

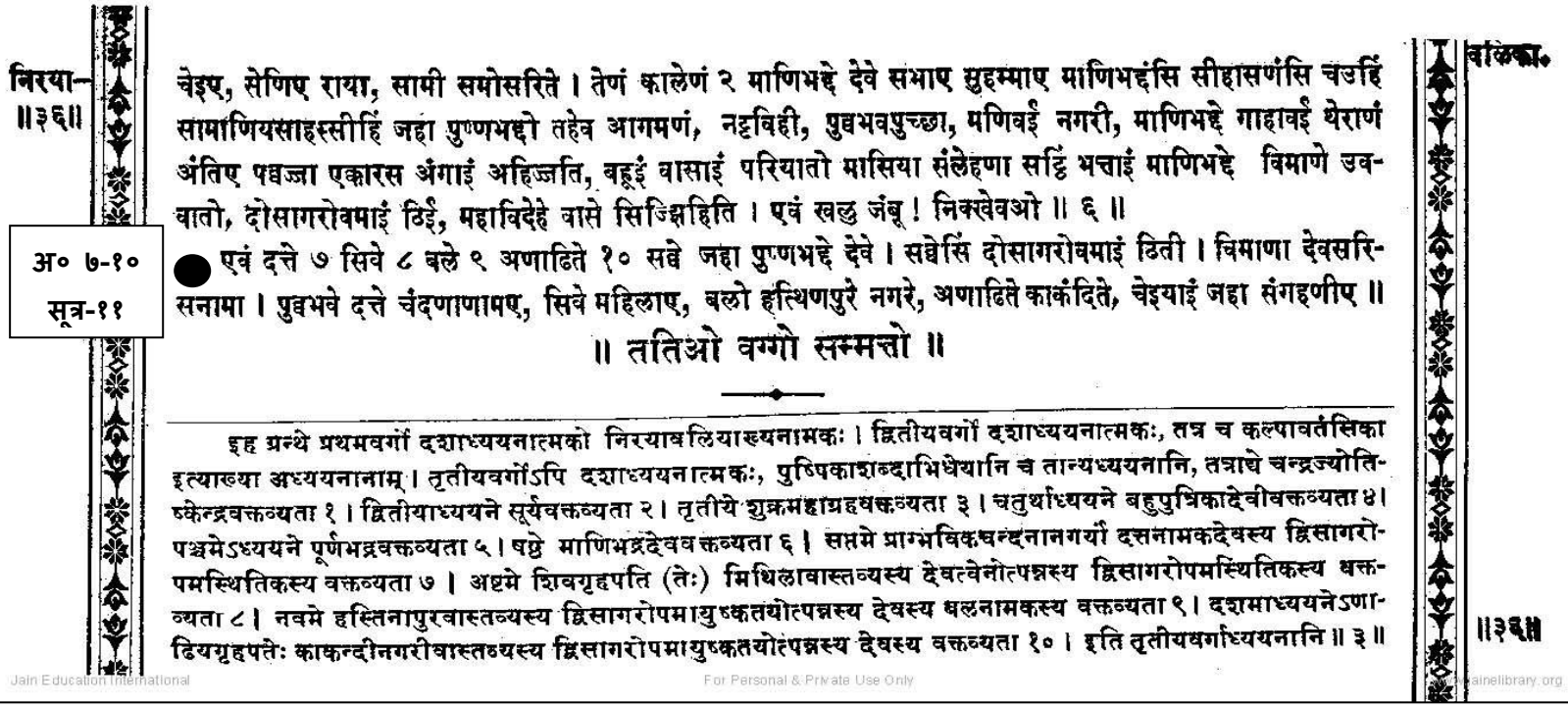
अ० ६

● जइ णं भंते ! समणेणं भगवया जाव सपत्तेणं उक्खेवओ एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं २ रायगिहे नगरे, गुणसिलए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अध्ययनं-५- 'पूर्णभद्र' आरब्धं एवं परिसमाप्तं [मूलसूत्र ९]

अध्ययनं-६- 'माणिभद्र' आरभ्यते [मूलसूत्र १०]



निरया- ॥३६॥

अ० ७-१० सूत्र-११

चेइए, सेणिए राया, सामी समोसरिते। तेणं कालेणं २ माणिभद्दे देवे सभाए सुहम्माए माणिभद्दंसि सीहासणंसि चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं जहा पुण्णभद्दो तहेव आगमणं, नट्टविही, पुव्वभवपुच्छा, मणिवई नगरी, माणिभद्दे गाहावई थेराणं अंतिए पव्वज्जा एक्कारस अंगाइं अहिज्जति, बहूइं वासाइं परियातो मासिया संलेहणा सट्ठिं भत्ताइं माणिभद्दे विमाणे उववातो, दोसागरोवमाइं ठिई, महाविदेहे वासे सिज्झिहिति। एवं खलु जंबू! निक्खेवओ ॥ ६ ॥

एवं दत्ते ७ सिवे ८ बले ९ अणाढिते १० सव्वे जहा पुण्णभद्दे देवे। सव्वेसिं दोसागरोवमाइं ठिती। विमाणा देवसरिसनामा। पुव्वभवे दत्ते चंदणाणामए, सिवे महिलाए, बलो हत्थिणपुरे नगरे, अणाढिते काकंदिते, चेइयाइं जहा संगहणीए ॥

॥ ततिओ वग्गो सम्मत्तो ॥

इह ग्रन्थे प्रथमवर्गो दशाध्ययनात्मको निरयावलियाख्यनामकः। द्वितीयवर्गो दशाध्ययनात्मकः, तत्र च कल्पावतंसिका इत्याख्या अध्ययनानाम्। तृतीयवर्गोऽपि दशाध्ययनात्मकः, पुष्पिकाशब्दाभिधेयानि च तान्यध्ययनानि, तत्राद्ये चन्द्रज्योतिष्केन्द्रवक्तव्यता १। द्वितीयाध्ययने सूर्यवक्तव्यता २। तृतीये शुक्रमहाग्रहवक्तव्यता ३। चतुर्थाध्ययने बहुपुत्रिकादेवीवक्तव्यता ४। पञ्चमेऽध्ययने पूर्णभद्रवक्तव्यता ५। षष्ठे माणिभद्रदेववक्तव्यता ६। सप्तमे प्राग्भविकचन्दनानगर्यां दत्तनामकदेवस्य द्विसागरोपमस्थितिकस्य वक्तव्यता ७। अष्टमे शिवगृहपतिं (तेः) मिथिलावास्तव्यस्य देवत्वेनोत्पन्नस्य द्विसागरोपमस्थितिकस्य वक्तव्यता ८। नवमे हस्तिनापुरवास्तव्यस्य द्विसागरोपमायुष्कतयोत्पन्नस्य देवस्य बलनामकस्य वक्तव्यता ९। दशमाध्ययनेऽणाढियगृहपतेः काकन्दीनगरीवास्तव्यस्य द्विसागरोपमायुष्कतयोत्पन्नस्य देवस्य वक्तव्यता १०। इति तृतीयवर्गाध्ययनानि ॥ ३ ॥

वर्गः ॥३६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अध्ययनं-६- 'माणिभद्र' परिसमाप्तं अध्ययनानि ७-१० दत्त, शिव आदि आरब्धानि एवं परिसमाप्तानि

भाग 26	पुष्पिका-उवंगसूत्र [१०] मूलं एवं चंद्रसूरिजी रचिता टीका परिसमाप्ता:
	मूल संशोधकः सम्पादकश्च पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब
	किंचित् वैशिष्ट्य समर्पितेन सह पुनः संकलनकर्ता मुनि दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

[२२] श्री पुष्पचूलिका (उपांगसूत्रम्-११)

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

“पुष्पचूलिका” मूलं एवं वृत्ति:

[मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्ति:]

[आद्य संपादकश्री]

पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

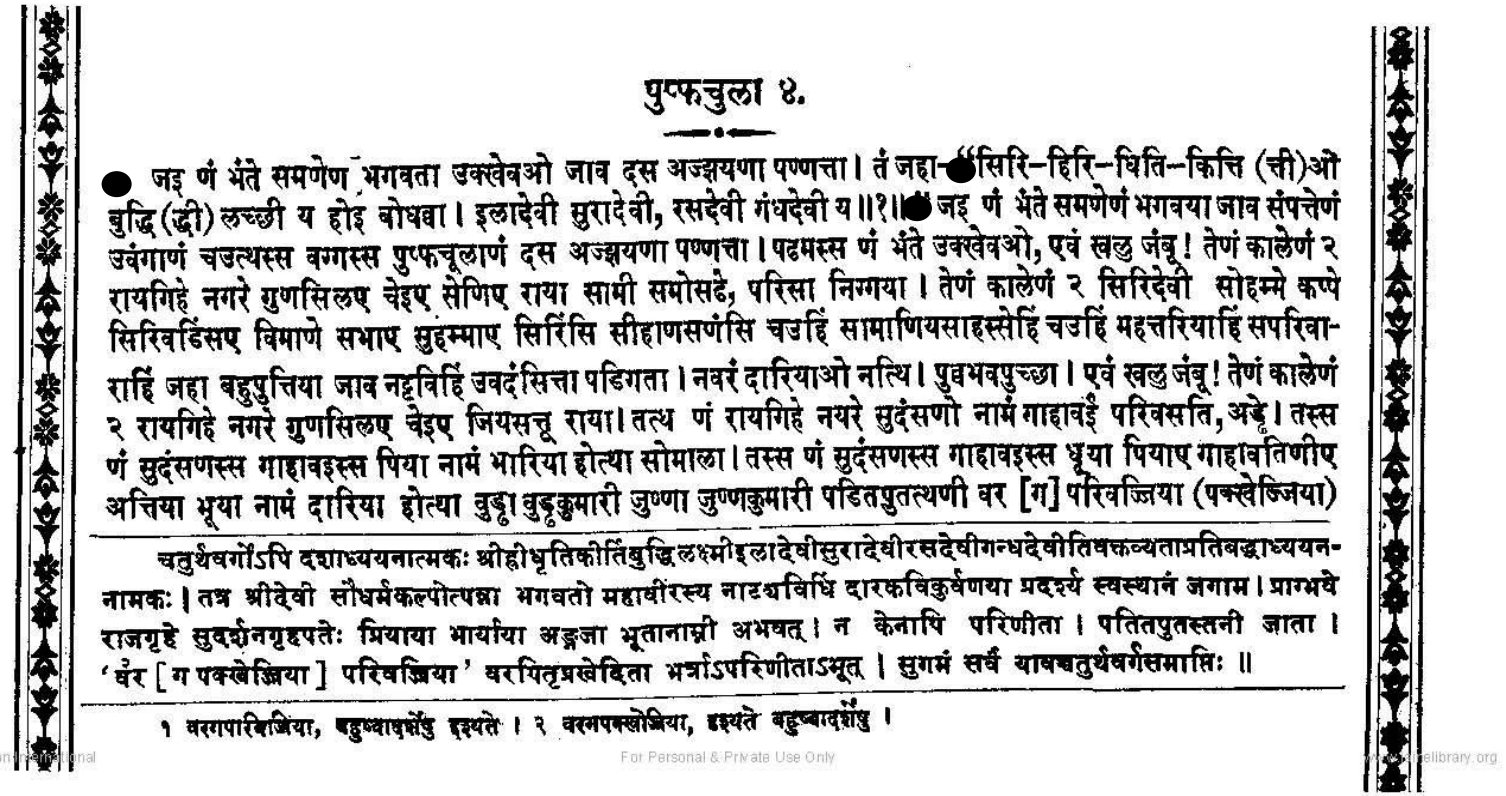
पुन: संकलनकर्ता→ मुनि दीपरत्नसागर (M.Com., M.Ed., Ph.D.,श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५ **‘सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि’ श्रेणि भाग-२६**

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलितआगमसूत्र-[२२], उपांगसूत्र-[११] पुष्पचूलिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [–]



पुप्फचुला ४.

● जइ णं भंते समणेण भगवता उक्खेवओ जाव दस अज्झयणा पण्णत्ता। तं जहा-●सिरि-हिरि-धिति-कित्ति (त्ती)ओ बुद्धि(द्धी) लच्छी य होइ बोधवा। इलादेवी सुरादेवी, रसदेवी गंधदेवी य ॥१॥● जइ णं भंते समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं उवंगाणं चउत्थस्स वग्गस्स पुप्फचूलाणं दस अज्झयणा पण्णत्ता। पढमस्स णं भंते उक्खेवओ, एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं २ रायगिहे नगरे गुणसिलए चेइए सेणिए राया सामी समोसढे, परिसा निग्गया। तेणं कालेणं २ सिरिदेवी सोहम्मे कप्पे सिरिवडिंसए विमाणे सभाए सुहम्माए सिरिंसि सीहासणंसि चउहिं सामाणियसाहस्सेहिं चउहिं महत्तरियाहिं सपरिवाराहिं जहा बहुपुत्तिया जाव नट्टविहिं उवदंसित्ता पडिगता। नवरं दारियाओ नत्थि। पुव्वभवपुच्छा। एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं २ रायगिहे नगरे गुणसिलए चेइए जियसत्तू राया। तत्थ णं रायगिहे नयरे सुदंसणो नामं गाहावई परिवसति, अड्ढे। तस्स णं सुदंसणस्स गाहावइस्स पिया नामं भारिया होत्था सोमाला। तस्स णं सुदंसणस्स गाहावइस्स धूया पियाए गाहावतिणीए अत्तिया भूया नामं दारिया होत्था वुड्ढा वुड्ढकुमारी जुण्णा जुण्णकुमारी पडितपुतत्थणी वर [ग] परिवज्जिया (पक्खेज्जिया)

चतुर्थवर्गोऽपि दशाध्ययनात्मकः श्रीह्रीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्मीइलादेवीसुरादेवीरसदेवीगन्धदेवीतिवक्तव्यताप्रतिबद्धाध्ययननामकः। तत्र श्रीदेवी सौधर्मकल्पोत्पन्ना भगवतो महावीरस्य नाटयविधिं दारकविकुर्वणया प्रदर्श्य स्वस्थानं जगाम। प्राग्भवे राजगृहे सुदर्शनगृहपतेः प्रियाया भार्याया अङ्गजा भूतानाम्नी अभवत्। न केनापि परिणीता। पतितपुतस्तनी जाता। 'वर [ग पक्खेज्जिया] परिवज्जिया' वरपितृप्रखेदिता भर्त्राऽपरिणीताऽभूत्। सुगमं सर्वं यावच्चतुर्थवर्गसमाप्तिः ॥

१ वरगपरिवज्जिया, बहुष्वादर्शेषु दृश्यते। २ वरगपक्खोज्जिया, दृश्यते बहुष्वादर्शेषु।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

● अत्र अध्ययनानि १–१०, [मूलसूत्र- १-३] आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलितआगमसूत्र-[२२], उपांगसूत्र-[११] पुष्पचूलिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्तिः

यावि होत्था। तेणं कालेणं २ पासे अरहा पुरिसादाणीए जाव नवरयणीए, वण्णओ सो चेव, समोसरणं, परिसा निग्गया। तते णं सा भूया दारिया इमीसे कहाए लद्धट्ठासमाणी हट्ठतुट्ठा जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवा० २ एवं वदासी–एवं खलु अम्मताओ पासे अरहा पुरिसादाणीए पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव देवगणपरिवुडे विहरति, तं इच्छामो णं अम्मयाओ तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्स पायवंदियागमित्तए। अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं। तते णं सा भूया दारिया ण्हाया जाव सरीरा चेडीचक्कवालपरिकिण्णा साओ गिहाओ पडिनिक्खमति २ जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवा० २ धम्मियं जाणप्पवरं दुरूढा। तते णं सा भूया दारिया नियगपरिवारपरिवुडा रायगिहं नगरं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छति २ जेणेव गुणसिलए चेइए तेणेव उवा० २ छत्तादीए तित्थकरातिसए पासति, धम्मियाओ जाणप्पवरा ओ पच्चोरुभित्ता चेडीचक्कवालपरिकिण्णा जेणेव पासे अरहा पुरिसादाणीए तेणेव उवा० २ तिक्खुत्तो जाव पज्जुवासति। तते णं पासे अरहा पुरिसादाणीए भूयाए दारियाए तीसे महइ० धम्मकहाए धम्मं० सोच्चा णिसम्म हट्ठ० वंदति २ एवं वदासी–सद्दहामि णं भंते निग्गंथं पावयणं जाव अब्भुट्ठेमि णं भंते निग्गंथं पावयणं से जहे तं तुब्भे वदह जं, नवरं देवाणुप्पिय! अम्मापियरो आपुच्छामि। तते णं अहं जाव पव्वइत्तए। अहासुहं देवाणुप्पिया! तते णं सा भूया दारिया तमेव धम्मियं जाणप्पवरं जाव दुरुहति २ जेणेव रायगिहे नगरे तेणेव उवागता, रायगिहं नगरं मज्झं मज्झेणं जेणेव सए गिहे तेणेव उवागता, रहाओ पच्चोरुहित्ता जेणेव अम्मापितरो तेणेव उवागता, करतल० जहा जमाली आपुच्छति। अहासुहं देवाणुप्पिए! तते णं से सुदंसणे गाहावई विउलं असणं ४ उवक्खडावेति, मित्तनाति आमंतेति २ जाव जिमिय

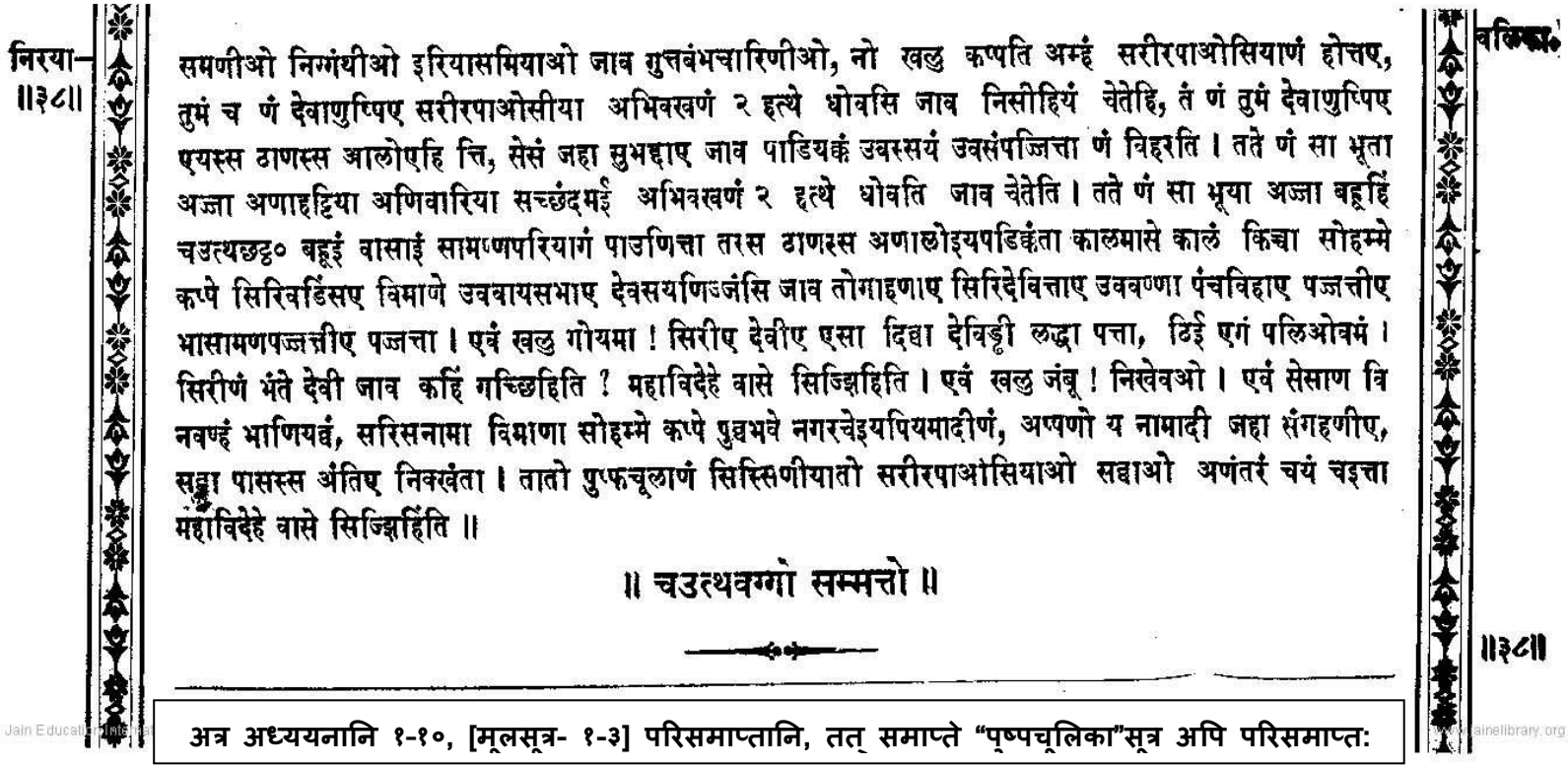
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलितआगमसूत्र-[२२], उपांगसूत्र-[११] पुष्पचूलिका मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्तिः

भुत्तुत्तरकाले सुहंसुहेणं निक्खमणमाणित्ता कोडुंबिय पुरिसे सद्दावेति २ एवं वदासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! भूयादारियाए पुरिससहस्सवाहिणीयं सीयं उवट्ठवेह २ जाव पच्चप्पिणह। तते णं ते जाव पच्चप्पिणंति। तते णं से सुदंसणे गाहावई भूयं दारियं ण्हायं जाव विभूसियसरीरं पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं दुरूहति २ मित्तनाति० जाव रवेणं रायगिहं नगरं मज्झं मज्झेणं जेणेव गुणसिलए चेइए तेणेव उवागते, छत्ताईए तित्थयरातिसए पासति २ सीयं ठावेति २ भूयं दारियं सीयाओ पच्चोरुहेति २। तते णं तं भूयं दारियं अम्मापियरो पुरतो काउं जेणेव पासे अरहा पुरिसादाणीए तेणेव उवागते, तिखुत्तो वंदति नमंसति २ एवं वदासी–एवं खलु देवाणुप्पिया! भूया दारिया अम्हं एगा धूया इट्ठा, एस णं देवाणुप्पिया! संसारभउव्विग्गा भीया जाव देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडा जाव पव्वयाति २ तं एयं णं देवाणुप्पिया! सिस्सिणिभिक्खं दलयति, पडिच्छंतु णं देवाणुप्पिया! सिस्सिणीभिक्खं। अहासुहं देवाणु०। तते णं सा भूता दारिया पासेणं अरहा० एवं वुत्तासमाणी हट्ठा उत्तरपुरच्छिमं सयमेव आभरणमल्लालंकारं उम्मुयइ, जहा देवाणंदा पुप्फचूलाणं अंतिए जाव गुत्तबंभयारिणी। तते णं सा भूता अज्जा अण्णदा कदाइ सरीरपाओसिया[1] जाया यावि होत्था, अभिक्खणं २ हत्थे धोवति, पादे धोवति एवं सीसं धोवति, मुहं धोवति, थणगंतराइं धोवति, कक्खंतराइं धोवति, गुज्झंतराइं धोवति, जत्थ जत्थ वि य णं ठाणं वा सिज्जं वा निसिहियं वा चेतेति तत्थ तत्थ वि य णं पुव्वामेव पाणएणं अब्भुक्खेति। ततो पच्छा ठाणं वा सिज्जं वा निसीहियं वा चेतेति। तते णं तातो पुप्फचूलातो अज्जातो भूयं अज्जं एवं वदासी–अम्हे णं देवाणुप्पिए

१ उवक्खण प्र० २ बाउसियाणं प्र०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



निरया- ॥३८॥

समणीओ निग्गंथीओ इरियासमियाओ जाव गुत्तबंभचारिणीओ, नो खलु कप्पति अम्हं सरीरपाओसियाणं होत्तए, तुमं च णं देवाणुप्पिए सरीरपाओसीया अभिक्खणं २ हत्थे धोवसि जाव निसीहियं चेतेहि, तं णं तुमं देवाणुप्पिए एयस्स ठाणस्स आलोएहि त्ति, सेसं जहा सुभद्दाए जाव पाडियक्कं उवस्सयं उवसंपज्जित्ता णं विहरति । तते णं सा भूता अज्जा अणाहट्टिया अणिवारिया सच्छंदमई अभिक्खणं २ हत्थे धोवति जाव चेतेति । तते णं सा भूया अज्जा बहूहिं चउत्थछट्ठ० बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंता कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे सिरिवडिंसए विमाणे उववायसभाए देवसयणिज्जंसि जाव तोगाहणाए सिरिदेवित्ताए उववण्णा पंचविहाए पज्जत्तीए भासामणपज्जत्तीए पज्जत्ता । एवं खलु गोयमा ! सिरीए देवीए एसा दिव्वा देविड्ढी लद्धा पत्ता, ठिई एगं पलिओवमं । सिरीणं भंते देवी जाव कहिं गच्छिहिति ? महाविदेहे वासे सिज्झिहिति । एवं खलु जंबू ! निक्खेवओ । एवं सेसाण वि नवण्हं भाणियव्वं, सरिसनामा विमाणा सोहम्मे कप्पे पुव्वभवे नगरचेइयपियमादीणं, अप्पणो य नामादी जहा संगहणीए, सद्धा पासस्स अंतिए निक्खंता । तातो पुप्फचूलाणं सिस्सिणीयातो सरीरपाओसियाओ सद्धाओ अणंतरं चयं चइत्ता महाविदेहे वासे सिज्झिहिंति ॥

॥ चउत्थवग्गो सम्मत्तो ॥

वलिस्सा० ॥३८॥

अत्र अध्ययनानि १-१०, [मूलसूत्र- १-३] परिसमाप्तानि, तत् समाप्ते "पुष्पचूलिका"सूत्र अपि परिसमाप्त:

भाग 26	पुष्पचूलिका-उवंगसूत्र [११] मूलं एवं चंद्रसूरिजी रचिता टीका परिसमाप्ता: मूल संशोधकः सम्पादकश्च पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब किंचित् वैशिष्ट्य समर्पितेन सह पुन: संकलनकर्ता मुनि दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नमः

"वृष्णिदशा" मूलं एवं वृत्तिः

[मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्तिः]

[आद्य संपादकश्री]

पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

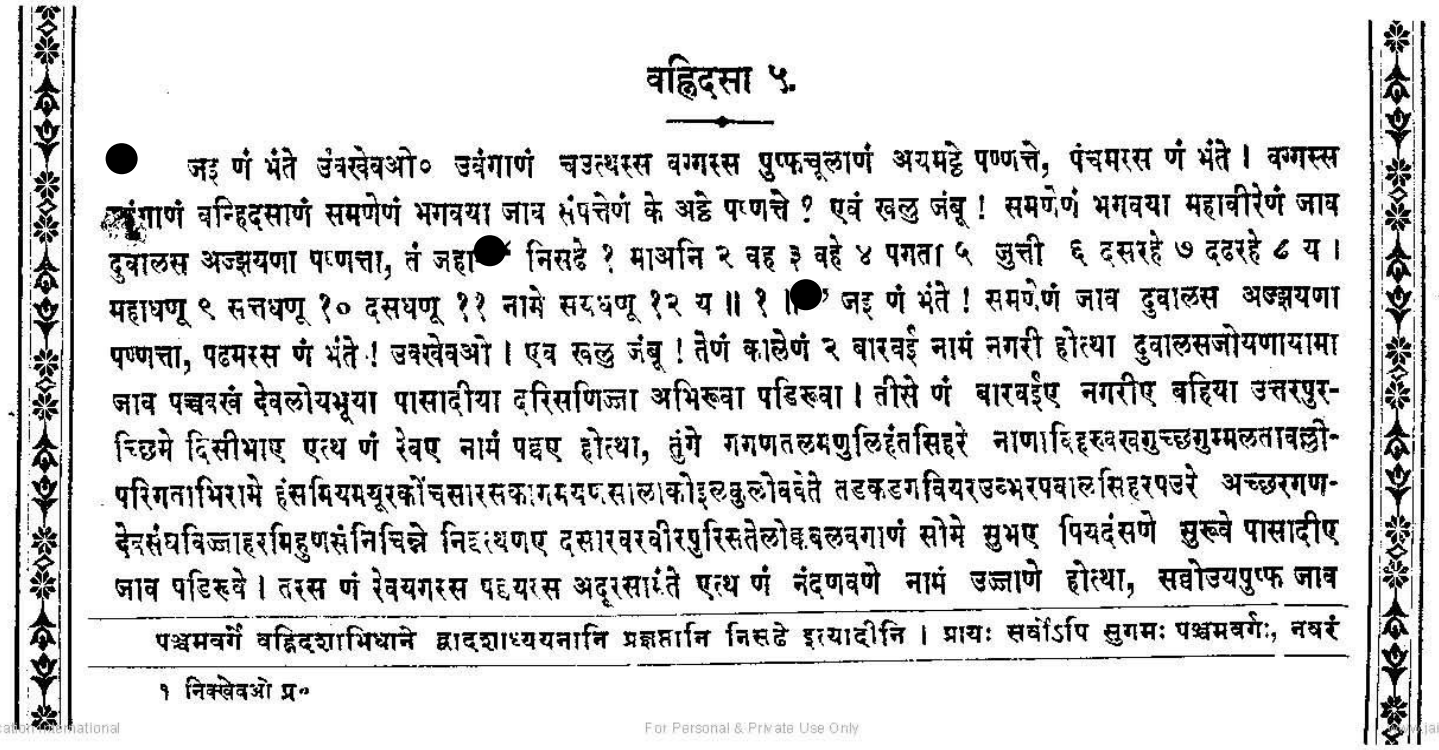
पुनः संकलनकर्ता→ मुनि दीपरत्नसागर (M.Com., M.Ed., Ph.D.,श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५ 'सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि' श्रेणि भाग-२६

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२३],उपांगसूत्र-[१२] वृष्णिदशा मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१-३]



वह्निदसा ५.

● जइ णं भंते उक्खेवओ० उवंगाणं चउत्थस्स वग्गस्स पुप्फचूलाणं अयमट्ठे पण्णत्ते, पंचमस्स णं भंते ! वग्गस्स वन्हिदसाणं समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ? एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव दुवालस अज्झयणा पण्णत्ता, तं जहा● निसढे १ माअनि २ वह ३ वहे ४ पगता ५ जुत्ती ६ दसरहे ७ दढरहे ८ य। महाधणू ९ सत्तधणू १० दसधणू ११ नामे सयधणू १२ य ॥ १ ॥● जइ णं भंते ! समणेणं जाव दुवालस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते ! उक्खेवओ। एव खलु जंबू ! तेणं कालेणं २ बारवई नामं नगरी होत्था दुवालसजोयणायामा जाव पच्चक्खं देवलोयभूया पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा। तीसे णं बारवईए नगरीए बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए एत्थ णं रेवए नामं पव्वए होत्था, तुंगे गगणतलमणुलिहंतसिहरे नाणाविहरुक्खगुच्छगुम्मलतावल्लीपरिगताभिरामे हंसमियमयूरकोंचसारसकोगमयणसालाकोइलकुलोववेते तडकडगवियरउब्भरपवालसिहरपउरे अच्छरगणदेवसंघविज्जाहरमिहुणसंनिचिन्ने निहत्थणए दसारवरवीरपुरिसतेलोक्कबलवगाणं सोमे सुभए पियदंसणे सुरूवे पासादीए जाव पडिरूवे। तस्स णं रेवयगस्स पव्वयस्स अदूरसामंते एत्थ णं नंदणवणे नामं उज्जाणे होत्था, सव्वोउयपुप्फ जाव

पञ्चमवर्गे वह्निदशाभिधाने द्वादशाध्ययनानि प्रज्ञप्तानि निसढे इत्यादीनि। प्रायः सर्वोऽपि सुगमः पञ्चमवर्गः, नवरं

१ निक्खेवओ प्र०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

● अत्र अध्ययन-१- 'निषध' आरभ्यते [मूलसूत्र १-३]

निरया- ॥३९॥

दरिसणिज्जे । तत्थ णं नंदणवणे उज्जाणे सुरप्पियस्स जक्खस्स जक्खायतणे होत्था चिराईए जाव बहुजणो आगम्म अच्चेति सुरप्पियं जक्खाययणं । से णं सुरप्पिए जक्खाययणे एगेणं महता वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते जहा पुण्णभद्दे जाव सिलावट्टते । तत्थ णं बारवईए नयरीए कण्हे नामं वासुदेवे राया होत्था जाव पसासेमाणे विहरति । से णं तत्थ समुद्दविजयपामोक्खाणं दसण्हं दसाराणं, बलदेवपामोक्खाणं पंचण्हं महावीराणं, उग्गसेणपामोक्खाणं सोलसण्हं राईसाहस्सीणं, पज्जुण्णपामोक्खाणं अद्धट्ठाणं कुमारकोडीणं, संबपामोक्खाणं सट्ठीए दुद्दंतसाहस्सीणं, वीरसेणपामोक्खाणं एक्कवीसाए वीरसाहस्सीणं, रुप्पिणिपामोक्खाणं सोलसण्हं देवीसाहस्सीणं, अणंगसेणापामोक्खाणं अणेगाणं गणियासाहस्सीणं, अण्णेसिं च बहूणं राईसर जाव सत्थवाहप्पभिईणं वेयड्ढगिरिसागरमेरागस्स दाहिणड्ढभरहस्स आहेवच्चं जाव विहरति । तत्थ णं बारवईए नयरीए बलदेवे नामं राया होत्था, महया जाव रज्जं पसासेमाणे विहरति । तस्स णं बलदेवस्स रण्णो रेवई नामं देवी होत्था सोमाला जाव विहरति । तते णं सा रेवती देवी अण्णदा कदाइ तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि जाव सीहं सुमिणे पासित्ता णं०, एवं सुमिणदंसणपरिकहणं, कलातो जहा महाबलस्स, पंनासतो दातो पण्णासरायकण्णगाणं एगदिवसेणं पाणिं० नवरं निसढे नामं जाव उप्पिं पासादं विहरति । तेणं कालेणं २ अरहा अरिट्ठनेमी आदिकरे दसधणूइं वण्णतो जाव समोसरिते, परिसा निग्गया । तते णं से कण्हे वासुदेवे इमीसे कहाए लद्धट्ठे

'चिराईए' त्ति चिरः–चिरकाल आदिनिवेशो यस्य तच्चिरादिकम् । 'महय' त्ति 'महया हिमवंतमलयमंदरमहिंदसारे' इत्यादि दृश्यम्, तत्र महाहिमवदादयः पर्वतास्तद्वत्सारः प्रधानो यः ।

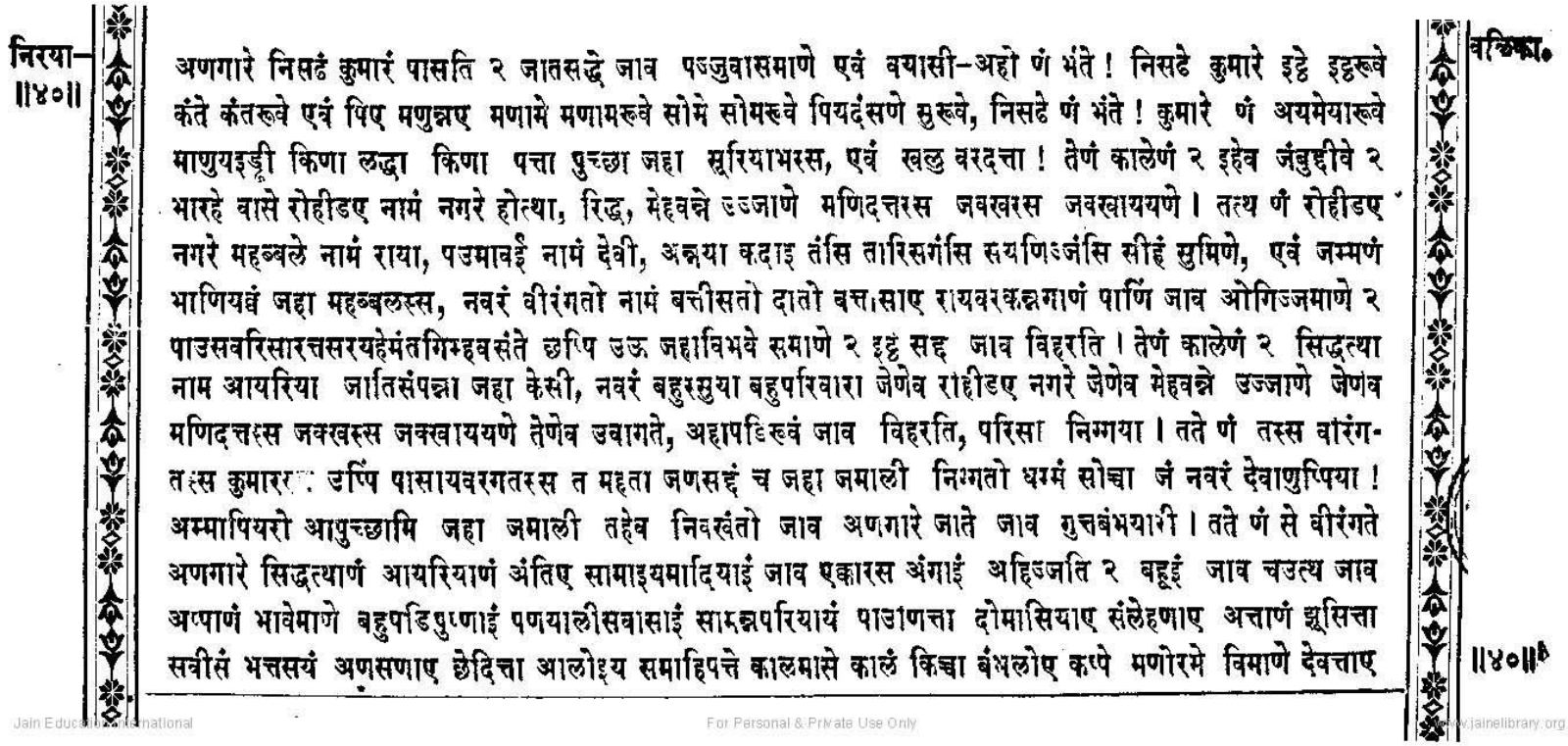
वलिका. ॥३९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समाणे हट्ठतो एतो य कुडुंबियपुरिसे सद्दावेति २ एवं वदासी–खिप्पामेव देवाणुप्पिया ! सभाए सुहम्माए सामुदाणियं भेरिं तालेहि । तते णं से कुडुंबियपुरिसे जाव पडिसुणित्ता जेणेव सभाए सुहम्माए सामुदाणिया भेरी तेणेव उवा० २ तं सामुदाणियं भेरिं महता २ सद्देणं तालेति । तते णं तीसे सामुदाणियाए भेरीए महता २ सद्देण तालियाए समाणीए समुद्दविजयपामोक्खा दस दसारा देवीओ उग्ग भाणियव्वाओ जाव अणंगसेणापामोक्खा अणेगा गणिया सहस्सा अन्ने य बहवे राईसर जाव सत्थवाहप्पभितितो ण्हाया जाव पायच्छित्ता सव्वालंकारविभूसिया जहाविभवइड्ढिसक्कारसमुदएणं अप्पेगइया हयगया जाव पुरिसवग्गुरापरिक्खित्ता जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव उवा० २ करतल० कण्हं वासुदेवं जएणं विजएणं वद्धावेति । तते णं से कण्हे वासुदेवे कोडुंबियपुरिसे एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! आभिसेक्कहत्थिं कप्पेह हयगयरहपवर जाव पच्चप्पिणंति । तते णं से कण्हे वासुदेवे मज्जणघरे जाव दुरूढे अट्ठट्ठमंगलगा जहा कूणिए सेयवरचामरेहि उद्धवमाणेहि २ समुद्दविजयपामोक्खेहिं दसहिं दसारेहिं जाव सत्थवाहप्पभितीहिं सद्धिं संपरिवुडे सव्विड्ढीए जाव रवेणं बारवइं नगरिं मज्झं मज्झेणं सेसं जहा कूणिओ जाव पज्जुवासइ । तते णं तस्स निसढस्स कुमारस्स उप्पिं पासायवरगयस्स तं महता जण सद्दं च जहा जमाली जाव धम्मं सोच्चा निसम्म वंदइ नमंसइ २ एवं वदासी–सद्दहामि णं भंते निग्गंथं पावयणं जहा चित्तो जाव सावगधम्मं पडिवज्जति २ पडिगते । तेणं कालेणं २ अरहा अरिट्ठनेमिस्स अंतेवासी वरदत्ते नामं अणगारे उराले जाव विहरति । ततेणं से वरदत्ते

१ हट्ठतो य पुरिसे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



निरया- ॥४०॥

अणगारे निसढं कुमारं पासति २ जातसद्धे जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी–अहो णं भंते ! निसढे कुमारे इट्ठे इट्ठरूवे कंते कंतरूवे एवं पिए मणुन्नए मणामे मणामरूवे सोमे सोमरूवे पियदंसणे सुरूवे, निसढे णं भंते ! कुमारे णं अयमेयारूवे माणुयइड्ढी किणा लद्धा किणा पत्ता पुच्छा जहा सूरियाभस्स, एवं खलु वरदत्ता ! तेणं कालेणं २ इहेव जंबुद्दीवे २ भारहे वासे रोहीडए नामं नगरे होत्था, रिद्ध, मेहवन्ने उज्जाणे मणिदत्तस्स जक्खस्स जक्खायतणे। तत्थ णं रोहीडए नगरे महब्बले नामं राया, पउमावई नामं देवी, अन्नया कदाइ तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि सीहं सुमिणे, एवं जम्मणं भाणियव्वं जहा महब्बलस्स, नवरं वीरंगतो नामं बत्तीसतो दातो बत्तीसाए रायवरकन्नगाणं पाणिं जाव ओगिज्जमाणे २ पाउसवरिसारत्तसरयहेमंतगिम्हवसंते छप्पि उऊ जहाविभवे समाणे २ इट्ठे सद्द जाव विहरति। तेणं कालेणं २ सिद्धत्था नाम आयरिया जातिसंपन्ना जहा केसी, नवरं बहुस्सुया बहुपरिवारा जेणेव रोहीडए नगरे जेणेव मेहवन्ने उज्जाणे जेणेव मणिदत्तस्स जक्खस्स जक्खायतणे तेणेव उवागते, अहापडिरूवं जाव विहरति, परिसा निग्गया। तते णं तस्स वीरंग-तस्स कुमारस्स इमीसे कहाए लद्धट्ठस्स समाणस्स इमे एयारूवे अज्झत्थिते जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु पासायवरगतस्स मे महता जणसद्दं च जहा जमाली निग्गतो धम्मं सोच्चा जं नवरं देवाणुप्पिया ! अम्मापियरो आपुच्छामि जहा जमाली तहेव निक्खंतो जाव अणगारे जाते जाव गुत्तबंभयारी। तते णं से वीरंगते अणगारे सिद्धत्थाणं आयरियाणं अंतिए सामाइयमादियाइं जाव एक्कारस अंगाइं अहिज्जति २ बहूइं जाव चउत्थ जाव अप्पाणं भावेमाणे बहुपडिपुण्णाइं पणयालीसवासाइं सामन्नपरियायं पाउणित्ता दोमासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसित्ता सवीसं भत्तसयं अणसणाए छेदित्ता आलोइय समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा बंभलोए कप्पे मणोरमे विमाणे देवत्ताए

वृष्णिका॰

॥४०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उववन्ने। तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं दससागरोवमाइं ठिई पन्नत्ता। तत्थ णं वीरंगयस्स देवस्स दससागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। से णं वीरंगते देवे तातो देवलोगाओ आउक्खएणं जाव अणंतरं चयं चइत्ता इहेव बारवईए नयरीए बलदेवस्स रन्नो रेवईए देवीए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववन्ने। तते णं सा रेवती देवी तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि सुमिणदंसणं जाव उप्पिं पासायवरगते विहरति। तं एवं खलु वरदत्ता! निसढेणं कुमारेणं अयमेयारूवे ओराले मणुयइड्ढी लद्धा ३। पभू णं भंते! निसढे कुमारे देवाणुप्पियाणं अंतिए जाव पव्वइत्तए? हंता पभू! से एवं भंते भंते! इइ वरदत्ते अणगारे जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरति। तते णं अरहा अरिट्ठनेमी अण्णदा कदाइ बारवतीओ नगरीओ जाव बहिया जणवय विहारं विहरति, निसढे कुमारे समणोवासए जाए अभिगतजीवाजीवे जाव विहरति। तते णं से निसढे कुमारे अण्णया कयाइ जेणेव पोसहसाला तेणेव उवा० २ जाव दब्भसंथारोवगते विहरति। तते णं तस्स निसढस्स कुमारस्स पुव्वरत्तावरत्त० धम्मजागरियं जागरमाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए०–धन्ना णं ते गामागर जाव संनिवेसा जत्थ णं अरहा अरिट्ठनेमी विहरति, धन्ना णं ते राईसर जाव सत्थवाहप्पभितिओ जे णं अरिट्ठनेमिं वंदंति नमंसंति जाव पज्जुवासंति, जति णं अरहा अरिट्ठनेमी पुव्वाणुपुव्विं नंदणवणे विहरेज्जा तेणं अहं अरहं अरिट्ठनेमिं वंदिज्जा जाव पज्जुवासिज्जा। तते णं अरहा अरिट्ठनेमी निसढस्स कुमारस्स अयमेयारूवं अज्झत्थिय जाव वियाणित्ता अट्ठारसहिं समणसहस्सेहिं जाव नंदणवणे उज्जाणे, परिसा निग्गया, तते णं निसढे कुमारे इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठ० चाउग्घंटेणं आसरहेणं निग्गते, जहा जमाली, जाव

नगरनिगमसिट्ठिसेणावइसत्थवाहप्पभितिओ। जे णं भगवंतं वंदति। तद्वत् नन्दनवने उद्याने भगवान् समवसृतः।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२३],उपांगसूत्र-[१२] वृष्णिदशा मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१-३]

निरया- ॥४१॥

अम्मापियरो आपुच्छित्ता पव्वयिते, अणगारे जाते जाव गुत्तबंभयारी। तते णं से निसढे अणगारे अरहतो अरिट्ठनेमिस्स तहारुवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जति २ बहूइं चउत्थछट्ठ जाव विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहुपडिपुण्णाइं नव वासाइं सामण्णपरियागं पाउणति बायालीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेति, आलोइय-पडिक्कंते समाहिपत्ते आणुपुव्वीए कालगते। तते णं से वरदत्ते अणगारे निसढं अणगारं कालगतं जाणित्ता जेणेव अरहा अरिट्ठनेमी तेणेव उवा० २ जाव एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी निसढे नामं अणगारे पगतिभद्दए जाव विणीए से णं भंते! निसढे अणगारे कालमासे कालं किच्चा कहिं गते? कहिं उववण्णे? वरदत्तादि अरहा अरिट्ठनेमी वरदत्तं अणगारं एवं वयासी–एवं खलु वरदत्ता ममं अंतेवासी निसढे नामं अणगारे पगइभद्दे जाव विणीए ममं तहारुवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जित्ता बहुपडिपुण्णाइं नव वासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता बायालीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेत्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा उड्ढं चंदिमसूरि-यगहनक्खत्ततारारूवाणं सोहम्मीसाण जाव अच्चुते तिण्णि य अट्ठारसुत्तरे गेविज्जविमाणे वाससते वीतीवतित्ता सव्वट्ठसि-द्धविमाणे देवत्ताए उववण्णे। तत्थ णं देवाणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। से णं भंते! निसढे देवे तातो देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहि गच्छिहिति? कहिं उववज्जिहिति? वरदत्ता!

बायालीसं भत्ताइं ति दिनानि २१ परिहृत्यानशनया। 'निसढे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं' ति आयुर्दलिकनिर्जरणेन, 'भवक्खएणं' ति देवभवनिबन्धनभूतकर्मणां गत्यादीनां निर्जरणेन, स्थितिक्षयेण-आयुःकर्मणः स्थितेर्वेदनेन, 'अनंतरं चयं चइत्त' त्ति देवभवसंबन्धिनं चयं-शरीरं त्यक्त्वा, यत्रा च्यवनं कृत्वा क्व यास्यति? गतोऽपि क्वोत्पत्स्यते?

वह्निका. ॥४१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इहेव जंबुद्दीवे २ महाविदेहे वासे उन्नाते[1] नगरे विसुद्धपिइवंसे रायकुले पुत्तत्ताए पच्चायाहिति। तते णं से उम्मुक्कबालभावे विण्णयपरिणयमित्ते जोव्वणगमणुप्पत्ते तहारूवाणं थेराणं अंतिए केवलबोहिं बुज्झित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वज्जिहिति। से णं तत्थ अणगारे भविस्सति। इरियासमिते जाव गुत्तबंभयारी। से णं तत्थ बहूइं चउत्थछट्ठट्ठमदसमदुवालसेहिं मासद्धमासखमणेहिं विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणिस्सति २ मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसिहिति २ सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदिहिति। जस्सट्ठाए कीरति णग्गभावे मुंडभावे अण्हाणए जाव अदंतवणए अच्छत्तए अणोवाहणाए फलहसेज्जा कट्ठसेज्जा केसलोए बंभचेरवासे परघरपवेसे पिंडवाउलद्धावलद्धे उच्चावया य गामकंटया अहियासिज्जति, तमट्ठं आराहेंति, आराहित्ता चरिमेहिं उस्सासनिस्सासेहिं सिज्झिहिति बुज्झिहिति जाव सव्वदुक्खाणं अंतं काहिति २। एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महा० जाव निक्खेवओ ● एवं सेसा वि एक्कारस अज्झयणा नेयव्वा संगहणी अणुसारेण अहीणमइरित्त एक्कारससु वि॥

॥ पंचमो वग्गो सम्मत्तो॥

'सिज्झिहिति' सेत्स्यति निष्ठितार्थतया, भोत्स्यते केवलालोकेन, मोक्ष्यते सकलकर्मभ्यः, परिनिर्वास्यति–स्वस्थो भविष्यति सकलकर्मकृतविकारविरहितया, तात्पर्यार्थमाह–सर्वदुःखानामन्तं करिष्यति॥

१ उत्ताते प्र०

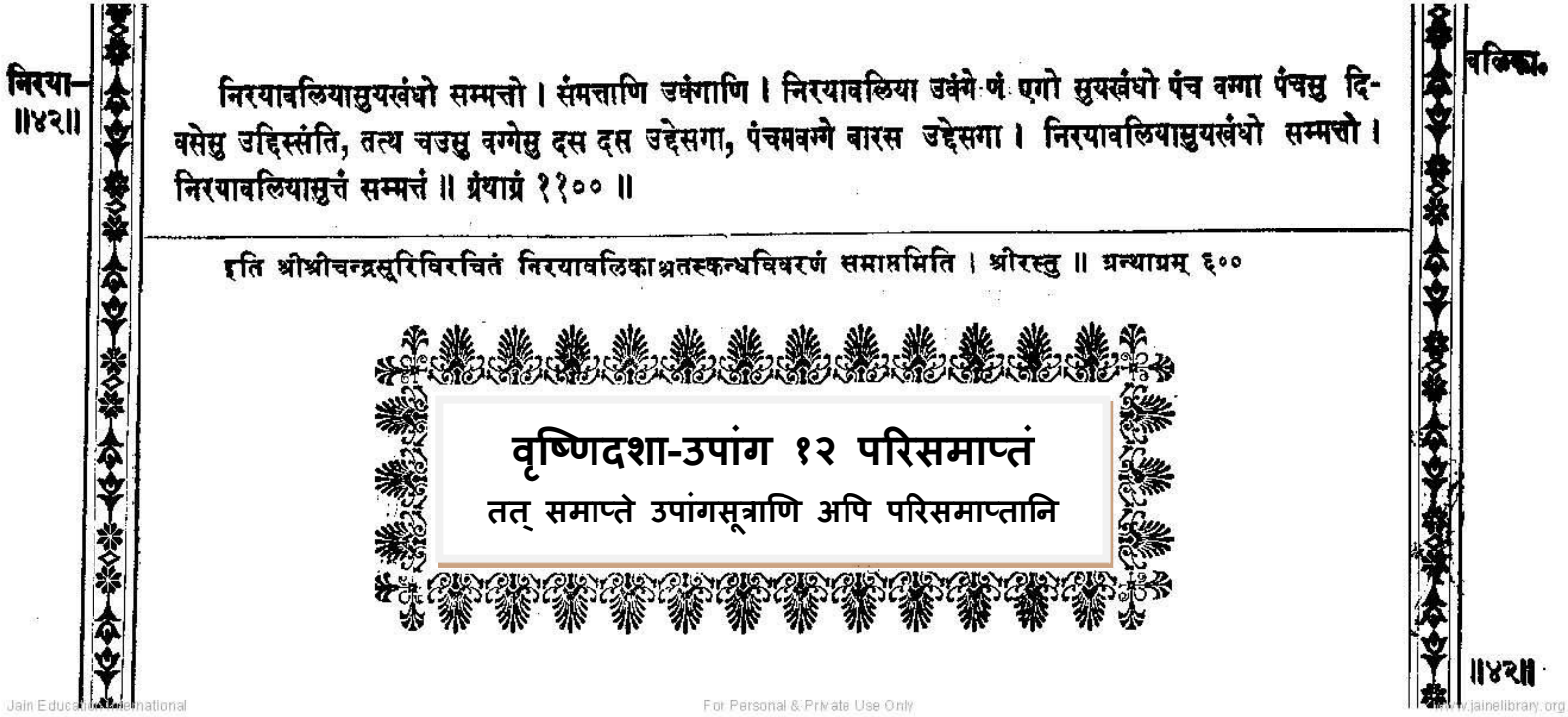
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

● अत्र अध्ययनं -१- 'निषध' परिसमाप्तं अत्र अध्ययन २-१२ 'मायनि,वध आदि' आरब्धानि एवं परिसमाप्तानि [मूलसूत्र ४]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२३],उपांगसूत्र-[१२] वृष्णिदशा मूलं एवं चन्द्रसूरि-विरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [१-३]



निरया- ॥४२॥

निरयावलियासुयखंधो सम्मत्तो । संमत्ताणि उवंगाणि । निरयावलिया उवंगे णं एगो सुयखंधो पंच वग्गा पंचसु दिवसेसु उद्दिस्संति, तत्थ चउसु वग्गेसु दस दस उद्देसगा, पंचमवग्गे बारस उद्देसगा । निरयावलियासुयखंधो सम्मत्तो । निरयावलियासुत्तं सम्मत्तं ॥ ग्रंथाग्रं ११०० ॥

इति श्रीश्रीचन्द्रसूरिविरचितं निरयावलिकाश्रुतस्कन्धविवरणं समाप्तमिति । श्रीरस्तु ॥ ग्रन्थाग्रम् ६००

वृष्णिदशा-उपांग १२ परिसमाप्तं

तत् समाप्ते उपांगसूत्राणि अपि परिसमाप्तानि

वलिका.

॥४२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भाग 26	**वृष्णिदशा-उवंगसूत्र [१२] मूलं एवं चंद्रसूरिजी रचिता टीका परिसमाप्ता:** मूल संशोधकः सम्पादकश्च पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब किंचित् वैशिष्ट्य समर्पितेन सह पुन: संकलनकर्ता मुनि दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

[२४] श्री चतु:शरणं (प्रकीर्णकसूत्रम्-१)

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

“चतु:शरण” मूलं एवं छाया

[मूलं एवं संस्कृतछाया]

[आद्य संपादकश्री]

पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

पुन: संकलनकर्ता→ मुनि दीपरत्नसागर (M.Com., M.Ed., Ph.D.,श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५ ‘सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि’ श्रेणि भाग-२६

प्रत सूत्रांक ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२४],प्रकीर्णकसूत्र-[०१] चतु:शरण मूलं एवं संस्कृतछाया

॥ अर्हम् ॥

सच्छाये प्रकीर्णकदशके–चउसरणपइण्णयं ।

सावज्जजोगविरई १ उक्कित्तण २ गुणवओ अ पडिवत्ती ३ । खलिअस्स निंदणा ४ वणतिगिच्छ ५ गुणधारणा चेव ६ ॥१॥ चारित्तस्स विसोही कीरइ सामाइएण किल इहयं । सावज्जेअरजोगाण वज्जणासेवणत्तणओ ॥ २ ॥ दंसणयारविसोही चउवीसायत्थएण किच्चइ य । अचब्भुअगुणकित्तणरूवेण जिणवरिंदाणं ॥ ३ ॥ नाणाईआ उ गुणा तस्संपन्नपडिवत्तिकरणाओ । वंदणएणं विहिणा कीरइ सोही उ तेसिं तु ॥ ४ ॥ खलिअस्स य तेसि पुणो

सावद्ययोगविरतिः १ उत्कीर्तनं २ गुणवतश्च प्रतिपत्तिः ३ । स्खलितस्य निन्दनं ४ व्रणचिकित्सा ५ गुणधारणं ६ [3]चैव ॥ १ ॥ चारित्रस्य विशुद्धिः क्रियते सामायिकेन किलेह । सावद्येतरयोगानां वर्जनाऽऽसेवनतः ॥ २ ॥ दर्शनाचारविशुद्धिश्चतुर्विंशत्यात्मस्तवेन क्रियते च । अत्यद्भुतगुणकीर्त्तनरूपेण जिनवरेन्द्राणाम् ॥ ३ ॥ ज्ञानादिका एव गुणास्तत्संपन्नप्रतिपत्तिकरणात् । वन्दनकेन विधिना क्रियते शुद्धि-

१ स्तुतिः (लोकस्योद्योतकरः) । २ वन्दनम् । ३ षडावश्यकार्थाधिकाराः ।

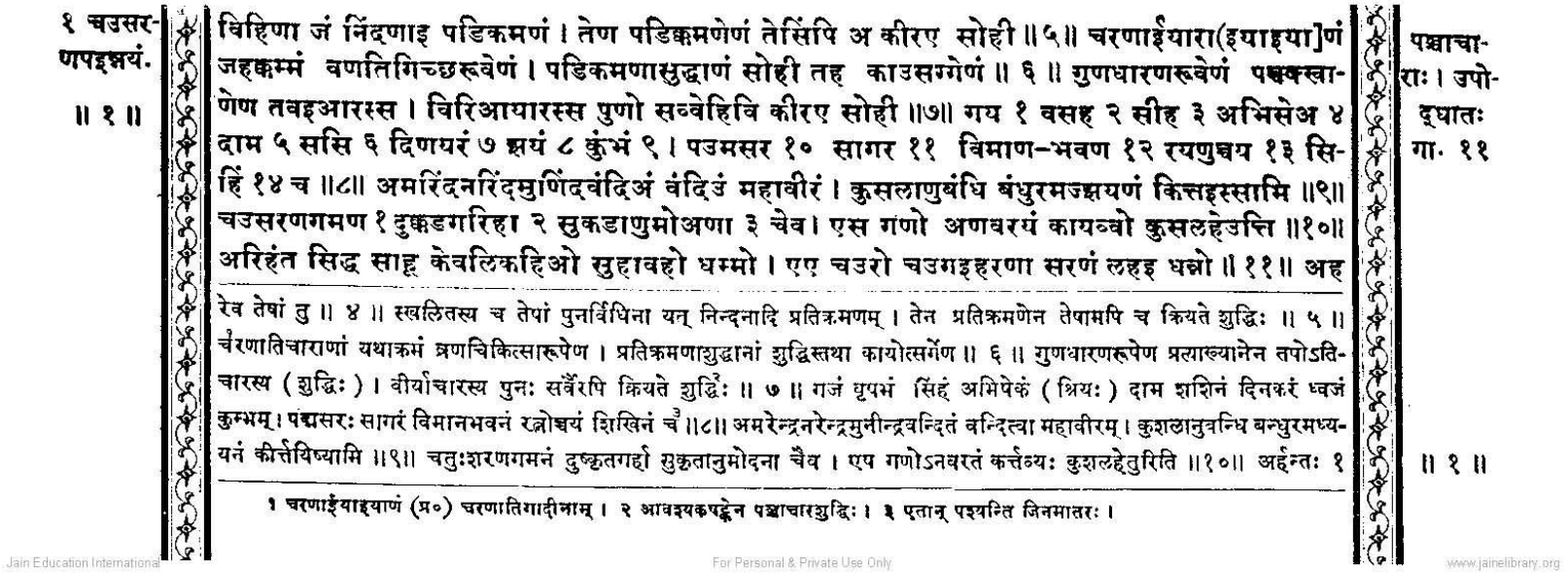
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ षड् आवश्यकस्य व्याख्या लिख्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२४],प्रकीर्णकसूत्र-[०१] चतु:शरण मूलं एवं संस्कृतछाया

प्रत सूत्रांक ॥५॥

दीप अनुक्रम [५]



१ चउसर-णपइन्नयं. ॥ १ ॥

विहिणा जं निंदणाइ पडिकमणं । तेण पडिक्कमणेणं तेसिंपि अ कीरए सोही ॥५॥ चरणाईयारा(इयाइया)णं जहक्कम्मं वणतिगिच्छरूवेणं । पडिकमणासुद्धाणं सोही तह काउसग्गेणं ॥ ६ ॥ गुणधारणरूवेणं पच्चक्खाणेण तवइआरस्स । विरिआयारस्स पुणो सव्वेहिवि कीरए सोही ॥७॥ गय १ वसह २ सीह ३ अभिसेअ ४ दाम ५ ससि ६ दिणयरं ७ झयं ८ कुंभं ९ । पउमसर १० सागर ११ विमाण–भवण १२ रयणुच्चय १३ सिहिं १४ च ॥८॥ अमरिंदनरिंदमुणिंदवंदिअं वंदिउं महावीरं । कुसलाणुबंधि बंधुरमज्झयणं कित्तइस्सामि ॥९॥ चउसरणगमण १ दुक्कडगरिहा २ सुकडाणुमोअणा ३ चेव। एस गणो अणवरयं कायव्वो कुसलहेउत्ति ॥१०॥ अरिहंत सिद्ध साहू केवलिकहिओ सुहावहो धम्मो । एए चउरो चउगइहरणा सरणं लहइ धन्नो ॥ ११ ॥ अह

रेव तेषां तु ॥ ४ ॥ स्खलितस्य च तेषां पुनर्विधिना यत् निन्दनादि प्रतिक्रमणम् । तेन प्रतिक्रमणेन तेषामपि च क्रियते शुद्धिः ॥ ५ ॥ चरणातिचाराणां यथाक्रमं व्रणचिकित्सारूपेण । प्रतिक्रमणाशुद्धानां शुद्धिस्तथा कायोत्सर्गेण ॥ ६ ॥ गुणधारणरूपेण प्रत्याख्यानेन तपोऽतिचारस्य (शुद्धिः) । वीर्याचारस्य पुनः सर्वैरपि क्रियते शुद्धिः ॥ ७ ॥ गजं वृषभं सिंहं अभिषेकं (श्रियः) दाम शशिनं दिनकरं ध्वजं कुम्भम् । पद्मसरः सागरं विमानभवनं रत्नोच्चयं शिखिनं च ॥८॥ अमरेन्द्रनरेन्द्रमुनीन्द्रवन्दितं वन्दित्वा महावीरम् । कुशलानुबन्धि बन्धुरमध्ययनं कीर्त्तयिष्यामि ॥९॥ चतुःशरणगमनं दुष्कृतगर्हा सुकृतानुमोदना चैव । एष गणोऽनवरतं कर्त्तव्यः कुशलहेतुरिति ॥१०॥ अर्हन्तः १

१ चरणाईयाइयाणं (प्र०) चरणातिगादीनाम् । २ आवश्यकषट्केन पञ्चाचारशुद्धिः । ३ एतान् पश्यन्ति जिनमातरः ।

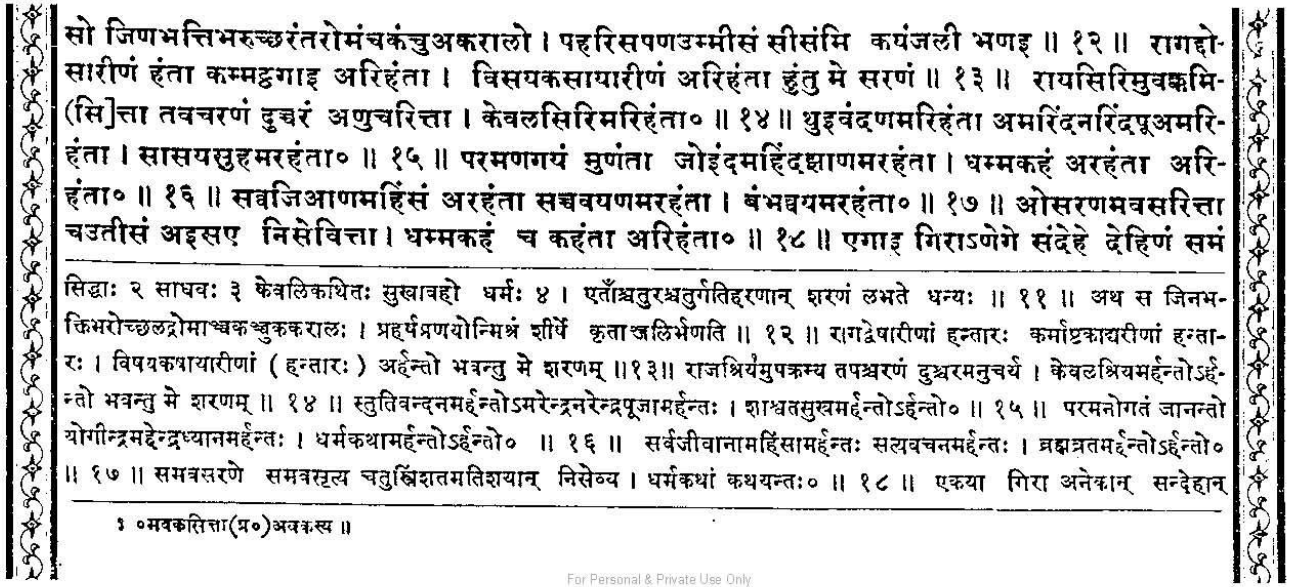
पञ्चाचाराः । उपोद्घातः गा. ११

॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गाथा ९ – चौद-स्वप्नानाम् नामानि दर्शितानि, अत्र चतु:शरणं वक्तव्यता आरब्धा

प्रत सूत्रांक ||१२|| दीप अनुक्रम [१२]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२४],प्रकीर्णकसूत्र-[०१] चतु:शरण मूलं एवं संस्कृतछाया



सो जिणभत्तिभरुच्छरंतरोमंचकंचुअकरालो । पहरिसपणउम्मीसं सीसंमि कयंजली भणइ ॥ १२ ॥ रागद्दो-सारीणं हंता कम्मट्ठगाइ अरिहंता । विसयकसायारीणं अरिहंता हुंतु मे सरणं ॥ १३ ॥ रायसिरिमुवक्कमि-(सि]त्ता तवचरणं दुचरं अणुचरित्ता । केवलसिरिमरिहंता० ॥ १४ ॥ थुइवंदणमरिहंता अमरिंदनरिंदपूअमरि-हंता । सासयसुहमरहंता० ॥ १५ ॥ परमणगयं मुणंता जोइंदमहिंदझाणमरहंता । धम्मकहं अरहंता अरि-हंता० ॥ १६ ॥ सव्वजिआणमहिंसं अरहंता सच्चवयणमरहंता । बंभव्वयमरहंता० ॥ १७ ॥ ओसरणमवसरित्ता चउतीसं अइसए निसेवित्ता । धम्मकहं च कहंता अरिहंता० ॥ १८ ॥ एगाइ गिराऽणेगे संदेहे देहिणं समं

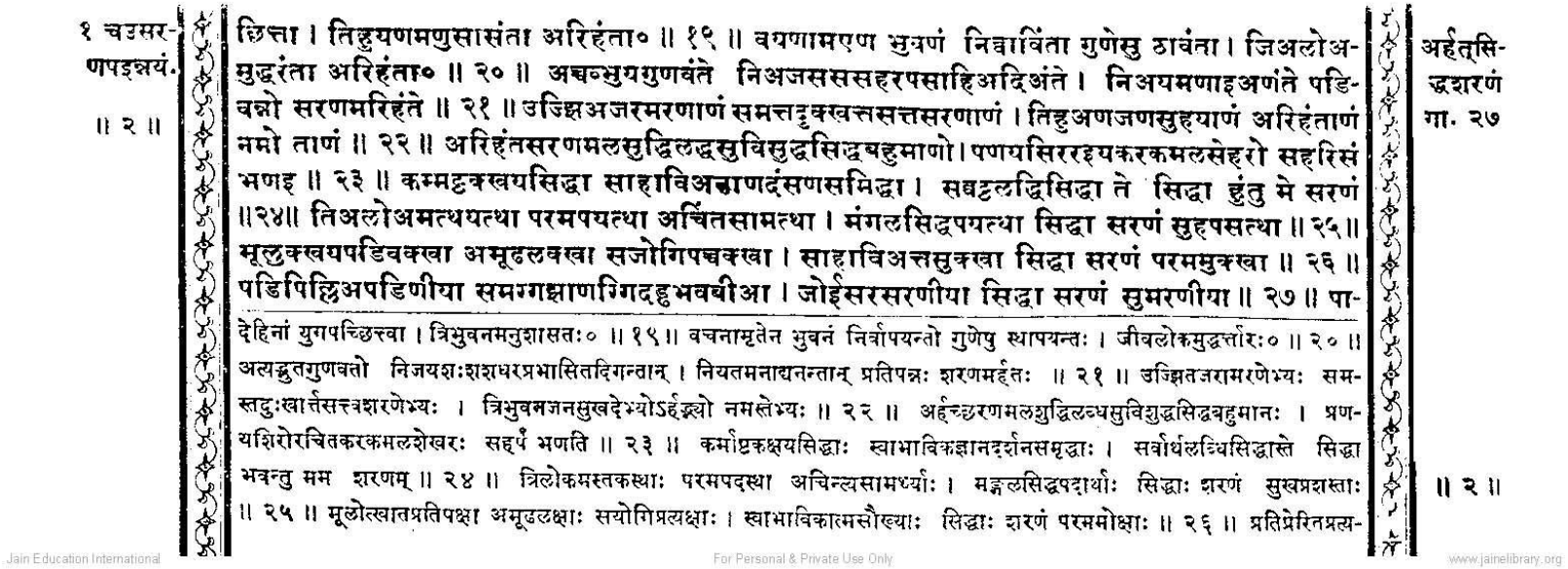
सिद्धाः २ साधवः ३ केवलिकथितः सुखावहो धर्मः ४ । एताँश्चतुरश्चतुर्गतिहरणान् शरणं लभते धन्यः ॥ ११ ॥ अथ स जिनभ-क्तिभरोच्छलद्रोमाञ्चकञ्चुकरालः । प्रहर्षप्रणयोन्मिश्रं शीर्षे कृताञ्जलिर्भणति ॥ १२ ॥ रागद्वेषारीणां हन्तारः कर्माष्टकारयरीणां हन्ता-रः । विषयकषायारीणां (हन्तारः) अर्हन्तो भवन्तु मे शरणम् ॥१३॥ राजश्रियंमुपक्रम्य तपश्चरणं दुश्चरमनुचर्य । केवलश्रियमर्हन्तोऽर्ह-न्तो भवन्तु मे शरणम् ॥ १४ ॥ स्तुतिवन्दनमर्हन्तोऽमरेन्द्रनरेन्द्रपूजामर्हन्तः । शाश्वतसुखमर्हन्तोऽर्हन्तो० ॥ १५ ॥ परमनोगतं जानन्तो योगीन्द्रमहेन्द्रध्यानमर्हन्तः । धर्मकथामर्हन्तोऽर्हन्तो० ॥ १६ ॥ सर्वजीवानामहिंसामर्हन्तः सत्यवचनमर्हन्तः । ब्रह्मव्रतमर्हन्तोऽर्हन्तो० ॥ १७ ॥ समवसरणे समवसृत्य चतुस्त्रिंशतमतिशयान् निसेव्य । धर्मकथां कथयन्तः० ॥ १८ ॥ एकया गिरा अनेकान् सन्देहान्

१ ०मवकसित्ता(प्र०)अवकस्य ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अरहंत, अरिहंत, अरुहंत शब्दानाम् व्याख्या

प्रत सूत्रांक ||१९|| दीप अनुक्रम [१९]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२४],प्रकीर्णकसूत्र-[०१] चतु:शरण मूलं एवं संस्कृतछाया



१ चउसर-णपइन्नयं.

॥ २ ॥

छित्ता । तिहुयणमणुसासंता अरिहंता० ॥ १९ ॥ वयणामएण भुवणं निव्वाविंता गुणेसु ठावंता । जिअलोअ-मुद्धरंता अरिहंता० ॥ २० ॥ अचब्भुयगुणवंते निअजससंसहरपसाहिअदिअंते । निअयमणाइअणंते पडि-वन्नो सरणमरिहंते ॥ २१ ॥ उज्झिअजरमरणाणं समत्तदुक्खत्तसत्तसरणाणं । तिहुअणजणसुहयाणं अरिहंताणं नमो ताणं ॥ २२ ॥ अरिहंतसरणमलसुद्धिलद्धसुविसुद्धसिद्धबहुमाणो । पणयसिररइयकरकमलसेहरो सहरिसं भणइ ॥ २३ ॥ कम्मट्ठक्खयसिद्धा साहाविअनाणदंसणसमिद्धा । सव्वट्ठलद्धिसिद्धा ते सिद्धा हुंतु मे सरणं ॥२४॥ तिअलोअमत्थयत्था परमपयत्था अचिंतसामत्था । मंगलसिद्धपयत्था सिद्धा सरणं सुहपसत्था ॥ २५ ॥ मूलुक्खयपडिवक्खा अमूढलक्खा सजोगिपच्चक्खा । साहाविअत्तसुक्खा सिद्धा सरणं परममुक्खा ॥ २६ ॥ पडिपिल्लिअपडिणीया समग्गनाणग्गिदड्ढभवबीआ । जोईसरसरणीया सिद्धा सरणं सुमरणीया ॥ २७ ॥ पा-

देहिनां युगपच्छित्त्वा । त्रिभुवनमनुशासतः० ॥ १९ ॥ वचनामृतेन भुवनं निर्वापयन्तो गुणेषु स्थापयन्तः । जीवलोकमुद्धर्त्तारः० ॥ २० ॥ अत्यद्भुतगुणवतो निजयशःशशधरप्रभासितदिगन्तान् । नियतमनाद्यनन्तान् प्रतिपन्नः शरणमर्हतः ॥ २१ ॥ उज्झितजरामरणेभ्यः सम-स्तदुःखार्त्तसत्त्वशरणेभ्यः । त्रिभुवनजनसुखदेभ्योऽर्हद्भ्यो नमस्तेभ्यः ॥ २२ ॥ अर्हच्छरणमलशुद्धिलब्धसुविशुद्धसिद्धबहुमानः । प्रण-यशिरोरचितकरकमलशेखरः सहर्षं भणति ॥ २३ ॥ कर्माष्टकक्षयसिद्धाः स्वाभाविकज्ञानदर्शनसमृद्धाः । सर्वार्थलब्धिसिद्धास्ते सिद्धा भवन्तु मम शरणम् ॥ २४ ॥ त्रिलोकमस्तकस्थाः परमपदस्था अचिन्त्यसामर्थ्याः । मङ्गलसिद्धपदार्थाः सिद्धाः शरणं सुखप्रशस्ताः ॥ २५ ॥ मूलोत्खातप्रतिपक्षा अमूढलक्षाः सयोगिप्रत्यक्षाः । स्वाभाविकात्मसौख्याः सिद्धाः शरणं परममोक्षाः ॥ २६ ॥ प्रतिप्रेरितप्रत्य-

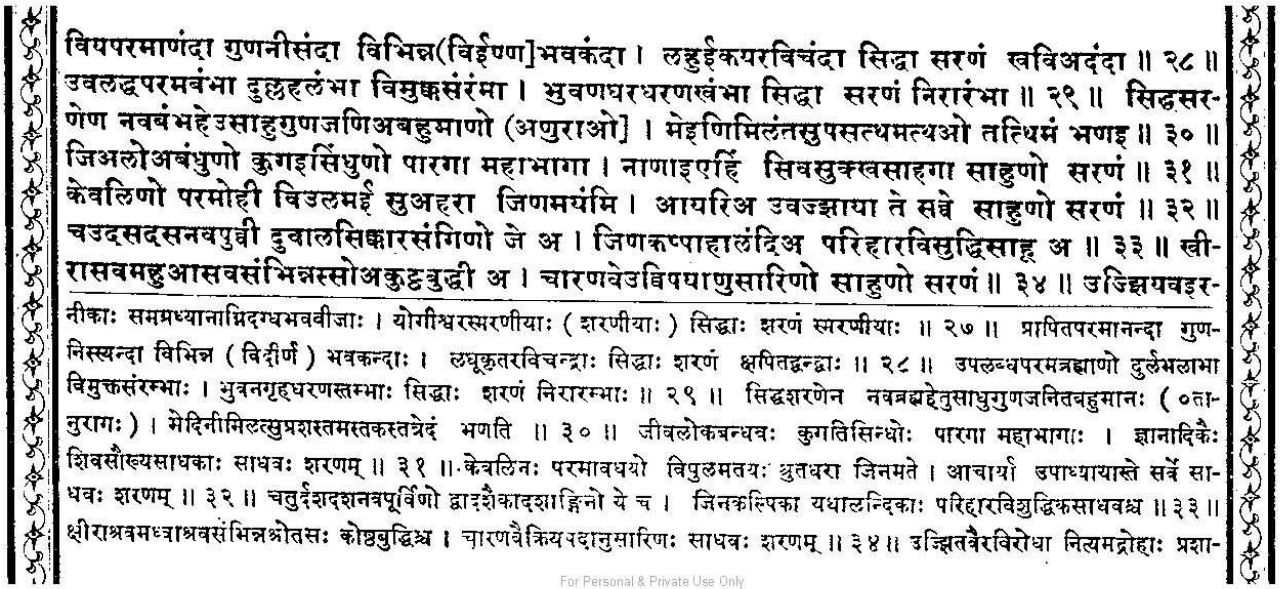
अर्हत्सिद्धशरणं गा. २७

॥ २ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	सिद्ध् शब्दस्य व्याख्या

प्रत सूत्रांक ॥२८॥ दीप अनुक्रम [२८]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२४],प्रकीर्णकसूत्र-[०१] चतु:शरण मूलं एवं संस्कृतछाया



विपपरमाणंदा गुणनीसंदा विभिन्न(विईण्ण]भवकंदा। लहुईकयरविचंदा सिद्धा सरणं खविअदंदा ॥ २८ ॥
उवलद्धपरमबंभा दुल्लहलंभा विमुक्कसंरंभा। भुवणघरधरणखंभा सिद्धा सरणं निरारंभा ॥ २९ ॥ सिद्धसर-
णेण नवबंभहेउसाहुगुणजणिअबहुमाणो (अणुराओ] । मेइणिमिलंतसुपसत्थमत्थओ तत्थिमं भणइ ॥ ३० ॥
जिअलोअबंधुणो कुगइसिंधुणो पारगा महाभागा। नाणाइएहिं सिवसुक्खसाहगा साहुणो सरणं ॥ ३१ ॥
केवलिणो परमोही विउलमई सुअहरा जिणमयंमि। आयरिअ उवज्झाया ते सव्वे साहुणो सरणं ॥ ३२ ॥
चउदसदसनवपुव्वी दुवालसिक्कारसंगिणो जे अ। जिणकप्पाहालंदिअ परिहारविसुद्धिसाहू अ ॥ ३३ ॥ खी-
रासवमहुआसवसंभिन्नस्सोअकुट्ठबुद्धी अ। चारणवेउविपयाणुसारिणो साहुणो सरणं ॥ ३४ ॥ उज्झियवइर-

नीकाः समग्रध्यानाग्निदग्धभववीजाः। योगीश्वरस्मरणीयाः (शरणीयाः) सिद्धाः शरणं स्मरणीयाः ॥ २७ ॥ प्रापितपरमानन्दा गुण-
निस्यन्दा विभिन्न (विदीर्ण) भवकन्दाः। लघूकृतरविचन्द्राः सिद्धाः शरणं क्षपितद्वन्द्वाः ॥ २८ ॥ उपलब्धपरमब्रह्माणो दुर्लभलाभा
विमुक्तसंरम्भाः। भुवनगृहधरणस्तम्भाः सिद्धाः शरणं निरारम्भाः ॥ २९ ॥ सिद्धशरणेन नवब्रह्महेतुसाधुगुणजनितबहुमानः (०ता-
नुरागः)। मेदिनीमिलत्सुप्रशस्तमस्तकस्तत्रेदं भणति ॥ ३० ॥ जीवलोकबन्धवः कुगतिसिन्धोः पारगा महाभागाः। ज्ञानादिकैः
शिवसौख्यसाधकाः साधवः शरणम् ॥ ३१ ॥ केवलिनः परमावधयो विपुलमतयः श्रुतधरा जिनमते। आचार्या उपाध्यायास्ते सर्वे सा-
धवः शरणम् ॥ ३२ ॥ चतुर्दशदशनवपूर्विणो द्वादशैकादशाङ्गिनो ये च। जिनकल्पिका यथालन्दिकाः परिहारविशुद्धिकसाधवश्च ॥ ३३ ॥
क्षीराश्रवमध्वाश्रवसंभिन्नश्रोतसः कोष्ठबुद्धिश्च। चारणवैक्रियपदानुसारिणः साधवः शरणम् ॥ ३४ ॥ उज्झितवैरविरोधा नित्यमद्रोहाः प्रशा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	साधु एवं केवलिप्रज्ञप्तधर्म शब्दयो: व्याख्या

प्रत सूत्रांक ||३५||

दीप अनुक्रम [३५]

१ चउसर-णपइण्णयं.

॥ ३ ॥

विरोहा निचमदोहा पसंतमुहसोहा । अभिमयगुणसंदोहा हयमोहा साहुणो सरणं ॥ ३५ ॥ खंडिअसिणेहदामा अकामधामा निकामसुहकामा । सुपुरिसमणाभिरामा आयारामा मुणी सरणं ॥ ३६ ॥ मिल्हिअविसयकसाया उज्झियघरघरणिसंगसुहसाया । अकलिअहरिसविसाया साहू सरणं गयपमाया ॥ ३७ ॥ हिंसादोससुन्ना कयकारुन्ना सयंभुरुप्पन्ना (प्पुण्णा] । अजरामरपहखुन्ना साहू सरणं सुकयपुन्ना ॥ ३८ ॥ कामविडंबणचुक्का कलिमलमुक्का विवि(मु)क्कचोरिक्का । पावरयसुरयरिक्का साहू गुणरयणचचिक्का ॥ ३९ ॥ साहुत्तसुट्ठिया जं आयरिआई तओ य ते साहू । साहुभणिएण गहिया तम्हा ते साहुणो सरणं ॥४०॥ पडिवन्नसाहुसरणो सरणं काउं पुणोवि जिणधम्मं । पहरिसरोमंचपवंचकंचुअंचिअतणू भणइ ॥ ४१ ॥ पवरसुकएहिं पत्तं

साधुशरणं गा. ४१

न्तमुखशोभाः । अभिमतगुणसन्दोहा हतमोहाः साधवः शरणम् ॥ ३५ ॥ खण्डितस्नेहदामानोऽकामधामानो निकामसुखकामाः । सुपुरुषमनोऽभिरामा आत्मारामा मुनयः शरणम् ॥ ३६ ॥ मुक्तविषयकषाया उज्झितगृहगृहिणीसङ्गसुखसाताः । अकलितहर्षविषादाः साधवः शरणं गतप्रमादाः ॥ ३७ ॥ हिंसादिदोषशून्याः कृतकारुण्याः स्वयम्भूरुकप्रज्ञाः (पूर्णाः) । श्रुण्णाजरामरपथाः साधवः शरणं सुकृतपूर्णाः ॥ ३८ ॥ त्यक्तकामविडम्बनाः मुक्तकलिमला विवि(मु)क्तचौर्याः । रिक्तपापरजःसुरताः साधवो गुणरत्नमण्डिताः ॥ ३९ ॥ साधुत्वसुस्थिता यद् आचार्यादयस्तेऽपि ते साधवः । साधुभणनेन गृहीतास्तस्मात्ते साधवः शरणम् ॥ ४० ॥ प्रतिपन्नसाधुशरणः शरणं कर्त्तुं पुनरपि जिनधर्मम् । प्रहर्षरोमाञ्चप्रपञ्चकञ्चुकाञ्चिततनुर्भणति ॥४१॥ प्रवरसुकृतैः प्राप्तं पात्रैरपि परं कैश्चिन्न प्राप्तम् । तं केवलिप्रज्ञप्तं

॥ ३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||४२||

दीप अनुक्रम [४२]

पत्तेहिवि नवरि केहिवि न पत्तं । तं केवलिपन्नत्तं धम्मं सरणं पवन्नोऽहं ॥ ४२ ॥ पत्तेण अपत्तेण य पत्ताणि अ जेण नरसुरसुहाइं । मुक्खसुहं पुण पत्तेण नवरि धम्मो स मे सरणं ॥ ४३ ॥ निद्दलिअकलुसकम्मो कयसुहजम्मो खलीकयअहम्मो । पमुहपरिणामरम्मो सरणं मे होउ जिणधमो ॥ ४४ ॥ कालत्तएवि न मयं जम्मजरमरणवाहिसयसमयं । अमयं व बहुमयं जिणमयं च सरणं पवन्नोऽहं ॥ ४५ ॥ पसमिअकामपमोहं दिट्ठादिट्ठेसु नकलिअविरोहं । सिवसुहफलयममोहं धम्मं सरणं पवन्नोऽहं ॥ ४६ ॥ नरयगइगमणरोहं गुणसंदोहं पवाइनिक्खोहं । निहणिअवम्महजोहं धम्मं सरणं पवन्नोऽहं ॥ ४७ ॥ भासुरसुवन्नसुंदररयणालंकारगारवमहग्घं । निहिमिव दोगच्चहरं धम्मं जिणदेसिअं वंदे ॥ ४८ ॥ चउसरणगमणसंचिअसुचरिअरोमंचअंचियसरीरो । कयदुक्कडगरिहा असुहकम्मक्खयकंखिरो भणइ ॥ ४९ ॥ इहभविअमन्नभविअं मिच्छत्तपवत्तणं

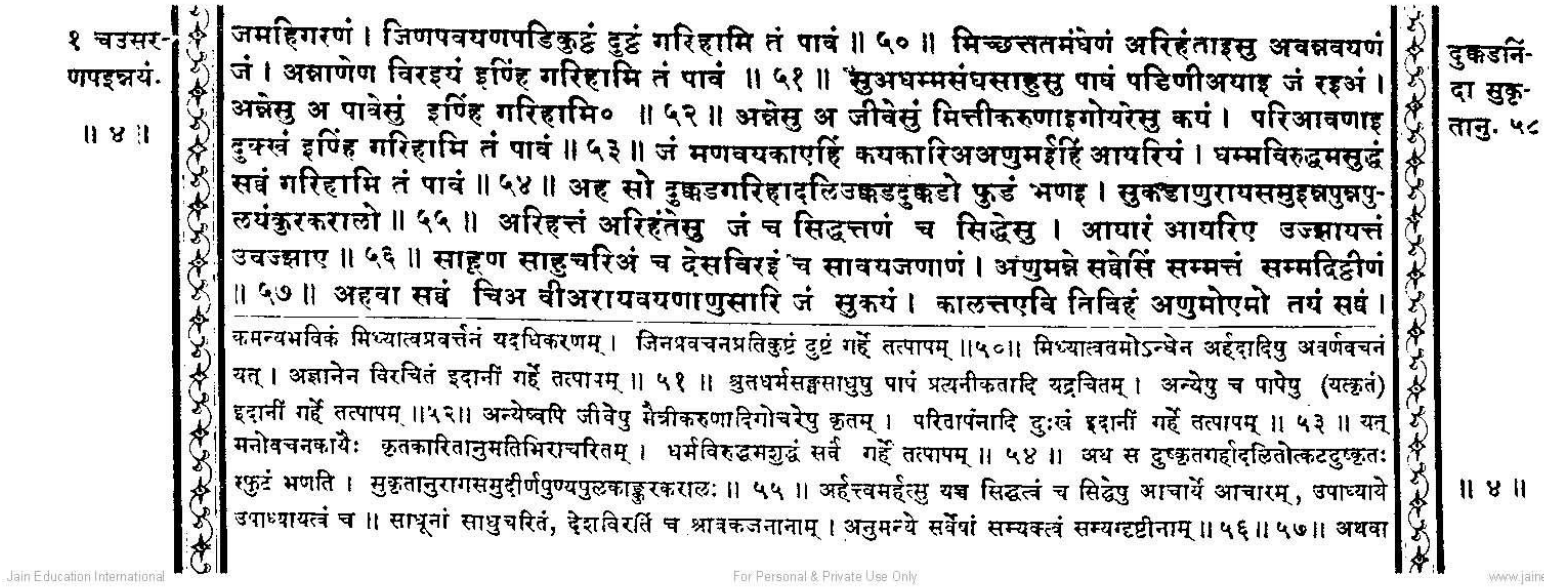
धर्मं शरणं प्रपन्नोऽहम् ॥ ४२ ॥ पात्रेण अपात्रेण च प्राप्तानि येन नरसुरसुखानि । मोक्षसुखं पुनः पात्रेणैव केवलो धर्मः स मे शरणम् ॥ ४३ ॥ निर्दलितकलुषकर्मा कृतशुभजन्मा खलीकृताधर्मः । प्रमुखपरिणामरम्यः शरणं मे भवतु जिनधर्मः ॥ ४४ ॥ कालत्रयेऽपि न मृतं जन्मजरामरणव्याधिशतशमकम् । अमृतमिव बहुमतं जिनमतं च शरणं प्रपन्नोऽहम् ॥ ४५ ॥ प्रशमितकामप्रमोहं दृष्टादृष्टयोर्नकलितविरोधम् । शिवसुखफलदममोघं धर्मं शरणं प्रपन्नोऽहम् ॥ ४६ ॥ नरकगतिगमनरोधकं गुणसन्दोहं प्रवादिनिःक्षोभम् । निहतमन्मथयोधं धर्मं शरणं प्रपन्नोऽहम् ॥ ४७ ॥ भास्वरसुवर्णसुन्दररचना(रत्ना)लङ्कारगौरवमहार्घम् । निधिमिव दौर्गत्यहरं धर्मं जिनदेशितं वन्दे ॥ ४८ ॥ चतु:शरणगमनसञ्चितसुचरितरोमाञ्चाञ्चितशरीरः । कृतदुष्कृतगर्होऽशुभकर्मक्षयकाङ्क्षी भणति ॥ ४९ ॥ ऐहभवि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ दुष्कृत् गर्हा आरभ्यते

प्रत सूत्रांक ||५०||

दीप अनुक्रम [५०]



१ चउसर-णपइन्नयं. ॥ ४ ॥

जमहिगरणं । जिणपवयणपडिकुट्ठं दुट्ठं गरिहामि तं पावं ॥ ५० ॥ मिच्छत्ततमंधेणं अरिहंताइसु अवन्नवयणं जं । अन्नाणेण विरइयं इण्हिं गरिहामि तं पावं ॥ ५१ ॥ सुअधम्मसंघसाहुसु पावं पडिणीअयाइ जं रइअं । अन्नेसु अ पावेसुं इण्हिं गरिहामि० ॥ ५२ ॥ अन्नेसु अ जीवेसुं मित्तीकरुणाइगोयरेसु कयं । परिआवणाइ दुक्खं इण्हिं गरिहामि तं पावं ॥ ५३ ॥ जं मणवयकाएहिं कयकारिअअणुमईहिं आयरियं । धम्मविरुद्धमसुद्धं सव्वं गरिहामि तं पावं ॥ ५४ ॥ अह सो दुक्कडगरिहादलिउक्कडदुक्कडो फुडं भणइ । सुकडाणुरायसमुहन्नपुन्नपुलयंकुरकरालो ॥ ५५ ॥ अरिहत्तं अरिहंतेसु जं च सिद्धत्तणं च सिद्धेसु । आयारं आयरिए उज्झायत्तं उवज्झाए ॥ ५६ ॥ साहूण साहुचरिअं च देसविरइं च सावयजणाणं । अणुमन्ने सव्वेसिं सम्मत्तं सम्मदिट्ठीणं ॥ ५७ ॥ अहवा सव्वं चिअ वीअरायवयणाणुसारि जं सुकयं । कालत्तएवि निविहं अणुमोएमो तयं सव्वं ।

दुक्कडनिंदा सुकृतानु. ५८

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कमन्यभविकं मिथ्यात्वप्रवर्त्तनं यदधिकरणम् । जिनप्रवचनप्रतिकुष्टं दुष्टं गर्हे तत्पापम् ॥५०॥ मिथ्यात्ववमोऽन्धेन अर्हदादिषु अवर्णवचनं यत् । अज्ञानेन विरचितं इदानीं गर्हे तत्पापम् ॥ ५१ ॥ श्रुतधर्मसङ्घसाधुषु पापं प्रत्यनीकतादि यद्रचितम् । अन्येषु च पापेषु (यत्कृतं) इदानीं गर्हे तत्पापम् ॥५२॥ अन्येष्वपि जीवेषु मैत्रीकरुणादिगोचरेषु कृतम् । परितापनादि दुःखं इदानीं गर्हे तत्पापम् ॥ ५३ ॥ यत् मनोवचनकायैः कृतकारितानुमतिभिराचरितम् । धर्मविरुद्धमशुद्धं सर्वं गर्हे तत्पापम् ॥ ५४ ॥ अथ स दुष्कृतगर्हादलितोत्कटदुष्कृतः स्फुटं भणति । सुकृतानुरागसमुद्दीर्णपुण्यपुलकाङ्कुरकरालः ॥ ५५ ॥ अर्हत्त्वमर्हत्सु यच्च सिद्धत्वं च सिद्धेषु आचार्ये आचारम्, उपाध्याये उपाध्यायत्वं च ॥ साधूनां साधुचरितं, देशविरतिं च श्रावकजनानाम् । अनुमन्ये सर्वेषां सम्यक्त्वं सम्यग्दृष्टीनाम् ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ अथवा

॥ ४ ॥

अथ सुकृत् अनुमोदना आरभ्यते

सुहपरिणामो निच्चं चउसरणगमाइ आयरं जीवो। कुसलपयडीउ बंधइ बद्धाउ सुहाणुबंधाउ ॥ ५९ ॥ मंदणुभावा बद्धा तिव्वणुभावाउ कुणइ ता चेव। असुहाउ निरणुबंधाउ कुणइ तिव्वाउ मंदाउ ॥ ६० ॥ ता एयं कायव्वं वुहेहि निच्चंपि संकिलेसम्मि। होइ तिकालं सम्मं असंकिलेसंमि सुकयफलं ॥ ६१ ॥ चउरंगो जिणधम्मो न कओ चउरंगसरणमवि न कयं। चउरंगभवुच्छेओ न कओ हा हारिओ जम्मो ॥ ६२ ॥ इअ–जीवपमायमहारिवीरभद्दंतमेअमज्झयणं। झाएसु तिसंझमवंझकारणं निवुइसुहाणं ॥६३॥ चउसरणं समत्तं ॥१॥

सर्वमेव वीतरागवचनानुसारि यत्सुकृतम्। कालत्रयेऽपि त्रिविधं अनुमोदयामि तकत्सर्वम् ॥५८॥ शुभपरिणामो नित्यं चतुःशरणगमनादि आचरन् जीवः। कुशलप्रकृतीर्बध्नाति, बद्धाः (अशुभानुबन्धाः) शुभानुबन्धाः ॥ मन्दानुभावा (शुभाः) बद्धास्तीव्रानुभावास्ता एव करोति। अशुभा निरनुबन्धाः करोति तीव्राश्च मन्दाः ॥ ५९ ॥ ६० ॥ तद् एतत् कर्त्तव्यं बुधैर्नित्यमपि सङ्क्लेशे। भवति त्रिकालं सम्यक् असङ्क्लेशे सुकृतफलम् ॥६१॥ चतुरङ्गो जिनधर्मो न कृतः, चतुरङ्गशरणमपि न कृतम्। चतुरङ्गभवोच्छेदो न कृतो हा! हारितं जन्म ॥६२॥ इति–जीवप्रमादमहाऽरिवीरं भद्रान्तमेतदध्ययनम्। ध्याये त्रिसन्ध्यमवन्ध्यकारणं निर्वृतिसुखानाम् ॥६३॥ इति चतुःशरणप्रकीर्णकम् ॥१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

“आतुरप्रत्याख्यान” मूलं एवं छाया

[मूलं एवं संस्कृतछाया]

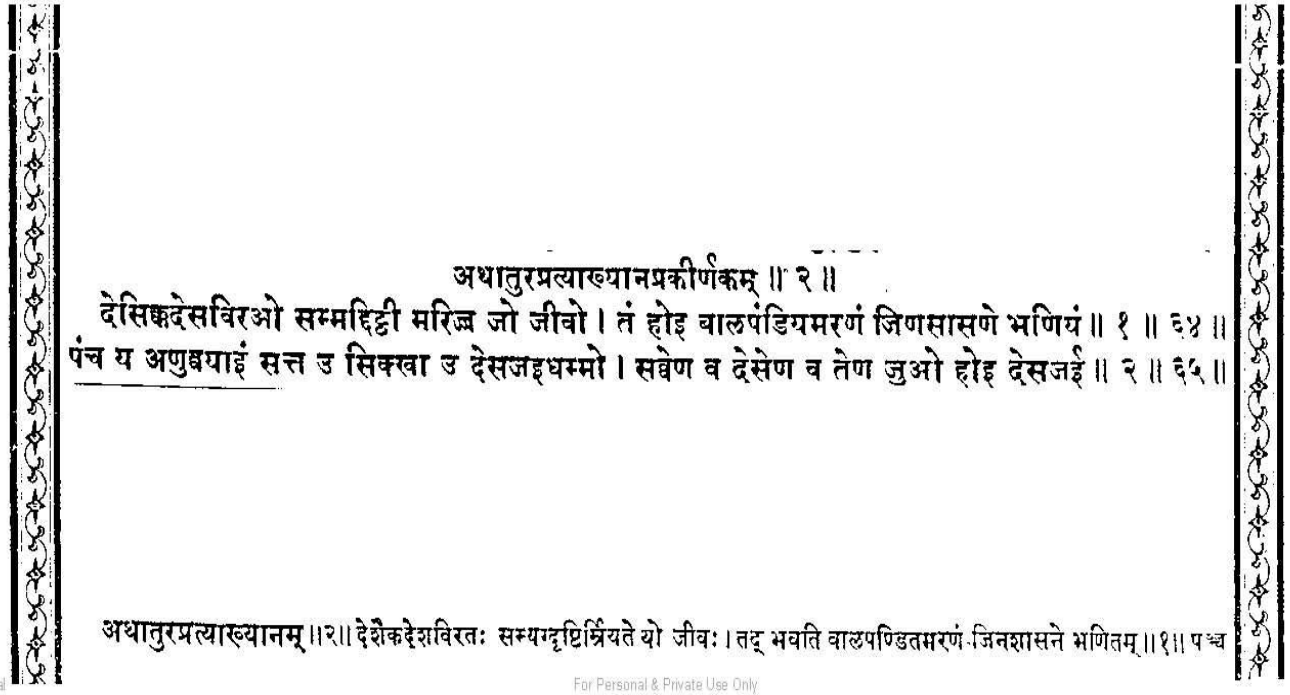
[आद्य संपादकश्री]

पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

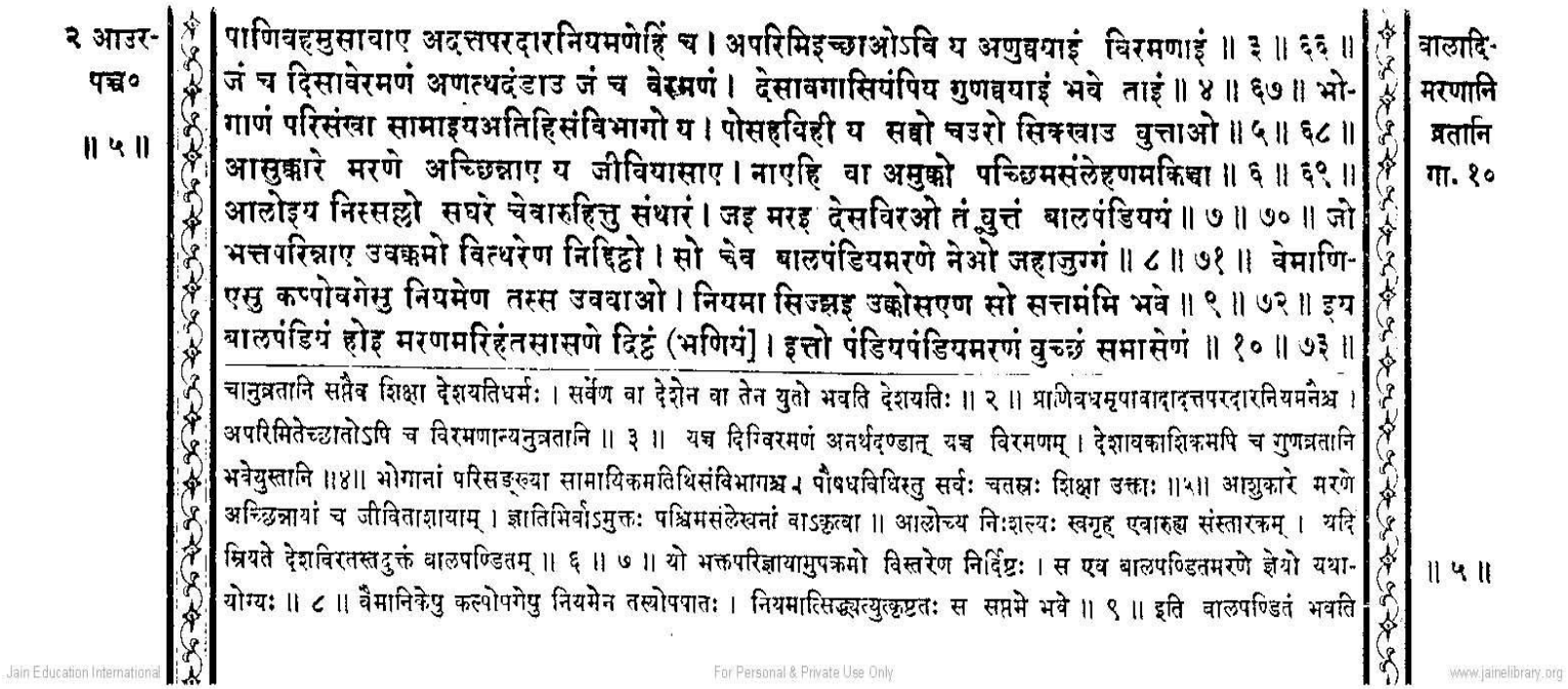
पुन: संकलनकर्ता→ मुनि दीपरत्नसागर (M.Com., M.Ed., Ph.D.,श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५ **‘सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि’ श्रेणि भाग-२६**

गम (२५)	“आतुरप्रत्याख्यान” – प्रकीर्णकसूत्र-२ (मूलं+संस्कृतछाया) ---------- मूलं [१] ----------
प्रत सूत्रांक ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२५], प्रकीर्णकसूत्र-[२] आतुरप्रत्याख्यान मूलं एवं संस्कृतछाया  अथातुरप्रत्याख्यानप्रकीर्णकम् ॥ २ ॥ देसिक्कदेसविरओ सम्मद्दिट्ठी मरिज्ज जो जीवो । तं होइ बालपंडियमरणं जिणसासणे भणियं ॥ १ ॥ ६४ ॥ पंच य अणुव्वयाइं सत्त उ सिक्खा उ देसजइधम्मो । सव्वेण व देसेण व तेण जुओ होइ देसजई ॥ २ ॥ ६५ ॥ अथातुरप्रत्याख्यानम् ॥२॥ देशैकदेशविरतः सम्यग्दृष्टिर्म्रियते यो जीवः । तद् भवति बालपण्डितमरणं जिनशासने भणितम् ॥१॥ पञ्च Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org
	देशयतिधर्मस्य व्याख्या एवं १२ व्रत-नामानि

प्रत सूत्रांक ॥३॥

दीप अनुक्रम [३]



२ आउर-पच्च० ॥ ५ ॥

पाणिवहमुसावाए अदत्तपरदारनियमणेहिं च। अपरिमिइच्छाओऽवि य अणुव्वयाइं विरमणाइं ॥ ३ ॥ ६६ ॥
जं च दिसावेरमणं अणत्थदंडाउ जं च वेरमणं। देसावगासियंपिय गुणव्वयाइं भवे ताइं ॥ ४ ॥ ६७ ॥ भो-
गाणं परिसंखा सामाइयअतिहिसंविभागो य। पोसहविही य सव्वो चउरो सिक्खाउ वुत्ताओ ॥ ५ ॥ ६८ ॥
आसुक्कारे मरणे अच्छिन्नाए य जीवियासाए। नाएहि वा अमुक्को पच्छिमसंलेहणमकिच्चा ॥ ६ ॥ ६९ ॥
आलोइय निस्सल्लो सघरे चेवारुहित्तु संथारं। जइ मरइ देसविरओ तं वुत्तं बालपंडिययं ॥ ७ ॥ ७० ॥ जो
भत्तपरिन्नाए उवक्कमो वित्थरेण निद्दिट्ठो। सो चेव बालपंडियमरणे नेओ जहाजुग्गं ॥ ८ ॥ ७१ ॥ वेमाणि-
एसु कप्पोवगेसु नियमेण तस्स उववाओ। नियमा सिज्झइ उक्कोसएण सो सत्तमंमि भवे ॥ ९ ॥ ७२ ॥ इय
बालपंडियं होइ मरणमरिहंतसासणे दिट्ठं (भणियं)। इत्तो पंडियपंडियमरणं वुच्छं समासेणं ॥ १० ॥ ७३ ॥

चानुव्रतानि सप्तैव शिक्षा देशयतिधर्मः। सर्वेण वा देशेन वा तेन युतो भवति देशयतिः ॥ २ ॥ प्राणिवधमृषावादादत्तपरदारनियमनैश्च।
अपरिमितेच्छातोऽपि च विरमणान्यनुव्रतानि ॥ ३ ॥ यच्च दिग्विरमणं अनर्थदण्डात् यच्च विरमणम्। देशावकाशिकमपि च गुणव्रतानि
भवेयुस्तानि ॥४॥ भोगानां परिसङ्ख्या सामायिकमतिथिसंविभागश्च। पौषधविधिस्तु सर्वः चतस्रः शिक्षा उक्ताः ॥५॥ आशुकारे मरणे
अच्छिन्नायां च जीविताशायाम्। ज्ञातिभिर्वाऽमुक्तः पश्चिमसंलेखनां वाऽकृत्वा ॥ आलोच्य निःशल्यः स्वगृह एवारुह्य संस्तारकम्। यदि
म्रियते देशविरतस्तदुक्तं बालपण्डितम् ॥ ६ ॥ ७ ॥ यो भक्तपरिज्ञायामुपक्रमो विस्तरेण निर्दिष्टः। स एव बालपण्डितमरणे ज्ञेयो यथा-
योग्यः ॥ ८ ॥ वैमानिकेषु कल्पोपगेषु नियमेन तस्योपपातः। नियमात्सिद्ध्यत्युत्कृष्टतः स सप्तमे भवे ॥ ९ ॥ इति बालपण्डितं भवति

बालादि-मरणानि व्रतानि गा. १० ॥ ५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क: ‘बालपंडितमरणं’? तत् निर्दिश्यते

प्रत सूत्रांक [१]

दीप अनुक्रम [११]

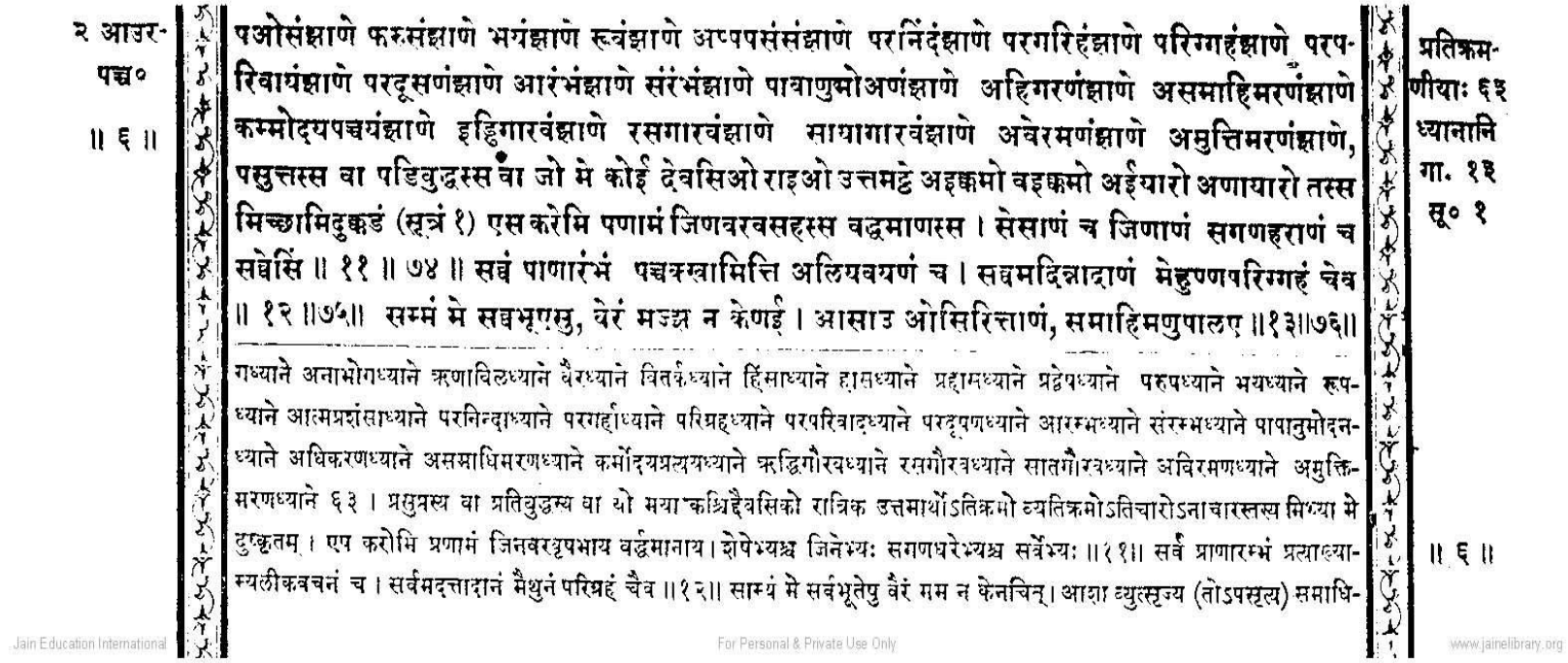
इच्छामि भंते! उत्तमट्ठं पडिक्कमामि अईयं पडिक्कमामि अणागयं पडिक्कमामि पच्चुप्पन्नं पडिक्कमामि कयं पडिक्कमामि कारियं पडिक्कमामि अणुमोइयं पडिक्कमामि मिच्छत्तं पडिक्कमामि असंजमं पडिक्कमामि कसायं पडिक्कमामि पावप्पओगं पडिक्कमामि, मिच्छादंसणपरिणामेसु वा इहलोगेसु वा परलोगेसु वा सचित्तेसु वा अचित्तेसु वा पंचसु इंदियत्थेसु वा, अन्नाणंझाणे अणायारंझाणे कुंदसणंझाणे कोहंझाणे माणंझाणे मायंझाणे लोभंझाणे रागंझाणे दोसंझाणे मोहंझाणे इच्छंझाणे मिच्छंझाणे मुच्छंझाणे संकंझाणे कंखंझाणे गेहिंझाणे आसंझाणे तण्हंझाणे छुहंझाणे पंथंझाणे पंथाणंझाणे निद्दंझाणे नियाणंझाणे नेहंझाणे कामंझाणे कलुसंझाणे कलहंझाणे जुज्झंझाणे निजुज्झंझाणे संगंझाणे संगहंझाणे ववहारंझाणे कयविक्कयंझाणे अणत्थदंडंझाणे आभोगंझाणे अणाभोगंझाणे अणाइल्लंझाणं वेरंझाणे वियकंझाणे हिंसंझाणे हासंझाणे पहासंझाणे

मरणमर्हच्छासने दृष्टम् (भणितं) । इतः पण्डितपण्डितमरणं वक्ष्ये समासेन ॥ १० ॥ इच्छामि भदन्त ! उत्तमार्थं प्रतिक्रमामि अतीतं प्र० अनागतं प्र० प्रत्युत्पन्नं प्र० कृतं प्र० कारितं प्र० अनुमोदितं प्र० मिथ्यात्वं प्र० असंयमं प्र० कषायं प्र० पापप्रयोगं प्र० ११, मिथ्यादर्शनपरिणामेषु वा इहलोकेषु वा परलोकेषु वा सचित्तेषु वा अचित्तेषु वा पञ्चस्विन्द्रियार्थेषु वा ६ (तस्य मिथ्यादुष्कृतम्) अज्ञानध्याने अनाचारध्याने कुदर्शनध्याने क्रोधध्याने मानध्याने मायाध्याने लोभध्याने रागध्याने द्वेषध्याने मोहध्याने इच्छाध्याने मिथ्याध्याने मूर्च्छाध्याने शङ्काध्याने काङ्क्षाध्याने गृद्धिध्याने आशाध्याने तृष्णाध्याने क्षुद्ध्याने पथिध्याने प्रस्थानध्याने निद्राध्याने निदानध्याने स्नेहध्याने कामध्याने कलुषध्याने कलहध्याने युद्धध्याने नियुद्धध्याने संगध्याने संग्रहध्याने व्यवहारध्याने क्रयविक्रयध्याने अनर्थदण्डध्याने आभो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रतिक्रमणानि (कषाय-दुर्ध्यान-मिथ्यादर्शन आदीनाम् प्रायश्चित् रूप प्रतिक्रमणं)

प्रत सूत्रांक [१] दीप अनुक्रम [११]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२५], प्रकीर्णकसूत्र-[२] आतुरप्रत्याख्यान मूलं एवं संस्कृतछाया



२ आउर-पच्च० ॥ ६ ॥

पओसंझाणे फरुसंझाणे भयंझाणे सूवंझाणे अप्पपसंसंझाणे परनिंदंझाणे परगरिहंझाणे परिग्गहंझाणे परपरिवायंझाणे परदूसणंझाणे आरंभंझाणे संरंभंझाणे पावाणुमोअणंझाणे अहिगरणंझाणे असमाहिमरणंझाणे कम्मोदयपच्चयंझाणे इड्ढिगारवंझाणे रसगारवंझाणे सायागारवंझाणे अविरमणंझाणे अमुत्तिमरणंझाणे, पसुत्तस्स वा पडिबुद्धस्स वा जो मे कोई देवसिओ राइओ उत्तमट्ठे अइक्कमो वइक्कमो अईयारो अणायारो तस्स मिच्छामिदुक्कडं (सूत्रं १) एस करेमि पणामं जिणवरवसहस्स वद्धमाणस्स । सेसाणं च जिणाणं सगणहराणं च सव्वेसिं ॥ ११ ॥ ७४ ॥ सव्वं पाणारंभं पच्चक्खामित्ति अलियवयणं च । सव्वमदिन्नादाणं मेहुप्पणपरिग्गहं चेव ॥ १२ ॥७५॥ सम्मं मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झ न केणई । आसाउ ओसिरित्ताणं, समाहिमणुपालए ॥१३॥७६॥

प्रतिक्रमणीयाः ६३ ध्यानानि गा. १३ सू० १

गध्याने अनाभोगध्याने ऋणाविलध्याने वैरध्याने वितर्कध्याने हिंसाध्याने हासध्याने प्रहासध्याने प्रद्वेषध्याने परुषध्याने भयध्याने रूपध्याने आत्मप्रशंसाध्याने परनिन्दाध्याने परगर्हाध्याने परिग्रहध्याने परपरिवादध्याने परदूषणध्याने आरम्भध्याने संरम्भध्याने पापानुमोदनध्याने अधिकरणध्याने असमाधिमरणध्याने कर्मोदयप्रत्ययध्याने ऋद्धिगौरवध्याने रसगौरवध्याने सातगौरवध्याने अविरमणध्याने अमुक्तिमरणध्याने ६३ । प्रसुप्तस्य वा प्रतिबुद्धस्य वा यो मयाऽद्यिदैवसिको रात्रिक उत्तमार्थोऽतिक्रमो व्यतिक्रमोऽतिचारोऽनाचारस्तस्य मिथ्या मे दुष्कृतम् । एष करोमि प्रणामं जिनवरवृषभाय वर्द्धमानाय । शेषेभ्यश्च जिनेभ्यः सगणधरेभ्यश्च सर्वेभ्यः ॥११॥ सर्वं प्राणारम्भं प्रत्याख्यास्यलीकवचनं च । सर्वमदत्तादानं मैथुनं परिग्रहं चैव ॥१२॥ साम्यं मे सर्वभूतेषु वैरं मम न केनचित् । आशा व्युत्सृज्य (तोऽपसृत्य) समाधि-

॥ ६ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	जिन-वन्दन, प्राणारम्भ आदि प्रत्याख्यान एवं विविध-आलोचना

प्रत सूत्रांक ||१४||

दीप अनुक्रम [१५]

सव्वं चाहारविहिं सन्नाओ गारवे कसाए य। सव्वं चेव ममत्तं चएमि सव्वं खमावेमि ॥१४॥७७॥ हुज्जा इमंमि समए उवक्कमो जीवियस्स जइ मज्झ। एयं पच्चक्खाणं विउला आराहणा होउ ॥ १५ ॥ ७८ ॥ सव्वदुक्खपहीणाणं, सिद्धाणं अरहो नमो। सद्दहे जिणपन्नत्तं, पच्चक्खामि य पावगं ॥१६॥७९॥ नमुत्थु धुयपावाणं, सिद्धाणं च महेसिणं। संथारं पडिवज्जामि, जहा केवलिदेसियं ॥ १७ ॥ ८० ॥ जं किंचिवि दुच्चरियं तं सव्वं वोसिरामि तिविहेणं। सामाइयं च तिविहं करेमि सव्वं निरागारं ॥१८॥८१॥ बज्झं अब्भितरं उवहिं, सरीराइ सभोयणं। मणसावयकाएहिं, सव्वभावेण वोसिरे ॥ १९ ॥ ८२ ॥ सव्वं पाणारंभं० ॥ २० ॥ ८३ ॥ सम्मं मे सव्वभूएसु० ॥२१॥८४॥ रागं बंधं पओसं च, हरिसं दीणभावयं। उस्सुगत्तं भयं सोगं, रइं अरइं च वोसिरे ॥ २२ ॥८५॥ ममत्तं परिवज्जामि, निम्ममत्तं उवट्ठिओ। आलंबणं च मे आया, अवसेसं च वोसिरे ॥ २३ ॥ ८६ ॥

मनुपालयामि ॥१३॥ सर्वमाहारविधिं च सञ्ज्ञा गौरवाणि कषायांश्च। सर्वमेव ममत्वं त्यजामि सर्वं क्षमयामि ॥ १४ ॥ भवेदस्मिन् समये उपक्रमो जीवितस्य यदि मम। एतत्प्रत्याख्यानं विपुलाऽऽराधना भवतु ॥१५॥ प्रक्षीणसर्वदुःखेभ्यः सिद्धेभ्योऽर्हद्भ्यो नमः। श्रद्दधे जिनप्रज्ञप्तं प्रत्याख्यामि च पापकम् ॥ १६ ॥ नमोऽस्तु धूतपापेभ्यः सिद्धेभ्यश्च महर्षिभ्यः। संस्तारं प्रतिपद्ये यथा केवलिदेशितम् ॥ १७ ॥ यत् किञ्चिदपि दुश्चरितं तत्सर्वं व्युत्सृजामि त्रिविधेन। सामायिकं च त्रिविधं करोमि सर्वं निराकारम् ॥१८॥ बाह्यमभ्यन्तरमुपधिं शरीरादि सभोजनम्। मनोवाक्कायैः सर्वभावेन व्युत्सृजामि ॥ १९ ॥ सर्वं प्राणारम्भं ॥ २० ॥ साम्यं मे सर्वभूतेषु० ॥२१॥ रागं बन्धं प्रद्वेषं च हर्षं दीनभावताम्। उत्सुकत्वं भयं शोकं रतिमरतिं च व्युत्सृजामि ॥ २२ ॥ ममत्वं परिवर्जयामि निर्ममत्वमुपस्थितः। आलम्बनं च मे

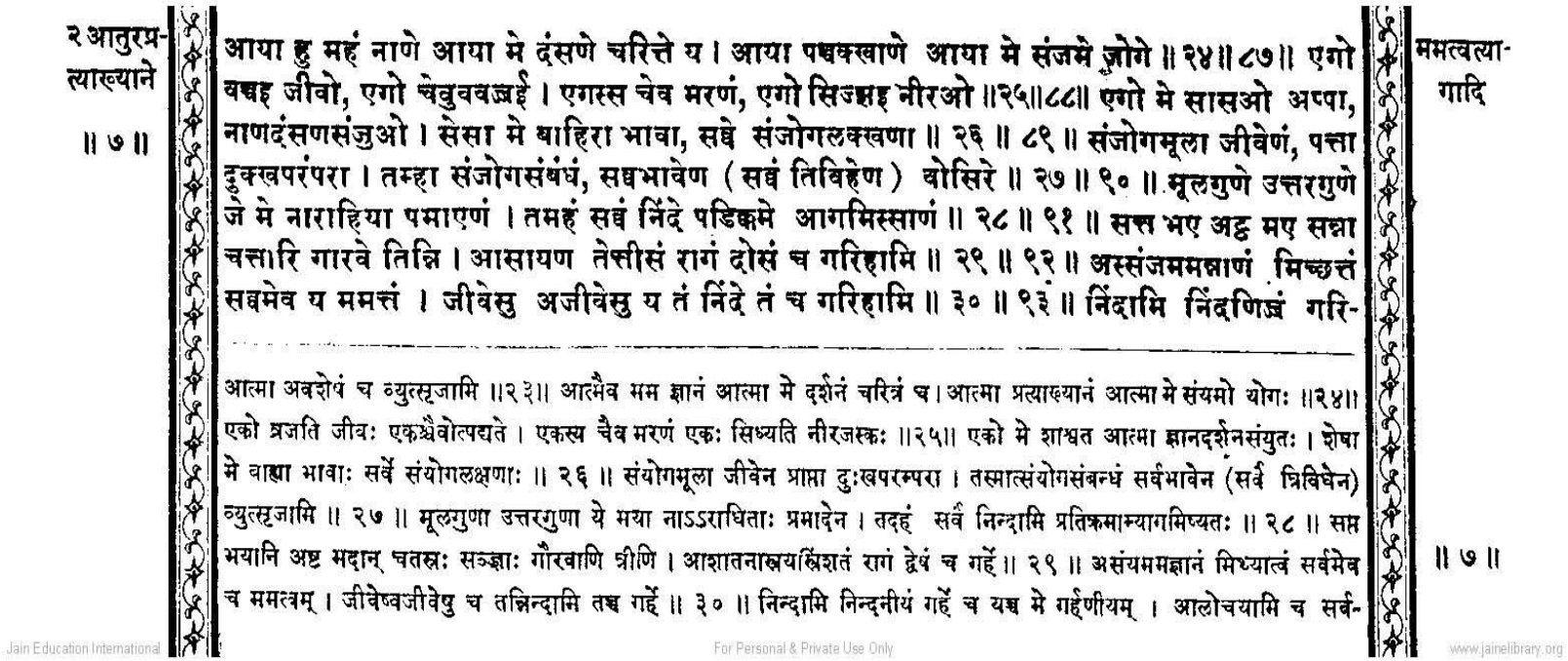
च. स. २

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बाह्याभ्यंतर उपधि, ममत्व, आत्मबाह्य पदार्था: आदि-विविध व्युत्सर्जनं(परित्याग:)

प्रत सूत्रांक ||२४||

दीप अनुक्रम [२५]



२ आतुरप्रत्याख्याने ॥ ७ ॥

आया हु महं नाणे आया मे दंसणे चरित्ते य । आया पच्चक्खाणे आया मे संजमे जोगे ॥ २४ ॥ ८७ ॥ एगो यच्चइ जीवो, एगो चेवुववज्जई । एगस्स चेव मरणं, एगो सिज्झइ नीरओ ॥२५॥८८॥ एगो मे सासओ अप्पा, नाणदंसणसंजुओ । सेसा मे बाहिरा भावा, सव्वे संजोगलक्खणा ॥ २६ ॥ ८९ ॥ संजोगमूला जीवेणं, पत्ता दुक्खपरंपरा । तम्हा संजोगसंबंधं, सव्वभावेण (सव्वं तिविहेण) वोसिरे ॥ २७ ॥ ९० ॥ मूलगुणे उत्तरगुणे जे मे नाराहिया पमाएणं । तमहं सव्वं निंदे पडिक्कमे आगमिस्साणं ॥ २८ ॥ ९१ ॥ सत्त भए अट्ठ मए सन्ना चत्तारि गारवे तिन्नि । आसायण तेत्तीसं रागं दोसं च गरिहामि ॥ २९ ॥ ९२ ॥ असंजममन्नाणं मिच्छत्तं सव्वमेव य ममत्तं । जीवेसु अजीवेसु य तं निंदे तं च गरिहामि ॥ ३० ॥ ९३ ॥ निंदामि निंदणिज्जं गरि-

ममत्वत्यागादि

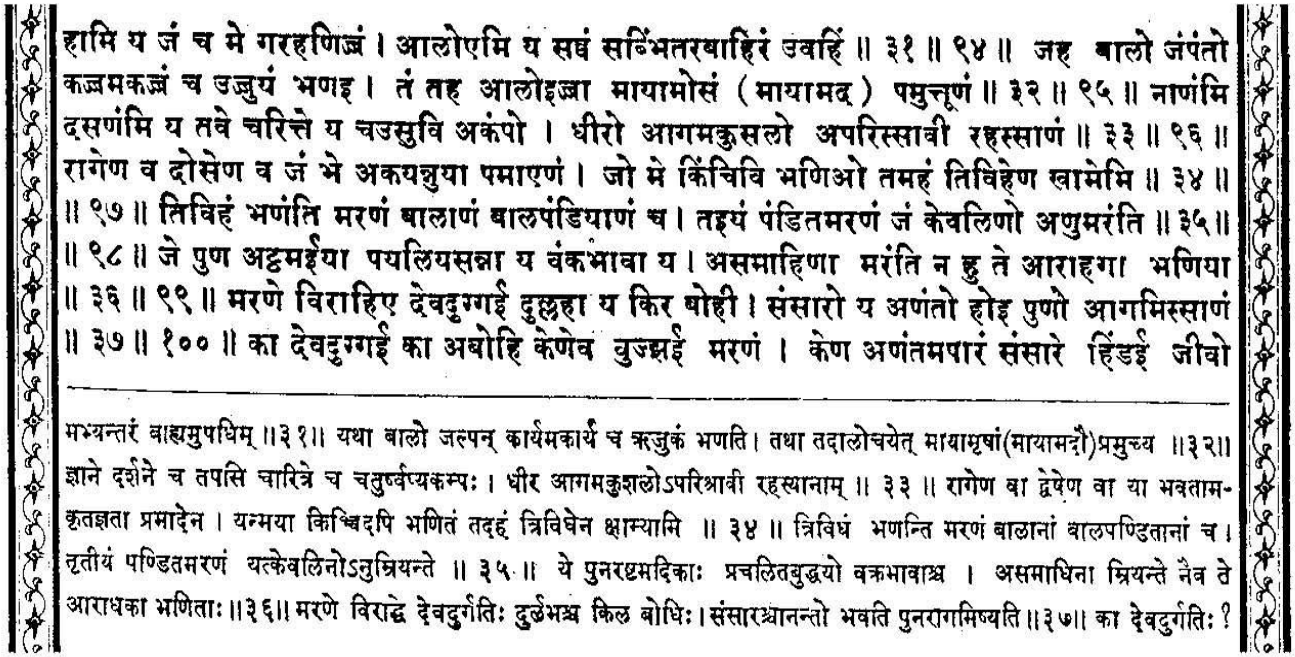
आत्मा अवशेषं च व्युत्सृजामि ॥२३॥ आत्मैव मम ज्ञानं आत्मा मे दर्शनं चरित्रं च। आत्मा प्रत्याख्यानं आत्मा मे संयमो योगः ॥२४॥ एको व्रजति जीवः एकश्चैवोत्पद्यते । एकस्य चैव मरणं एकः सिध्यति नीरजस्कः ॥२५॥ एको मे शाश्वत आत्मा ज्ञानदर्शनसंयुतः । शेषा मे बाह्या भावाः सर्वे संयोगलक्षणाः ॥ २६ ॥ संयोगमूला जीवेन प्राप्ता दुःखपरम्परा । तस्मात्संयोगसंबन्धं सर्वभावेन (सर्वं त्रिविधेन) व्युत्सृजामि ॥ २७ ॥ मूलगुणा उत्तरगुणा ये मया नाऽऽराधिताः प्रमादेन । तदहं सर्वं निन्दामि प्रतिक्रमाम्यागमिष्यतः ॥ २८ ॥ सप्त भयानि अष्ट मदान् चतस्रः सञ्ज्ञाः गौरवाणि त्रीणि । आशातनानामयस्त्रिंशतं रागं द्वेषं च गर्हे ॥ २९ ॥ असंयममज्ञानं मिथ्यात्वं सर्वमेव च ममत्वम् । जीवेष्वजीवेषु च तन्निन्दामि तच्च गर्हे ॥ ३० ॥ निन्दामि निन्दनीयं गर्हे च यच्च मे गर्हणीयम् । आलोचयामि च सर्व-

॥ ७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध वस्तूनां निन्दा-गर्हा आदि

प्रत सूत्रांक ||३१|| दीप अनुक्रम [३२]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२५], प्रकीर्णकसूत्र-[२] आतुरप्रत्याख्यान मूलं एवं संस्कृतछाया



हामि य जं च मे गरहणिज्जं । आलोएमि य सव्वं सब्भिंतरबाहिरं उवहिं ॥ ३१ ॥ ९४ ॥ जह बालो जंपंतो कज्जमकज्जं च उज्जुयं भणइ । तं तह आलोइज्जा मायामोसं (मायामद) पमुत्तूणं ॥ ३२ ॥ ९५ ॥ नाणंमि दंसणंमि य तवे चरित्ते य चउसुवि अकंपो । धीरो आगमकुसलो अपरिस्सावी रहस्साणं ॥ ३३ ॥ ९६ ॥ रागेण व दोसेण व जं भे अकयन्नुया पमाएणं । जो मे किंचिवि भणिओ तमहं तिविहेण खामेमि ॥ ३४ ॥ ॥ ९७ ॥ तिविहं भणंति मरणं बालाणं बालपंडियाणं च । तइयं पंडितमरणं जं केवलिणो अणुमरंति ॥ ३५ ॥ ॥ ९८ ॥ जे पुण अट्ठमईया पयलियसन्ना य वंकभावा य । असमाहिणा मरंति न हु ते आराहगा भणिया ॥ ३६ ॥ ९९ ॥ मरणे विराहिए देवदुग्गई दुल्लहा य किर बोही । संसारो य अणंतो होइ पुणो आगमिस्साणं ॥ ३७ ॥ १०० ॥ का देवदुग्गई का अबोहि केणेव वुज्झई मरणं । केण अणंतमपारं संसारे हिंडई जीवो

मभ्यन्तरं बाह्यमुपधिम् ॥३१॥ यथा बालो जल्पन् कार्यमकार्यं च ऋजुकं भणति। तथा तदालोचयेत् मायामृषां(मायामदौ)प्रमुच्य ॥३२॥ ज्ञाने दर्शने च तपसि चारित्रे च चतुर्ष्वप्यकम्पः । धीर आगमकुशलोऽपरिश्रावी रहस्यानाम् ॥ ३३ ॥ रागेण वा द्वेषेण वा या भवताम-कृतज्ञता प्रमादेन । यन्मया किञ्चिदपि भणितं तदहं त्रिविधेन क्षाम्यामि ॥ ३४ ॥ त्रिविधं भणन्ति मरणं बालानां बालपण्डितानां च । तृतीयं पण्डितमरणं यत्केवलिनोऽनुम्रियन्ते ॥ ३५ ॥ ये पुनरष्टमदिकाः प्रचलितबुद्धयो वक्रभावाश्च । असमाधिना म्रियन्ते नैव ते आराधका भणिताः ॥३६॥ मरणे विराद्धे देवदुर्गतिः दुर्लभश्च किल बोधिः । संसारश्चानन्तो भवति पुनरागमिष्यति ॥३७॥ का देवदुर्गतिः ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अनंत-अपार संसारे हिण्डनस्य कारणानि

॥ ३८ ॥ १०१ ॥ कंदप्पदेवकिब्बिसअभिओगा आसुरी य संमोहा। ता देवदुग्गईओ मरणंमि विराहिए हुंति ॥ ३९ ॥ १०२ ॥ मिच्छद्दंसणरत्ता सनियाणा कण्हलेसमोगाढा । इय जे मरंति जीवा तेसिं दुलहा भवे बोही ॥ ४० ॥ १०३ ॥ सम्मद्दंसणरत्ता अनियाणा सुक्कलेसमोगाढा । इय जे मरंति जीवा तेसिं सुलहा भवे बोही ॥ ४१ ॥ १०४ ॥ जे पुण गुरुपडिणीया बहुमोहा ससबला कुसीला य । असमाहिणा मरंति ते हुंति अणंतसंसारी ॥ ४२ ॥ १०५ ॥ जिणवयणे अणुरत्ता गुरुवयणं जे करंति भावेणं । असबल असंकिलिट्ठा ते हुंति परित्तसंसारी ॥ ४३ ॥ १०६ ॥ बालमरणाणि बहुसो बहुयाणि अकामगाणि मरणाणि । मरिहंति ते वराया जे जिणवयणं न याणंति ॥ ४४ ॥ १०७ ॥ सत्थग्गहणं विसभक्खणं च जलणं च जलपवेसो य ।

कोऽबोधिः? केनैवोह्यते मरणम् ? । केनानन्तमपारं संसारं हिण्डति जीवः ? ॥ ३८ ॥ कन्दर्पदेवकिल्बिषाभियोग्यासुरीसंमोहाः । ताः देवदुर्गतयो मरणे विराद्धे भवन्ति ॥ ३९ ॥ मिथ्यादर्शनरक्ताः सनिदानाः कृष्णलेश्यामवगाढाः । इह ये म्रियन्ते जीवास्तेषां दुर्लभो भवेद्बोधिः ॥ ४० ॥ सम्यग्दर्शनरक्ता अनिदानाः शुक्ललेश्यामवगाढाः । इह ये म्रियन्ते जीवास्तेषां सुलभो भवेद्बोधिः ॥ ४१ ॥ ये पुनर्गुरुप्रत्यनीका बहुमोहाः सशबलाः कुशीलाश्च । असमाधिना म्रियन्ते ते भवन्त्यनन्तसंसारिणः ॥४२॥ जिनवचनेऽनुरक्ता गुरुवचनं ये कुर्वन्ति भावेन । अशबला असङ्क्लिष्टास्ते भवन्ति परीत्तसंसारिणः ॥ ४३ ॥ बालमरणानि बहुशो बहुकानि च अकामानि मरणानि । म्रियन्ते ते वराका ये जिनवचनं न जानन्ति ॥ ४४ ॥ शस्त्रग्रहणं विषभक्षणं च ज्वलनञ्च जलप्रवेशश्च । अनाचारभाण्डसेवी(वा)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||४५|| दीप अनुक्रम [४६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२५], प्रकीर्णकसूत्र-[२] आतुरप्रत्याख्यान मूलं एवं संस्कृतछाया

अणयारभंडसेवी जम्मणमरणाणुबंधीणि ॥ ४५ ॥ १०८ ॥ उड्ढमहे तिरियंमिवि मयाणि जीवेण बालमरणाणि । दंसणनाणसहगओ पंडिअमरणं अणुमरिस्सं ॥४६॥१०९॥ उव्वेयणयं जाई मरणं नरएसु वेयणाओ य । एयाणि संभरंतो पंडियमरणं मरसु इण्हिं ॥ ४७ ॥ ११० ॥ जइ उप्पज्जइ दुक्खं तो दट्ठव्वो सहावओ नवरं । किं किं मए न पत्तं संसारे संसरंतेणं ? ॥ ४८ ॥ १११ ॥ संसारचक्कवालंमि सव्वेऽविय पुग्गला मए बहुसो । आहारिया य परिणामिया य नाहं गओ तित्तिं ॥ ४९ ॥ ११२ ॥ तणकट्ठेहि व अग्गी लवणजलो वा नईसहस्सेहिं । न इमो जीवो सक्को तिप्पेउं कामभोगेहिं ॥ ५० ॥ ११३ ॥ आहारनिमित्तेणं मच्छा गच्छंति सत्तमिं पुढविं । सचित्तो आहारो न खमो मणसावि पत्थेउं ॥ ५१ ॥ ११४ ॥ पुव्विं कयपरिकम्मो अनियाणो ऊहिऊण मइबुद्धी । पच्छा मलियकसाओ सज्जो मरणं पडिच्छामि ॥ ५२ ॥ ११५ ॥ अकंडेऽचिर-

(एतानि) जन्ममरणानुबन्धीनि ॥ ४५ ॥ ऊर्ध्वमधस्तिरश्चयपि मृतानि जीवेन बालमरणानि । दर्शनज्ञानसहगतः पण्डितमरणमनुमरिष्ये ॥ ४६ ॥ उद्वेजनकं जातिर्मरणं नरकेषु वेदनाश्च । एतानि स्मरन् पण्डितमरणं म्रियस्वेदानीम् ॥ ४७ ॥ यदि उत्पद्यते दुःखं तर्हि द्रष्टव्यः स्वभावः परम् । किं किं मया न प्राप्तं संसारे संसरता ॥ ४८ ॥ संसारचक्रवाले सर्वेऽपि च पुद्गला मया बहुशः । आहारिताश्च परिणामिताश्च न चाहं गतस्तृप्तिम् ॥ ४९ ॥ तृणकाष्ठैरग्निरिव नदीसहस्रैर्लवणोद इव । नायं जीवः कामभोगैस्तर्पितुं शक्यः ॥ ५० ॥ आहारनिमित्तेन मत्स्या गच्छन्ति सप्तमीं पृथिवीम् । सचित्त आहारो न क्षमो मनसाऽपि प्रार्थयितुम् ॥ ५१ ॥ पूर्वं कृतपरिकर्मा अनिदान ऊहित्वा मतिबुद्धी । पश्चात् मर्दितकषायः सद्यो मरणं प्रतीच्छामि ॥ ५२ ॥ अकाण्डेऽचिरभावितास्ते पुरुषाः कृतपूर्वकर्मपरिभावनया पश्चात्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ पंडितमरणं वर्ण्यते

भाविय ते पुरिसा मरणदेसकालम्मि । पुव्वकयकम्मपरिभावणाएँ पच्छा परिवडंति ॥ ५३ ॥ ११६ ॥ तम्हा चंदगविज्झं सकारणं उज्जुएण पुरिसेणं । जीवो अविरहियगुणो कायव्वो मुक्खमग्गंमि ॥ ५४ ॥ ११७ ॥ बाहिरजोगविरहिओ अब्भिंतरझाणजोगमल्लीणो । जह तंमि देसकाले अमूढसन्नो चयइ देहं ॥ ५५ ॥ ११८ ॥ हंतूण रागदोसं छित्तूण य अट्ठकम्मसंघायं । जम्मणमरणऽरहट्टं भित्तूण भवा विमुच्चिहिसि ॥ ५६ ॥ ११९ ॥ एयं सव्वुवएसं जिणदिट्ठं सद्दहामि तिविहेणं । तसथावरखेमकरं पारं निव्वाणमग्गस्स ॥ ५७ ॥ १२० ॥ न हु तम्मि देसकाले सक्को बारसविहो सुयक्खंधो । सव्वो अणुचिंतेउं धणियंपि समत्थचित्तेणं ॥ ५८ ॥ १२१ ॥ एगंमिवि जम्मि पए संवेगं वीयरायमग्गंमि । गच्छइ नरो अभिक्खं तं मरणं तेण मरियव्वं ॥ ५९ ॥ १२२ ॥ ता एगंपि सिलोगं जो पुरिसो मरणदेसकालम्मि । आराहणोवउत्तो चिंतंतो राहगो होइ ॥ ६० ॥ १२३ ॥

मरणदेशकाले परिपतन्ति ॥ ५३ ॥ तस्माच्चन्द्रकवेध्यं सकारणं (प्रति) उद्युक्तेन (ऋजुकेन)पुरुषेण जीवोऽविराधितगुणः कर्त्तव्यो मोक्षमार्गे ॥ ५४ ॥ बाह्ययोगविरहितोऽभ्यन्तरध्यानयोगमाश्रितः (कर्त्तव्यः) । यथा तस्मिन्देशकालेऽमूढसञ्ज्ञस्त्यजति देहम् ॥ ५५ ॥ हत्वा रागद्वेषौ छित्वा चाष्टकर्मसङ्घातम् । जन्ममरणारहट्टं भित्त्वा भवाद् विमोक्ष्यसे ॥ ५६ ॥ एतं सर्वोपदेशं जिनदृष्टं श्रद्दधे त्रिविधेन । त्रसस्थावरक्षेमकरं पारं निर्वाणमार्गस्य ॥ ५७ ॥ नैव तस्मिन् देशकाले शक्यो द्वादशविधः श्रुतस्कन्धः । सर्वोऽनुचिन्तयितुं बाढमपि समर्थचित्तेन ॥ ५८ ॥ एकस्मिन्नपि यस्मिन् पदे संवेगं वीतरागमार्गे । गच्छति नरोऽभीक्ष्णं तन्मरणं तेन मर्त्तव्यम् ॥ ५९ ॥ तदेकमपि श्लोकं यः पुरुषो

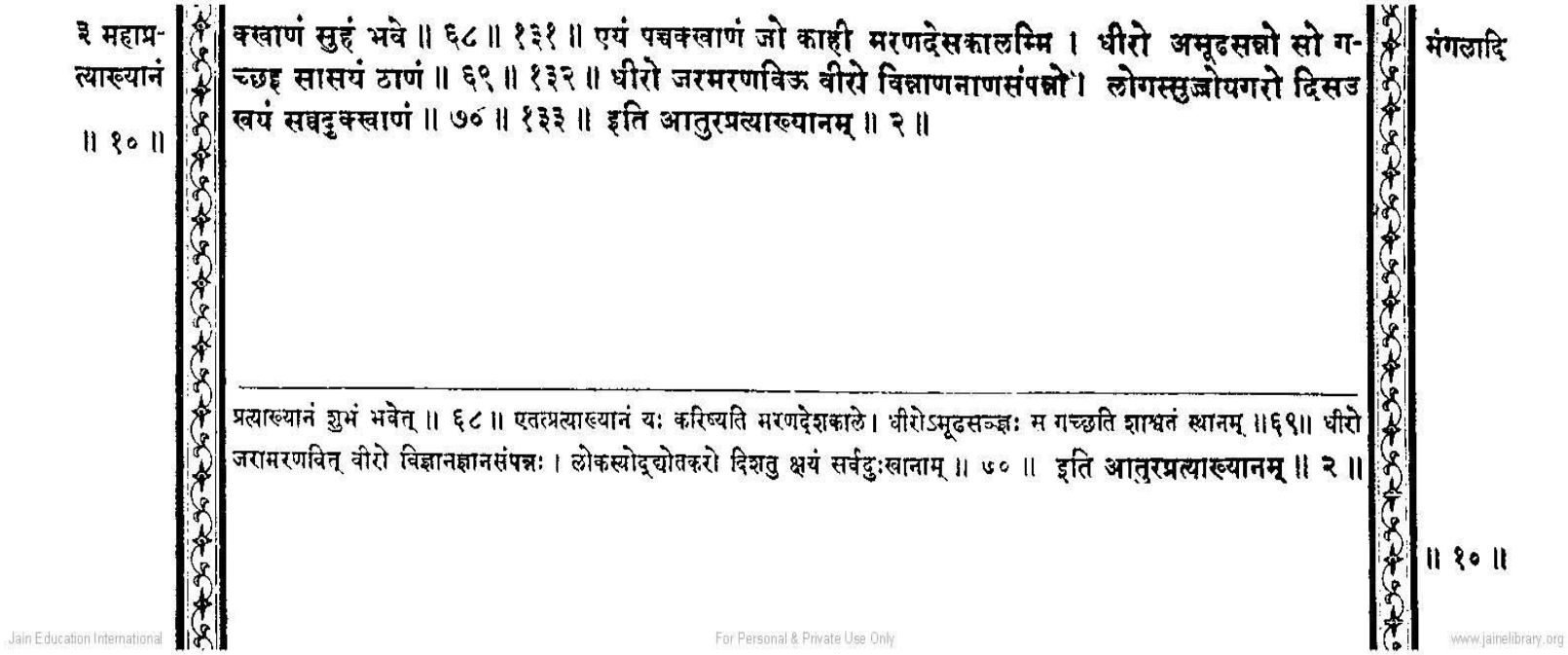
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||६१|| दीप अनुक्रम [६२]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२५], प्रकीर्णकसूत्र-[२] आतुरप्रत्याख्यान मूलं एवं संस्कृतछाया

आराहणोवउत्तो कालं काऊण सुविहिओ सम्मं । उक्कोसं तिन्नि भवे गंतूणं लहइ निव्वाणं ॥ ६१ ॥ १२४ ॥ समणोत्ति अहं पढमं बीयं सव्वत्थ संजओमित्ति । सव्वं च वोसिरामि एयं भणियं समासेणं ॥ ६२ ॥ १२५ ॥ लद्धं अलद्धपुव्वं जिणवयण सुभासियं अमियभूयं । गहिओ सुग्गइमग्गो नाहं मरणस्स बीहेमि ॥ ६३ ॥ ॥ १२६ ॥ धीरेणवि मरियव्वं काउरिसेणवि अवस्स मरियव्वं । दुण्हंपि हु मरियव्वे वरं खु धीरत्तणे मरिउं ॥ ६४ ॥ १२७ ॥ सीलेणवि मरियव्वं निस्सीलेणवि अवस्स मरियव्वं । दुण्हंपि हु मरियव्वे वरं खु सीलत्तणे मरिउं ॥ ६५ ॥ १२८ ॥ नाणस्स दंसणस्स य सम्मत्तस्स य चरित्तजुत्तस्स । जो काही उवओगं संसारा सो विमुचिहिसि ॥ ६६ ॥ १२९ ॥ चिरउसियबंभयारी पप्फोडेऊण सेसयं कम्मं । अणुपुव्वीइ विसुद्धो गच्छइ सिद्धिं धुयकिलेसो ॥ ६७ ॥ १३० ॥ निक्कसायस्स दंतस्स, सूरस्स ववसाइणो । संसारपरिभीयस्स, पच-

मरणदेशकाले। आराधनोपयुक्तश्चिन्तयन्(भवति स:)आराधको भवति ॥६०॥ आराधनोपयुक्तः कालं कृत्वा सुविहितः सम्यक् । उत्कृष्टतस्त्रीन् भवान् गत्वा लभते निर्वाणम् ॥६१॥ अहं श्रमण इति प्रथमं द्वितीयं सर्वत्र संयतोऽस्मीति। सर्वं च व्युत्सृजामि एतद्भणितं समासेन ॥६२॥ लब्धमलब्धपूर्वं जिनवचनं सुभाषितममृतभूतम् । गृहीतः सुगतिमार्गो नाहं मरणाद्बिभेमि ॥६३॥ धीरेणापि मर्त्तव्यं कापुरुषेणाप्यवश्यं मर्त्तव्यम्। द्वयोरपि मर्त्तव्ये वरमेव धीरत्वेन मर्तुम् ॥६४॥ शीलवताऽपि मर्त्तव्यं निःशीलेनाप्यवश्यं मर्त्तव्यम् । द्वयोरपि मर्त्तव्ये वरमेव शीलवता मर्तुम् ॥६५॥ ज्ञानस्य दर्शनस्य च सम्यक्त्वस्य च चारित्रयुक्तस्य । यः करिष्यत्युपयोगं संसारात्स विमोक्ष्यते ॥६६॥ चिरोषितब्रह्मचारी प्रस्फोट्य शेषकं कर्म । आनुपूर्व्या विशुद्धो गच्छति सिद्धिं धुतक्लेशः ॥६७॥ निष्कषायस्य दान्तस्य शूरस्य व्यवसायिनः । संसारपरिभीतस्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



३ महाप्र-
त्याख्यानं
॥ १० ॥

क्खाणं सुहं भवे ॥ ६८ ॥ १३१ ॥ एयं पच्चक्खाणं जो काही मरणदेसकालम्मि । धीरो अमूढसन्नो सो ग-
च्छइ सासयं ठाणं ॥ ६९ ॥ १३२ ॥ धीरो जरमरणविऊ वीरो विन्नाणनाणसंपन्नो । लोगस्सुज्जोयगरो दिसउ
खयं सव्वदुक्खाणं ॥ ७० ॥ १३३ ॥ इति आतुरप्रत्याख्यानम् ॥ २ ॥

प्रत्याख्यानं शुभं भवेत् ॥ ६८ ॥ एतत्प्रत्याख्यानं यः करिष्यति मरणदेशकाले। धीरोऽमूढसञ्ज्ञः स गच्छति शाश्वतं स्थानम् ॥६९॥ धीरो
जरामरणवित् वीरो विज्ञानज्ञानसंपन्नः । लोकस्योद्द्योतकरो दिशतु क्षयं सर्वदुःखानाम् ॥ ७० ॥ इति आतुरप्रत्याख्यानम् ॥ २ ॥

मंगलादि

॥ १० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मूल संशोधकः सम्पादकश्च पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

किंचित् वैशिष्ट्य समर्पितेन सह पुन: संकलनकर्ता मुनि दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

“महाप्रत्याख्यान” मूलं एवं छाया

[मूलं एवं संस्कृतछाया]

[आद्य संपादकश्री]

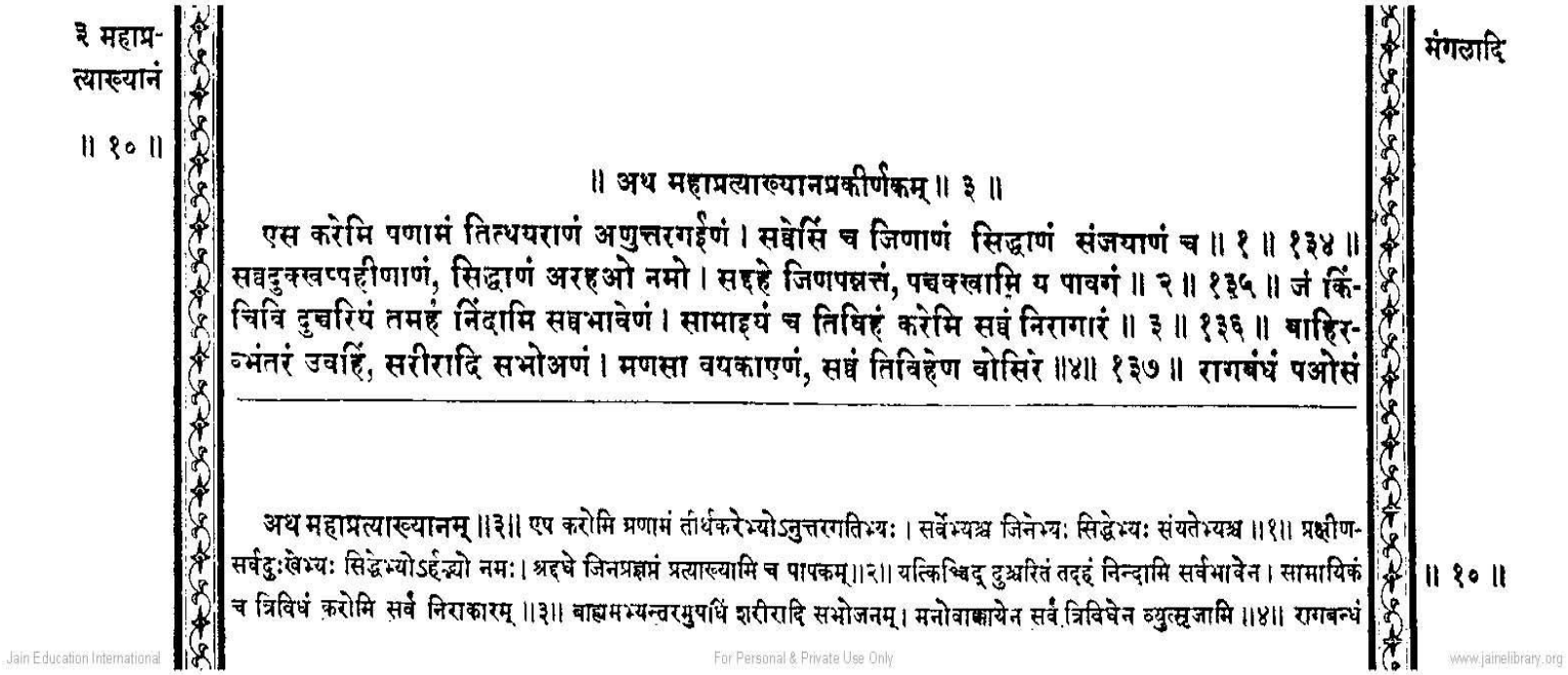
पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

पुन: संकलनकर्ता→ मुनि दीपरत्नसागर (M.Com., M.Ed., Ph.D.,श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५ ‘सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि’ श्रेणि भाग-२६

प्रत सूत्रांक ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२६],प्रकीर्णकसूत्र-[०३] महाप्रत्याख्यान मूलं एवं संस्कृतछाया



३ महाप्र-
त्याख्यानं
॥ १० ॥

॥ अथ महाप्रत्याख्यानप्रकीर्णकम् ॥ ३ ॥

एस करेमि पणामं तित्थयराणं अणुत्तरगईणं । सव्वेसिं च जिणाणं सिद्धाणं संजयाणं च ॥ १ ॥ १३४ ॥ सव्वदुक्खप्पहीणाणं, सिद्धाणं अरहओ नमो । सद्दहे जिणपन्नत्तं, पच्चक्खामि य पावगं ॥ २ ॥ १३५ ॥ जं किंचिवि दुच्चरियं तमहं निंदामि सव्वभावेणं । सामाइयं च तिविहं करेमि सव्वं निरागारं ॥ ३ ॥ १३६ ॥ बाहिरब्भंतरं उवहिं, सरीरादि सभोअणं । मणसा वयकाएणं, सव्वं तिविहेण वोसिरे ॥४॥ १३७ ॥ रागबंधं पओसं

अथ महाप्रत्याख्यानम् ॥३॥ एष करोमि प्रणामं तीर्थकरेभ्योऽनुत्तरगतिभ्यः । सर्वेभ्यश्च जिनेभ्यः सिद्धेभ्यः संयतेभ्यश्च ॥१॥ प्रक्षीणसर्वदुःखेभ्यः सिद्धेभ्योऽर्हद्भ्यो नमः । श्रद्दधे जिनप्रज्ञप्तं प्रत्याख्यामि च पापकम् ॥२॥ यत्किञ्चिद् दुश्चरितं तदहं निन्दामि सर्वभावेन । सामायिकं च त्रिविधं करोमि सर्वं निराकारम् ॥३॥ बाह्यमभ्यन्तरमुपधिं शरीरादि सभोजनम् । मनोवाक्कायेन सर्वं त्रिविधेन व्युत्सृजामि ॥४॥ रागबन्धं

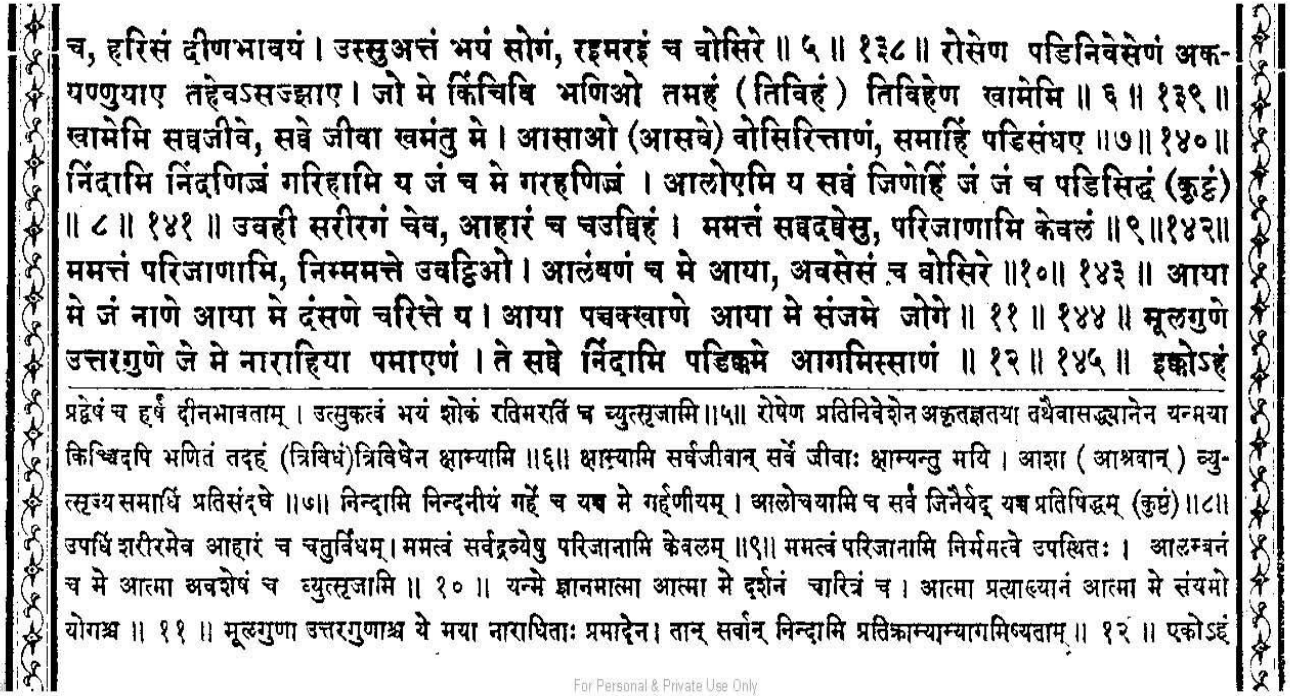
मंगलादि

॥ १० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अरहंत-सिद्ध्-वंदना, अथ व्युत्सर्जन(परित्याग), क्षमापनादि वर्णयते

प्रत सूत्रांक ॥५॥ दीप अनुक्रम [५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२६],प्रकीर्णकसूत्र-[०३] महाप्रत्याख्यान मूलं एवं संस्कृतछाया



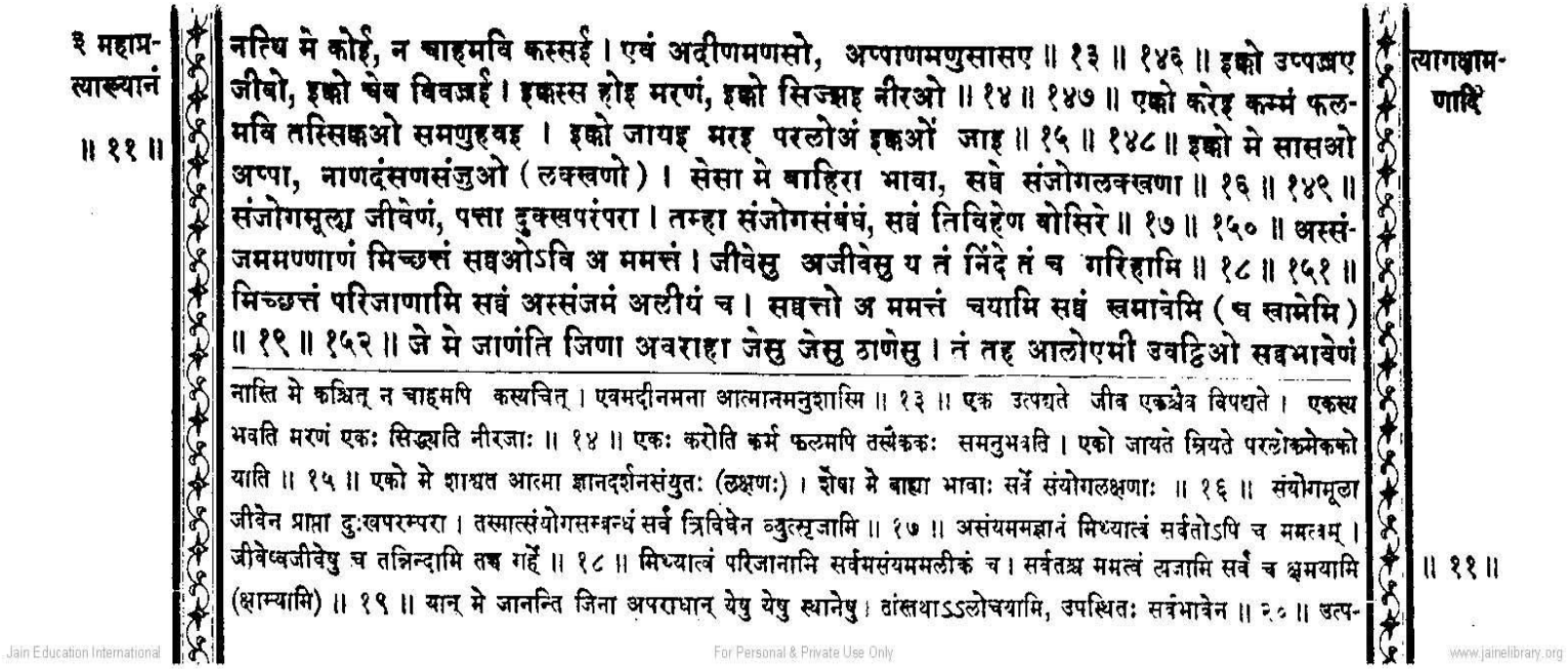
च, हरिसं दीणभावयं । उस्सुअत्तं भयं सोगं, रइमरइं च वोसिरे ॥ ५ ॥ १३८ ॥ रोसेण पडिनिवेसेणं अकयण्णुयाए तहेवऽसज्झाए । जो मे किंचिवि भणिओ तमहं (तिविहं) तिविहेण खामेमि ॥ ६ ॥ १३९ ॥ खामेमि सव्वजीवे, सव्वे जीवा खमंतु मे । आसाओ (आसवे) वोसिरित्ताणं, समाहिं पडिसंधए ॥७॥ १४० ॥ निंदामि निंदणिज्जं गरिहामि य जं च मे गरहणिज्जं । आलोएमि य सव्वं जिणेहिं जं जं च पडिसिद्धं (कुट्ठं) ॥ ८ ॥ १४१ ॥ उवही सरीरगं चेव, आहारं च चउव्विहं । ममत्तं सव्वदव्वेसु, परिजाणामि केवलं ॥९॥१४२॥ ममत्तं परिजाणामि, निम्ममत्ते उवट्ठिओ । आलंबणं च मे आया, अवसेसं च वोसिरे ॥१०॥ १४३ ॥ आया मे जं नाणे आया मे दंसणे चरित्ते य । आया पच्चक्खाणे आया मे संजमे जोगे ॥ ११ ॥ १४४ ॥ मूलगुणे उत्तरगुणे जे मे नाराहिया पमाएणं । ते सव्वे निंदामि पडिक्कमे आगमिस्साणं ॥ १२ ॥ १४५ ॥ इक्कोऽहं

प्रद्वेषं च हर्षं दीनभावताम् । उत्सुकत्वं भयं शोकं रतिमरतिं च व्युत्सृजामि ॥५॥ रोषेण प्रतिनिवेशेन अकृतज्ञतया तथैवासद्ध्यानेन यन्मया किञ्चिदपि भणितं तदहं (त्रिविधं)त्रिविधेन क्षाम्यामि ॥६॥ क्षाम्यामि सर्वजीवान् सर्वे जीवाः क्षाम्यन्तु मयि । आशा (आश्रवान्) व्युत्सृज्य समाधिं प्रतिसंदधे ॥७॥ निन्दामि निन्दनीयं गर्हे च यच्च मे गर्हणीयम् । आलोचयामि च सर्वं जिनैर्यद् यच्च प्रतिषिद्धम् (कुष्टं) ॥८॥ उपधिं शरीरमेव आहारं च चतुर्विधम् । ममत्वं सर्वद्रव्येषु परिजानामि केवलम् ॥९॥ ममत्वं परिजानामि निर्ममत्वे उपस्थितः । आलम्बनं च मे आत्मा अवशेषं च व्युत्सृजामि ॥ १० ॥ यन्मे ज्ञानमात्मा आत्मा मे दर्शनं चारित्रं च । आत्मा प्रत्याख्यानं आत्मा मे संयमो योगश्च ॥ ११ ॥ मूलगुणा उत्तरगुणाश्च ये मया नाराधिताः प्रमादेन । तान् सर्वान् निन्दामि प्रतिक्रम्याम्यागमिष्यताम् ॥ १२ ॥ एकोऽहं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ वैराग्य-भावना निर्दिश्यते

प्रत सूत्रांक ||१३|| दीप अनुक्रम [१३]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२६],प्रकीर्णकसूत्र-[०३] महाप्रत्याख्यान मूलं एवं संस्कृतछाया



३ महाप्रत्याख्यानं ॥ ११ ॥

नत्थि मे कोई, न चाहमवि कस्सई । एवं अदीणमणसो, अप्पाणमणुसासए ॥ १३ ॥ १४६ ॥ इक्को उप्पज्जए जीवो, इक्को चेव विवज्जई । इक्कस्स होइ मरणं, इक्को सिज्झइ नीरओ ॥ १४ ॥ १४७ ॥ एक्को करेइ कम्मं फलमवि तस्सिक्कओ समणुहवइ । इक्को जायइ मरइ परलोअं इक्कओ जाइ ॥ १५ ॥ १४८ ॥ इक्को मे सासओ अप्पा, नाणदंसणसंजुओ (लक्खणो) । सेसा मे बाहिरा भावा, सव्वे संजोगलक्खणा ॥ १६ ॥ १४९ ॥ संजोगमूला जीवेणं, पत्ता दुक्खपरंपरा । तम्हा संजोगसंबंधं, सव्वं तिविहेण वोसिरे ॥ १७ ॥ १५० ॥ अस्संजममण्णाणं मिच्छत्तं सव्वओऽवि अ ममत्तं । जीवेसु अजीवेसु य तं निंदे तं च गरिहामि ॥ १८ ॥ १५१ ॥ मिच्छत्तं परिजाणामि सव्वं अस्संजमं अलीयं च । सव्वत्तो अ ममत्तं चयामि सव्वं खमावेमि (च खामेमि) ॥ १९ ॥ १५२ ॥ जे मे जाणंति जिणा अवराहा जेसु जेसु ठाणेसु । तं तह आलोएमी उवट्ठिओ सव्वभावेणं

नास्ति मे कश्चित् न चाहमपि कस्यचित् । एवमदीनमना आत्मानमनुशासि ॥ १३ ॥ एक उत्पद्यते जीव एकश्चैव विपद्यते । एकस्य भवति मरणं एकः सिद्ध्यति नीरजाः ॥ १४ ॥ एकः करोति कर्म फलमपि तस्यैककः समनुभवति । एको जायते म्रियते परलोकमेककः याति ॥ १५ ॥ एको मे शाश्वत आत्मा ज्ञानदर्शनसंयुतः (लक्षणः) । शेषा मे बाह्या भावाः सर्वे संयोगलक्षणाः ॥ १६ ॥ संयोगमूला जीवेन प्राप्ता दुःखपरम्परा । तस्मात्संयोगसम्बन्धं सर्वं त्रिविधेन व्युत्सृजामि ॥ १७ ॥ असंयममज्ञानं मिथ्यात्वं सर्वतोऽपि च ममत्वम् । जीवेष्वजीवेषु च तन्निन्दामि तच्च गर्हे ॥ १८ ॥ मिथ्यात्वं परिजानामि सर्वमसंयममलीकं च । सर्वतश्च ममत्वं त्यजामि सर्वं च क्षमयामि (क्षाम्यामि) ॥ १९ ॥ यान् मे जानन्ति जिना अपराधान् येषु येषु स्थानेषु । तांस्तथाऽऽलोचयामि, उपस्थितः सर्वभावेन ॥ २० ॥ उत्प-

त्यागाध्ययनादि

॥ ११ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	स्वआलोचना-निन्दणा-गर्हा आदि प्रदर्श्यते

प्रत सूत्रांक ॥२१॥ दीप अनुक्रम [२१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२६],प्रकीर्णकसूत्र-[०३] महाप्रत्याख्यान मूलं एवं संस्कृतछाया

॥ २० ॥ १५३ ॥ उप्पन्नाणुप्पन्ना माया अणुमग्गओ निहंतव्वा । आलोयणनिंदणगरिहणाहिं न पुणत्ति यावीयं ॥ २१ ॥ १५४ ॥ जह बालो जंपन्तो कज्जमकज्जं च उज्जुयं भणइ । तं तह आलोइज्जा मायामयविप्पमुक्को उ ॥ २२ ॥ १५५ ॥ सोही उज्जुयभूयस्स, धम्मो सुद्धस्स चिट्ठई । निव्वाणं परमं जाइ, घयसित्तुव्व पावए ॥ २३ ॥ १५६ ॥ न हु सिज्झई ससल्लो जह भणियं सासणे धुयरयाणं । उद्धरियसव्वसल्लो सिज्झइ जीवो धुअकिलेसो ॥ २४ ॥ १५७ ॥ सुबहुंपि भावसल्लं आलोएऊण (जे आलोयंति) गुरुसगासंमि । निस्सल्ला संथारगमुविंति आराहगा हुंति ॥ २५ ॥ १५८ ॥ अप्पंपि भावसल्लं जे नालोयंति गुरुसगासंमि । धंतंपि सुयसमिद्धा न हु ते आराहगा हुंति ॥ २६ ॥ १५९ ॥ नवि तं सत्थं च विसं च दुप्पउत्तो व कुणइ वेयालो । जंतं व दुप्पउत्तं सप्पुव्व पमायओ कुद्धो ॥ २७ ॥ १६० ॥ जं कुणइ भावसल्लं अणुद्धियं उत्तमट्ठकालंमि ।

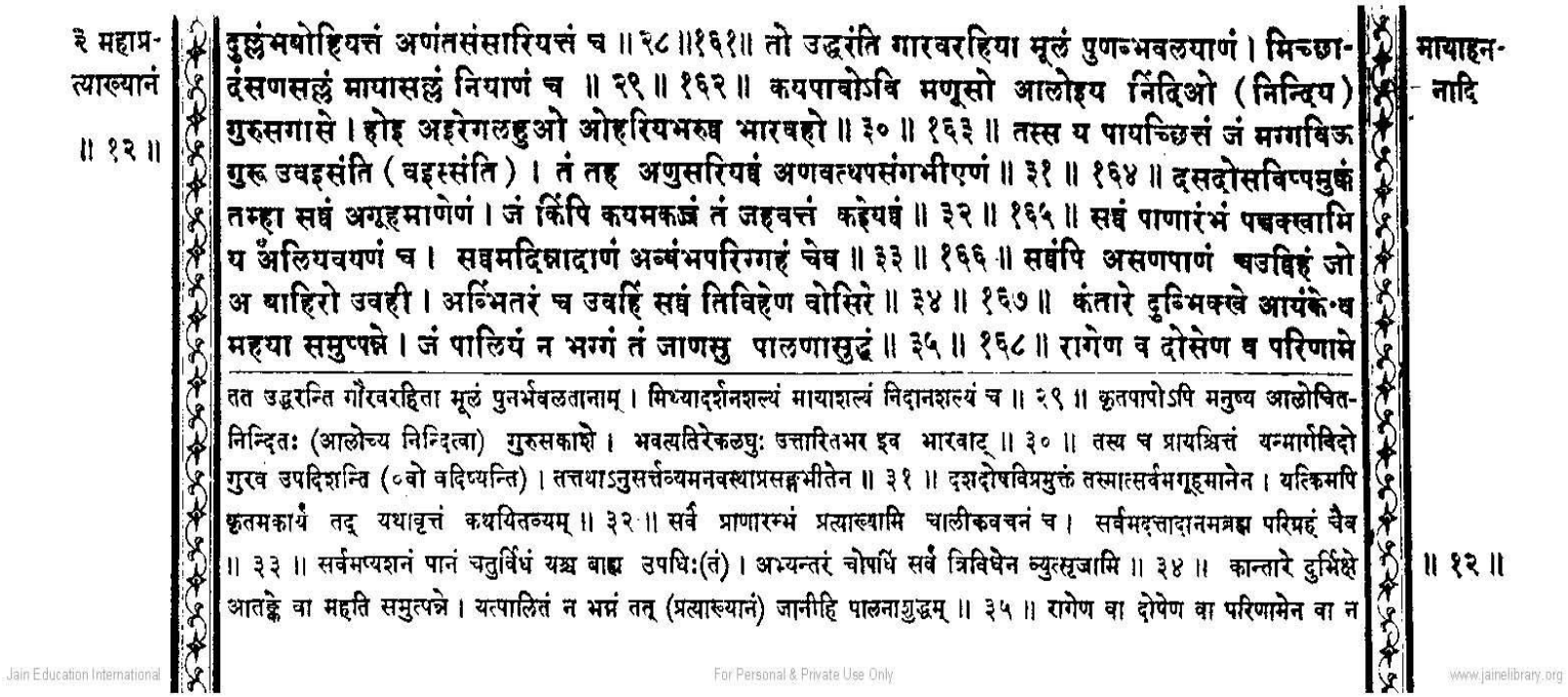
ऋाऽनुत्पन्ना मायाऽनुमार्गतो निहन्तव्या । आलोचननिन्दनगर्हाभिर्न पुनरिति च द्वितीयम् ॥ २१ ॥ यथा बालो जल्पन् कार्यमकार्यं च ऋजुकं भणति । तत्तथाऽऽलोचयेन्मायामदविप्रमुक्त एव ॥ २२ ॥ शुद्धिः ऋजुभूतस्य धर्मः शुद्धस्य तिष्ठति । निर्वाणं परमं याति घृतसिक्त इव पावकः ॥ २३ ॥ नैव सिद्ध्यति सशल्यो यथा भणितं शासने धुतरजसाम् । उद्धृतसर्वशल्यः सिद्ध्यति जीवो धुतक्लेशः ॥२४॥ सुबहूपि भावशल्यमालोच्य(चयन्ति)गुरुसकाशे । निःशल्याः संस्तारकमुपयान्त्याराधका भवन्ति ॥ २५ ॥ अल्पमपि भावशल्यं ये नालोचयन्ति गुरुसकाशे । बाढमपि श्रुतसमृद्धा नैव ते आराधका भवन्ति ॥ २६ ॥ नैव तच्छस्त्रं च विषं च दुष्प्रयुक्तो वा करोति वैतालः । यत्रं च दुष्प्रयुक्तं सर्पो वा प्रमादतः क्रुद्धः ॥ २७ ॥ यत्करोति भावशल्यमनुद्धृतमुत्तमार्थकाले । दुर्लभबोधिकत्वमनन्तसंसारिकत्वं च ॥ २८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	भावशल्यानां वर्णनं क्रियते

प्रत सूत्रांक ॥२८॥

दीप अनुक्रम [२८]



३ महाप्रत्याख्यानं ॥ १२ ॥

दुल्लंभबोहियत्तं अणंतसंसारियत्तं च ॥ २८ ॥१६१॥ तो उद्धरंति गारवरहिया मूलं पुणब्भवलयाणं । मिच्छादंसणसल्लं मायासल्लं नियाणं च ॥ २९ ॥ १६२ ॥ कयपावोऽवि मणूसो आलोइय निंदिओ (निन्दिय) गुरुसगासे । होइ अइरेगलहुओ ओहरियभरुव्व भारवहो ॥ ३० ॥ १६३ ॥ तस्स य पायच्छित्तं जं मग्गविऊ गुरू उवइसंति (वइस्संति) । तं तह अणुसरियव्वं अणवत्थपसंगभीएणं ॥ ३१ ॥ १६४ ॥ दसदोसविप्पमुक्कं तम्हा सव्वं अगूहमाणेणं । जं किंपि कयमकज्जं तं जहवत्तं कहेयव्वं ॥ ३२ ॥ १६५ ॥ सव्वं पाणारंभं पच्चक्खामि य अलियवयणं च । सव्वमदिन्नादाणं अब्बंभपरिग्गहं चेव ॥ ३३ ॥ १६६ ॥ सव्वंपि असणपाणं चउव्विहं जो अ बाहिरो उवही । अब्भितरं च उवहिं सव्वं तिविहेण वोसिरे ॥ ३४ ॥ १६७ ॥ कंतारे दुब्भिक्खे आयंके वा महया समुप्पन्ने । जं पालियं न भग्गं तं जाणसु पालणासुद्धं ॥ ३५ ॥ १६८ ॥ रागेण व दोसेण व परिणामे

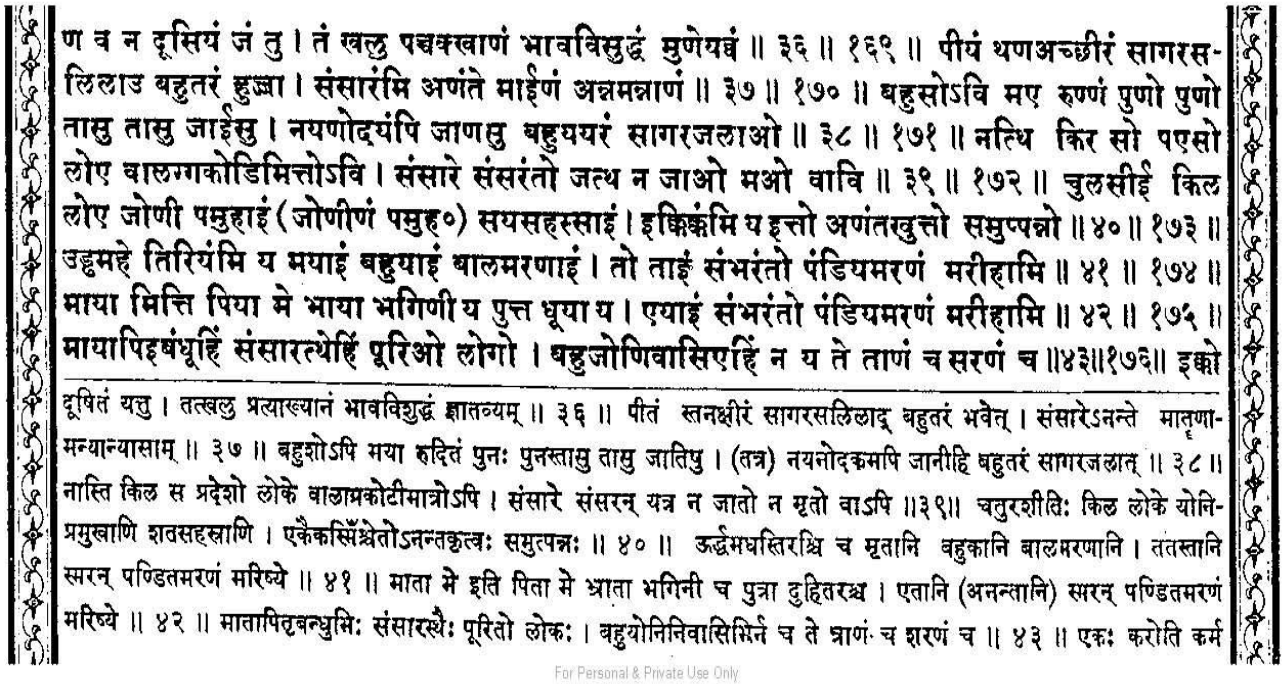
तत उद्धरन्ति गौरवरहिता मूलं पुनर्भवलतानाम् । मिथ्यादर्शनशल्यं मायाशल्यं निदानशल्यं च ॥ २९ ॥ कृतपापोऽपि मनुष्य आलोचित-निन्दितः (आलोच्य निन्दित्वा) गुरुसकाशे । भवत्यतिरेकलघुः उत्तारितभर इव भारवाट् ॥ ३० ॥ तस्य च प्रायश्चित्तं यन्मार्गविदो गुरव उपदिशन्ति (०वो वदिष्यन्ति) । तत्तथाऽनुसर्त्तव्यमनवस्थाप्रसङ्गभीतेन ॥ ३१ ॥ दशदोषविप्रमुक्तं तस्मात्सर्वमगूहमानेन । यत्किमपि कृतमकार्यं तद् यथावृत्तं कथयितव्यम् ॥ ३२ ॥ सर्वं प्राणारम्भं प्रत्याख्यामि चालीकवचनं च । सर्वमदत्तादानमब्रह्म परिग्रहं चैव ॥ ३३ ॥ सर्वमप्यशनं पानं चतुर्विधं यश्च बाह्य उपधिः(तं) । अभ्यन्तरं चोपधिं सर्वं त्रिविधेन व्युत्सृजामि ॥ ३४ ॥ कान्तारे दुर्भिक्षे आतङ्के वा महति समुत्पन्ने । यत्पालितं न भग्नं तत् (प्रत्याख्यानं) जानीहि पालनाशुद्धम् ॥ ३५ ॥ रागेण वा दोषेण वा परिणामेन वा न

मायाहन-नादि ॥ १२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||३६||

दीप अनुक्रम [३६]



ण व न दूसियं जं तु । तं खलु पच्चक्खाणं भावविसुद्धं मुणेयव्वं ॥ ३६ ॥ १६९ ॥ पीयं थणअच्छीरं सागरस-
लिलाउ बहुतरं हुज्जा । संसारंमि अणंते माईणं अन्नमन्नाणं ॥ ३७ ॥ १७० ॥ बहुसोऽवि मए रुण्णं पुणो पुणो
तासु तासु जाईसु । नयणोदयंपि जाणसु बहुययरं सागरजलाओ ॥ ३८ ॥ १७१ ॥ नत्थि किर सो पएसो
लोए वालग्गकोडिमित्तोऽवि । संसारे संसरंतो जत्थ न जाओ मओ वावि ॥ ३९ ॥ १७२ ॥ चुलसीई किल
लोए जोणी पमुहाइं (जोणीणं पमुह०) सयसहस्साइं । इक्किक्कमि य इत्तो अणंतखुत्तो समुप्पन्नो ॥ ४० ॥ १७३ ॥
उड्ढमहे तिरियंमि य मयाइं बहुयाइं बालमरणाइं । तो ताइं संभरंतो पंडियमरणं मरीहामि ॥ ४१ ॥ १७४ ॥
माया मित्ति पिया मे भाया भगिणी य पुत्त धूया य । एयाइं संभरंतो पंडियमरणं मरीहामि ॥ ४२ ॥ १७५ ॥
मायापिइबंधूहिं संसारत्थेहिं पूरिओ लोगो । बहुजोणिवासिएहिं न य ते ताणं च सरणं च ॥४३॥१७६॥ इक्को

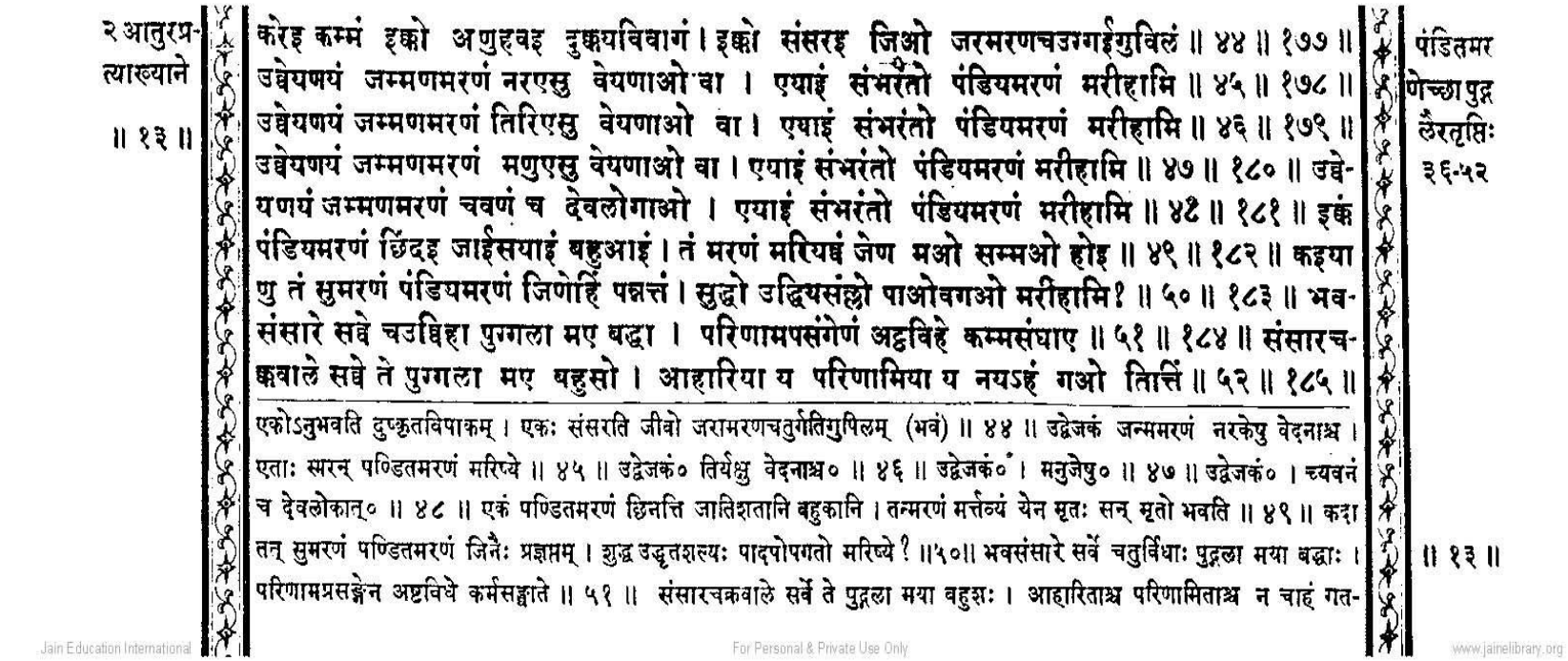
दूषितं यत्तु । तत्खलु प्रत्याख्यानं भावविशुद्धं ज्ञातव्यम् ॥ ३६ ॥ पीतं स्तनक्षीरं सागरसलिलाद् बहुतरं भवेत् । संसारेऽनन्ते मातृणा-
मन्यान्यासाम् ॥ ३७ ॥ बहुशोऽपि मया रुदितं पुनः पुनस्तासु तासु जातिषु । (तत्र) नयनोदकमपि जानीहि बहुतरं सागरजलात् ॥ ३८ ॥
नास्ति किल स प्रदेशो लोके वालाग्रकोटीमात्रोऽपि । संसारे संसरन् यत्र न जातो न मृतो वाऽपि ॥३९॥ चतुरशीतिः किल लोके योनि-
प्रमुखाणि शतसहस्राणि । एकैकस्मिँश्चेतोऽनन्तकृत्वः समुत्पन्नः ॥ ४० ॥ ऊर्द्धमधस्तिरश्चि च मृतानि बहुकानि बालमरणानि । ततस्तानि
स्मरन् पण्डितमरणं मरिष्ये ॥ ४१ ॥ माता मे इति पिता मे भ्राता भगिनी च पुत्रा दुहितरश्च । एतानि (अनन्तानि) स्मरन् पण्डितमरणं
मरिष्ये ॥ ४२ ॥ मातापितृबन्धुभिः संसारस्थैः पूरितो लोकः । बहुयोनिनिवासिभिर्न च ते त्राणं च शरणं च ॥ ४३ ॥ एकः करोति कर्म

च. स. ३

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ पंडितमरणेच्छाया: अभिव्यक्ति क्रियते

प्रत सूत्रांक ||४४|| दीप अनुक्रम [४४]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२६],प्रकीर्णकसूत्र-[०३] महाप्रत्याख्यान मूलं एवं संस्कृतछाया



२ आतुरप्रत्याख्याने ॥ १३ ॥

करेइ कम्मं इक्को अणुहवइ दुक्कयविवागं। इक्को संसरइ जिओ जरमरणचउग्गईगुविलं ॥ ४४ ॥ १७७ ॥
उव्वेयणयं जम्मणमरणं नरएसु वेयणाओ वा । एयाइं संभरंतो पंडियमरणं मरीहामि ॥ ४५ ॥ १७८ ॥
उव्वेयणयं जम्मणमरणं तिरिएसु वेयणाओ वा। एयाइं संभरंतो पंडियमरणं मरीहामि ॥ ४६ ॥ १७९ ॥
उव्वेयणयं जम्मणमरणं मणुएसु वेयणाओ वा । एयाइं संभरंतो पंडियमरणं मरीहामि ॥ ४७ ॥ १८० ॥ उव्वेयणयं जम्मणमरणं चवणं च देवलोगाओ । एयाइं संभरंतो पंडियमरणं मरीहामि ॥ ४८ ॥ १८१ ॥ इक्कं पंडियमरणं छिंदइ जाईसयाइं बहुआइं। तं मरणं मरियव्वं जेण मओ सम्मओ होइ ॥ ४९ ॥ १८२ ॥ कइया णु तं सुमरणं पंडियमरणं जिणेहिं पन्नत्तं। सुद्धो उद्धियसल्लो पाओवगओ मरीहामि? ॥ ५० ॥ १८३ ॥ भवसंसारे सव्वे चउविहा पुग्गला मए बद्धा । परिणामपसंगेणं अट्ठविहे कम्मसंघाए ॥ ५१ ॥ १८४ ॥ संसारचक्कवाले सव्वे ते पुग्गला मए बहुसो । आहारिया य परिणामिया य नयऽहं गओ तित्तिं ॥ ५२ ॥ १८५ ॥

एकोऽनुभवति दुष्कृतविपाकम् । एकः संसरति जीवो जरामरणचतुर्गतिगुपिलम् (भवं) ॥ ४४ ॥ उद्वेजकं जन्ममरणं नरकेषु वेदनाश्च । एताः स्मरन् पण्डितमरणं मरिष्ये ॥ ४५ ॥ उद्वेजकं० तिर्यक्षु वेदनाश्च० ॥ ४६ ॥ उद्वेजकं० । मनुजेषु० ॥ ४७ ॥ उद्वेजकं० । च्यवनं च देवलोकात्० ॥ ४८ ॥ एकं पण्डितमरणं छिनत्ति जातिशतानि बहुकानि । तन्मरणं मर्त्तव्यं येन मृतः सन् मृतो भवति ॥ ४९ ॥ कदा तन् सुमरणं पण्डितमरणं जिनैः प्रज्ञप्तम् । शुद्ध उद्धृतशल्यः पादपोपगतो मरिष्ये? ॥५०॥ भवसंसारे सर्वे चतुर्विधाः पुद्गला मया बद्धाः । परिणामप्रसङ्गेन अष्टविधे कर्मसङ्घाते ॥ ५१ ॥ संसारचक्रवाले सर्वे ते पुद्गला मया बहुशः । आहारिताश्च परिणामिताश्च न चाहं गत-

पंडितमरणेच्छा पुद्गलैरतृप्तिः ३६-५२

॥ १३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ आहार-आदि पुद्गलै: अतृप्ति:

प्रत सूत्रांक ॥५३॥

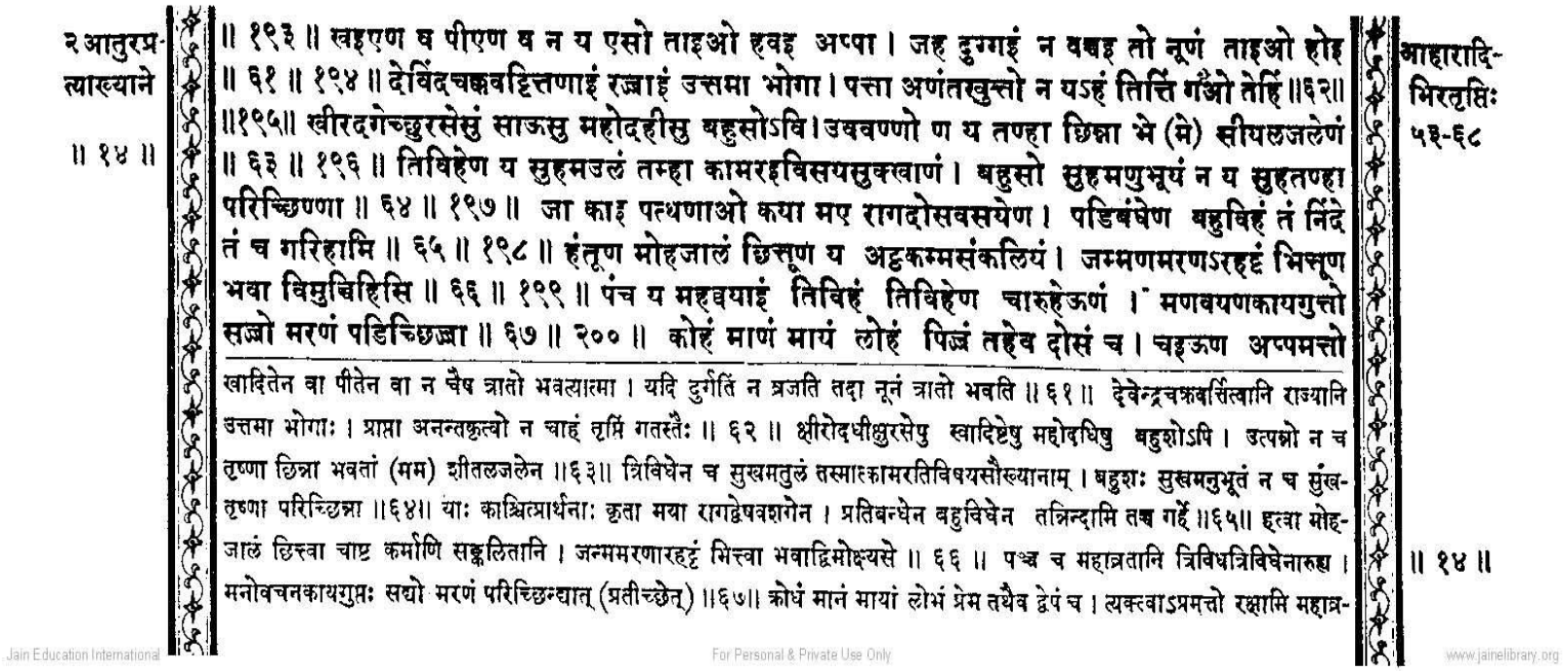
दीप अनुक्रम [५३]

आहारनिमित्तेणं अहयं सव्वेसु नरयलोएसु । उववण्णोमि य बहुसो सव्वासु य मिच्छजाईसु ॥ ५३ ॥ १८६ ॥
आहारनिमित्तेणं मच्छा गच्छंति दारुणे नरए । सचित्तो आहारो न खमो मणसावि पत्थेउं ॥ ५४ ॥१८७॥
तणकट्ठेण व अग्गी लवणजलो वा नईसहस्सेहिं । न इमो जीवो सक्को तिप्पेउं कामभोगेहिं ॥५५॥ १८८ ॥
तणकट्ठेण व अग्गी लवणजलो वा नईसहस्सेहिं । न इमो जीवो सक्को तिप्पेउं अत्थसारेणं ॥ ५६ ॥ १८९ ॥
तणकट्ठेण व अग्गी लवणजलो वा नईसहस्सेहिं । न इमो जीवो सक्को तिप्पेउं भोअणविहीए ॥५७॥ १९०॥
वलयामुहसामाणो दुप्पारो व णरओ अपरिमिज्जो । न इमो जीवो सक्को तप्पेउं गंधमल्लेहिं ॥ ५८ ॥ १९१ ॥
अवियद्धोऽ(अवितत्तो)यं जीवो अईयकालम्मि आगमिस्साए । सद्दाण य रूवाण य गंधाण रसाण फासाणं ॥ ५९ ॥ १९२ ॥ कप्पतरुसंभवेसुं देवुत्तरकुरुवंसपसूएसु । उववाए ण य तित्तो न य नरविज्जाहरसुरेसु ॥६०॥

स्तृप्तिम् ॥ ५२ ॥ आहारनिमित्तमहं सर्वेषु नरकलोकेषु । उत्पन्नोऽस्मि च बहुशः सर्वासु च म्लेच्छजातिषु ॥ ५३ ॥ आहारनिमित्तं मत्स्या गच्छन्ति दारुणे नरके । सचित्त आहारो न क्षमो मनसाऽपि प्रार्थयितुम् ॥ ५४ ॥ तृणकाष्ठेनाग्निरिव लवणोदो नदीसहस्रैरिव । नायं जीवः शक्यस्तर्पयितुं कामभोगैः ॥ ५५ ॥ तृण० । अर्थसारेण ॥ ५६ ॥ तृण० । भोजनविधिना ॥ ५७ ॥ वडवामुखसमानो दुष्पारो नरक इवापरिमेयः । नायं० गन्धमाल्यैः ॥ ५८ ॥ अविदग्धो(अवितृप्तो)ऽयं जीवोऽतीतकाले आगमिष्यति । शब्दानां रूपाणां गन्धानां रसानां स्पर्शानाम् (भोगेषु) ॥ ५९ ॥ कल्पतरुसंभवेषु देवकुरूत्तरकुरुवर्षप्रसूतेषु । उपपातेन च तृप्तो न च नरविद्याधरसुरेषु ॥६०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||६१|| दीप अनुक्रम [६१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२६],प्रकीर्णकसूत्र-[०३] महाप्रत्याख्यान मूलं एवं संस्कृतछाया



२ आतुरप्रत्याख्याने ॥ १४ ॥

॥ १९३ ॥ खइएण व पीएण व न य एसो ताइओ हवइ अप्पा । जइ दुग्गइं न वच्चइ तो नूणं ताइओ होइ ॥ ६१ ॥ १९४ ॥ देविंदचक्कवट्टित्तणाइं रज्जाइं उत्तमा भोगा । पत्ता अणंतखुत्तो न यऽहं तित्तिं गओ तेहिं ॥६२॥ ॥१९५॥ खीरदगेच्छुरसेसुं साऊसु महोदहीसु बहुसोऽवि । उववण्णो ण य तण्हा छिन्ना मे (मे) सीयलजलेणं ॥ ६३ ॥ १९६ ॥ तिविहेण य सुहमउलं तम्हा कामरइविसयसुक्खाणं । बहुसो सुहमणुभूयं न य सुहतण्हा परिच्छिण्णा ॥ ६४ ॥ १९७ ॥ जा काइ पत्थणाओ कया मए रागदोसवसयेण । पडिबंधेण बहुविहं तं निंदे तं च गरिहामि ॥ ६५ ॥ १९८ ॥ हंतूण मोहजालं छित्तूण य अट्ठकम्मसंकलियं । जम्मणमरणऽरहट्टं भित्तूण भवा विमुचिहिसि ॥ ६६ ॥ १९९ ॥ पंच य महव्वयाइं तिविहं तिविहेण चारुहेऊणं । मणवयणकायगुत्तो सज्जो मरणं पडिच्छिज्जा ॥ ६७ ॥ २०० ॥ कोहं माणं मायं लोहं पिज्जं तहेव दोसं च । चइऊण अप्पमत्तो

आहारादि-भिरतृप्तिः ५३-६८

खादितेन वा पीतेन वा न चैष त्रातो भवत्यात्मा । यदि दुर्गतिं न व्रजति तदा नूनं त्रातो भवति ॥ ६१ ॥ देवेन्द्रचक्रवर्तित्वानि राज्यानि उत्तमा भोगाः । प्राप्ता अनन्तकृत्वो न चाहं तृप्तिं गतस्तैः ॥ ६२ ॥ क्षीरोदधीक्षुरसेषु स्वादिष्टेषु महोदधिषु बहुशोऽपि । उत्पन्नो न च तृष्णा छिन्ना भवतां (मम) शीतलजलेन ॥६३॥ त्रिविधेन च सुखमतुलं तस्मात्कामरतिविषयसौख्यानाम् । बहुशः सुखमनुभूतं न च सुख-तृष्णा परिच्छिन्ना ॥६४॥ याः काश्चित्प्रार्थनाः कृता मया रागद्वेषवशगेन । प्रतिबन्धेन बहुविधेन तन्निन्दामि तच्च गर्हे ॥६५॥ हत्वा मोह-जालं छित्त्वा चाष्ट कर्माणि सङ्कलितानि । जन्ममरणारहट्टं भित्त्वा भवाद्विमोक्ष्यसे ॥ ६६ ॥ पञ्च च महाव्रतानि त्रिविधत्रिविधेनारुह्य । मनोवचनकायगुप्तः सद्यो मरणं परिच्छिन्द्यात् (प्रतीच्छेत्) ॥६७॥ क्रोधं मानं मायां लोभं प्रेम तथैव द्वेषं च । त्यक्त्वाऽप्रमत्तो रक्षामि महाव्र-

॥ १४ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ पंच-महाव्रत-रक्षार्थे विविध-उपदेशवचन प्ररुप्यते

प्रत सूत्रांक ||६८||

दीप अनुक्रम [६८]

रक्खामि महव्वए पंच ॥ ६८ ॥ २०१ ॥ कलहं अब्भक्खाणं पेसुण्णंपि य परस्स परिवायं । परिवज्जंतो गुत्तो रक्खामि महव्वए पंच ॥ ६९ ॥ २०२ ॥ पंचिंदियसंवरणं पंचेव निरुंभिऊण कामगुणे । अच्चासायणभीओ रक्खामि महव्वए पंच ॥७०॥ २०३ ॥ किण्हानीलाकाऊलेसा झाणाइं अट्टरुद्दाइं । परिवज्जंतो गुत्तो रक्खामि महव्वए पंच ॥ ७१ ॥ २०४ ॥ तेऊपम्हासुक्कालेसा झाणाइं धम्मसुक्काइं । उवसंपन्नो जुत्तो रक्खामि महव्वए पंच ॥ ७२ ॥ २०५ ॥ मणसा मणसच्चविऊ वायासच्चेण करणसच्चेण । तिविहेणवि सच्चविऊ रक्खामि महव्वए पंच ॥ ७३ ॥ २०६ ॥ सत्तभयविप्पमुक्को चत्तारि निरुंभिऊण य कसाए । अट्ठमयट्ठाणजढो रक्खामि महव्वए पंच ॥ ७४ ॥ २०७ ॥ गुत्तीओ समिई भावणाओ नाणं च दंसणं चेव । उवसंपन्नो जुत्तो रक्खामि महव्वए पंच ॥७५॥२०८॥ एवं तिदंडविरओ तिकरणसुद्धो तिसल्लनिस्सल्लो । तिविहेण अप्पमत्तो रक्खामि

तानि पञ्च ॥ ६८ ॥ कलहमभ्याख्यानं पैशून्यमपि च परस्य परिवादम् । परिवर्जयन् गुप्तो रक्षामि० ॥ ६९ ॥ पञ्चेन्द्रियसंवरणं (कृत्वा) पञ्चैव निरुध्य कामगुणान् । अत्याशातनाभीतो रक्षामि० ॥ ७० ॥ कृष्णानीलाकापोतीलेश्या ध्याने आर्त्तरौद्रे । परि० ॥ ७१ ॥ तैजसी-पद्माशुक्ललेश्या ध्याने धर्म्यशुक्ले । उपसंपन्नो युक्तो रक्षामि० ॥ ७२ ॥ मनसा मनःसत्यवित् वाक्सत्येन करणसत्येन । त्रिविधेनापि सत्यवित् रक्षामि० ॥ ७३ ॥ सप्तभयविप्रमुक्तश्चतुरो निरुध्य च कषायान् । त्यक्ताष्टमदस्थानो रक्षामि० ॥ ७४ ॥ गुप्तीः समितीर्भावना ज्ञानं च दर्शनं चैव । उपसंपन्नो युक्तो रक्षामि० ॥७५॥ एवं त्रिदण्डविरतस्त्रिकरणशुद्धस्त्रिशल्यनिःशल्यः । त्रिविधेनाप्रमत्तो रक्षामि०॥७६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||७६||

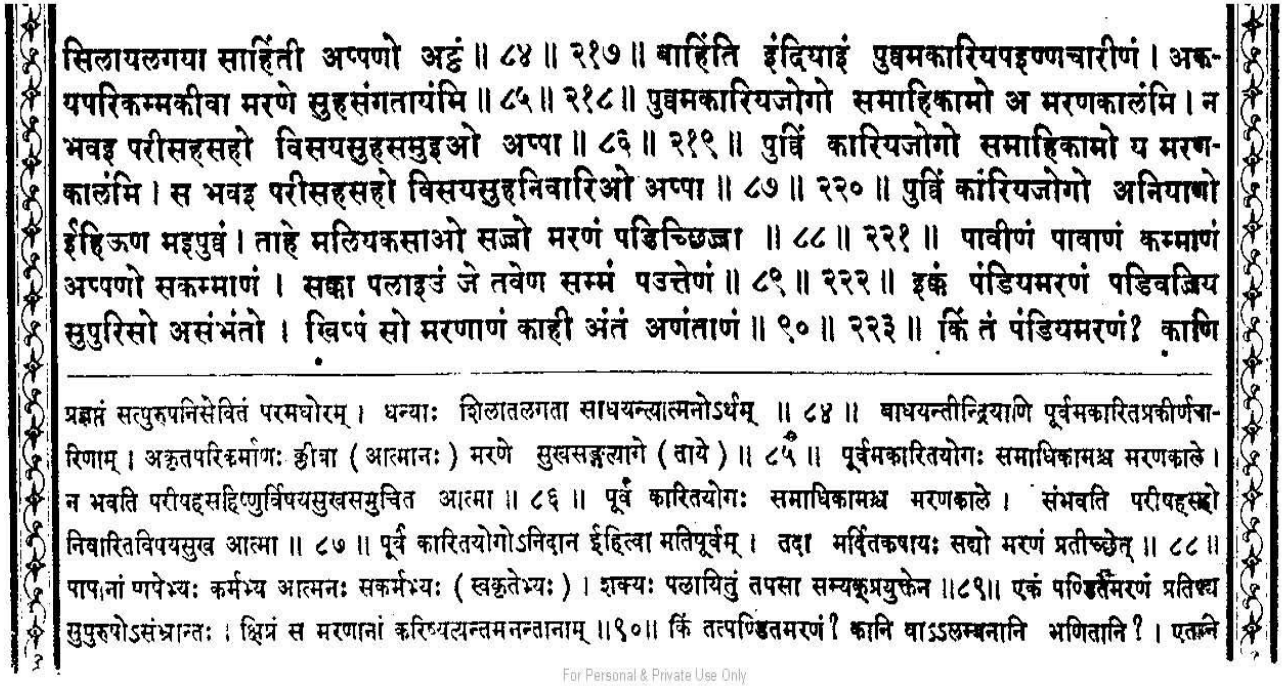
दीप अनुक्रम [७६]

महव्वए पंच ॥ ७६ ॥ २०९ ॥ संगं परिजाणामि सल्लं तिविहेण उद्धरेऊणं । गुत्तीओ समिईओ मज्झं ताणं च सरणं च ॥ ७७ ॥ २१० ॥ जह खुहियचक्कवाले पोयं रयणभरियं समुद्दंमि । निज्जामगा धरिंती कयकरणा बुद्धिसंपण्णा ॥ ७८ ॥ २११ ॥ तवपोयं गुणभरियं परीसहुम्मीहि खुहियमारद्धं । तह आराहिंति विऊ उवएसवलंबगा धीरा ॥ ७९ ॥ २१२ ॥ जइ ताव ते सुपुरिसा आयारोवियभरा निरवयक्खा । पब्भारकंदरगया साहिंती अप्पणो अट्ठं ॥ ८० ॥ २१३ ॥ जइ ताव ते सुपुरिसा गिरिकंदरकडगविसमदुग्गेसु । धिइधणियबद्धकच्छा साहिंती अप्पणो अट्ठं ॥ ८१ ॥ २१४ ॥ किं पुण अणगारसहायगेण अण्णुण्णसंगहबलेणं । परलोए णं सक्को साहेउं अप्पणो अट्ठं ? ॥ ८२ ॥ २१५ ॥ जिणवयणमप्पमेयं महुरं कण्णाहुइं सुणंतेणं । सक्को हु साहुमज्झे साहेउं अप्पणो अट्ठं ॥ ८३ ॥ २१६ ॥ धीरपुरिसपणत्तं सप्पुरिसनिसेवियं परमघोरं । धन्ना

सङ्गं परिजानामि शल्यं त्रिविधेनोद्धृत्य । गुप्तयः समितयश्च मम त्राणं च शरणं च ॥ ७७ ॥ यथा क्षुभितचक्रवाले पोतं रत्नभृतं समुद्रे । निर्यामका धारयन्ति कृतकरणा बुद्धिसंपन्नाः ॥७८॥ तपःपोतं गुणभृतं परीषहोर्मीभिः क्षोभितुमारब्धम् । तथाऽऽराधयन्ति विद उपदेशावलम्बका धीराः ॥७९॥ यदि तावत्ते सुपुरुषा आत्मारोपितभरा निरपेक्षाः । प्राग्भारकन्दरगताः साधयन्त्यात्मनोऽर्थम् ॥८०॥ यदि तावत्ते सुपुरुषा गिरिकन्दरकटकविषमदुर्गेषु । धृतिगाढबद्धकक्षाः साध०ऽर्थम् ॥८१॥ किं पुनरनगारसहायकेन अन्यान्यसङ्ग्रहबलेन । अपरलोकेन (न) शक्यः साध० ॥८२॥ जिनवचनमप्रमेयं मधुरं कर्णाभ्यां (कर्णाभूति) शृण्वता । शक्यः (न) साधुमध्ये साध०ऽर्थम् ? ॥८३॥ धीरपुरुष-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||८४|| दीप अनुक्रम [८४]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२६],प्रकीर्णकसूत्र-[०३] महाप्रत्याख्यान मूलं एवं संस्कृतछाया



सिलायलगया साहिंती अप्पणो अट्ठं ॥ ८४ ॥ २१७ ॥ बाहिंति इंदियाइं पुव्वमकारियपइण्णचारीणं । अकयपरिकम्मकीवा मरणे सुहसंगतायंमि ॥ ८५ ॥ २१८ ॥ पुव्वमकारियजोगो समाहिकामो अ मरणकालंमि । न भवइ परीसहसहो विसयसुहसमुइओ अप्पा ॥ ८६ ॥ २१९ ॥ पुव्विं कारियजोगो समाहिकामो य मरणकालंमि । स भवइ परीसहसहो विसयसुहनिवारिओ अप्पा ॥ ८७ ॥ २२० ॥ पुव्विं कारियजोगो अनियाणो ईहिऊण मइपुव्वं । ताहे मलियकसाओ सज्जो मरणं पडिच्छिज्जा ॥ ८८ ॥ २२१ ॥ पावीणं पावाणं कम्माणं अप्पणो सकम्माणं । सक्का पलाइउं जे तवेण सम्मं पउत्तेणं ॥ ८९ ॥ २२२ ॥ इक्कं पंडियमरणं पडिवज्जिय सुपुरिसो असंभंतो । खिप्पं सो मरणाणं काही अंतं अणंताणं ॥ ९० ॥ २२३ ॥ किं तं पंडियमरणं? काणि

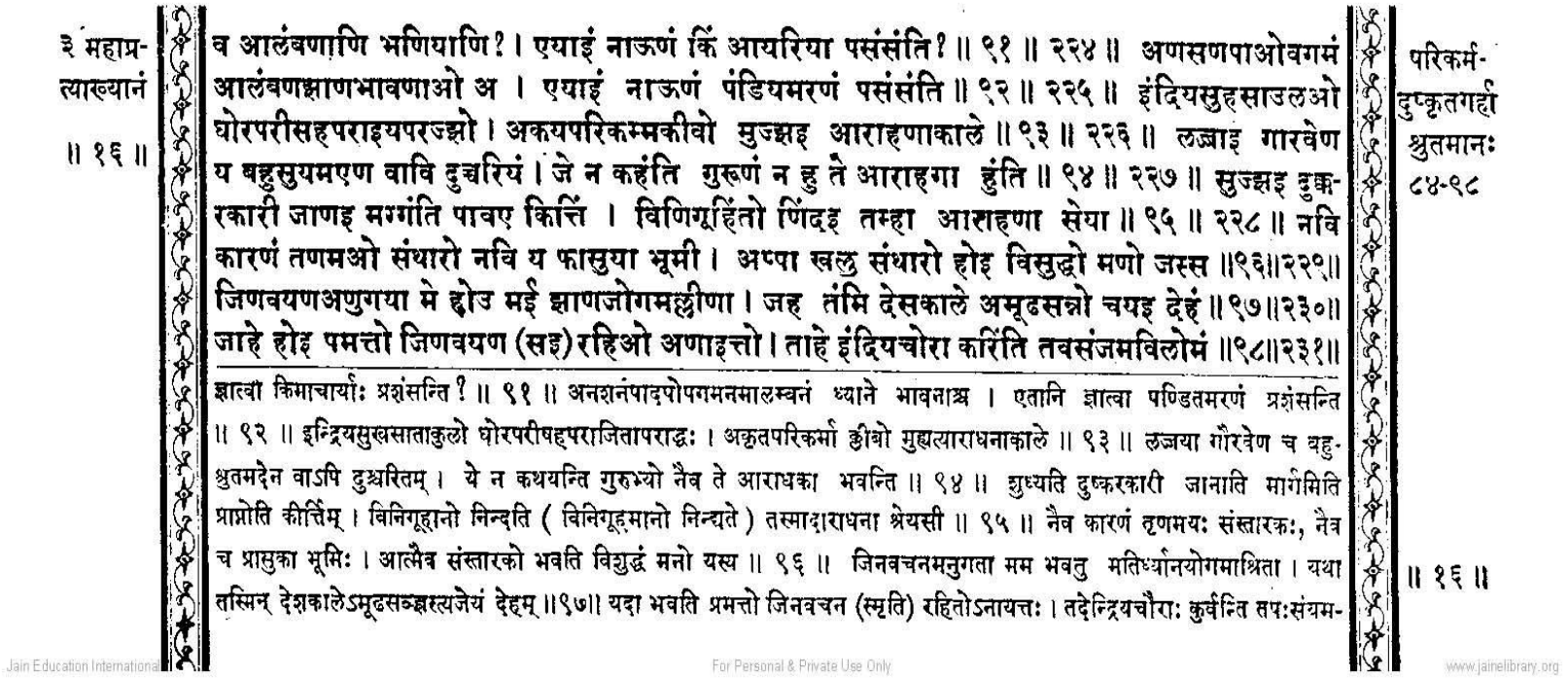
प्रज्ञप्तं सत्पुरुषनिसेवितं परमघोरम् । धन्याः शिलातलगता साधयन्त्यात्मनोऽर्थम् ॥ ८४ ॥ बाधयन्तीन्द्रियाणि पूर्वमकारितप्रकीर्णचारिणाम् । अकृतपरिकर्माणः क्लीबा (आत्मानः) मरणे सुखसङ्गत्यागे (वाये) ॥ ८५ ॥ पूर्वमकारितयोगः समाधिकामश्च मरणकाले । न भवति परीषहसहिष्णुर्विषयसुखसमुचित आत्मा ॥ ८६ ॥ पूर्वं कारितयोगः समाधिकामश्च मरणकाले । संभवति परीषहसहो निवारितविषयसुख आत्मा ॥ ८७ ॥ पूर्वं कारितयोगोऽनिदान ईहित्वा मतिपूर्वम् । तदा मर्दितकषायः सद्यो मरणं प्रतीच्छेत् ॥ ८८ ॥ पापानां पापेभ्यः कर्मभ्य आत्मनः सकर्मभ्यः (स्वकृतेभ्यः) । शक्यः पलायितुं तपसा सम्यक्प्रयुक्तेन ॥८९॥ एकं पण्डितमरणं प्रतीत्य सुपुरुषोऽसंभ्रान्तः । क्षिप्रं स मरणानां करिष्यत्यन्तमनन्तानाम् ॥९०॥ किं तत्पण्डितमरणं? कानि वाऽऽलम्बनानि भणितानि? । एतस्मि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	किं पंडितमरणं? इत्यादि प्रज्ञाप्यते

प्रत सूत्रांक ||९१||

दीप अनुक्रम [९१]

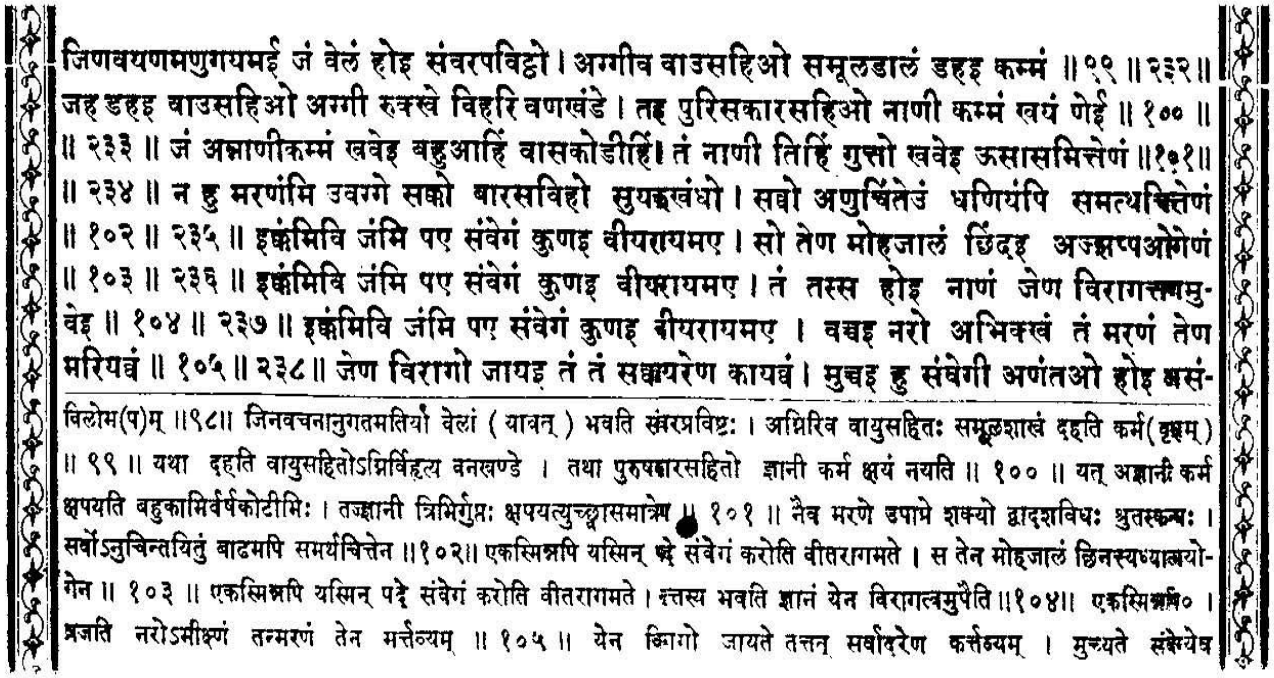


व आलंबणाणि भणियाणि? । एयाइं नाऊणं किं आयरिया पसंसंति? ॥ ९१ ॥ २२४ ॥ अणसणपाओवगमं आलंबणझाणभावणाओ अ । एयाइं नाऊणं पंडियमरणं पसंसंति ॥ ९२ ॥ २२५ ॥ इंदियसुहसाउलओ घोरपरीसहपराइयपरज्झो । अकयपरिकम्मकीवो मुज्झइ आराहणाकाले ॥ ९३ ॥ २२६ ॥ लज्जाइ गारवेण य बहुसुयमएण वावि दुच्चरियं । जे न कहंति गुरूणं न हु ते आराहगा हुंति ॥ ९४ ॥ २२७ ॥ सुज्झइ दुक्करकारी जाणइ मग्गंति पावए कित्तिं । विणिगूहिंतो णिंदइ तम्हा आराहणा सेया ॥ ९५ ॥ २२८ ॥ नवि कारणं तणमओ संथारो नवि य फासुया भूमी । अप्पा खलु संथारो होइ विसुद्धो मणो जस्स ॥९६॥२२९॥ जिणवयणअणुगया मे होउ मई झाणजोगमल्लीणा । जह तंमि देसकाले अमूढसन्नो चयइ देहं ॥९७॥२३०॥ जाहे होइ पमत्तो जिणवयण (सइ) रहिओ अणाइत्तो । ताहे इंदियचोरा करिंति तवसंजमविलोमं ॥९८॥२३१॥

ज्ञात्वा किमाचार्याः प्रशंसन्ति? ॥ ९१ ॥ अनशनंपादपोपगमनमालम्बनं ध्याने भावनाश्च । एतानि ज्ञात्वा पण्डितमरणं प्रशंसन्ति ॥ ९२ ॥ इन्द्रियसुखसाताकुलो घोरपरीषहपराजितापराद्धः । अकृतपरिकर्मा क्लीबो मुह्यत्याराधनाकाले ॥ ९३ ॥ लज्जया गौरवेण च बहुश्रुतमदेन वाऽपि दुश्चरितम् । ये न कथयन्ति गुरुभ्यो नैव ते आराधका भवन्ति ॥ ९४ ॥ शुध्यति दुष्करकारी जानाति मार्गमिति प्राप्नोति कीर्त्तिम् । विनिगूहानो निन्दति (विनिगूहमानो निन्द्यते) तस्मादाराधना श्रेयसी ॥ ९५ ॥ नैव कारणं तृणमयः संस्तारकः, नैव च प्रासुका भूमिः । आत्मैव संस्तारको भवति विशुद्धं मनो यस्य ॥ ९६ ॥ जिनवचनमनुगता मम भवतु मतिर्ध्यानयोगमाश्रिता । यथा तस्मिन् देशकालेऽमूढसञ्ज्ञस्त्यजेयं देहम् ॥९७॥ यदा भवति प्रमत्तो जिनवचन (स्मृति) रहितोऽनायत्तः । तदेन्द्रियचौराः कुर्वन्ति तपःसंयम-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ॥९९॥ दीप अनुक्रम [९९]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२६],प्रकीर्णकसूत्र-[०३] महाप्रत्याख्यान मूलं एवं संस्कृतछाया



जिणवयणमणुगयमई जं वेलं होइ संवरपविट्ठो। अग्गीव वाउसहिओ समूलडालं डहइ कम्मं ॥९९॥२३२॥
जह डहइ वाउसहिओ अग्गी रुक्खे विहरि वणखंडे। तह पुरिसकारसहिओ नाणी कम्मं खयं णेई ॥ १०० ॥
॥ २३३ ॥ जं अन्नाणीकम्मं खवेइ बहुआहिं वासकोडीहिं। तं नाणी तिहिं गुत्तो खवेइ ऊसासमित्तेणं ॥१०१॥
॥ २३४ ॥ न हु मरणंमि उवग्गे सक्को बारसविहो सुयक्खंधो। सव्वो अणुचिंतेउं धणियंपि समत्थचित्तेणं
॥ १०२ ॥ २३५ ॥ इक्कंमिवि जंमि पए संवेगं कुणइ वीयरायमए। सो तेण मोहजालं छिंदइ अज्झप्पओगेणं
॥ १०३ ॥ २३६ ॥ इक्कंमिवि जंमि पए संवेगं कुणइ वीयरायमए। तं तस्स होइ नाणं जेण विरागत्तमुवेइ ॥ १०४ ॥ २३७ ॥ इक्कंमिवि जंमि पए संवेगं कुणइ वीयरायमए। वच्चइ नरो अभिक्खं तं मरणं तेण मरियव्वं ॥ १०५ ॥ २३८ ॥ जेण विरागो जायइ तं तं सव्वायरेण कायव्वं। मुच्चइ हु संवेगी अणंतओ होइ असं-

---

विलोम(प)म् ॥९८॥ जिनवचनानुगतमतिर्यो वेलां (यावत्) भवति संवरप्रविष्टः। अग्निरिव वायुसहितः समूलशाखं दहति कर्म(वृक्षम्) ॥ ९९ ॥ यथा दहति वायुसहितोऽग्निर्विहृत्य वनखण्डे । तथा पुरुषकारसहितो ज्ञानी कर्म क्षयं नयति ॥ १०० ॥ यत् अज्ञानी कर्म क्षपयति बहुकामिर्वर्षकोटीभिः। तज्ज्ञानी त्रिभिर्गुप्तः क्षपयत्युच्छ्वासमात्रेण ॥ १०१ ॥ नैव मरणे उपाप्ते शक्यो द्वादशविधः श्रुतस्कन्धः। सर्वोऽनुचिन्तयितुं बाढमपि समर्थचित्तेन ॥१०२॥ एकस्मिन्नपि यस्मिन् पदे संवेगं करोति वीतरागमते। स तेन मोहजालं छिनस्त्यध्यात्मयोगेन ॥ १०३ ॥ एकस्मिन्नपि यस्मिन् पदे संवेगं करोति वीतरागमते। तत्तस्य भवति ज्ञानं येन विरागत्वमुपैति ॥१०४॥ एकस्मिन्नपि० । व्रजति नरोऽभीक्ष्णं तन्मरणं तेन मर्त्तव्यम् ॥ १०५ ॥ येन विरागो जायते तत्तत् सर्वादरेण कर्त्तव्यम् । मुच्यते संवेग्येव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वेगी ॥ १०६ ॥ २३९ ॥ धम्म जिणपन्नत्त सम्मामेणं सद्दहामि तिविहेणं । तसथावरभूअहियं पंथं निव्वाणनगरस्स ॥ १०७ ॥ २४० ॥ समणोमित्ति य पढमं बीयं सव्वत्थ संजओ मित्ति । सव्वं च वोसिरामि जिणेहिं जं जं च पडिकुट्ठं ॥ १०८ ॥ २४१ ॥ उवही सरीरगं चेव, आहारं च चउविहं । मणसावयकाएणं, वोसिरामित्ति भावओ ॥१०९॥२४२॥ मणसा अचिंतणिज्जं सव्वं भासाइ अभासणिज्जं च । काएण अकरणिज्जं सव्वं तिविहेण वोसिरे ॥ ११० ॥ २४३ ॥ अस्संजमत्तोगसणं (अस्संजमे वेरमणं) उवही विवेगकरणं उवसमो (य) । अप्पडिरुयजोगविरओ खंती मुत्ती विवेगो अ ॥ १११ ॥ २४४ ॥ एयं पच्चक्खाणं आउरजण आवईसु भावेण । अण्णयरं पडिवण्णो जंपंतो पावइ समाहिं ॥ ११२ ॥ २४५ ॥ एयंसि निमित्तंमी पच्चक्खाऊण जइ करे कालं । तो पच्चखाइयव्वं इमेण इक्केणवि पएणं ॥ ११३ ॥ २४६ ॥ मम मंगलमरिहंता सिद्धा साहू सुयं च धम्मो य ।

अनन्तगो भवत्संविग्नः ॥ १०६ ॥ धर्मं जिनप्रज्ञप्तं सम्यग् इमं श्रद्दधे त्रिविधेन । त्रसस्थावरभूतहितं पन्थानं निर्वाणनगरस्य ॥ १०७ ॥ श्रमणोऽस्मीति च प्रथमं द्वितीयं सर्वत्र संयतोऽस्मीति । सर्वं च व्युत्सृजामि जिनैर्यद् यच्च प्रतिकुष्टम् ॥ १०८ ॥ उपधिं शरीरमेव आहारं च चतुर्विधम् । मनोवाक्कायैर्व्युत्सृजामि इति भावतः ॥१०९॥ मनसाऽचिन्तनीयं सर्वं भाषयाऽभाषणीयं च । कायेनाकरणीयं सर्वं त्रिविधेन व्युत्सृजामि ॥११०॥ असंयमत्वापकर्षणं (असंयमाद्विरमणं) उपधिविवेककरणमुपशमः (च) । अप्रतिरुग्योगविरतः क्षान्तिर्मुक्तिर्विवेकश्च ॥ १११ ॥ एतत्प्रत्याख्यानमातुरजन आपत्सु भावेन । अन्यतरत्प्रतिपन्नो जल्पन् (यत् प्राप्तः) प्राप्नोति समाधिम् ॥११२॥ एतस्मिन् निमित्ते प्रत्याख्याय यदि (यतिः) करोति कालम् । तत् प्रत्याख्यातव्यमनेनैकेनापि पदेन ॥ ११३ ॥ मम मङ्गलमर्हन्तः सिद्धाः साधवः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||११४|| दीप अनुक्रम [११४]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२६],प्रकीर्णकसूत्र-[०३] महाप्रत्याख्यान मूलं एवं संस्कृतछाया

तेसिं सरणोवगओ सावज्जं वोसिरामित्ति ॥ ११४ ॥ २४७ ॥ अरहंता मंगलं मज्झ, अरहंता मज्झ देवया । अरहंते कित्तइत्ताणं, वोसिरामित्ति पावगं ॥ ११५ ॥ २४८ ॥ सिद्धा य मंगलं मज्झ, सिद्धा य मज्झ देवया । सिद्धे य कित्तइत्ताणं, वोसिरामित्ति पावगं ॥ ११६ ॥ २४९ ॥ आयरिया मंगलं मज्झ, आयरिया मज्झ देवया । आयरिए कित्तइत्ताणं, वोसिरामित्ति पावगं ॥ ११७ ॥ २५० ॥ उज्झाया मंगलं मज्झ, उज्झाया मज्झ देवया । उज्झाए कित्तइत्ताणं, वोसिरामित्ति पावगं ॥ ११८ ॥ २५१ ॥ साहू य मंगलं मज्झ, साहू य मज्झ देवया । साहू य कित्तइत्ताणं, वोसिरामित्ति पावगं ॥ ११९ ॥ २५२ ॥ सिद्धे उवसंपण्णो अरहंते केवलित्ति भावेणं । इत्तो एगयरेणवि पएण आराहओ होइ ॥ १२० ॥ २५३ ॥ समुइण्णवेयणो पुण समणो हियएण किंपि चिंतिज्जा । आलंबणाइं काइं काऊण मुणी दुहं सहइ ? ॥ १२१ ॥ २५४ ॥ वेयणासु उइन्नासु, किं मे सत्तं

श्रुतं च धर्मश्च । तेषां शरणमुपगतः सावद्यं व्युत्सृजामीति ॥ ११४ ॥ अर्हन्तो मङ्गलं मम अर्हन्तो मम देवताः । अर्हतः कीर्त्तयित्वा व्युत्सृजामीति पापकम् ॥ ११५ ॥ सिद्धाश्च मङ्गलं मम सिद्धाश्च मम देवताः । सिद्धांश्च कीर्त्तयित्वा व्युत्सृजामीति पापकम् ॥ ११६ ॥ आचार्या मङ्गलं मम आचार्या मम देवताः । आचार्यान् कीर्त्तयित्वा व्युत्सृजामीति पापकम् ॥ ११७ ॥ उपाध्याया मङ्गलं मम उपाध्याया मम देवताः । उपाध्यायान् कीर्त्तयित्वा व्युत्सृजामीति पापकम् ॥ ११८ ॥ साधवश्च मङ्गलं मम साधवश्च मम देवताः । साधूँश्च कीर्त्तयित्वा व्युत्सृजामीति पापकम् ॥ ११९ ॥ सिद्धानुपसंपन्नः अर्हतः केवलिन इति भावेन । एतामेकतरेणापि पदेनाराधको भवति ॥ १२० ॥ समुदीर्णवेदनः पुनः श्रमणो हृदये किमपि (किं वि) चिन्तयेत् । आलम्बनानि कानि कृत्वा मुनिर्दुःखं सहते ? ॥१२१॥ वेदनासूदीर्णासु किं मम

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

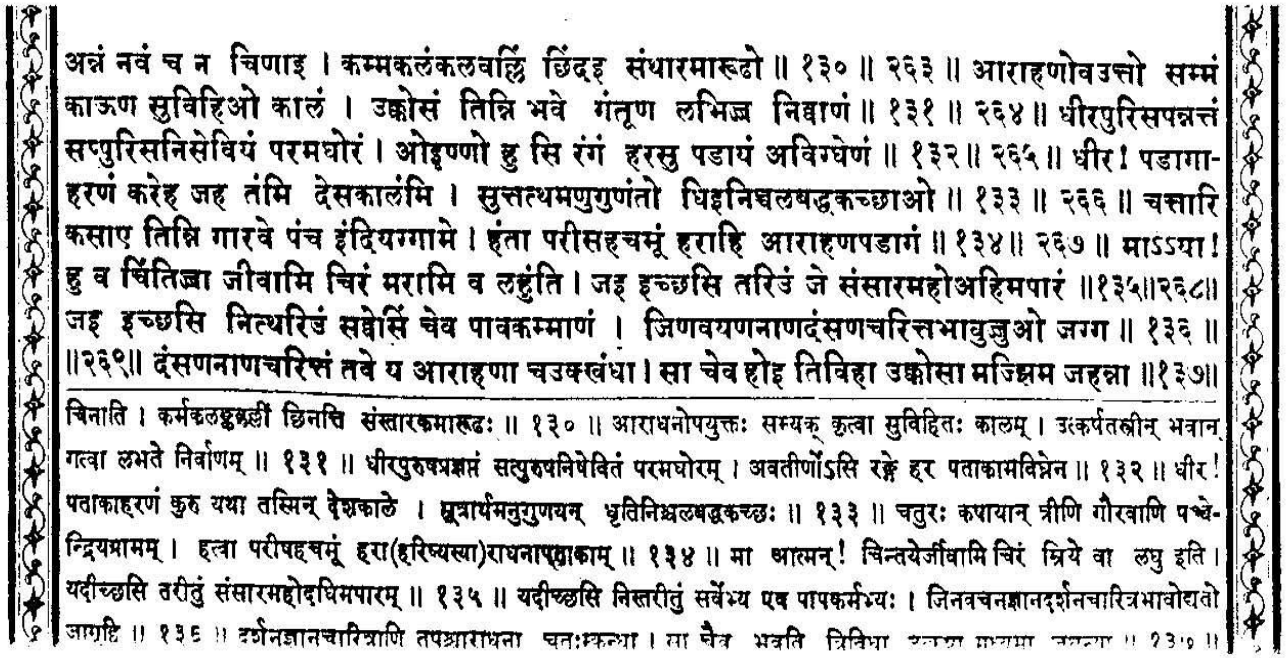
	अरहंत आदीनाम् मंगलत्वं

निवेयए । किं वाऽऽलंघणं किच्चा, तं दुक्खमहियासए? ॥ १२२ ॥ २५५ ॥ अणुत्तरेसु नरएसु, वेयणाओ अणुत्तरा । पमाए वट्टमाणेणं, मए पत्ता अणंतसो ॥ १२३ ॥ २५६ ॥ मए कयं इमं कम्मं, समासज्ज अबोहिअं । पोराणगं इमं कम्मं, मए पत्तं अणंतसो ॥ १२४ ॥ २५७ ॥ ताहिं दुक्खविवागाहिं, उवचिण्णाहिं तहिं तहिं । न य जीवो अजीवो उ, कयपुव्वो उ चिंतए ॥ १२५ ॥ २५८ ॥ अब्भुज्जुयं विहारं इत्थं जिणएसियं विउपसत्थं । नाउं महापुरिससेवियं अब्भुज्जुयं मरणं ॥ १२६ ॥ २५९ ॥ जह पच्छिमंमि काले पच्छिमतित्थयरदेसियमुयारं । पच्छा निच्छयपत्थं उवेमि अब्भुज्जुयं मरणं ॥ १२७ ॥ २६० ॥ बत्तीसमंडियाहिं कडजोगी जोगसंगहबलेणं । उज्जमिऊण य बारसविहेण तवणेहपाणेणं ॥ १२८ ॥ २६१ ॥ संसाररंगमज्झे धिइबलववसायबद्धकच्छाओ । हंतूण मोहमल्लं हराहि आराहणपडागं ॥ १२९ ॥ २६२ ॥ पोराणगं च कम्मं खवेइ

सत्त्वं (इति) निवेदयेत् । किं वाऽऽलम्बनं कृत्वा तद्दुःखमध्यास्ते ॥ १२२ ॥ अनुत्तरेषु नरकेषु वेदना अनुत्तराः । प्रमादे वर्त्तमानेन मया प्राप्ता अनन्तशः ॥ १२३ ॥ मया कृतमिदं कर्म समासाद्यावोधिकम् । पुराणमिदं कर्म मया प्राप्तमनन्तशः ॥ १२४ ॥ ताभिर्दुःखविपाकामिरुपचीर्णाभिस्तत्र तत्र । न च जीवस्त्वजीवः कृतपूर्वस्तु (इति) चिन्तयेत् ॥ १२५ ॥ अभ्युद्यतं विहारमित्थं जिनदेशितं विद्वत्प्रशस्तम् । ज्ञात्वा महापुरुषसेवितमभ्युद्यतं मरणम् ॥ १२६ ॥ यथा पश्चिमे काले पश्चिमतीर्थकरदिष्टमुपकारम् । पश्चान्निश्चयपथ्यमुपयाम्यभ्युद्यतं मरणम् ॥१२७॥ द्वात्रिंशन्मण्डिकाभिः कृतयोगी योगसङ्ग्रहबलेन । उद्यम्य च द्वादशविधेन तपःस्नेहपानेन ॥१२८॥ संसाररङ्गमध्ये धृतिबलव्यवसायबद्धकक्षः । हत्वा मोहमलं हराराधनापताकाम् ॥ १२९ ॥ युग्मम् । पुराणं च कर्म क्षपयति अन्यन्नवं च न

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||१३०|| दीप अनुक्रम [१३०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२६],प्रकीर्णकसूत्र-[०३] महाप्रत्याख्यान मूलं एवं संस्कृतछाया



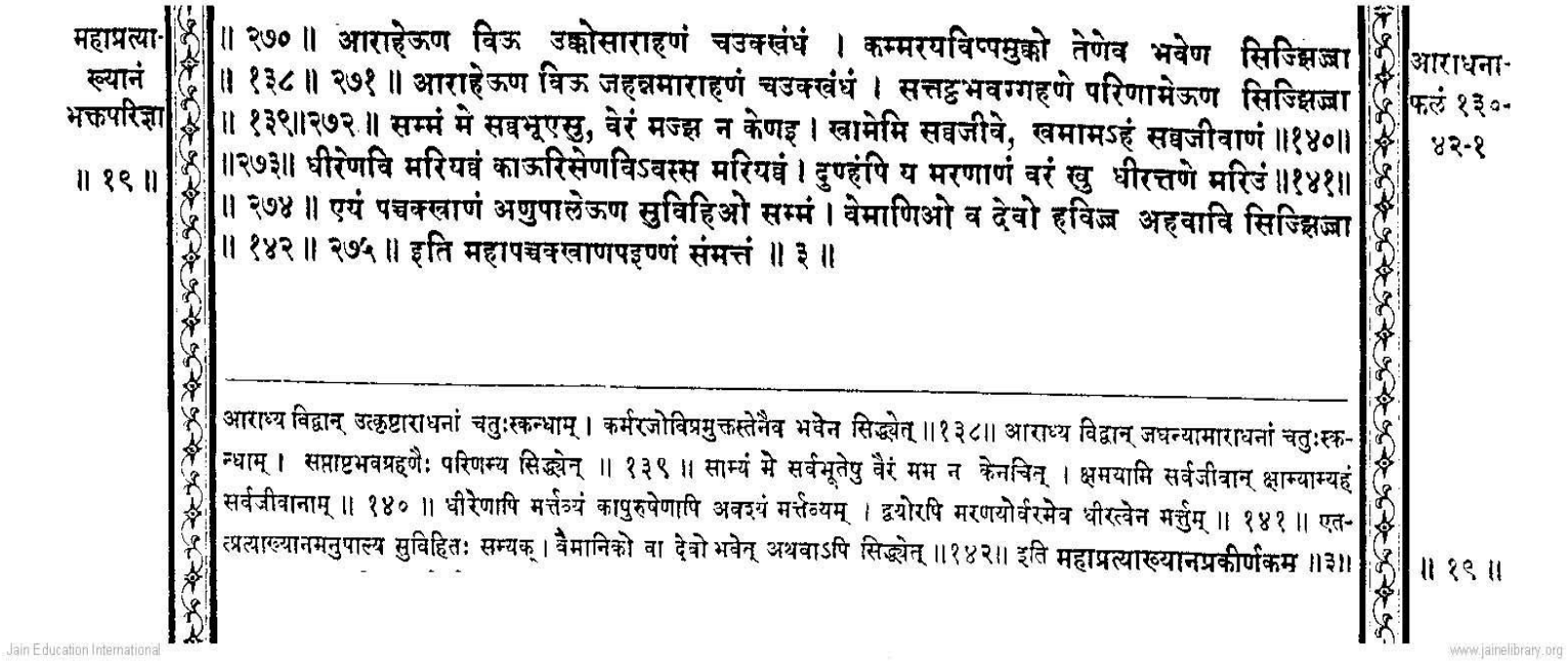
अन्नं नवं च न चिणाइ । कम्मकलंकलवल्लिं छिंदइ संथारमारूढो ॥ १३० ॥ २६३ ॥ आराहणोवउत्तो सम्मं काऊण सुविहिओ कालं । उक्कोसं तिन्नि भवे गंतूण लभिज्ज निव्वाणं ॥ १३१ ॥ २६४ ॥ धीरपुरिसपन्नत्तं सप्पुरिसनिसेवियं परमघोरं । ओइण्णो हु सि रंगं हरसु पडायं अविग्घेणं ॥ १३२ ॥ २६५ ॥ धीर! पडागाहरणं करेह जह तंमि देसकालंमि । सुत्तत्थमणुगुणंतो धिइनिच्चलबद्धकच्छाओ ॥ १३३ ॥ २६६ ॥ चत्तारि कसाए तिन्नि गारवे पंच इंदियग्गामे । हंता परीसहचमूं हराहि आराहणपडागं ॥ १३४ ॥ २६७ ॥ माऽऽया! हु व चिंतिज्जा जीवामि चिरं मरामि व लहुंति । जइ इच्छसि तरिउं जे संसारमहोअहिमपारं ॥१३५॥२६८॥ जइ इच्छसि नित्थरिउं सव्वेसिं चेव पावकम्माणं । जिणवयणनाणदंसणचरित्तभावुज्जुओ जग्ग ॥ १३६ ॥ ॥२६९॥ दंसणनाणचरित्तं तवे य आराहणा चउक्खंधा । सा चेव होइ तिविहा उक्कोसा मज्झिम जहन्ना ॥१३७॥

चिनाति । कर्मकलङ्कवल्लीं छिनत्ति संस्तारकमारूढः ॥ १३० ॥ आराधनोपयुक्तः सम्यक् कृत्वा सुविहितः कालम् । उत्कर्षतस्त्रीन् भवान् गत्वा लभते निर्वाणम् ॥ १३१ ॥ धीरपुरुषप्रज्ञप्तं सत्पुरुषनिषेवितं परमघोरम् । अवतीर्णोऽसि रङ्गं हर पताकामविघ्नेन ॥ १३२ ॥ धीर! पताकाहरणं कुरु यथा तस्मिन् देशकाले । सूत्रार्थमनुगुणयन् धृतिनिश्चलबद्धकच्छः ॥ १३३ ॥ चतुरः कषायान् त्रीणि गौरवाणि पञ्चेन्द्रियग्रामम् । हत्वा परीषहचमूं हरा(हरिष्यस्या)राधनापताकाम् ॥ १३४ ॥ मा आत्मन्! चिन्तयेर्जीवामि चिरं म्रिये वा लघु इति । यदीच्छसि तरीतुं संसारमहोदधिमपारम् ॥ १३५ ॥ यदीच्छसि निस्तरीतुं सर्वेभ्य एव पापकर्मभ्यः । जिनवचनज्ञानदर्शनचारित्रभावोद्यतो जागृहि ॥ १३६ ॥ दर्शनज्ञानचारित्राणि तपश्चाराधना चतस्रः कन्या । सा चैव भवति त्रिविधा उत्कृष्टा मध्यमा जघन्या ॥ १३७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||१३८||

दीप अनुक्रम [१३८]



महाप्रत्याख्यानं भक्तपरिज्ञा ॥ १९ ॥

॥ २७० ॥ आराहेऊण विऊ उक्कोसाराहणं चउक्खंधं । कम्मरयविप्पमुक्को तेणेव भवेण सिज्झिज्जा
॥ १३८ ॥ २७१ ॥ आराहेऊण विऊ जहन्नमाराहणं चउक्खंधं । सत्तट्ठभवग्गहणे परिणामेऊण सिज्झिज्जा
॥ १३९॥२७२ ॥ सम्मं मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झ न केणइ । खामेमि सव्वजीवे, खमामऽहं सव्वजीवाणं ॥१४०॥
॥२७३॥ धीरेणवि मरियव्वं काऊरिसेणविऽवस्स मरियव्वं । दुण्हंपि य मरणाणं वरं खु धीरत्तणे मरिउं ॥१४१॥
॥ २७४ ॥ एयं पच्चक्खाणं अणुपालेऊण सुविहिओ सम्मं । वेमाणिओ व देवो हविज्ज अहवावि सिज्झिज्जा
॥ १४२ ॥ २७५ ॥ इति महापच्चक्खाणपइण्णं संमत्तं ॥ ३ ॥

आराधना-फलं १३०-४२-१

आराध्य विद्वान् उत्कृष्टाराधनां चतुःस्कन्धाम् । कर्मरजोविप्रमुक्तस्तेनैव भवेन सिद्ध्येत् ॥१३८॥ आराध्य विद्वान् जघन्यामाराधनां चतुःस्कन्धाम् । सप्ताष्टभवग्रहणैः परिणम्य सिद्ध्येत् ॥ १३९ ॥ साम्यं मे सर्वभूतेषु वैरं मम न केनचित् । क्षमयामि सर्वजीवान् क्षाम्याम्यहं सर्वजीवानाम् ॥ १४० ॥ धीरेणापि मर्त्तव्यं कापुरुषेणापि अवश्यं मर्त्तव्यम् । द्वयोरपि मरणयोर्वरमेव धीरत्वेन मर्तुम् ॥ १४१ ॥ एतत्प्रत्याख्यानमनुपाल्य सुविहितः सम्यक् । वैमानिको वा देवो भवेत् अथवाऽपि सिद्ध्येत् ॥१४२॥ इति महाप्रत्याख्यानप्रकीर्णकम ॥३॥

॥ १९ ॥

Jain Education International www.jainelibrary.org

भाग 26	महाप्रत्याख्यान-प्रकीर्णकसूत्र [३] मूलं एवं संस्कृतछाया: परिसमाप्ता:

मूल संशोधकः सम्पादकश्च पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

किंचित् वैशिष्ट्य समर्पितेन सह पुन: संकलनकर्ता मुनि दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

“भक्तपरिज्ञा” मूलं एवं छाया

[मूलं एवं संस्कृतछाया]

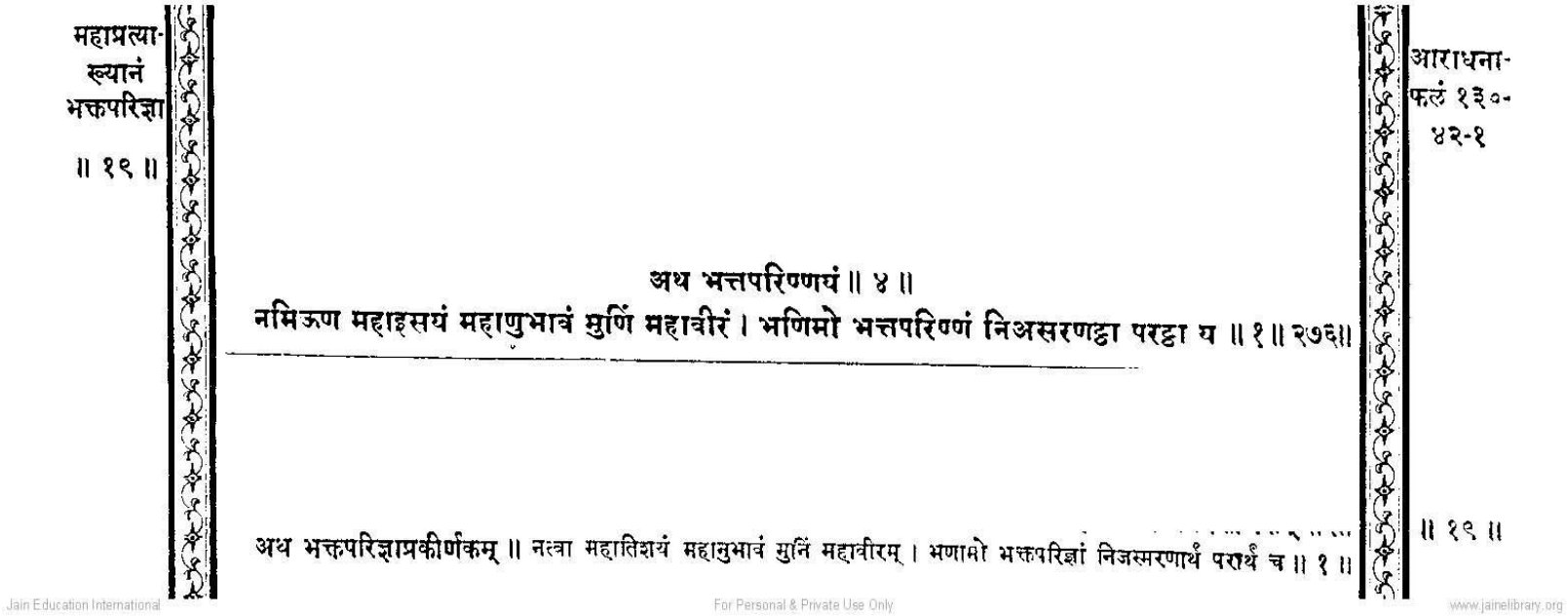
[आद्य संपादकश्री]

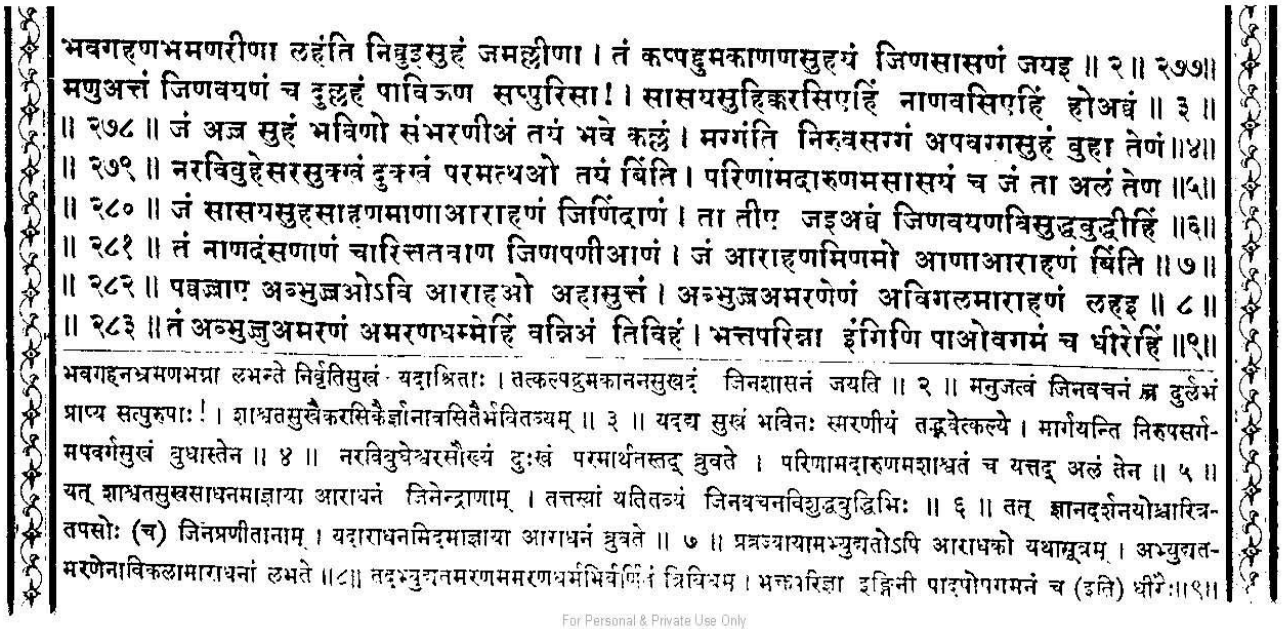
पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

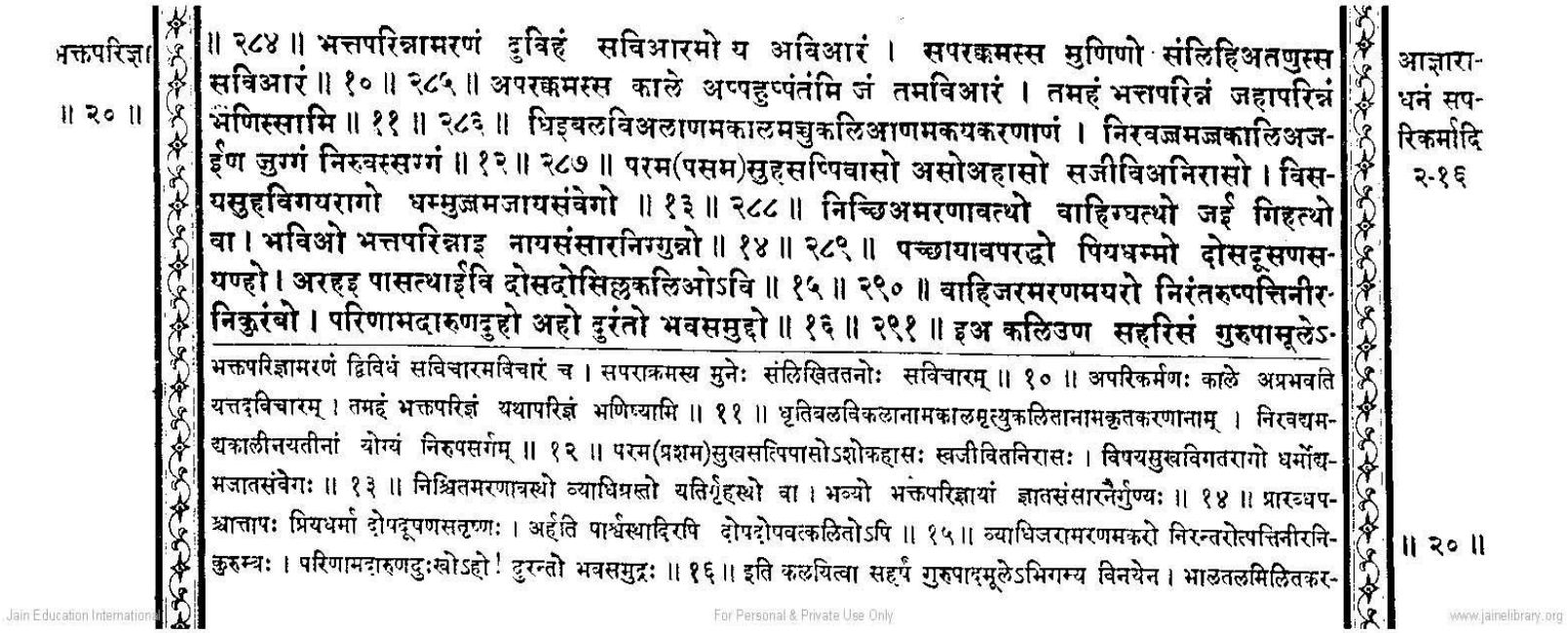
पुन: संकलनकर्ता→ मुनि दीपरत्नसागर (M.Com., M.Ed., Ph.D.,श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५ ‘सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि’ श्रेणि भाग-२६

प्रत सूत्रांक ||१|| दीप अनुक्रम [१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:  महाप्रत्या- ख्यानं भक्तपरिज्ञा ॥ १९ ॥ अथ भत्तपरिण्णयं ॥ ४ ॥ नमिऊण महाइसयं महाणुभावं मुणिं महावीरं । भणिमो भत्तपरिण्णं निअसरणट्ठा परट्ठा य ॥ १ ॥ २७६॥ आराधना- फलं १३०- ४२-१ अथ भक्तपरिज्ञाप्रकीर्णकम् ॥ नत्वा महातिशयं महानुभावं मुनिं महावीरम् । भणामो भक्तपरिज्ञां निजस्मरणार्थं परार्थं च ॥ १ ॥ ॥ १९ ॥ Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org
	भगवंत महावीरस्य वंदना

प्रत सूत्रांक ॥२॥ दीप अनुक्रम [२]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:  भवगहणभमणरीणा लहंति निवुइसुहं जमल्लीणा । तं कप्पदुमकाणणसुहयं जिणसासणं जयइ ॥ २ ॥ २७७॥ मणुअत्तं जिणवयणं च दुल्लहं पाविऊण सप्पुरिसा! । सासयसुहिक्करसिएहिं नाणवसिएहिं होअव्वं ॥ ३ ॥ ॥ २७८ ॥ जं अज्ज सुहं भविणो संभरणीअं तयं भवे कल्लं । मग्गंति निरुवसग्गं अपवग्गसुहं वुहा तेणं ॥४॥ ॥ २७९ ॥ नरविबुहेसरसुक्खं दुक्खं परमत्थओ तयं बिंति । परिणामदारुणमसासयं च जं ता अलं तेण ॥५॥ ॥ २८० ॥ जं सासयसुहसाहणमाणाआराहणं जिणिंदाणं । ता तीए जइअव्वं जिणवयणविसुद्धबुद्धीहिं ॥६॥ ॥ २८१ ॥ तं नाणदंसणाणं चारित्ततवाण जिणपणीआणं । जं आराहणमिणमो आणाआराहणं बिंति ॥ ७ ॥ ॥ २८२ ॥ पव्वज्जाए अब्भुज्जओऽवि आराहओ अहासुत्तं । अब्भुज्जअमरणेणं अविगलमाराहणं लहइ ॥ ८ ॥ ॥ २८३ ॥ तं अब्भुज्जुअमरणं अमरणधम्मेहिं वन्निअं तिविहं । भत्तपरिन्ना इंगिणि पाओवगमं च धीरेहिं ॥९॥ भवगहनभ्रमणभग्ना लभन्ते निर्वृतिसुखं यदाश्रिताः । तत्कल्पद्रुमकाननसुखदं जिनशासनं जयति ॥ २ ॥ मनुजत्वं जिनवचनं च दुर्लभं प्राप्य सत्पुरुषाः! । शाश्वतसुखैकरसिकैर्ज्ञानावसितैर्भवितव्यम् ॥ ३ ॥ यदद्य सुखं भविनः स्मरणीयं तद्भवेत्कल्ये । मार्गयन्ति निरुपसर्गमपवर्गसुखं बुधास्तेन ॥ ४ ॥ नरविबुधेश्वरसौख्यं दुःखं परमार्थतस्तद् ब्रुवते । परिणामदारुणमशाश्वतं च यत्तद् अलं तेन ॥ ५ ॥ यत् शाश्वतसुखसाधनमाज्ञाया आराधनं जिनेन्द्राणाम् । तत्तस्यां यतितव्यं जिनवचनविशुद्धबुद्धिभिः ॥ ६ ॥ तत् ज्ञानदर्शनयोश्चारित्रतपसोः (च) जिनप्रणीतानाम् । यदाराधनमिदमाज्ञाया आराधनं ब्रुवते ॥ ७ ॥ प्रव्रज्यायामभ्युद्यतोऽपि आराधको यथासूत्रम् । अभ्युद्यतमरणेनाविकलामाराधनां लभते ॥८॥ तदभ्युद्यतमरणममरणधर्मभिर्वर्णितं त्रिविधम् । भक्तपरिज्ञा इङ्गिनी पादपोपगमनं च (इति) धीरैः॥९॥ Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org
	अत्र आज्ञा-आराधनं वर्ण्यते

| प्रत सूत्रांक ॥९॥ दीप अनुक्रम [९] | पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:



भक्तपरिज्ञा ॥ २० ॥

॥ २८४ ॥ भत्तपरिन्नामरणं दुविहं सविआरमो य अविआरं । सपरक्कमस्स मुणिणो संलिहिअतणुस्स सविआरं ॥ १० ॥ २८५ ॥ अपरक्कमस्स काले अप्पहुप्पंतंमि जं तमविआरं । तमहं भत्तपरिन्नं जहापरिन्नं भणिस्सामि ॥ ११ ॥ २८६ ॥ धिइबलविअलाणमकालमच्चुकलिआणमकयकरणाणं । निरवज्जमज्जकालिअजईण जुग्गं निरुवस्सग्गं ॥ १२ ॥ २८७ ॥ परम(पसम)सुहसप्पिवासो असोअहासो सजीविअनिरासो । विसयसुहविगयरागो धम्मुज्जमजायसंवेगो ॥ १३ ॥ २८८ ॥ निच्छिअमरणावत्थो वाहिग्घत्थो जई गिहत्थो वा । भविओ भत्तपरिन्नाइ नायसंसारनिग्गुन्नो ॥ १४ ॥ २८९ ॥ पच्छायावपरद्धो पियधम्मो दोसदूसणसयण्हो । अरहइ पासत्थाईवि दोसदोसिल्लकलिओऽवि ॥ १५ ॥ २९० ॥ वाहिजरमरणमयरो निरंतरुप्पत्तिनीरनिकुरंबो । परिणामदारुणदुहो अहो दुरंतो भवसमुद्दो ॥ १६ ॥ २९१ ॥ इअ कलिउण सहरिसं गुरुपामूलेऽ-

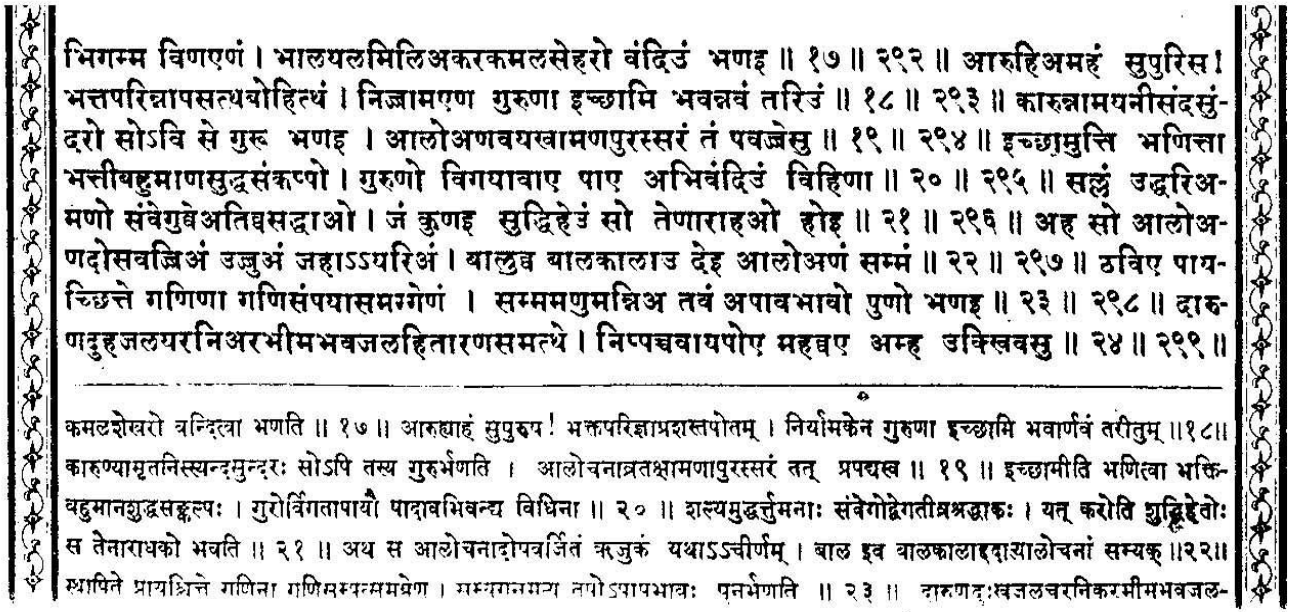
भक्तपरिज्ञामरणं द्विविधं सविचारमविचारं च । सपराक्रमस्य मुनेः संलिखिततनोः सविचारम् ॥ १० ॥ अपरिकर्मणः काले अप्रभवति यत्तदविचारम् । तमहं भक्तपरिज्ञं यथापरिज्ञं भणिष्यामि ॥ ११ ॥ धृतिबलविकलानामकालमृत्युकलिलानामकृतकरणानाम् । निरवद्यमद्यकालीनयतीनां योग्यं निरुपसर्गम् ॥ १२ ॥ परम(प्रशम)सुखसर्पिपासोऽशोकहासः स्वजीवितनिरासः । विषयसुखविगतरागो धर्मोद्यमजातसंवेगः ॥ १३ ॥ निश्चितमरणावस्थो व्याधिग्रस्तो यतिर्गृहस्थो वा । भव्यो भक्तपरिज्ञायां ज्ञातसंसारनैर्गुण्यः ॥ १४ ॥ प्रारब्धपश्चात्तापः प्रियधर्मा दोषदूषणसतृष्णः । अर्हति पार्श्वस्थादिरपि दोषदोषवत्कलितोऽपि ॥ १५ ॥ व्याधिजरामरणमकरो निरन्तरोत्पत्तिनीरनिकुरम्बः । परिणामदारुणदुःखोऽहो! दुरन्तो भवसमुद्रः ॥ १६ ॥ इति कलयित्वा सहर्षं गुरुपादमूलेऽभिगम्य विनयेन । भालतलमिलितकर-

आज्ञाराधनं सपरिकर्मादि २-१६

॥ २० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	द्विविधा भक्तपरिज्ञा प्रदर्श्यते

प्रत सूत्रांक ||१७|| दीप अनुक्रम [१७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:  भिगम्म विणएणं । भालयलमिलिअकरकमलसेहरो वंदिउं भणइ ॥ १७ ॥ २९२ ॥ आरुहिअमहं सुपुरिस! भत्तपरिन्नापसत्थबोहित्थं । निज्जामएण गुरुणा इच्छामि भवन्नवं तरिउं ॥ १८ ॥ २९३ ॥ कारुन्नामयनीसंदसुंदरो सोऽवि से गुरू भणइ । आलोअणवयखामणपुरस्सरं तं पवज्जेसु ॥ १९ ॥ २९४ ॥ इच्छामुत्ति भणित्ता भत्तीबहुमाणसुद्धसंकप्पो । गुरुणो विगयावाए पाए अभिवंदिउं विहिणा ॥ २० ॥ २९५ ॥ सल्लं उद्धरिअमणो संवेगुवेअतिव्वसद्धाओ । जं कुणइ सुद्धिहेउं सो तेणाराहओ होइ ॥ २१ ॥ २९६ ॥ अह सो आलोअणदोसवज्जिअं उज्जुअं जहाऽऽयरिअं । बालुव बालकालाउ देइ आलोअणं सम्मं ॥ २२ ॥ २९७ ॥ ठविए पायच्छित्ते गणिणा गणिसंपयासमग्गेणं । सम्ममणुमन्निअ तवं अपावभावो पुणो भणइ ॥ २३ ॥ २९८ ॥ दारुणदुहजलयरनिअरभीमभवजलहितारणसमत्थे । निप्पच्चवायपोए महव्वए अम्ह उक्खिवसु ॥ २४ ॥ २९९ ॥ --- कमलशेखरो वन्दित्वा भणति ॥ १७ ॥ आरुहाहं सुपुरुष! भक्तपरिज्ञाप्रशस्तपोतम् । निर्यामकेन गुरुणा इच्छामि भवार्णवं तरीतुम् ॥१८॥ कारुण्यामृतनिस्यन्दसुन्दरः सोऽपि तस्य गुरुर्भणति । आलोचनाव्रतक्षामणापुरस्सरं तत् प्रपद्यस्व ॥ १९ ॥ इच्छामीति भणित्वा भक्तिबहुमानशुद्धसङ्कल्पः । गुरोर्विगतापायौ पादावभिवन्द्य विधिना ॥ २० ॥ शल्यमुद्धर्तुमनाः संवेगोद्वेगतीव्रश्रद्धाकः । यत् करोति शुद्धिहेतोः स तेनाराधको भवति ॥ २१ ॥ अथ स आलोचनादोषवर्जितं ऋजुकं यथाऽऽचीर्णम् । बाल इव बालकालादददालोचनां सम्यक् ॥२२॥ स्थापिते प्रायश्चित्ते गणिना गणिसम्पत्समग्रेण । सम्यगनुमत्य तपोऽपापभावः पुनर्भणति ॥ २३ ॥ दारुणदुःखजलचरनिकरभीमभवजल-	
	अथ महाव्रतोत्क्षेपस्य वर्णनं क्रियते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:

जइऽवि स खंडिअचंडो अखंडमहव्वओ जई जइवि । पवज्जवउट्ठावणमुट्ठावणमरिहइ तहावि ॥ २५ ॥ ३००॥
पहुणो सुकयाणत्तिं भवा पवप्पिणंति जह विहिणा । जावज्जीवपइण्णाणत्तिं गुरुणो तहा सोऽवि ॥२६॥३०१॥
जो साइआरचरणो आउट्टिअदंडखंडिअवओ वा । तह तस्सवि सम्ममुवट्ठिअस्स उट्ठावणा भणिआ ॥ २७ ॥
॥ ३०२ ॥ तत्तो तस्स महव्वयपव्वयभारोनमंतसीसस्स । सीसस्स समारोवइ सुगुरूवि महव्वए विहिणा ॥ २८ ॥
॥ ३०३ ॥ अह हुज्ज देसविरओ सम्मत्तरओ रओ अ जिणधम्मे । तस्सवि अणुव्वयाइं आरोविज्जंति सुद्धाइं
॥ २९ ॥ ३०४ ॥ अनियाणोदारमणो हरिसवसविसट्टकंचुयकरालो । पूएइ गुरुं संघं साहम्मिअमाइ भत्तीए
॥ ३० ॥ ३०५ ॥ निअदव्वमपुव्वजिणिंदभवणजिणबिंबवरपइट्ठासु । विअरइ पसत्थपुत्थयसुतित्थतित्थयरपूआसु
॥ ३१ ॥ ३०६ ॥ जइ सोऽवि सव्वविरईकयाणुराओ विसुद्धमइकाओ । छिन्नसयणाणुराओ विसयविसाओ

धितारणसमर्थेन । निष्प्रत्यपायं महाव्रतपोतेनास्मान् उत्क्षिप ॥२४॥ यद्यपि स खण्डितचण्डोऽखण्डमहाव्रतो यतिर्यद्यपि । प्रव्रज्याव्रतोपस्थापन उत्थानमर्हति तथापि ॥ २५ ॥ प्रभोः सुकृताज्ञप्तिं भृत्याः प्रत्यर्पयन्ति यथा विधिना । यावज्जीवप्रतिज्ञाऽऽज्ञप्तिं गुरोस्तथा सोऽपि ॥२६॥ यः सातिचारचरण आकुट्टीदण्डखण्डितव्रतो वा । तथा तस्यापि सम्यगुपस्थितस्योपस्थापना भणिता ॥ २७ ॥ ततस्तस्य महाव्रतपर्वतभारावनमच्छीर्षस्य शीर्षे समारोपति सुगुरुरपि महाव्रतानि विधिना ॥ २८ ॥ अथ भवेद्देशविरतः सम्यक्त्वरतो रतश्च जिनवचने । तस्याप्यनुव्रतान्यारोप्यन्ते शुद्धानि ॥ २९ ॥ अनिदानोदारमना हर्षवशविसर्पद्रोमाञ्चकञ्चुककरालः । पूजयति गुरुं सङ्घं साधर्मिकादिं च भक्तया ॥ ३० ॥ निजद्रव्यमपूर्वजिनेन्द्रभवनजिनविम्बवरप्रतिष्ठासु । वितरति प्रशस्तपुस्तकसुतीर्थतीर्थकरपूजासु ॥ ३१ ॥ यदि सोऽपि सर्व-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

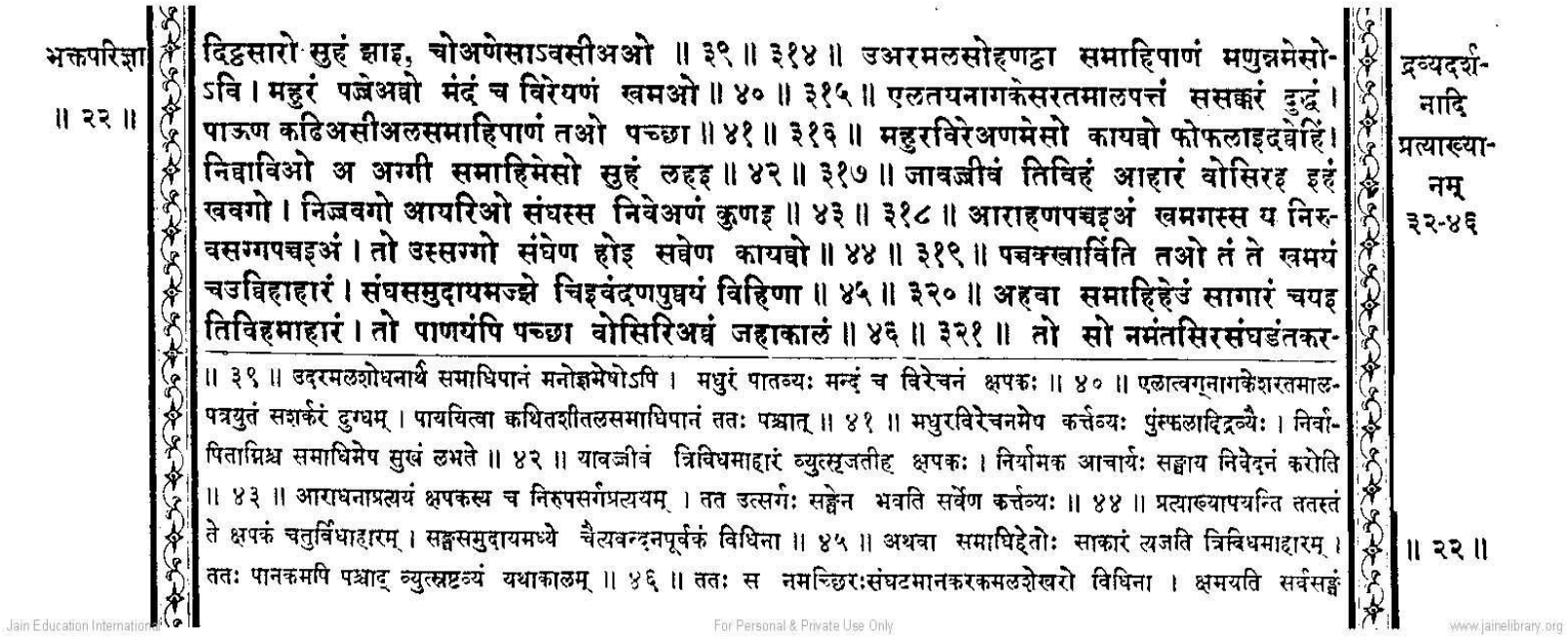
| प्रत सूत्रांक ||३२|| दीप अनुक्रम [३२] | पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:

विरत्तो अ ॥ ३२ ॥ ३०७ ॥ संथारयपवज्जं पवज्जइ सोऽवि निअम निरवज्जं । सव्वविरइप्पहाणं सामाइअचरित्तमारुहइ ॥ ३३ ॥ ३०८ ॥ अह सो सामाइअधरो पडिवन्नमहव्वओ अ जो साहू । देसविरओ अ चरिमं पच्चक्खामित्ति निच्छइओ ॥ ३४ ॥ ३०९ ॥ गुरुगुणगुरुणो गुरुणो पयपंकय नमिअमत्थओ भणइ । भयवं! भत्तपरिन्नं तुम्हाणुमयं पवज्जामि ॥ ३५ ॥ ३१० ॥ आराहणाइ खेमं तस्सेव य अप्पणो अ गणिवसहो । दिव्वेण निमित्तेणं पडिलेहइ इहरहा दोसा ॥ ३६ ॥ ३११ ॥ तत्तो भवचरिमं सो पच्चक्खाइत्ति तिविहमाहारं । उक्कोसिआणि दव्वाणि तस्स सव्वाणि दंसिज्जा ॥ ३७ ॥ ३१२ ॥ पासित्तु ताइं कोई तीरं पत्तस्सिमेहिं किं मज्झ? । देसं च कोइ भुचा संवेगगओ विचिंतेइ–॥ ३८ ॥ ३१३ ॥ किं चत्तं नोवभुत्तं मे, परिणामासुई सुई ।

विरतिकृतानुरागो विशुद्धमतिकायः । छिन्नस्वजनानुरागो विषयविषाद्विरक्तश्च ॥ ३२ ॥ संस्तारकप्रव्रज्यां प्रतिपद्यते सोऽपि नियमान्निरवद्याम् । सर्वविरतिप्रधानं सामायिकचारित्रमारोहति ॥ ३३ ॥ अथ स सामायिकधरः प्रतिपन्नमहाव्रतश्च यः साधुः । देशविरतश्च चरमं प्रत्याख्यामीति निश्चयवान् ॥ ३४ ॥ गुरुगुणगुरोर्गुरोः पदपङ्कजे नतमस्तको भणति । भगवन्! भक्तपरिज्ञां युष्माकमनुमतां प्रपद्ये ॥ ३५ ॥ आराधनायां क्षेमं तस्यैव चात्मनश्च गणिवृषभः । दिव्येन निमित्तेन प्रतिलिखतीतरथा दोषाः ॥ ३६ ॥ ततो भवचरमं स प्रत्याख्याति इति त्रिविधमाहारम् । उत्कृष्टानि सर्वाणि द्रव्याणि तस्मै दर्शयेत् ॥ ३७ ॥ दृष्ट्वा तानि कश्चित्तीरं प्राप्तस्यैभिः किं मम? । देशं च कश्चिद् भुक्त्वा संवेगगतो विचिन्तयेत् ॥ ३८ ॥ मयोपभुक्तं सत् किं न त्यक्तं? शुच्यपि परिणामाशुचि । दृष्टसारः सुखं ध्यायति चोदनेत्याऽवमीदृतः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| प्रत सूत्रांक ||३९|| दीप अनुक्रम [३९] | पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:



भक्तपरिज्ञा ॥ २२ ॥

दिट्ठसारो सुहं झाइ, चोअणेसाऽवसीअओ ॥ ३९ ॥ ३१४ ॥ उअरमलसोहणट्ठा समाहिपाणं मणुन्नमेसो-ऽवि । महुरं पज्जेअवो मंदं च विरेयणं खमओ ॥ ४० ॥ ३१५ ॥ एलतयनागकेसरतमालपत्तं ससक्करं दुद्धं । पाऊण कढिअसीअलसमाहिपाणं तओ पच्छा ॥ ४१ ॥ ३१६ ॥ महुरविरेअणमेसो कायवो फोफलाइदवेहिं । निव्वाविओ अ अग्गी समाहिमेसो सुहं लहइ ॥ ४२ ॥ ३१७ ॥ जावज्जीवं तिविहं आहारं वोसिरइ इहं खवगो । निज्जवगो आयरिओ संघस्स निवेअणं कुणइ ॥ ४३ ॥ ३१८ ॥ आराहणपच्चइअं खमगस्स य निरु-वसग्गपच्चइअं । तो उस्सग्गो संघेण होइ सव्वेण कायवो ॥ ४४ ॥ ३१९ ॥ पच्चक्खाविंति तओ तं ते खमयं चउविहाहारं । संघसमुदायमज्झे चिइवंदणपुव्वयं विहिणा ॥ ४५ ॥ ३२० ॥ अहवा समाहिहेउं सागारं चयइ तिविहमाहारं । तो पाणयंपि पच्छा वोसिरिअव्वं जहाकालं ॥ ४६ ॥ ३२१ ॥ तो सो नमंतसिरसंघडंतकर-

द्रव्यदर्शनादि प्रत्याख्यानम् ३२-४६

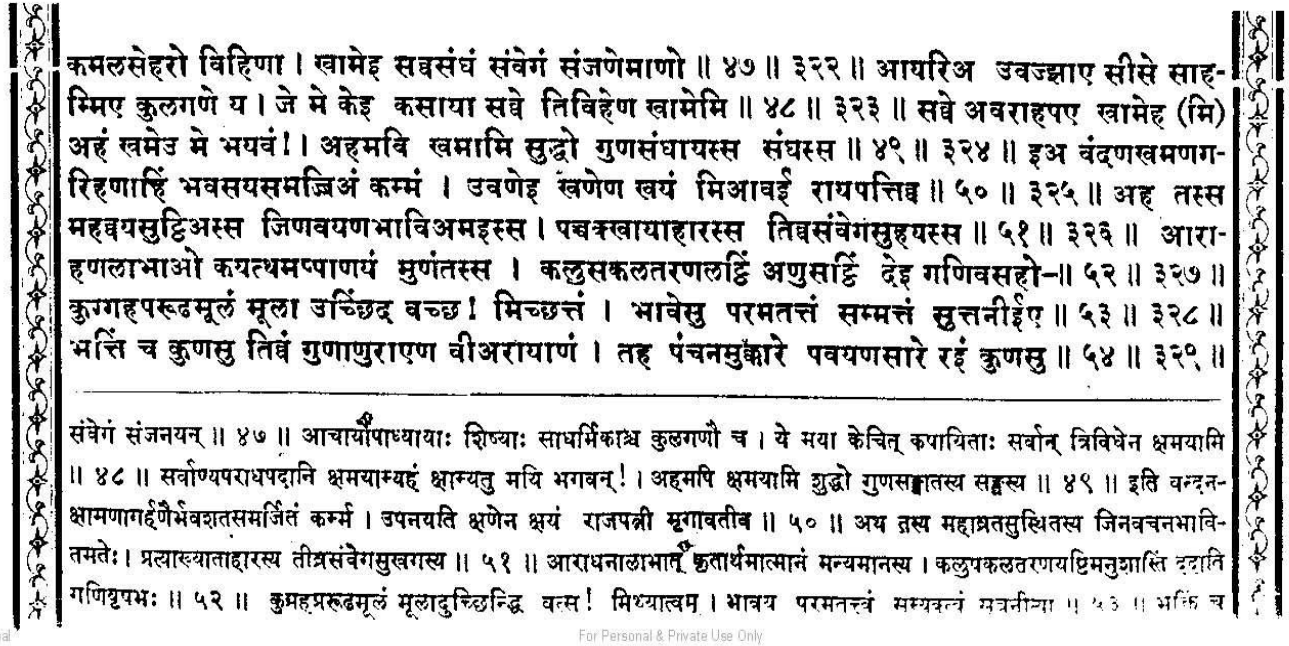
॥ ३९ ॥ उदरमलशोधनार्थं समाधिपानं मनोज्ञमेषोऽपि । मधुरं पातव्यः मन्दं च विरेचनं क्षपकः ॥ ४० ॥ एलात्वग्नागकेशरतमाल-पत्रयुतं सशर्करं दुग्धम् । पाययित्वा कथितशीतलसमाधिपानं ततः पश्चात् ॥ ४१ ॥ मधुरविरेचनमेष कर्त्तव्यः पुंस्फलादिद्रव्यैः । निर्वा-पिताग्निश्च समाधिमेष सुखं लभते ॥ ४२ ॥ यावज्जीवं त्रिविधमाहारं व्युत्सृजतीह क्षपकः । निर्यामक आचार्यः सङ्घाय निवेदनं करोति ॥ ४३ ॥ आराधनाप्रत्ययं क्षपकस्य च निरुपसर्गप्रत्ययम् । तत उत्सर्गः सङ्घेन भवति सर्वेण कर्त्तव्यः ॥ ४४ ॥ प्रत्याख्यापयन्ति ततस्तं ते क्षपकं चतुर्विधाहारम् । सङ्घसमुदायमध्ये चैत्यवन्दनपूर्वकं विधिना ॥ ४५ ॥ अथवा समाधिहेतोः साकारं त्यजति त्रिविधमाहारम् । ततः पानकमपि पश्चाद् व्युत्सृष्टव्यं यथाकालम् ॥ ४६ ॥ ततः स नमच्छिरःसंघटमानकरकमलशेखरो विधिना । क्षमयति सर्वसङ्घं

॥ २२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	आहारस्य व्युत्सर्जन एवं प्रत्याख्यानास्य वर्णनं

| प्रत सूत्रांक ||४७|| दीप अनुक्रम [४७] | पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:



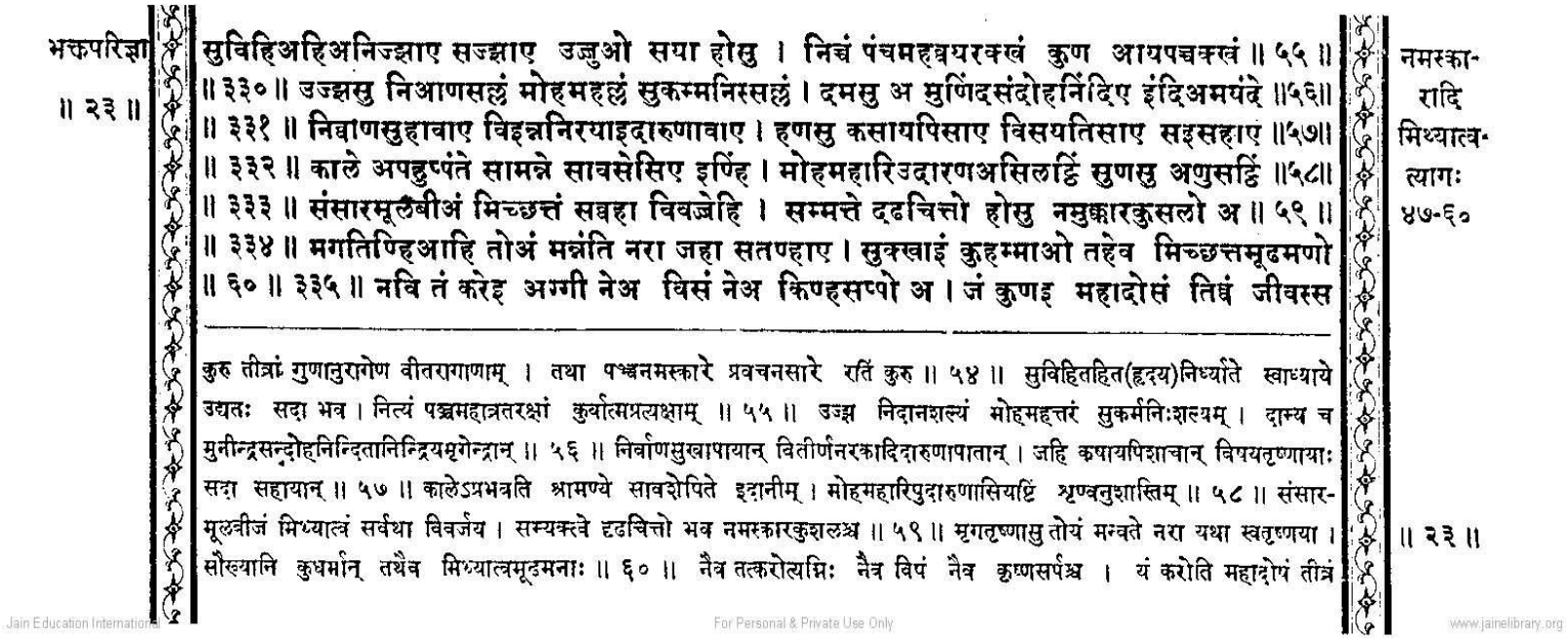
कमलसेहरो विहिणा । खामेइ सव्वसंघं संवेगं संजणेमाणो ॥ ४७ ॥ ३२२ ॥ आयरिअ उवज्झाए सीसे साहम्मिए कुलगणे य । जे मे केइ कसाया सव्वे तिविहेण खामेमि ॥ ४८ ॥ ३२३ ॥ सव्वे अवराहपए खामेह (मि) अहं खमेउ मे भयवं! । अहमवि खमामि सुद्धो गुणसंघायस्स संघस्स ॥ ४९ ॥ ३२४ ॥ इअ वंदणखमणगरिहणाहिं भवसयसमज्जिअं कम्मं । उवणेइ खणेण खयं मिआवई रायपत्तिव्व ॥ ५० ॥ ३२५ ॥ अह तस्स महव्वयसुट्ठिअस्स जिणवयणभाविअमइस्स । पच्चक्खायाहारस्स तिव्वसंवेगसुहयस्स ॥ ५१ ॥ ३२६ ॥ आराहणलाभाओ कयत्थमप्पाणयं मुणंतस्स । कलुसकलतरणलट्ठिं अणुसट्ठिं देइ गणिवसहो–॥ ५२ ॥ ३२७ ॥ कुग्गहपरूढमूलं मूला उच्छिंद वच्छ! मिच्छत्तं । भावेसु परमतत्तं सम्मत्तं सुत्तनीईए ॥ ५३ ॥ ३२८ ॥ भत्तिं च कुणसु तिव्वं गुणाणुराएण वीअरायाणं । तह पंचनमुक्कारे पवयणसारे रइं कुणसु ॥ ५४ ॥ ३२९ ॥

संवेगं संजनयन् ॥ ४७ ॥ आचार्योपाध्यायाः शिष्याः साधर्मिकाश्च कुलगणौ च । ये मया केचित् कषायिताः सर्वान् त्रिविधेन क्षमयामि ॥ ४८ ॥ सर्वाण्यपराधपदानि क्षमयाम्यहं क्षाम्यतु मयि भगवन्! । अहमपि क्षमयामि शुद्धो गुणसङ्घातस्य सङ्घस्य ॥ ४९ ॥ इति वन्दनक्षामणागर्हणैर्भवशतसमर्जितं कर्म्म । उपनयति क्षणेन क्षयं राजपत्नी मृगावतीव ॥ ५० ॥ अथ तस्य महाव्रतसुस्थितस्य जिनवचनभावितमतेः । प्रत्याख्यातान्नाहारस्य तीव्रसंवेगसुखगस्य ॥ ५१ ॥ आराधनालाभात् कृतार्थमात्मानं मन्यमानस्य । कलुषकलतरणयष्टिमनुशास्ति ददाति गणिवृषभः ॥ ५२ ॥ कुग्रहप्ररूढमूलं मूलादुच्छिन्धि वत्स! मिथ्यात्वम् । भावय परमतत्त्वं सम्यक्त्वं सूत्रनीत्या ॥ ५३ ॥ भक्तिं च

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	भक्तपरिज्ञार्थे क्षमापनादि-कृत्यस्य वर्णनं

आगम (२७)	“भक्तपरिज्ञा” – प्रकीर्णकसूत्र-४ (मूलं+संस्कृतछाया) ---------- मूलं [५५] ----------
प्रत सूत्रांक ॥५५॥ दीप अनुक्रम [५५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:
	नमस्कार एवं मिथ्यात्वत्यागस्य निवेदनम्



भक्तपरिज्ञा ॥ २३ ॥

सुविहिअहिअनिज्झाए सज्झाए उज्जुओ सया होसु । निच्चं पंचमहव्वयरक्खं कुण आयपच्चक्खं ॥ ५५ ॥
॥ ३३० ॥ उज्झसु निआणसल्लं मोहमहल्लं सुकम्मनिस्सल्लं । दमसु अ मुणिंदसंदोहनिंदिए इंदिअमयंदे ॥५६॥
॥ ३३१ ॥ निव्वाणसुहावाए विहन्ननिरयाइदारुणावाए । हणसु कसायपिसाए विसयतिसाए सइसहाए ॥५७॥
॥ ३३२ ॥ काले अपहुप्पंते सामन्ने सावसेसिए इण्हिं । मोहमहारिउदारणअसिलट्ठिं सुणसु अणुसट्ठिं ॥५८॥
॥ ३३३ ॥ संसारमूलबीअं मिच्छत्तं सव्वहा विवज्जेहि । सम्मत्ते दढचित्तो होसु नमुक्कारकुसलो अ ॥ ५९ ॥
॥ ३३४ ॥ मगतिण्हिआहि तोअं मन्नंति नरा जहा सतण्हाए । सुक्खाइं कुहम्माओ तहेव मिच्छत्तमूढमणो
॥ ६० ॥ ३३५ ॥ नवि तं करेइ अग्गी नेअ विसं नेअ किण्हसप्पो अ । जं कुणइ महादोसं तिव्वं जीवस्स

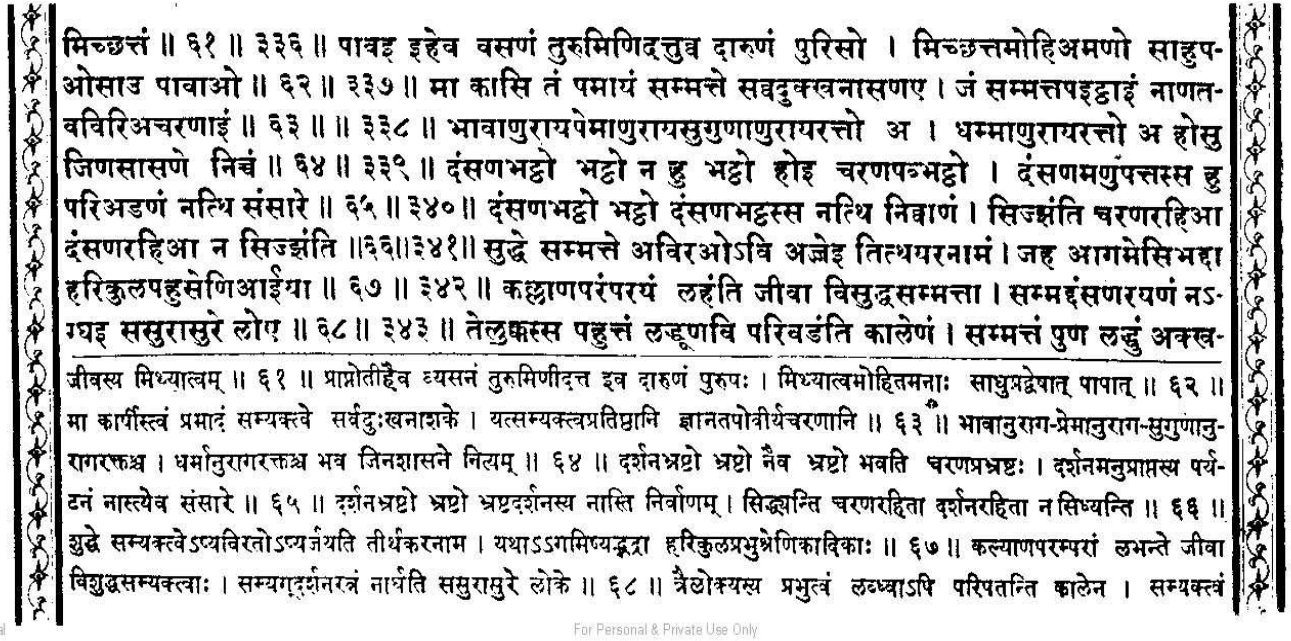
नमस्कारादि मिथ्यात्वत्यागः ४७-६०

कुरु तीव्रां गुणानुरागेण वीतरागाणाम् । तथा पञ्चनमस्कारे प्रवचनसारे रतिं कुरु ॥ ५४ ॥ सुविहितहित(हृदय)निर्ध्याते स्वाध्याये उद्यतः सदा भव । नित्यं पञ्चमहाव्रतरक्षां कुर्वात्मप्रत्यक्षाम् ॥ ५५ ॥ उज्झ निदानशल्यं मोहमहत्तरं सुकर्मनिःशल्यम् । दाम्य च मुनीन्द्रसन्दोहनिन्दितानिन्द्रियमृगेन्द्रान् ॥ ५६ ॥ निर्वाणसुखापायान् वितीर्णनरकादिदारुणापातान् । जहि कषायपिशाचान् विषयतृष्णायाः सदा सहायान् ॥ ५७ ॥ कालेऽप्रभवति श्रामण्ये सावशेषिते इदानीम् । मोहमहारिपुदारुणासियष्टिं शृण्वनुशास्तिम् ॥ ५८ ॥ संसार-मूलबीजं मिथ्यात्वं सर्वथा विवर्जय । सम्यक्त्वे दृढचित्तो भव नमस्कारकुशलश्च ॥ ५९ ॥ मृगतृष्णासु तोयं मन्वते नरा यथा स्वतृष्णया । सौख्यानि कुधर्मान् तथैव मिथ्यात्वमूढमनाः ॥ ६० ॥ नैव तत्करोत्यग्निः नैव विषं नैव कृष्णसर्पश्च । यं करोति महादोषं तीव्रं

॥ २३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| प्रत सूत्रांक ||६१|| दीप अनुक्रम [६१] | पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:



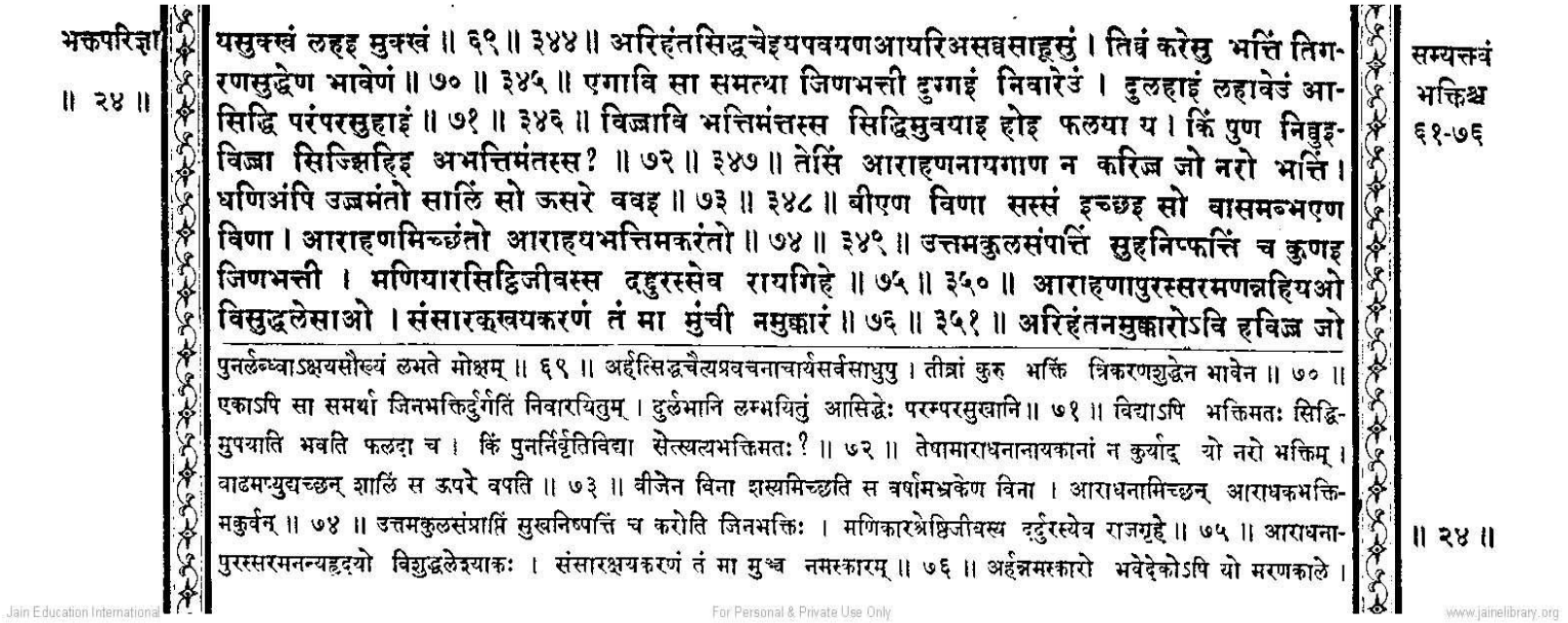
मिच्छत्तं ॥ ६१ ॥ ३३६ ॥ पावइ इहेव वसणं तुरुमिणिदत्तुव्व दारुणं पुरिसो । मिच्छत्तमोहिअमणो साहुप-
ओसाउ पावाओ ॥ ६२ ॥ ३३७ ॥ मा कासि तं पमायं सम्मत्ते सव्वदुक्खनासणए । जं सम्मत्तपइट्ठाइं नाणत-
वविरिअचरणाइं ॥ ६३ ॥ ॥ ३३८ ॥ भावाणुरायपेमाणुरायसुगुणाणुरायरत्तो अ । धम्माणुरायरत्तो अ होसु
जिणसासणे निचं ॥ ६४ ॥ ३३९ ॥ दंसणभट्ठो भट्ठो न हु भट्ठो होइ चरणपब्भट्ठो । दंसणमणुपत्तस्स हु
परिअडणं नत्थि संसारे ॥ ६५ ॥ ३४० ॥ दंसणभट्ठो भट्ठो दंसणभट्ठस्स नत्थि निव्वाणं । सिज्झंति चरणरहिआ
दंसणरहिआ न सिज्झंति ॥६६॥३४१॥ सुद्धे सम्मत्ते अविरओऽवि अज्जेइ तित्थयरनामं । जह आगमेसिभद्दा
हरिकुलपहुसेणिआईया ॥ ६७ ॥ ३४२ ॥ कल्लाणपरंपरयं लहंति जीवा विसुद्धसम्मत्ता । सम्मद्दंसणरयणं नऽ-
ग्घइ ससुरासुरे लोए ॥ ६८ ॥ ३४३ ॥ तेलुक्कस्स पहुत्तं लद्धूणवि परिवडंति कालेणं । सम्मत्तं पुण लद्धुं अक्ख-

जीवस्य मिथ्यात्वम् ॥ ६१ ॥ प्राप्नोतीहैव व्यसनं तुरुमिणीदत्त इव दारुणं पुरुषः । मिथ्यात्वमोहितमनाः साधुप्रद्वेषात् पापात् ॥ ६२ ॥
मा कार्षीस्त्वं प्रमादं सम्यक्त्वे सर्वदुःखनाशके । यत्सम्यक्त्वप्रतिष्ठानि ज्ञानतपोवीर्यचरणानि ॥ ६३ ॥ भावानुराग-प्रेमानुराग-सुगुणानु-
रागरक्तश्च । धर्मानुरागरक्तश्च भव जिनशासने नित्यम् ॥ ६४ ॥ दर्शनभ्रष्टो भ्रष्टो नैव भ्रष्टो भवति चरणप्रभ्रष्टः । दर्शनमनुप्राप्तस्य पर्य-
टनं नास्त्येव संसारे ॥ ६५ ॥ दर्शनभ्रष्टो भ्रष्टो भ्रष्टदर्शनस्य नास्ति निर्वाणम् । सिद्ध्यन्ति चरणरहिता दर्शनरहिता न सिध्यन्ति ॥ ६६ ॥
शुद्धे सम्यक्त्वेऽप्यविरतोऽप्यर्जयति तीर्थकरनाम । यथाऽऽगमिष्यद्भद्रा हरिकुलप्रभुश्रेणिकादिकाः ॥ ६७ ॥ कल्याणपरम्परां लभन्ते जीवा
विशुद्धसम्यक्त्वाः । सम्यग्दर्शनरत्नं नार्घति ससुरासुरे लोके ॥ ६८ ॥ त्रैलोक्यस्य प्रभुत्वं लब्ध्वाऽपि परिपतन्ति कालेन । सम्यक्त्वं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	दर्शन/सम्यक्त्वस्य माहात्म्य-कथनं

आगम (२७)	“भक्तपरिज्ञा” – प्रकीर्णकसूत्र-४ (मूलं+संस्कृतछाया) ---------- मूलं [६९] ----------
प्रत सूत्रांक ॥६९॥ दीप अनुक्रम [६९]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:
	अरिहंतादे: भक्ति: वर्ण्यते



भक्तपरिज्ञा ॥ २४ ॥

यसुक्खं लहइ मुक्खं ॥ ६९ ॥ ३४४ ॥ अरिहंतसिद्धचेइयपवयणआयरिअसव्वसाहूसुं । तिव्वं करेसु भत्तिं तिगरणसुद्धेण भावेणं ॥ ७० ॥ ३४५ ॥ एगावि सा समत्था जिणभत्ती दुग्गइं निवारेउं । दुलहाइं लहावेउं आसिद्धि परंपरसुहाइं ॥ ७१ ॥ ३४६ ॥ विज्जावि भत्तिमंतस्स सिद्धिमुवयाइ होइ फलया य । किं पुण निव्वुइविज्जा सिज्झिहिइ अभत्तिमंतस्स? ॥ ७२ ॥ ३४७ ॥ तेसिं आराहणनायगाण न करिज्ज जो नरो भत्तिं । धणिअंपि उज्जमंतो सालिं सो ऊसरे ववइ ॥ ७३ ॥ ३४८ ॥ बीएण विणा सस्सं इच्छइ सो वासमब्भएण विणा । आराहणमिच्छंतो आराहयभत्तिमकरंतो ॥ ७४ ॥ ३४९ ॥ उत्तमकुलसंपत्तिं सुहनिप्फत्तिं च कुणइ जिणभत्ती । मणियारसिट्ठिजीवस्स दद्दुरस्सेव रायगिहे ॥ ७५ ॥ ३५० ॥ आराहणापुरस्सरमणन्नहियओ विसुद्धलेसाओ । संसारक्खयकरणं तं मा मुंची नमुक्कारं ॥ ७६ ॥ ३५१ ॥ अरिहंतनमुक्कारोऽवि हविज्ज जो

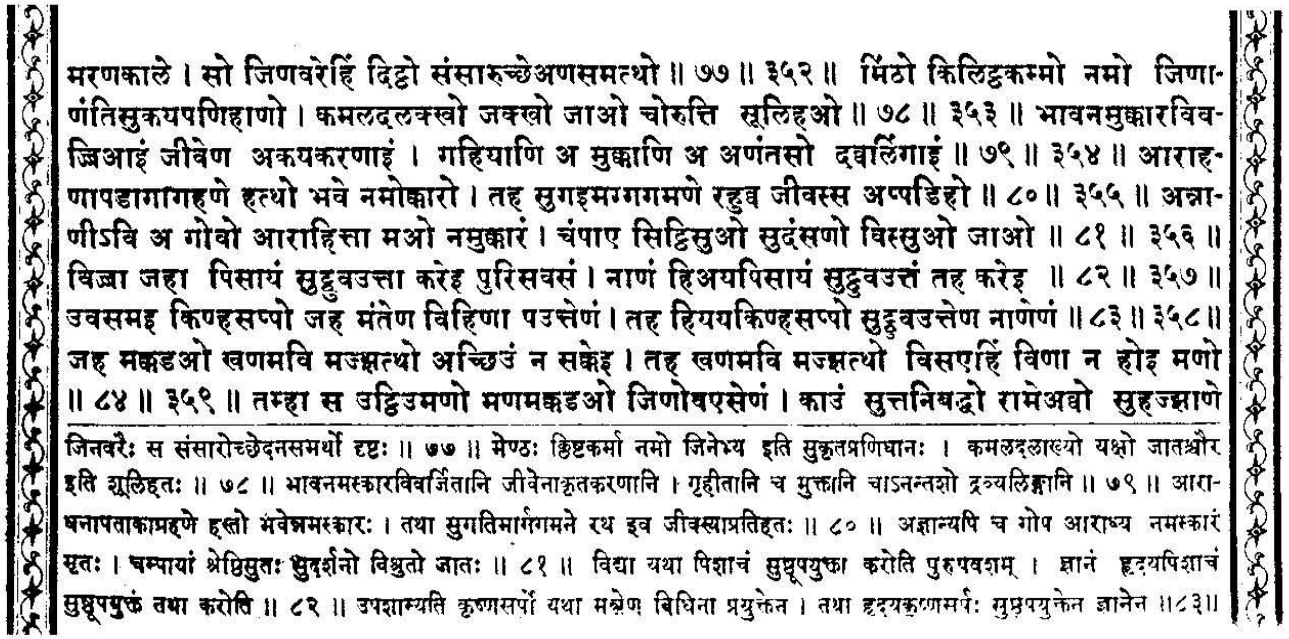
सम्यक्त्वं भक्तिश्च ६१-७६

पुनर्लब्ध्वाऽक्षयसौख्यं लभते मोक्षम् ॥ ६९ ॥ अर्हत्सिद्धचैत्यप्रवचनाचार्यसर्वसाधुषु । तीव्रां कुरु भक्तिं त्रिकरणशुद्धेन भावेन ॥ ७० ॥ एकाऽपि सा समर्था जिनभक्तिर्दुर्गतिं निवारयितुम् । दुर्लभानि लम्भयितुं आसिद्धेः परम्परसुखानि ॥ ७१ ॥ विद्याऽपि भक्तिमतः सिद्धिमुपयाति भवति फलदा च । किं पुनर्निर्वृतिविद्या सेत्स्यत्यभक्तिमतः? ॥ ७२ ॥ तेषामाराधनानायकानां न कुर्याद् यो नरो भक्तिम् । वाढमप्युद्यच्छन् शालिं स ऊषरे वपति ॥ ७३ ॥ बीजेन विना शस्यमिच्छति स वर्षाभ्रकेण विना । आराधनामिच्छन् आराधकभक्तिमकुर्वन् ॥ ७४ ॥ उत्तमकुलसंप्राप्तिं सुखनिष्पत्तिं च करोति जिनभक्तिः । मणिकारश्रेष्ठिजीवस्य दर्दुरस्येव राजगृहे ॥ ७५ ॥ आराधनापुरस्सरमनन्यहृदयो विशुद्धलेश्याकः । संसारक्षयकरणं तं मा मुञ्च नमस्कारम् ॥ ७६ ॥ अर्हन्नमस्कारो भवेदेकोऽपि यो मरणकाले ।

॥ २४ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||७७|| दीप अनुक्रम [७७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:



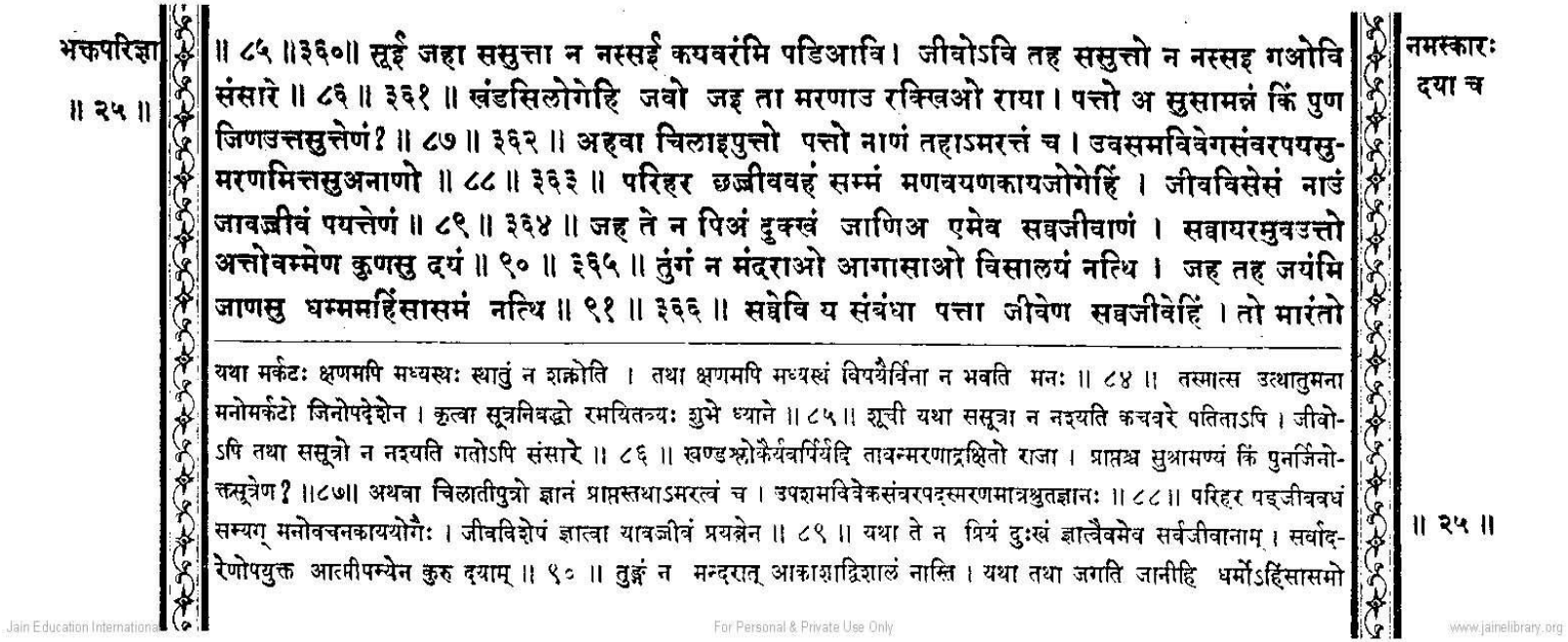
मरणकाले । सो जिणवरेहिं दिट्ठो संसारुच्छेअणसमत्थो ॥ ७७ ॥ ३५२ ॥ मिंठो किलिट्ठकम्मो नमो जिणा-
णंतिसुकयपणिहाणो । कमलदलक्खो जक्खो जाओ चोरुत्ति सूलिहओ ॥ ७८ ॥ ३५३ ॥ भावनमुक्कारविव-
ज्जिआइं जीवेण अकयकरणाइं । गहियाणि अ मुक्काणि अ अणंतसो दव्वलिंगाइं ॥ ७९ ॥ ३५४ ॥ आराह-
णापडागागहणे हत्थो भवे नमोक्कारो । तह सुगइमग्गगमणे रहुव्व जीवस्स अप्पडिहो ॥ ८० ॥ ३५५ ॥ अन्ना-
णीऽवि अ गोवो आराहित्ता मओ नमुक्कारं । चंपाए सिट्ठिसुओ सुदंसणो विस्सुओ जाओ ॥ ८१ ॥ ३५६ ॥
विज्जा जहा पिसायं सुट्ठुवउत्ता करेइ पुरिसवसं । नाणं हिअयपिसायं सुट्ठुवउत्तं तह करेइ ॥ ८२ ॥ ३५७ ॥
उवसमइ किण्हसप्पो जह मंतेण विहिणा पउत्तेणं । तह हिययकिण्हसप्पो सुट्ठुवउत्तेण नाणेणं ॥ ८३ ॥ ३५८ ॥
जह मक्कडओ खणमवि मज्झत्थो अच्छिउं न सक्केइ । तह खणमवि मज्झत्थो विसएहिं विणा न होइ मणो
॥ ८४ ॥ ३५९ ॥ तम्हा स उट्ठिउमणो मणमक्कडओ जिणोवएसेणं । काउं सुत्तनिबद्धो रामेअव्वो सुहज्झाणे

जिनवरैः स संसारोच्छेदनसमर्थो दृष्टः ॥ ७७ ॥ मेण्ठः क्लिष्टकर्मा नमो जिनेभ्य इति सुकृतप्रणिधानः । कमलदलाख्यो यक्षो जातश्चौर
इति शूलिहतः ॥ ७८ ॥ भावनमस्कारविवर्जितानि जीवेनाकृतकरणानि । गृहीतानि च मुक्तानि चाऽनन्तशो द्रव्यलिङ्गानि ॥ ७९ ॥ आरा-
धनापताकाग्रहणे हस्तो भवेन्नमस्कारः । तथा सुगतिमार्गगमने रथ इव जीवस्याप्रतिहतः ॥ ८० ॥ अज्ञान्यपि च गोप आराध्य नमस्कारं
मृतः । चम्पायां श्रेष्ठिसुतः सुदर्शनो विश्रुतो जातः ॥ ८१ ॥ विद्या यथा पिशाचं सुष्ठूपयुक्ता करोति पुरुषवशम् । ज्ञानं हृदयपिशाचं
सुष्ठूपयुक्तं तथा करोति ॥ ८२ ॥ उपशाम्यति कृष्णसर्पो यथा मन्त्रेण विधिना प्रयुक्तेन । तथा हृदयकृष्णसर्पः सुप्रयुक्तेन ज्ञानेन ॥८३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ भक्तपरिज्ञा-आराधकस्य लघुकथारुप द्रष्टांतानि ----

| प्रत सूत्रांक ||८६|| दीप अनुक्रम [८६] | पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:



भक्तपरिज्ञा ॥ २५ ॥

॥ ८५ ॥३६०॥ सूई जहा ससुत्ता न नस्सई कयवरंमि पडिआवि। जीवोऽवि तह ससुत्तो न नस्सइ गओवि संसारे ॥ ८६ ॥ ३६१ ॥ खंडसिलोगेहि जवो जइ ता मरणाउ रक्खिओ राया। पत्तो अ सुसामन्नं किं पुण जिणउत्तसुत्तेणं? ॥ ८७ ॥ ३६२ ॥ अहवा चिलाइपुत्तो पत्तो नाणं तहाऽमरत्तं च। उवसमविवेगसंवरपयसु-मरणमित्तसुअनाणो ॥ ८८ ॥ ३६३ ॥ परिहर छज्जीववहं सम्मं मणवयणकायजोगेहिं । जीवविसेसं नाउं जावज्जीवं पयत्तेणं ॥ ८९ ॥ ३६४ ॥ जह ते न पिअं दुक्खं जाणिअ एमेव सव्वजीवाणं । सव्वायरमुवउत्तो अत्तोवम्मेण कुणसु दयं ॥ ९० ॥ ३६५ ॥ तुंगं न मंदराओ आगासाओ विसालयं नत्थि । जह तह जयंमि जाणसु धम्ममहिंसासमं नत्थि ॥ ९१ ॥ ३६६ ॥ सव्वेवि य संबंधा पत्ता जीवेण सव्वजीवेहिं । तो मारंतो

यथा मर्कटः क्षणमपि मध्यस्थः स्थातुं न शक्नोति । तथा क्षणमपि मध्यस्थं विषयैर्विना न भवति मनः ॥ ८४ ॥ तस्मात्स उत्थातुमना मनोमर्कटो जिनोपदेशेन । कृत्वा सूत्रनिबद्धो रमयितव्यः शुभे ध्याने ॥ ८५ ॥ शूची यथा ससूत्रा न नश्यति कचवरे पतिताऽपि । जीवोऽपि तथा ससूत्रो न नश्यति गतोऽपि संसारे ॥ ८६ ॥ खण्डश्लोकैर्यवर्षिर्यदि तावन्मरणाद्रक्षितो राजा । प्राप्तश्च सुश्रामण्यं किं पुनर्जिनोक्तसूत्रेण? ॥८७॥ अथवा चिलातीपुत्रो ज्ञानं प्राप्तस्तथाऽमरत्वं च । उपशमविवेकसंवरपदस्मरणमात्रश्रुतज्ञानः ॥ ८८ ॥ परिहर षड्जीववधं सम्यग् मनोवचनकाययोगैः । जीवविशेषं ज्ञात्वा यावज्जीवं प्रयत्नेन ॥ ८९ ॥ यथा ते न प्रियं दुःखं ज्ञात्वैवमेव सर्वजीवानाम् । सर्वादरेणोपयुक्त आत्मौपम्येन कुरु दयाम् ॥ ९० ॥ तुङ्गं न मन्दरात् आकाशाद्विशालं नास्ति । यथा तथा जगति जानीहि धर्मोऽहिंसासमो

नमस्कारः दया च ॥ २५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ अहिंसा, सत्य आदि पञ्चानां विशद् वर्णनं क्रियते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक ||९२||

दीप अनुक्रम [९२]

जीवे मारइ संबंधिनो सव्वे ॥ ९२ ॥ ३६७ ॥ जीववहो अप्पवहो जीवदया अप्पणो दया होइ । ता सव्वजीव-हिंसा परिचत्ता अत्तकामेहिं ॥ ९३ ॥ ३६८ ॥ जावइआइं दुक्खाइं हुंति चउगइगयस्स जीयस्स । सव्वाइं ताइं हिंसाफलाइं निउणं विआणाहि ॥९४॥ ३६९ ॥ जंकिंचि सुहमुआरं पहुत्तणं पयइसुंदरं जं च । आरुग्गं सोहग्गं तं तमहिंसाफलं सव्वं ॥ ९५ ॥ ३७० ॥ पाणोऽवि पाडिहेरं पत्तो छुहोऽवि सुंसमारदहे । एगेणवि एगदिणऽज्जिएणऽहिंसावयगुणेणं ॥ ९६ ॥ ३७१ ॥ परिहर असच्चवयणं सव्वंपि चउव्विहं पयत्तेणं । संजमवंताविजओ भासादोसेण लिप्पंति ॥ ९७ ॥ ३७२ ॥ हासेण व कोहेण व लोहेण भएण वावि तमसच्चं । मा भणसु भणसु सच्चं जीवहिअत्थं पसत्थमिणं ॥९८॥ ३७३ ॥ विस्ससणिज्जो माया व होइ पुज्जो गुरुव्व लोअस्स । सयणुव्व

नास्ति ॥ ९१ ॥ सर्वेऽपि च सम्बन्धाः प्राप्ता जीवेन सर्वजीवैः । तन्मारयन् जीवान् मारयति सम्बन्धिनः सर्वान् ॥ ९२ ॥ जीववधः आत्मवधो जीवदयाऽऽत्मनो दया भवति । तत्सर्वजीवहिंसा परित्यक्ताऽऽत्मकामैः ॥ ९३ ॥ यावन्ति दुःखानि भवन्ति चतुर्गतिगतस्य जीवस्य । सर्वाणि तानि हिंसाफलानि निपुणं विजानीहि ॥ ९४ ॥ यत्किञ्चित्सुखमुदारं प्रभुत्वं प्रकृति सुन्दरं यच्च । आरोग्यं सौभाग्यं तत्तदहिंसाफलं सर्वम् ॥ ९५ ॥ चण्डालोऽपि प्रातिहार्यं प्राप्तः क्षिप्तोऽपि सुंसुमारह्रदे । एकेनाऽप्येकदिनार्जितेनाहिंसाव्रतगुणेन ॥ ९६ ॥ परिहराऽसत्यवचनं सर्वमपि चतुर्विधं प्रयत्नेन । संयमवन्तोऽपि यतो भाषादोषेण लिप्यन्ते ॥ ९७ ॥ हास्येन वा क्रोधेन वा लोभेन भयेन वाऽपि तदसत्यम् । मा भण भण सत्यं जीवहितार्थं प्रशस्तमिदम् ॥ ९८ ॥ विश्वसनीयो मातेव भवति पूज्यो गुरुरिव लोकस्य । स्वजन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सच्चवाई पुरिसो सव्वस्स होइ पिओ ॥ ९९ ॥ ३७४ ॥ होउ व जडी सिहंडी मुंडी वा वक्कली व नग्गो वा । लोए असच्चवाई भन्नइ पासंडचंडालो ॥ १०० ॥ ३७५ ॥ अलिअं सइंपि भणिअं विहणइ बहुआइं सच्चवयणाइं । पडिओ नरयंमि वसू इक्केण असच्चवयणेणं ॥ १०१ ॥ ३७६ ॥ मा कुणसु धीर बुद्धिं ! अप्पं व बहुं व परधणं घित्तुं । दंतंतरसोहणयं किलिंचमित्तंपि अविदिन्नं ॥ १०२ ॥ ३७७ ॥ जो पुण अत्थं अवहरइ तस्स सो जीविअंपि अवहरइ । जं सो अत्थकएणं उज्झइ जीअं न उण अत्थं ॥ १०३ ॥ ३७८ ॥ तो जीवदयापरमं धम्मं गहिऊण गिण्ह माऽदिन्नं । जिणगणहरपडिसिद्धं लोगविरुद्धं अहम्मं च ॥ १०४ ॥ ३७९ ॥ चोरो परलोगंमिऽवि नारयतिरिएसु लहइ दुक्खाइं । मणुअत्तणेवि दीणो दारिद्दोवद्दुओ होइ ॥ १०५ ॥ ३८० ॥ चोरिक्कनिवित्तीए सावयपुत्तो जहा सुहं लहई । किढि मोरपिच्छचित्तिअ गुट्ठीचोराण चलणेसु ॥ १०६ ॥

इव सत्यवादी पुरुषः सर्वस्य भवति प्रियः ॥ ९९ ॥ भवतु वा जटी शिखावान् मुण्डो वा वल्कली वा नग्नो वा । लोकेऽसत्यवादी भण्यते पापण्डचाण्डालः ॥ १०० ॥ अलीकं सकृदपि भणितं विहन्ति बहुकानि सत्यवचनानि । पतितो नरके वसुरेकेनासत्यवचनेन ॥ १०१ ॥ मा कुरु धीर ! बुद्धिमल्पं वा बहु वा परधनं ग्रहीतुम् । दन्तान्तरशोधनकं शलाकामात्रमप्यविदत्तम् ॥ १०२ ॥ यः पुनरर्थमपहरति तस्य स जीवितमप्यपहरति । यत्सोऽर्थकृते उज्झति जीवितं न पुनरर्थम् ॥ १०३ ॥ ततो जीवदयापरमं धर्मं गृहीत्वा गृहाण माऽदत्तम् । जिनगणधरप्रतिषिद्धं लोकविरुद्धमधर्मं च ॥ १०४ ॥ चौरः परलोकेऽपि नारकतिर्यक्षु लभते दुःखानि । मनुजत्वेऽपि दीनो दारिद्र्योपद्रुतो भवति ॥ १०५ ॥ चौर्यनिवृत्त्या श्रावकपुत्रो यथा सुखमलभत । किढ्यामयूरपिच्छचित्रितेषु गोष्ठिकचौराणां चरणेषु ॥ १०६ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||१०७|| दीप अनुक्रम [१०७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:

॥ ३८१ ॥ रक्खाहि बंभचेरं बंभगुत्तीहिं नवहिं परिसुद्धं । निच्चं जिणाहि कामं दोसपकामं विआणित्ता ॥ १०७ ॥ ३८२ ॥ जावइआ किर दोसा इहपरलोए दुहावहा हुंति । आवहइ ते उ सव्वे मेहुणसन्ना मणुस्स ॥ १०८ ॥ ३८३ ॥ रइअरइतरलजीहाजुएण संकप्पउब्भडफणेणं । विसयबिलवासिणा मयमुहेण विव्वोअरोसेणं ॥ १०९ ॥ ३८४ ॥ कामभुअंगेण दट्ठा लज्जानिम्मोअदप्पदाढेणं । नासंति नरा अवसा दुस्सहदुक्खावहविसेणं ॥ ११० ॥ ३८५ ॥ लल्लक्कनिरयविअणाओ घोरसंसारसायरुव्वहणं । संगच्छइ न य पिच्छइ तुच्छत्तं कामिअसुहस्स ॥ १११ ॥ ३८६ ॥ वम्महसरसयविद्धो गिद्धो वणिउव्व रायपत्तीए । पाउक्खालयगेहे दुग्गंधेऽणेगसो वसिओ ॥ ११२ ॥ ३८७ ॥ कामासत्तो न मुणइ गम्मागम्मंपि वेसिआणुव्व । सिट्ठी कुबेरदत्तो निअयसुआसुरयरइरत्तो ॥ ११३ ॥ ३८८ ॥ पडिपिल्लिअ कामकलिं कामग्घत्थासु मुअसु अणुबन्धं । महि-

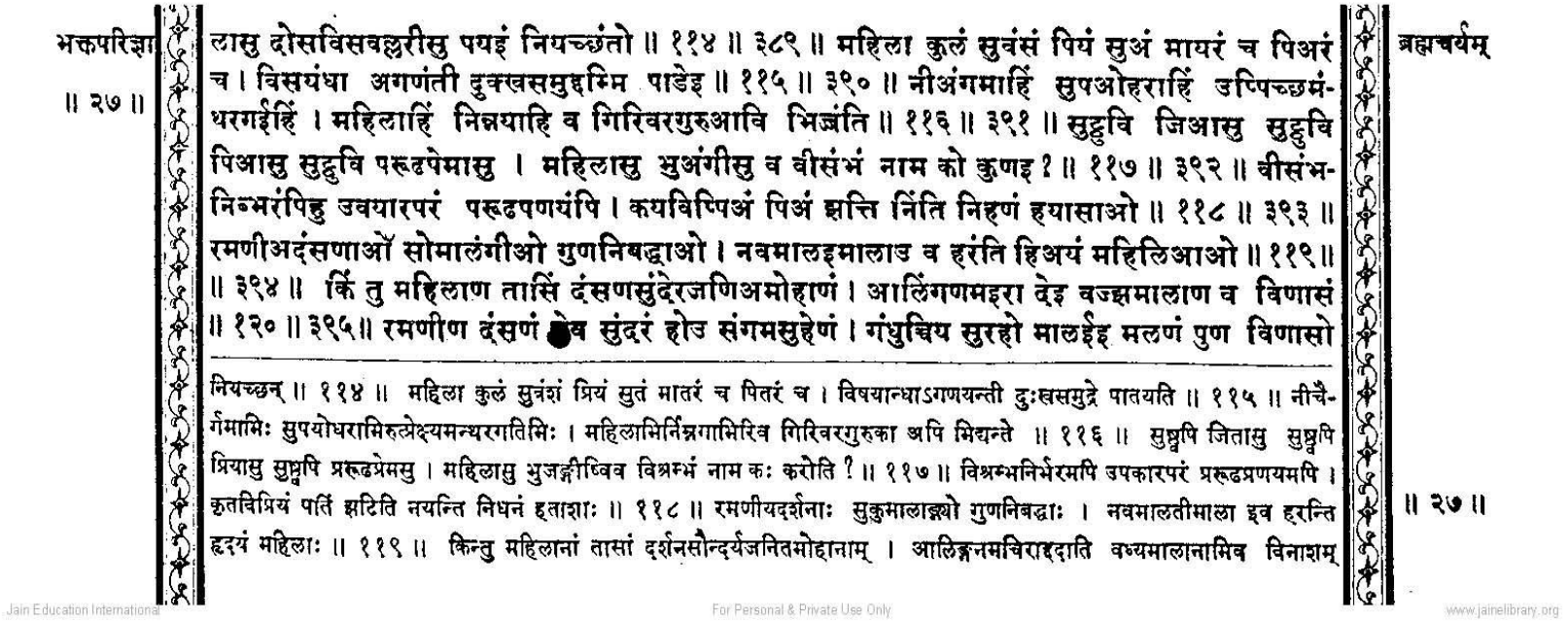
रक्ष ब्रह्मचर्यं ब्रह्मगुप्तिभिर्नवभिः परिशुद्धम् । नित्यं जय कामं प्रकामदोषं विज्ञाय ॥ १०७ ॥ यावन्तः किल दोषा इहपरलोकयोर्दुःखावहा भवन्ति । आवहति तांस्तु सर्वान् मैथुनसञ्ज्ञा मनुष्यस्य ॥ १०८ ॥ रत्यरतितरलजिह्वायुगेन सङ्कल्पोद्भटफणेन । विषयबिलवासिना मदमुखेन विव्वोकरोषेण ॥ १०९ ॥ कामभुजंगेन दष्टा लज्जानिर्मोकदर्पदंष्ट्रेण । नश्यन्ति नरा अवशा दुःसहदुःखावहविषेण ॥ ११० ॥ लल्लक्कनरकवेदना घोरसंसारसागरोद्वहनम् । संगच्छते न च प्रेक्षते तुच्छत्वं कामी (कामित) सुखस्य ॥ १११ ॥ मन्मथशरशतविद्धो गृद्धो वणिगिव राजपत्न्याम् । पायुक्षालनगृहे दुर्गन्धेऽनेकशो उषितः ॥ ११२ ॥ कामासक्तो न जानाति गम्यागम्यमपि वैश्यायन इव । श्रेष्ठी कुबेरदत्तो निजसुतासुरतरतिरक्तः ॥ ११३ ॥ प्रतिप्रेर्य कामकलिं कामग्रस्तासु मुञ्चानुबन्धम् । महिलासु दोषविषवल्लीषु प्रकृतिं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||११४||

दीप अनुक्रम [११४]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:



लासु दोसविसवल्लरीसु पयइं नियच्छंतो ॥ ११४ ॥ ३८९ ॥ महिला कुलं सुवंसं पियं सुअं मायरं च पिअरं च । विसयंधा अगणंती दुक्खसमुद्दम्मि पाडेइ ॥ ११५ ॥ ३९० ॥ नीअंगमाहिं सुपओहराहिं उप्पिच्छमंथरगईहिं । महिलाहिं निन्नयाहि व गिरिवरगुरुआवि भिज्जंति ॥ ११६ ॥ ३९१ ॥ सुट्ठुवि जिआसु सुट्ठुवि पिआसु सुट्ठुवि परूढपेमासु । महिलासु भुअंगीसु व वीसंभं नाम को कुणइ ? ॥ ११७ ॥ ३९२ ॥ वीसंभनिब्भरंपिहु उवयारपरं परूढपणयंपि । कयविप्पिअं पिअं झत्ति निंति निहणं हयासाओ ॥ ११८ ॥ ३९३ ॥ रमणीअदंसणाओ सोमालंगीओ गुणनिबद्धाओ । नवमालइमालाउ व हरंति हिअयं महिलिआओ ॥ ११९ ॥ ॥ ३९४ ॥ किं तु महिलाण तासिं दंसणसुंदेरजणिअमोहाणं । आलिंगणमइरा देइ वज्झमालाण व विणासं ॥ १२० ॥ ३९५ ॥ रमणीण दंसणं चेव सुंदरं होउ संगमसुहेणं । गंधुचिय सुरहो मालईइ मलणं पुण विणासो

नियच्छन् ॥ ११४ ॥ महिला कुलं सुवंशं प्रियं सुतं मातरं च पितरं च । विषयान्धाऽगणयन्ती दुःखसमुद्रे पातयति ॥ ११५ ॥ नीचैर्गमामिः सुपयोधरामिरुत्प्रेक्ष्यमन्थरगतिभिः । महिलाभिर्निम्नगाभिरिव गिरिवरगुरुका अपि भिद्यन्ते ॥ ११६ ॥ सुष्ठ्वपि जितासु सुष्ठ्वपि प्रियासु सुष्ठ्वपि प्ररूढप्रेमसु । महिलासु भुजङ्गीष्विव विश्रम्भं नाम कः करोति ? ॥ ११७ ॥ विश्रम्भनिर्भरमपि उपकारपरं प्ररूढप्रणयमपि । कृतविप्रियं पतिं झटिति नयन्ति निधनं हताशाः ॥ ११८ ॥ रमणीयदर्शनाः सुकुमालाङ्ग्यो गुणनिबद्धाः । नवमालतीमाला इव हरन्ति हृदयं महिलाः ॥ ११९ ॥ किन्तु महिलानां तासां दर्शनसौन्दर्यजनितमोहानाम् । आलिङ्गनमचिराद्दाति वध्यमालानामिव विनाशम्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| प्रत सूत्रांक ॥१२२॥ दीप अनुक्रम [१२२] | पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:

॥ १२१ ॥ ३९६ ॥ साकेअपुराहिवइ देवरई रज्जसुक्खपब्भट्ठो । पंगुलहेतुं छूढो वुढो अ नईइ देवीए ॥ १२२ ॥ ॥ ३९७ ॥ सोअसरी दुरिअदरी कवडकुडी महिलिआ किलेसकरी । वइरविरोअणअरणी दुक्खखणी सुक्खपडिवक्खा ॥ १२३ ॥ ३९८ ॥ अमुणिअमणपरिकम्मो सम्मं को नाम नासिउं तरइ । वम्महसरपसरोहे दिट्ठिच्छोहे मयच्छीणं? ॥ १२४ ॥ ३९९ ॥ घणमालाओ व दूरुन्नमंतसुपओहराउ वहंति । मोहविसं महिलाओ अलक्कविसं व पुरिसस्स ॥ १२५ ॥ ४०० ॥ परिहरसु तओ तासिं दिट्ठिं दिट्ठीविसस्स व अहिस्स । जं रमणिनयणबाणा चरित्तपाणे विणासंति ॥ १२६ ॥ ४०१ ॥ महिलासंसग्गीए अग्गी इव जं च अप्पसारस्स । मयणं व मणो मुणिणोऽवि हंत सिग्घं चिअ विलाइ ॥ १२७ ॥ ४०२ ॥ जइवि परिचत्तसंगो तवतणुअंगो

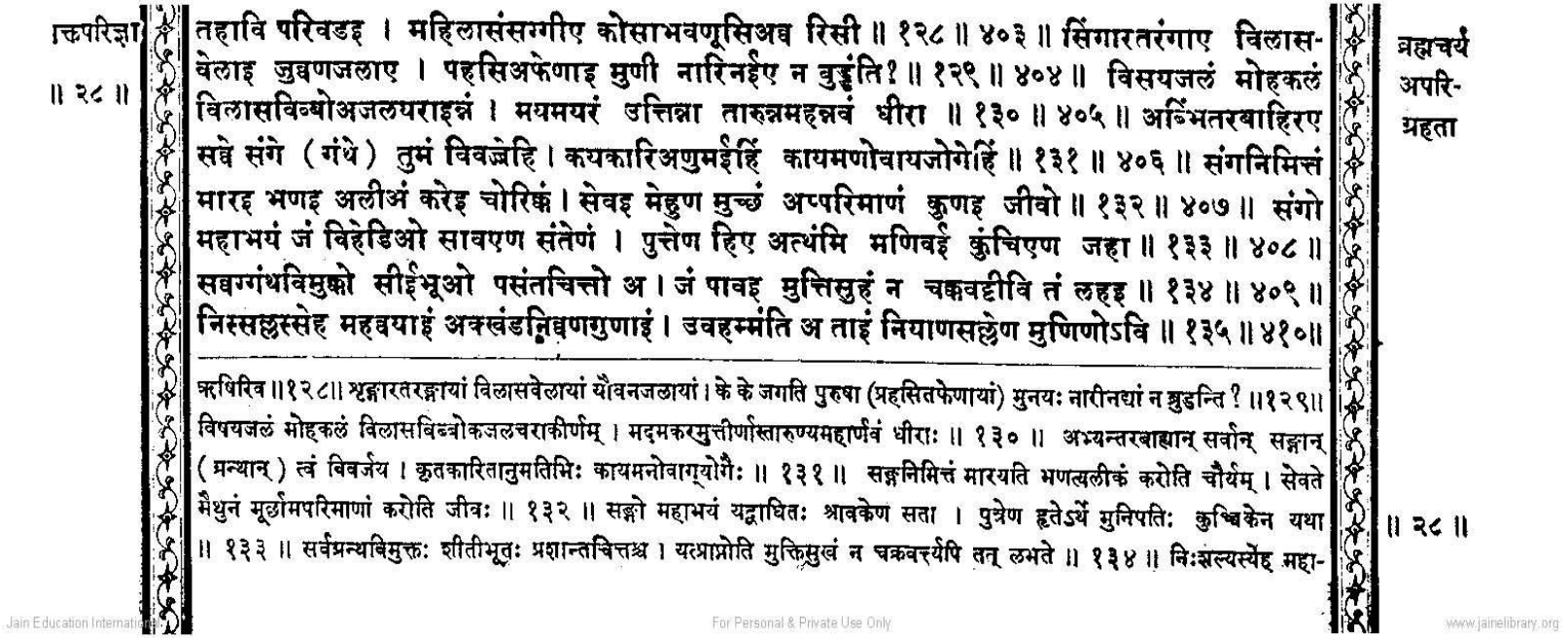
॥ १२० ॥ रमणीनां दर्शनमेव सुन्दरं कृतं सङ्गमसुखेन । गन्ध एव सुरभिर्मालत्या मर्दनं पुनर्विनाशः ॥ १२१ ॥ साकेतपुराधिपतिर्देवरती राज्यसुखप्रभ्रष्टः । पङ्गुहेतोः क्षिप्तो व्यूढश्च नद्या देव्या ॥ १२२ ॥ शोकसरित् दुरितदरी कपटकुटी महिला क्लेशकरी । वैरविरोचनाऽरणिर्दुःखखनिः सुखप्रतिपक्षा ॥ १२३ ॥ अज्ञातमनःपरिकर्मा सम्यक् को नाम नंष्टुं शक्नोति । मन्मथशरप्रसरौघे दृष्टिक्षोभे मृगाक्षीणाम् ?॥ १२४ ॥ घनमाला इव दूरोन्नमत्सुपयोधरा वर्द्धयन्ति । मोहविषं महिला अलर्कविषवत्पुरुषस्य ॥ १२५ ॥ परिहर ततस्तासां दृष्टिं दृष्टिविषस्येवाहेः । यद् रमणीनयनबाणाश्चारित्रप्राणान् विनाशयन्ति ॥ १२६ ॥ महिलासंसर्गेण अग्नेरिव यद्वालसारस्य । मदनवन्मनो मुनेरपि हन्त! शीघ्रमेव विलीयते ॥ १२७ ॥ यद्यपि परित्यक्तसङ्गस्तपस्तन्वङ्गस्तथाऽपि परिपतति । महिलासंसर्ग्या कोशाभवनोपित

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक ||१२८||

दीप अनुक्रम [१२८]



तहावि परिवडइ । महिलासंसग्गीए कोसाभवणूसिअव्व रिसी ॥ १२८ ॥ ४०३ ॥ सिंगारतरंगाए विलास-
वेलाइ जुव्वणजलाए । पहसिअफेणाइ मुणी नारिनईए न वुड्डंति? ॥ १२९ ॥ ४०४ ॥ विसयजलं मोहकलं
विलासविब्बोअजलयराइन्नं । मयमयरं उत्तिन्ना तारुन्नमहन्नवं धीरा ॥ १३० ॥ ४०५ ॥ अब्भिंतरबाहिरए
सव्वे संगे (गंथे) तुमं विवज्जेहि । कयकारिअणुमईहिं कायमणोवायजोगेहिं ॥ १३१ ॥ ४०६ ॥ संगनिमित्तं
मारइ भणइ अलीअं करेइ चोरिक्कं । सेवइ मेहुण मुच्छं अप्परिमाणं कुणइ जीवो ॥ १३२ ॥ ४०७ ॥ संगो
महाभयं जं विहेडिओ सावएण संतेणं । पुत्तेण हिए अत्थंमि मणिवई कुंचिएण जहा ॥ १३३ ॥ ४०८ ॥
सव्वग्गंथविमुक्को सीईभूओ पसंतचित्तो अ । जं पावइ मुत्तिसुहं न चक्कवट्टीवि तं लहइ ॥ १३४ ॥ ४०९ ॥
निस्सल्लस्सेह महव्वयाइं अक्खंडनिव्वणगुणाइं । उवहम्मंति अ ताइं नियाणसल्लेण मुणिणोऽवि ॥ १३५ ॥ ४१०॥

ऋषिरिव ॥१२८॥ शृङ्गारतरङ्गायां विलासवेलायां यौवनजलायां । के के जगति पुरुषा (प्रहसितफेणायां) मुनयः नारीनद्यां न मुह्यन्ति ? ॥१२९॥
विषयजलं मोहकलं विलासविब्बोकजलचराकीर्णम् । मदमकरमुत्तीर्णास्तारुण्यमहार्णवं धीराः ॥ १३० ॥ अभ्यन्तरबाह्यान् सर्वान् सङ्गान्
(ग्रन्थान्) त्वं विवर्जय । कृतकारितानुमतिभिः कायमनोवाग्योगैः ॥ १३१ ॥ सङ्गनिमित्तं मारयति भणत्यलीकं करोति चौर्यम् । सेवते
मैथुनं मूर्छामपरिमाणां करोति जीवः ॥ १३२ ॥ सङ्गो महाभयं यद्बाधितः श्रावकेण सता । पुत्रेण हृतेऽर्थे मुनिपतिः कुब्धिकेन यथा
॥ १३३ ॥ सर्वग्रन्थविमुक्तः शीतीभूतः प्रशान्तचित्तश्च । यत्प्राप्नोति मुक्तिसुखं न चक्रवर्त्यपि तत् लभते ॥ १३४ ॥ निःशल्यस्येह महा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक ||१३६||

दीप अनुक्रम [१३६]

अह रागदोसगब्भं मोहगब्भं च तं भवे तिविहं । धम्मत्थं हीणकुलाइपत्थणं मोहगब्भं च ॥ १३६ ॥ ४११ ॥ रागेण गंगदत्तो दोसेणं विस्सभूइमाईआ । मोहेण चंडपिंगलमाईआ हुंति दिट्ठंता ॥ १३७ ॥ ४१२ ॥ अगणिअ जो मुक्खसुहं कुणइ निआणं असारसुहहेउं । सो कायमणिकएणं वेरुलिअमणिं पणासेइ ॥ १३८ ॥ ॥ ४१३ ॥ दुक्खक्खय कम्मक्खय समाहिमरणं च बोहिलाभो अ । एअं पत्थेअव्वं न पत्थणिज्जं तओ अन्नं ॥ १३९ ॥ ४१४ ॥ उज्झिअनिआणसल्लो निसिभत्तनिअत्तिसमिइगुत्तीहिं । पंचमहव्वयरक्खं कयसिवसुक्खं पसाहेइ ॥ १४० ॥ ४१५ ॥ इंदिअविसयपसत्ता पडंति संसारसायरे जीवा । पक्खिव्व छिन्नपक्खा सुसीलगुणपेहुणविहूणा ॥ १४१ ॥ ४१६ ॥ न लहइ जहा लिहंतो मुहिल्लिअं अट्ठिअं रसं सुणओ । सो तह तालु-

---

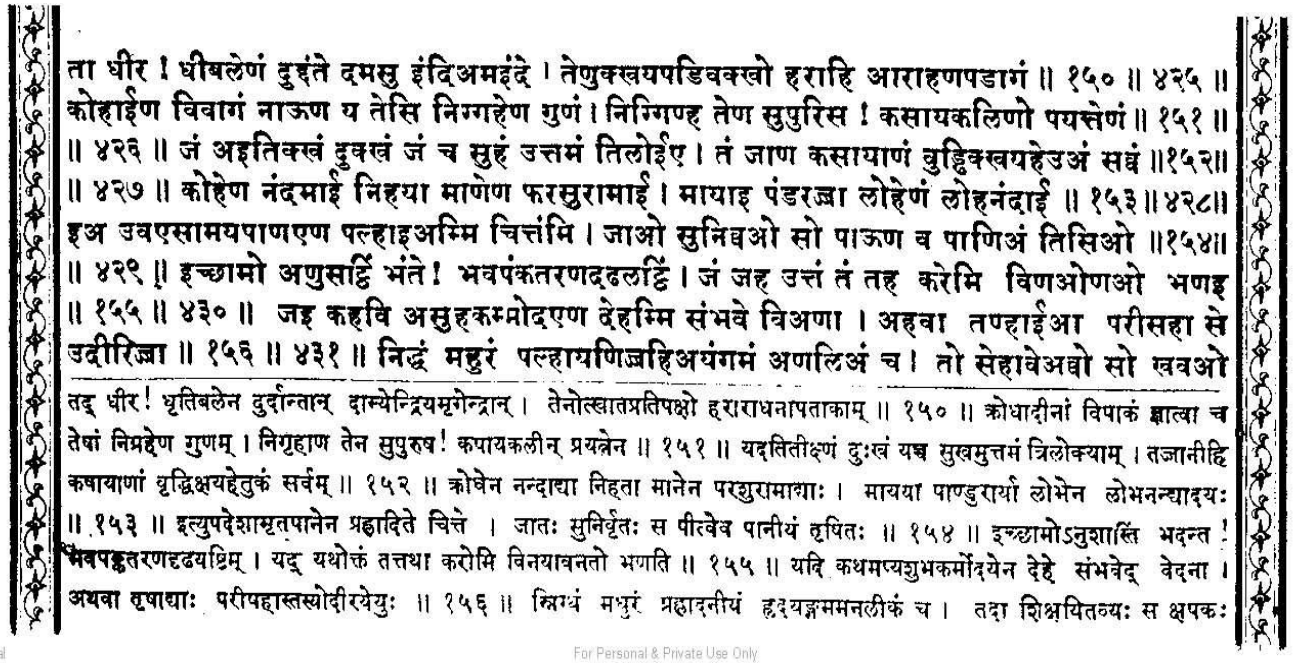
व्रतान्यखण्डनिर्व्रणगुणानि । उपहन्यन्ते च तानि निदानशल्येन मुनेरपि ॥ १३५ ॥ अथ रागद्वेषगर्भं मोहगर्भं च तद्भवेत्त्रिविधम् । धर्मार्थं हीनकुलादि प्रार्थनं मोहगर्भं च तत् ॥ १३६ ॥ रागेण गङ्गदत्तो द्वेषेण विश्वभूत्यादिकाः । मोहेन चण्डपिङ्गलाद्याः (निदानेषु) भवन्ति दृष्टान्ताः ॥१३७॥ अगणयित्वा यो मोक्षसुखं करोति निदानदुस्सारसुखहेतोः । स काचमणिकृते वैडूर्यमणिं प्रणाशयति॥१३८॥ दुःखक्षयः कर्मक्षयः समाधिमरणं च बोधिलाभश्च । एतत् प्रार्थयितव्यं न प्रार्थनीयं ततोऽन्यत् ॥ १३९ ॥ उज्झितनिदानशल्यो निशाभक्तनिवृत्तिसमितिगुप्तिभिः । पञ्चमहाव्रतरक्षां कृतशिवसौख्यां प्रसाधयति ॥ १४० ॥ इन्द्रियविषयप्रसक्ताः पतन्ति संसारसागरे जीवाः । पक्षिण इव छिन्नपक्षाः सुशीलगुणपिच्छविहीनाः ॥ १४१ ॥ न लभते यथा लिहन् शुष्कास्थ्नो रसं श्वा । स [illegible] विलिहन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

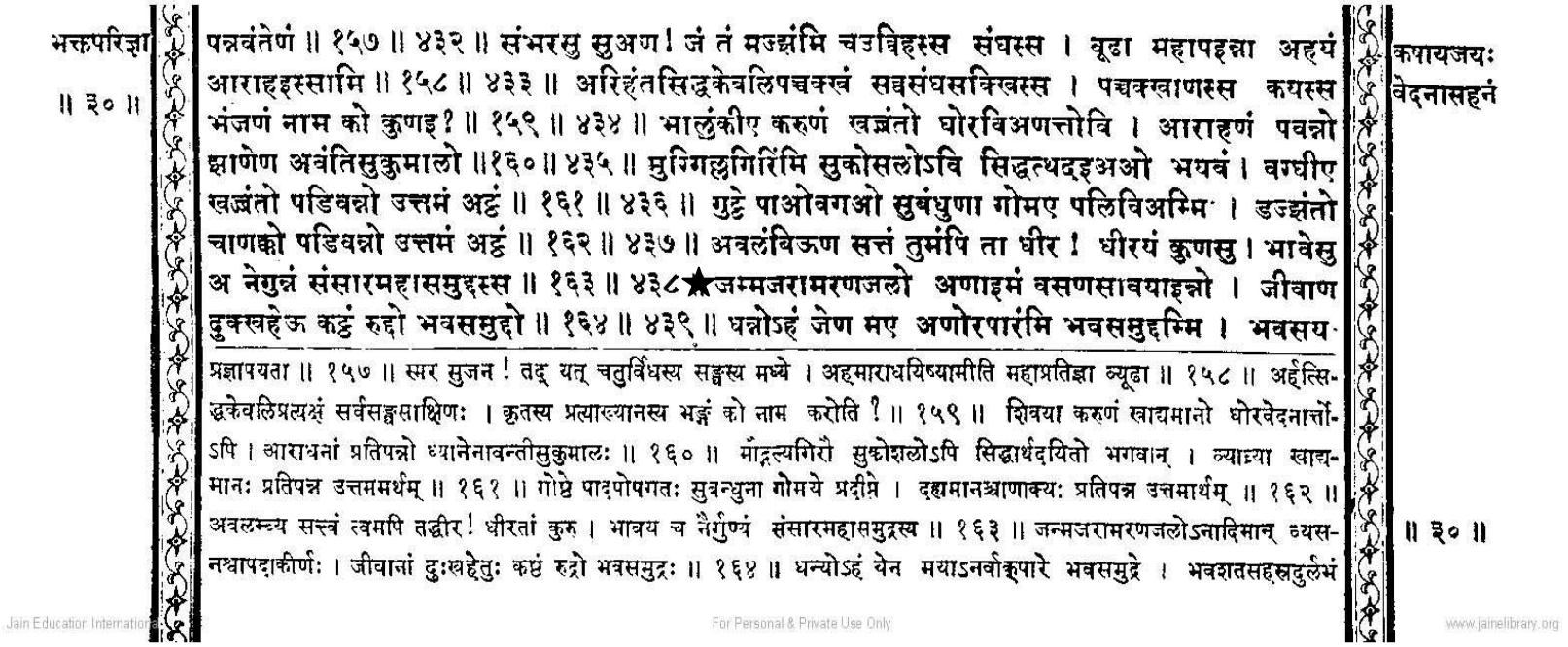
अरसिअं विलिहंतो मन्नए सुक्खं ॥ १४२ ॥ ४१७ ॥ महिलापसंगसेवी न लहइ किंचिवि सुहं तहा पुरिसो । सो मन्नए वराओ सयकायपरिस्समं सुक्खं ॥ १४३ ॥ ४१८ ॥ सुट्ठुवि मग्गिज्जंतो कत्थवि केलीइ नत्थि जह सारो । इंदिअविसएसु तहा नत्थि सुहं सुट्ठुवि गविट्ठं ॥ १४४ ॥ ४१९ ॥ सोएण पवसिअपिआ चक्खूरागेण माहुरो वणिओ । घाणेण रायपुत्तो निहओ जीहाइ सोदासो ॥ १४५ ॥ ४२० ॥ फासिंदिएण दुट्ठो नट्ठो सोमालिआमहीपालो । इक्किक्केणवि निहया किं पुण जे पंचसु पसत्ता? ॥ १४६ ॥ ४२१ ॥ विसयाविक्खो निवडइ निरविक्खो तरइ दुत्तरभवोहं । देवीदेवसमागयभाउयजुअलं व भणिअं च ॥ १४७ ॥ ४२२ ॥ छलिआ अवयक्खंता निरावयक्खा गया अविग्घेणं । तम्हा पवयणसारे निरावयक्खेण होअव्वं ॥ १४८ ॥ ४२३ ॥ विसए अवियक्खंता पडंति संसारसायरे घोरे । विसएसु निराविक्खा तरंति संसारकंतारं ॥ १४९ ॥ ४२४ ॥

मन्यते सौख्यम् ॥१४२॥ महिलाप्रसङ्गसेवी न लभते किञ्चिदपि सुखं तथा पुरुषः । स मन्यते वराकः स्वकायपरिश्रमं सौख्यम् ॥१४३॥ सुष्ठ्वपि मार्ग्यमाणः कुत्रापि कदल्यां यथा नास्ति सारः । इन्द्रियविषयेषु तथा नास्ति सुखं सुष्ठ्वपि गवेषितम् ॥ १४४ ॥ श्रोत्रेण प्रोषित-पिता चक्षूरागेण माथुरो वणिक् । घ्राणेन राजपुत्रो निहतो जिह्वया सौदासः ॥ १४४ ॥ स्पर्शनेन्द्रियेण दुष्टो नष्टः सुकुमालिकामही-पालः । एकैकेनापि निहताः किं पुनर्ये पञ्चसु प्रसक्ताः? ॥ १४६ ॥ विषयापेक्षो निपतति निरपेक्षस्तरति दुस्तरभवौघम् । देवीदेवस-मागतभ्रातृयुगलवद्भणितं च ॥ १४७ ॥ छलिता अपेक्षमाणा निरपेक्षा गता अविघ्नेन । तस्मात्प्रवचनसारे (लब्धे) निरपेक्षेण भवित-व्यम् ॥ १४८ ॥ विषयानपेक्षमाणाः पतन्ति संसारसागरे घोरे । विषयेषु निरपेक्षास्तरन्ति संसारकान्तारम् ॥ १४९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||१५०|| दीप अनुक्रम [१५०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:  ता धीर ! धीबलेणं दुइंते दमसु इंदिअमइंदे । तेणुक्खयपडिवक्खो हराहि आराहणपडागं ॥ १५० ॥ ४२५ ॥ कोहाईण विवागं नाऊण य तेसि निग्गहेण गुणं । निग्गिण्ह तेण सुपुरिस ! कसायकलिणो पयत्तेणं ॥ १५१ ॥ ॥ ४२६ ॥ जं अइतिक्खं दुक्खं जं च सुहं उत्तमं तिलोईए । तं जाण कसायाणं वुड्ढिक्खयहेउअं सव्वं ॥१५२॥ ॥ ४२७ ॥ कोहेण नंदमाई निहया माणेण फरसुरामाई । मायाइ पंडरज्जा लोहेणं लोहनंदाई ॥ १५३ ॥४२८॥ इअ उवएसामयपाणएण पल्हाइअम्मि चित्तंमि । जाओ सुनिव्वओ सो पाऊण व पाणिअं तिसिओ ॥१५४॥ ॥ ४२९ ॥ इच्छामो अणुसट्ठिं भंते! भवपंकतरणदढलट्ठिं । जं जह उत्तं तं तह करेमि विणओणओ भणइ ॥ १५५ ॥ ४३० ॥ जइ कहवि असुहकम्मोदएण देहम्मि संभवे विअणा । अहवा तण्हाईआ परीसहा से उदीरिज्जा ॥ १५६ ॥ ४३१ ॥ निद्धं महुरं पल्हायणिज्जहिअयंगमं अणलिअं च । तो सेहावेअव्वो सो खवओ तद् धीर! धृतिबलेन दुर्दान्तान् दाम्येन्द्रियमृगेन्द्रान् । तेनोत्खातप्रतिपक्षो हराराधनापताकाम् ॥ १५० ॥ क्रोधादीनां विपाकं ज्ञात्वा च तेषां निग्रहेण गुणम् । निगृहाण तेन सुपुरुष! कषायकलीन् प्रयत्नेन ॥ १५१ ॥ यदतितीक्ष्णं दुःखं यच्च सुखमुत्तमं त्रिलोक्याम् । तज्जानीहि कषायाणां वृद्धिक्षयहेतुकं सर्वम् ॥ १५२ ॥ क्रोधेन नन्दाद्या निहता मानेन परशुरामाद्याः । मायया पाण्डुरार्या लोभेन लोभनन्द्यादयः ॥ १५३ ॥ इत्युपदेशामृतपानेन प्रह्लादिते चित्ते । जातः सुनिर्वृतः स पीत्वेव पानीयं तृषितः ॥ १५४ ॥ इच्छामोऽनुशास्तिं भदन्त ! भवपङ्कतरणदृढयष्टिम् । यद् यथोक्तं तत्तथा करोमि विनयावनतो भणति ॥ १५५ ॥ यदि कथमप्यशुभकर्मोदयेन देहे संभवेद् वेदना । अथवा तृषाद्याः परीषहास्तस्योदीरयेयुः ॥ १५६ ॥ स्निग्धं मधुरं प्रह्लादनीयं हृदयङ्गममनलीकं च । तदा शिक्षयितव्यः स क्षपकः Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org
	अथ कषायानां सविपाकानां वर्णनं क्रियते

प्रत सूत्रांक ||१५७|| दीप अनुक्रम [१५७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:



भक्तपरिज्ञा ॥ ३० ॥

पन्नवंतेणं ॥ १५७ ॥ ४३२ ॥ संभरसु सुअण! जं तं मज्झंमि चउव्विहस्स संघस्स । वूढा महापइन्ना अहयं आराहइस्सामि ॥ १५८ ॥ ४३३ ॥ अरिहंतसिद्धकेवलिपच्चक्खं सव्वसंघसक्खिअस्स । पच्चक्खाणस्स कयस्स भंजणं नाम को कुणइ? ॥ १५९ ॥ ४३४ ॥ भालुंकीए करुणं खज्जंतो घोरविअणत्तोवि । आराहणं पवन्नो झाणेण अवंतिसुकुमालो ॥१६०॥ ४३५ ॥ मुग्गिल्लगिरिंमि सुकोसलोऽवि सिद्धत्थदइओ भयवं । वग्घीए खज्जंतो पडिवन्नो उत्तमं अट्ठं ॥ १६१ ॥ ४३६ ॥ गुट्ठे पाओवगओ सुबंधुणा गोमए पलिविअम्मि । डज्झंतो चाणक्को पडिवन्नो उत्तमं अट्ठं ॥ १६२ ॥ ४३७ ॥ अवलंबिऊण सत्तं तुमंपि ता धीर! धीरयं कुणसु । भावेसु अ नेगुन्नं संसारमहासमुद्दस्स ॥ १६३ ॥ ४३८★जम्मजरामरणजलो अणाइमं वसणसावयाइन्नो । जीवाण दुक्खहेऊ कट्ठं रुद्दो भवसमुद्दो ॥ १६४ ॥ ४३९ ॥ धन्नोऽहं जेण मए अणोरपारंमि भवसमुद्दम्मि । भवसय-

कषायजयः वेदनासहनं

प्रज्ञापयता ॥ १५७ ॥ स्मर सुजन! तद् यत् चतुर्विधस्य सङ्घस्य मध्ये । अहमाराधयिष्यामीति महाप्रतिज्ञा व्यूढा ॥ १५८ ॥ अर्हत्सिद्धकेवलिप्रत्यक्षं सर्वसङ्घसाक्षिणः । कृतस्य प्रत्याख्यानस्य भङ्गं को नाम करोति? ॥ १५९ ॥ शिवया करुणं खाद्यमानो घोरवेदनार्त्तोऽपि । आराधनां प्रतिपन्नो ध्यानेनावन्तीसुकुमालः ॥ १६० ॥ मौद्गल्यगिरौ सुकोशलोऽपि सिद्धार्थदयितो भगवान् । व्याघ्र्या खाद्यमानः प्रतिपन्न उत्तममर्थम् ॥ १६१ ॥ गोष्ठे पादपोपगतः सुबन्धुना गोमये प्रदीप्ते । दह्यमानश्चाणाक्यः प्रतिपन्न उत्तमार्थम् ॥ १६२ ॥ अवलम्ब्य सत्त्वं त्वमपि तद्धीर! धीरतां कुरु । भावय च नैर्गुण्यं संसारमहासमुद्रस्य ॥ १६३ ॥ जन्मजरामरणजलोऽनादिमान् व्यसनश्वापदाकीर्णः । जीवानां दुःखहेतुः कष्टं रुद्रो भवसमुद्रः ॥ १६४ ॥ धन्योऽहं येन मयाऽनर्वाक्पारे भवसमुद्रे । भवशतसहस्रदुर्लभं

॥ ३० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	*** गाथा १६२ पश्चात् अत्र एक प्रक्षेप-गाथा वर्तते -- ★ [१६३] रोहिडगम्मि सत्तीहओ वि कुंचेण अग्गिनिवदइओ । तं वेयणमहियासिय पडिवन्नो उत्तमं अट्ठं ॥ प्र०-१ ॥ रोहितके शक्तिहतोऽपि कुञ्चेन अग्निनृपदयित । तं वेदनमध्यासित प्रतिपन्न उत्तमं अर्थम् ॥

प्रत सूत्रांक ||१६६|| दीप अनुक्रम [१६७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२७],प्रकीर्णकसूत्र- [०४] भक्तपरिज्ञा मूलं एवं संस्कृतछाया:

सहस्सदुलहं लद्धं सद्धम्मजाणमिणं ॥ १६५ ॥ ४४० ॥ एअस्स पभावेणं पालिज्जंतस्स सइ पयत्तेणं । जम्मंतरेऽवि जीवा पावंति न दुक्खदोगच्चं ॥ १६६ ॥ ४४१ ॥ चिंतामणी अउव्वो एअमपुव्वो अ कप्पारुक्खुत्ति । एअं परमो मंतो एअं परमामयसरिच्छं ॥ १६७ ॥ ४४२ ॥ अह मणिमंदिरसुंदरफुरंतजिणगुणनिरंजणुज्जोओ । पंचनमुक्कारसमे पाणे पणओ विसज्जेइ ॥ १६८ ॥ ४४३ ॥ परिणामविसुद्धीए सोहम्मे सुरवरो महिड्ढीओ । आराहिऊण जायइ भत्तपरिन्नं जहन्नं सो ॥ १६९ ॥ ४४४ ॥ उक्कोसेण गिहत्थो अच्चुअकप्पंमि जायए अमरो । निव्वाणसुहं पावइ साहू सव्वट्ठसिद्धिं वा ॥ १७० ॥ ४४५ ॥ इअ जोइसरजिणवीरभद्दभणिआणुसारिणीमिणमो । भत्तपरिन्नं धन्ना पढंति निसुणंति भावेंति ॥ १७१ ॥ ४४६ ॥ सत्तरिसयं जिणाण व गाहाणं समयखित्तपन्नत्तं । आराहंतो विहिणा सासयसुक्खं लहइ मुक्खं ॥ १७२ ॥ ४४७ ॥ इति भत्तपरिन्नापयण्णं सम्मत्तं ॥ ४ ॥

च. स. ६

लब्धं सद्धर्मयानमिदम् ॥ १६५ ॥ एतस्य प्रभावेण पाल्यमानस्य सकृत् प्रयत्नेन । जन्मान्तरेऽपि जीवाः प्राप्नुवन्ति न दुःखदौर्गत्यम् ॥ १६६ ॥ चिन्तामणिरपूर्व एतदपूर्वश्च कल्पवृक्ष इति । एतत् परमो मन्त्र एतत्परमामृतसदृक्षम् ॥ १६७ ॥ अथ मनोमन्दिरे सुन्दरस्फुरज्जिनगुणनिरञ्जनोद्द्योतः । पञ्चनमस्कारसमं प्राणान् प्रणतो विसर्जयति ॥ १६८ ॥ परिणामविशुद्ध्या सौधर्मे सुरवरो महर्द्धिकः । आराध्य जायते भक्तपरिज्ञां जघन्यां सः ॥ १६९ ॥ उत्कृष्टेन गृहस्थोऽच्युतकल्पे जायतेऽमरः । निर्वाणसुखं प्राप्नोति साधुः सर्वार्थसिद्धिं वा ॥ १७० ॥ इति योगीश्वरजिनवीरभद्रभणितानुसारिणीमिमाम् । भक्तपरिज्ञां धन्याः पठन्ति शृण्वन्ति भावयन्ति ॥ १७१ ॥ जिनानां सप्ततं शतमिव गाथानां समयक्षेत्रे प्रज्ञप्तम् । तत् आराधयन् विधिना शाश्वतसौख्यं लभते मोक्षम् ॥ १७२ ॥ इति भक्तपरिज्ञाप्रकीर्णकं समाप्तम् ॥ ४ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भक्तपरिज्ञा-आराधनाया: फ़लम्

भाग 26	भक्तपरिज्ञा-प्रकीर्णकसूत्र [४] मूलं एवं संस्कृतछाया: परिसमाप्ता:

मूल संशोधकः सम्पादकश्च पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

किंचित् वैशिष्ट्य समर्पितेन सह पुन: संकलनकर्ता मुनि दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

“तन्दुलवैचारिक” मूलं एवं छाया

[मूलं एवं संस्कृतछाया]

[आद्य संपादकश्री]

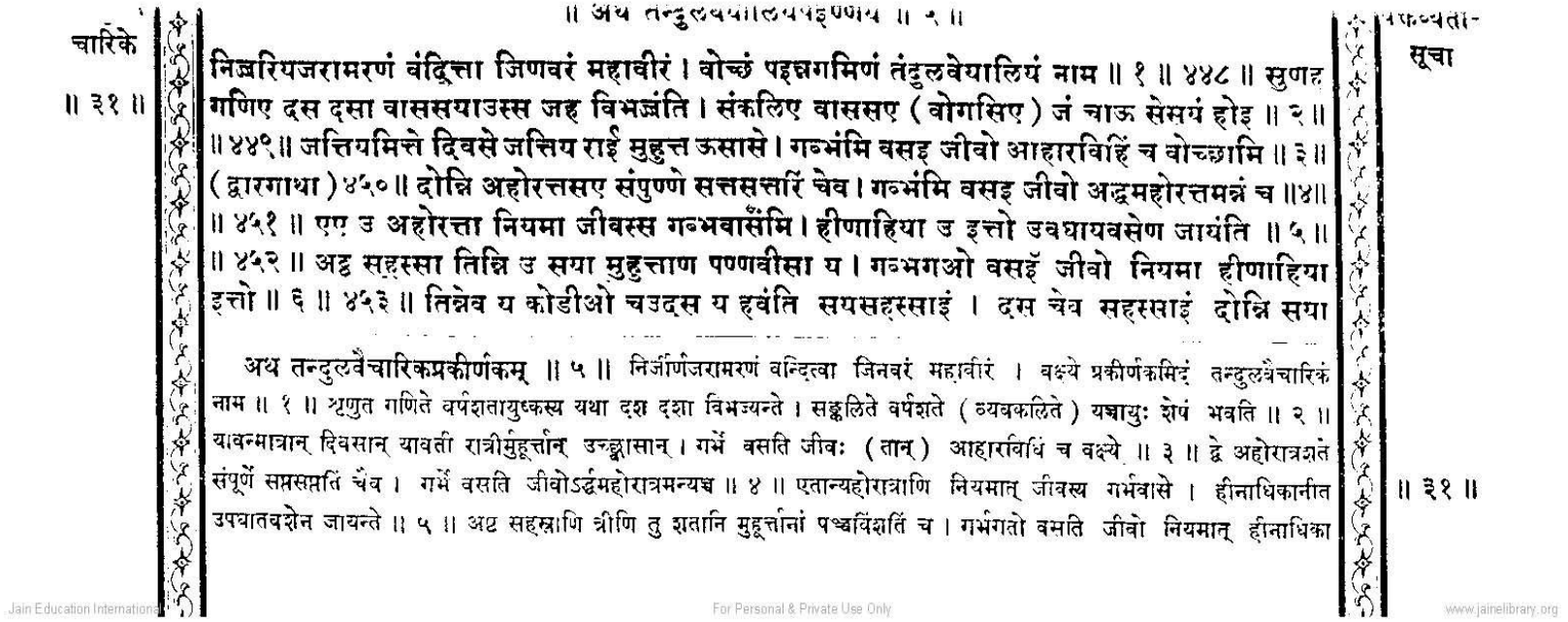
पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

पुन: संकलनकर्ता→ मुनि दीपरत्नसागर (M.Com., M.Ed., Ph.D.,श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५ ‘सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि’ श्रेणि भाग-२६

प्रत सूत्रांक [–] ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:



चारिके ॥ ३१ ॥

॥ अथ तन्दुलवैचारिकप्रकीर्णकम् ॥ ५ ॥

निज्जरियजरामरणं वंदित्ता जिणवरं महावीरं । वोच्छं पइण्णगमिणं तंदुलवेयालियं नाम ॥ १ ॥ ४४८ ॥ सुणह गणिए दस दसा वाससयाउस्स जह विभज्जंति । संकलिए वाससए (वोगसिए) जं चाऊ सेसयं होइ ॥ २ ॥ ॥ ४४९ ॥ जत्तियमित्ते दिवसे जत्तिय राई मुहुत्त ऊसासे । गब्भंमि वसइ जीवो आहारविहिं च वोच्छामि ॥ ३ ॥ (द्वारगाथा) ४५० ॥ दोन्नि अहोरत्तसए संपुण्णे सत्तसत्तरिं चेव । गब्भंमि वसइ जीवो अद्धमहोरत्तमन्नं च ॥४॥ ॥ ४५१ ॥ एए उ अहोरत्ता नियमा जीवस्स गब्भवासंमि । हीणाहिया उ इत्तो उवघायवसेण जायंति ॥ ५ ॥ ॥ ४५२ ॥ अट्ठ सहस्सा तिन्नि उ सया मुहुत्ताण पण्णवीसा य । गब्भगओ वसइ जीवो नियमा हीणाहिया इत्तो ॥ ६ ॥ ४५३ ॥ तिन्नेव य कोडीओ चउदस य हवंति सयसहस्साइं । दस चेव सहस्साइं दोन्नि सया

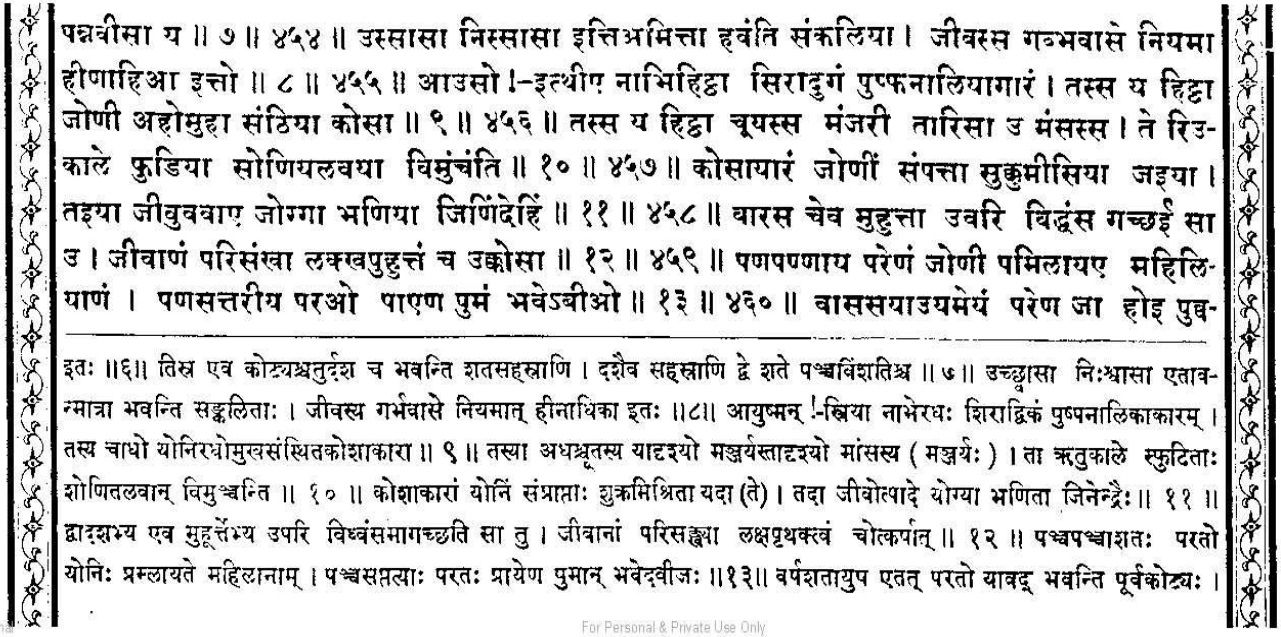
अथ तन्दुलवैचारिकप्रकीर्णकम् ॥ ५ ॥ निर्जीर्णजरामरणं वन्दित्वा जिनवरं महावीरं । वक्ष्ये प्रकीर्णकमिदं तन्दुलवैचारिकं नाम ॥ १ ॥ शृणुत गणिते वर्षशतायुष्कस्य यथा दश दशा विभज्यन्ते । सङ्कलिते वर्षशते (व्यवकलिते) यच्चायुः शेषं भवति ॥ २ ॥ यावन्मात्रान् दिवसान् यावती रात्रीर्मुहूर्त्तान् उच्छ्वासान् । गर्भे वसति जीवः (तान्) आहारविधिं च वक्ष्ये ॥ ३ ॥ द्वे अहोरात्रशते संपूर्णे सप्तसप्तति चैव । गर्भे वसति जीवोऽर्द्धमहोरात्रमन्यच्च ॥ ४ ॥ एतान्यहोरात्राणि नियमात् जीवस्य गर्भवासे । हीनाधिकानीत उपघातवशेन जायन्ते ॥ ५ ॥ अष्ट सहस्राणि त्रीणि तु शतानि मुहूर्त्तानां पञ्चविंशतिं च । गर्भगतो वसति जीवो नियमात् हीनाधिका

सूचा ॥ ३१ ॥

Jain Education Internation For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	भगवंत वंदना, दश दशाया: प्रतिज्ञा

प्रत सूत्रांक [–] ॥७॥ दीप अनुक्रम [७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:



पन्नवीसा य ॥ ७ ॥ ४५४ ॥ उस्सासा निस्सासा इत्तिअमित्ता हवंति संकलिया । जीवस्स गब्भवासे नियमा हीणाहिआ इत्तो ॥ ८ ॥ ४५५ ॥ आउसो !–इत्थीए नाभिहिट्ठा सिरादुगं पुप्फनालियागारं । तस्स य हिट्ठा जोणी अहोमुहा संठिया कोसा ॥ ९ ॥ ४५६ ॥ तस्स य हिट्ठा चूयस्स मंजरी तारिसा उ मंसस्स । ते रिउ-काले फुडिया सोणियलवया विमुंचंति ॥ १० ॥ ४५७ ॥ कोसायारं जोणीं संपत्ता सुक्कुमीसिया जइया । तइया जीवुववाए जोग्गा भणिया जिणिंदेहिं ॥ ११ ॥ ४५८ ॥ बारस चेव मुहुत्ता उवरि विद्धंस गच्छई सा उ । जीवाणं परिसंखा लक्खपुहुत्तं च उक्कोसा ॥ १२ ॥ ४५९ ॥ पणपण्णाय परेणं जोणी पमिलायए महिलि-याणं । पणसत्तरीय परओ पाएण पुमं भवेऽवीओ ॥ १३ ॥ ४६० ॥ वाससयाउयमेयं परेण जा होइ पुव्व-

---

इतः ॥६॥ तिस्र एव कोट्यश्चतुर्दश च भवन्ति शतसहस्राणि । दशैव सहस्राणि द्वे शते पञ्चविंशतिश्च ॥ ७ ॥ उच्छ्वासा निःश्वासा एतावन्मात्रा भवन्ति सङ्कलिताः । जीवस्य गर्भवासे नियमात् हीनाधिका इतः ॥८॥ आयुष्मन् !-स्त्रिया नाभेरधः शिराद्विकं पुष्पनालिकाकारम् । तस्य चाधो योनिरधोमुखसंस्थितकोशाकारा ॥ ९ ॥ तस्या अधश्चूतस्य यादृश्यो मञ्जर्यस्तादृश्यो मांसस्य (मञ्जर्यः) । ता ऋतुकाले स्फुटिताः शोणितलवान् विमुञ्चन्ति ॥ १० ॥ कोशाकारां योनिं संप्राप्ताः शुक्रमिश्रिता यदा (ते) । तदा जीवोत्पादे योग्या भणिता जिनेन्द्रैः ॥ ११ ॥ द्वादशभ्य एव मुहूर्त्तेभ्य उपरि विध्वंसमागच्छति सा तु । जीवानां परिसङ्ख्या लक्षपृथक्त्वं चोत्कर्षात् ॥ १२ ॥ पञ्चपञ्चाशतः परतो योनिः प्रम्लायते महिलानाम् । पञ्चसप्तत्याः परतः प्रायेण पुमान् भवेदवीजः ॥१३॥ वर्षशतायुष एतत् परतो यावद् भवन्ति पूर्वकोट्यः ।

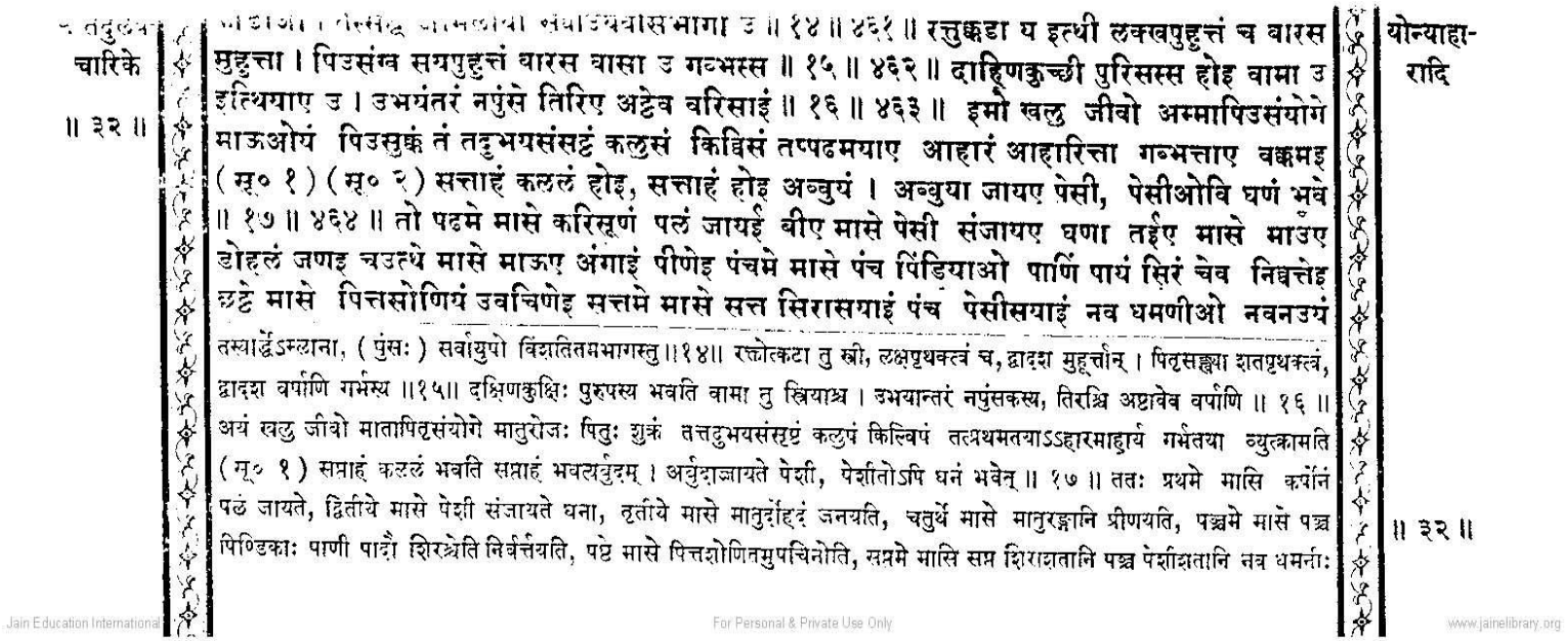
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र गर्भवास-संबंधी वर्णनं क्रियते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१] ॥१४॥

दीप अनुक्रम [१७]



तन्दुल- चारिके ॥ ३२ ॥

भोइणा । तस्सद्धे अम्लाया संखेज्जयवासभागा उ ॥ १४ ॥ ४६१ ॥ रत्तुक्कडा य इत्थी लक्खपुहुत्तं च बारस मुहुत्ता । पिउसंग्व सयपुहुत्तं बारस वासा उ गब्भस्स ॥ १५ ॥ ४६२ ॥ दाहिणकुच्छी पुरिसस्स होइ वामा उ इत्थियाए उ । उभयंतरं नपुंसे तिरिए अट्ठेव वरिसाइं ॥ १६ ॥ ४६३ ॥ इमो खलु जीवो अम्मापिउसंयोगे माऊओयं पिउसुक्कं तं तदुभयसंसट्ठं कलुसं किविसं तप्पढमयाए आहारं आहारित्ता गब्भत्ताए वक्कमइ (सू० १) (सू० २) सत्ताहं कललं होइ, सत्ताहं होइ अव्वुयं । अव्वुया जायए पेसी, पेसीओवि घणं भवे ॥ १७ ॥ ४६४ ॥ तो पढमे मासे करिसूणं पलं जायई बीए मासे पेसी संजायए घणा तईए मासे माउए डोहलं जणइ चउत्थे मासे माऊए अंगाइं पीणेइ पंचमे मासे पंच पिंडियाओ पाणिं पायं सिरं चेव निवत्तेइ छट्ठे मासे पित्तसोणियं उवचिणेइ सत्तमे मासे सत्त सिरासयाइं पंच पेसीसयाइं नव धमणीओ नवनउयं

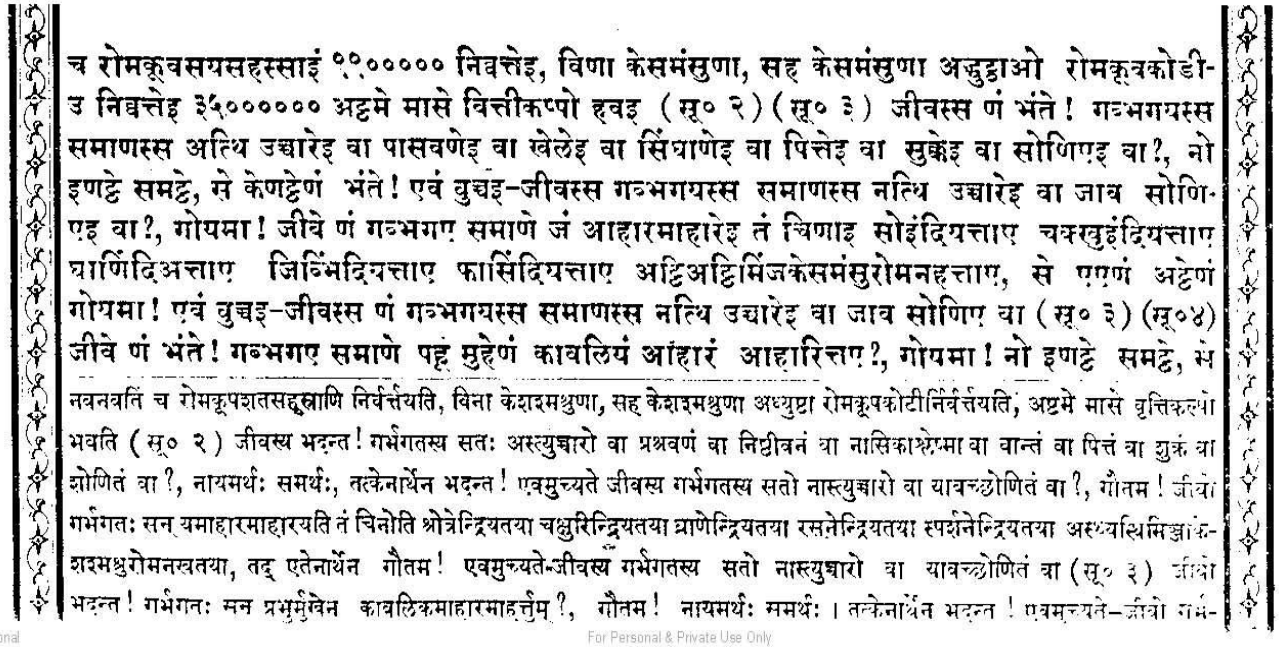
तस्यार्द्धेऽम्लाना, (पुंसः) सर्वायुषो विंशतितमभागस्तु ॥१४॥ रक्तोत्कटा तु स्त्री, लक्षपृथक्त्वं च, द्वादश मुहूर्त्तान् । पितृसङ्ख्या शतपृथक्त्वं, द्वादश वर्षाणि गर्भस्य ॥१५॥ दक्षिणकुक्षिः पुरुषस्य भवति वामा तु स्त्रियाश्च । उभयान्तरं नपुंसकस्य, तिरश्चि अष्टावेव वर्षाणि ॥ १६ ॥ अयं खलु जीवो मातापितृसंयोगे मातुरोजः पितुः शुक्रं तत्तदुभयसंसृष्टं कलुषं किल्बिषं तत्प्रथमतयाऽऽहारमाहार्य गर्भतया व्युत्क्रामति (सू० १) सप्ताहं कललं भवति सप्ताहं भवत्यर्बुदम् । अर्बुदाज्जायते पेशी, पेशीतोऽपि घनं भवेत् ॥ १७ ॥ ततः प्रथमे मासि कर्षोनं पलं जायते, द्वितीये मासे पेशी संजायते घना, तृतीये मासे मातुर्दोहदं जनयति, चतुर्थे मासे मातुरङ्गानि प्रीणयति, पञ्चमे मासे पञ्च पिण्डिकाः पाणी पादौ शिरश्चेति निर्वर्त्तयति, षष्ठे मासे पित्तशोणितमुपचिनोति, सप्तमे मासि सप्त शिराशतानि पञ्च पेशीशतानि नव धमनीः

योन्याहारादि

॥ ३२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२] ॥१७॥ दीप अनुक्रम [१९]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:



च रोमकूवसयसहस्साइं ९९०००० निवत्तेइ, विणा केसमंसुणा, सह केसमंसुणा अद्धट्ठाओ रोमकूवकोडी-उ निवत्तेइ ३५०००००० अट्ठमे मासे वित्तीकप्पो हवइ (सू० २) (सू० ३) जीवस्स णं भंते! गब्भगयस्स समाणस्स अत्थि उच्चारेइ वा पासवणेइ वा खेलेइ वा सिंघाणेइ वा पित्तेइ वा सुक्केइ वा सोणिएइ वा?, नो इणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-जीवस्स गब्भगयस्स समाणस्स नत्थि उच्चारेइ वा जाव सोणिएइ वा?, गोयमा! जीवे णं गब्भगए समाणे जं आहारमाहारेइ तं चिणाइ सोइंदियत्ताए चक्खुइंदियत्ताए घाणिंदिअत्ताए जिब्भिंदियत्ताए फासिंदियत्ताए अट्ठिअट्ठिमिंजकेसमंसुरोमनहत्ताए, से एएणं अट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-जीवस्स णं गब्भगयस्स समाणस्स नत्थि उच्चारेइ वा जाव सोणिए वा (सू० ३) (सू०४) जीवे णं भंते! गब्भगए समाणे पहू मुहेणं कावलियं आहारं आहारित्तए?, गोयमा! नो इणट्ठे समट्ठे, से

नवनवतिं च रोमकूपशतसहस्राणि निर्वर्त्तयति, विना केशश्मश्रुणा, सह केशश्मश्रुणा अध्युष्ट्रा रोमकूपकोटीर्निर्वर्त्तयति, अष्टमे मासे वृत्तिकल्पो भवति (सू० २) जीवस्य भदन्त! गर्भगतस्य सतः अस्त्युच्चारो वा प्रश्रवणं वा निष्ठीवनं वा नासिकाश्लेष्मा वा वान्तं वा पित्तं वा शुक्रं वा शोणितं वा?, नायमर्थः समर्थः, तत्केनार्थेन भदन्त! एवमुच्यते जीवस्य गर्भगतस्य सतो नास्त्युच्चारो वा यावच्छोणितं वा?, गौतम! जीवो गर्भगतः सन् यमाहारमाहारयति तं चिनोति श्रोत्रेन्द्रियतया चक्षुरिन्द्रियतया घ्राणेन्द्रियतया रसनेन्द्रियतया स्पर्शनेन्द्रियतया अस्थ्यस्थिमिञ्जाकेशश्मश्रुरोमनखतया, तद् एतेनार्थेन गौतम! एवमुच्यते-जीवस्य गर्भगतस्य सतो नास्त्युच्चारो वा यावच्छोणितं वा (सू० ३) जीवो भदन्त! गर्भगतः सन् प्रभुर्मुखेन कावलिकमाहारमाहर्त्तुम्?, गौतम! नायमर्थः समर्थः। तत्केनार्थेन भदन्त! एवमुच्यते-जीवो गर्भ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [४] ||१७||

दीप अनुक्रम [२१]

केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ–जीवे णं गब्भगए समाणे नो पहू मुहेणं कावलियं आहारं आहारित्तए?, गोयमा! जीवे णं गब्भगए समाणे सव्वओ आहारेइ सव्वओ परिणामेइ सव्वओ ऊससइ सव्वओ नीससइ अभिक्खणं आहारेइ अभिक्खणं परिणामेइ अभिक्खणं ऊससइ अभिक्खणं नीससइ आहच्च आहारेइ आहच्च परिणामेइ आहच्च ऊससइ आहच्च निस्ससइ, से माउजीवरसहरणी पुत्तजीवरसहरणी माउजीवपडिबद्धा पुत्तजीवं फुडा तम्हा आहारेइ तम्हा परिणामेइ, अवराऽवि य णं पुत्तजीवपडिबद्धा माउजीवफुडा तम्हा चिणाइ तम्हा उवचिणाइ, से एएणं अट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ–जीवे णं गब्भगए समाणे नो पहू मुहेणं कावलिअं आहारं आहारित्तए (सू० ४) (सू० ५)। जीवे णं गब्भगए समाणे किमाहारं आहारेइ?, गोयमा! जं से माया नाणाविहाओ रसविगईओ तित्तकडुअकसायंबिलमहुराइं दव्वाइं आहारेइ तओ एगदेसेणं ओअमा-

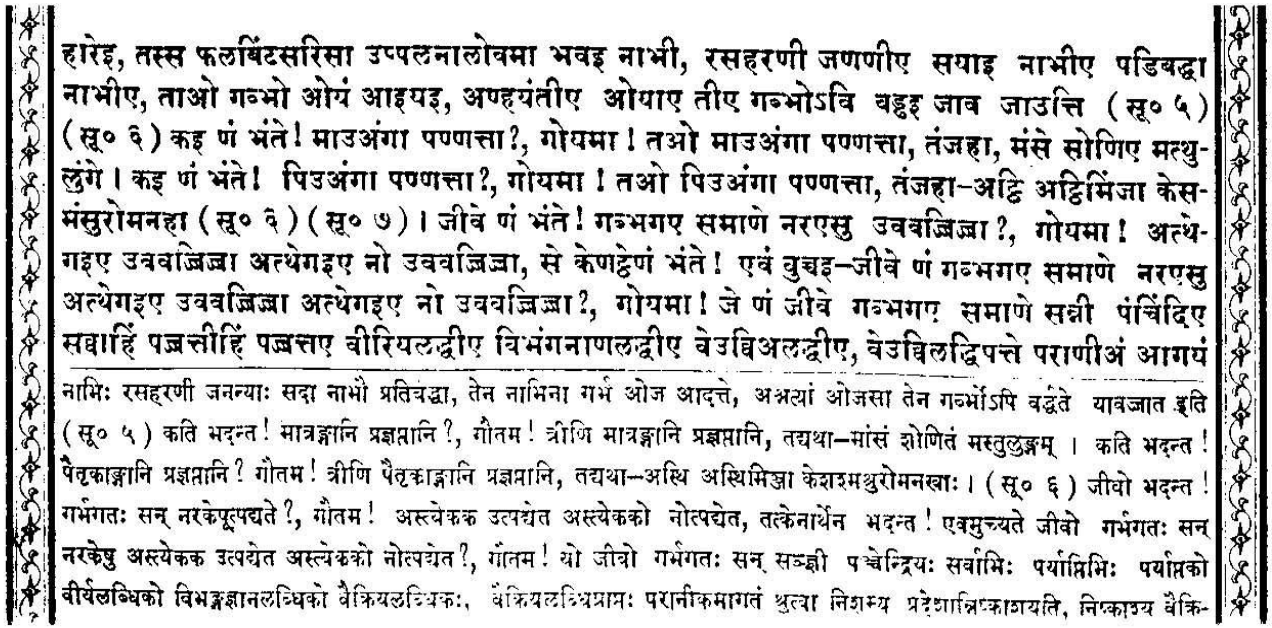
गतः सन् न प्रभुर्मुखेन कावलिकमाहारमाहर्तुम्?, गौतम! जीवो गर्भगतः सन् सर्वत आहारयति सर्वतः परिणमयति सर्वतः उच्छ्वसिति सर्वतो निःश्वसिति अभीक्ष्णमाहारयति अभीक्ष्णं परिणमयति अभीक्ष्णमुच्छ्वसिति अभीक्ष्णं निःश्वसिति आहृत्याहारयति आहृत्य परिणमयति आहृत्योच्छ्वसिति आहृत्य निःश्वसिति, अथ मातृजीवरसहरणी पुत्रजीवरसहरणी मातृजीवप्रतिबद्धा पुत्रजीवस्पृष्टा तस्मादाहारयति तस्मात्परिणमयति, अपराऽपि च पुत्रजीवप्रतिबद्धा मातृजीवस्पृष्टा तस्माच्चिनोति तस्मादुपचिनोति, तदेतेनार्थेन गौतम! एवमुच्यते-जीवो गर्भगतः सन् मुखेन कावलिकाहारमाहर्तुं न प्रभुः। (सू० ४) जीवो गर्भगतः सन् किमाहारमाहारयति? गौतम! यत्तस्य माता नानाविधा रसविकृतीस्तिक्तकटुककषायाम्लमधुराणि द्रव्याण्याहारयति तदेकदेशेन ओज आहारयति, तस्य फलवृन्तसदृशी उत्पलनालोपमा भवति

उच्चारार्थ-भावः आहारविधिः

॥ ३३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| प्रत सूत्रांक [५] ॥१७॥ दीप अनुक्रम [२२] | पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:



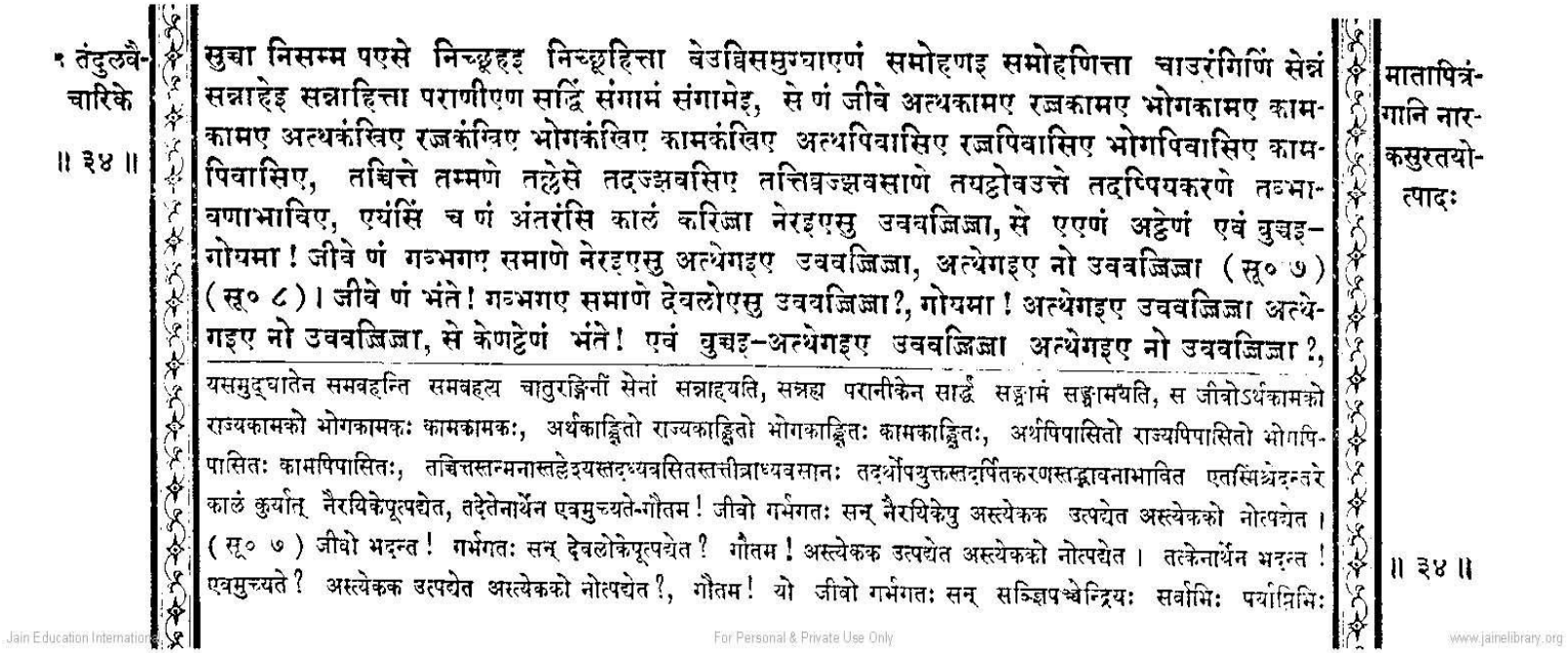
हारेइ, तस्स फलबिंटसरिसा उप्पलनालोवमा भवइ नाभी, रसहरणी जणणीए सयाइ नाभीए पडिबद्धा नाभीए, ताओ गब्भो ओयं आइयइ, अण्हयंतीए ओयाए तीए गब्भोऽवि वड्ढइ जाव जाउत्ति (सू० ५) (सू० ६) कइ णं भंते! माउअंगा पण्णत्ता?, गोयमा! तओ माउअंगा पण्णत्ता, तंजहा, मंसे सोणिए मत्थुलुंगे। कइ णं भंते! पिउअंगा पण्णत्ता?, गोयमा! तओ पिउअंगा पण्णत्ता, तंजहा–अट्ठि अट्ठिमिंजा केसमंसुरोमनहा (सू० ६) (सू० ७)। जीवे णं भंते! गब्भगए समाणे नरएसु उववज्जिज्जा?, गोयमा! अत्थेगइए उववज्जिज्जा अत्थेगइए नो उववज्जिज्जा, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ–जीवे णं गब्भगए समाणे नरएसु अत्थेगइए उववज्जिज्जा अत्थेगइए नो उववज्जिज्जा?, गोयमा! जे णं जीवे गब्भगए समाणे सन्नी पंचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तए वीरियलद्धीए विभंगनाणलद्धीए वेउव्विअलद्धीए, वेउव्विलद्धिपत्ते पराणीअं आगयं

नाभिः रसहरणी जनन्याः सदा नाभौ प्रतिबद्धा, तेन नाभिना गर्भ ओज आदत्ते, अभ्रत्यां ओजसा तेन गर्भोऽपि वर्द्धते यावज्जात इति (सू० ५) कति भदन्त! मातृज्ञानि प्रज्ञप्तानि?, गौतम! त्रीणि मातृज्ञानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–मांसं शोणितं मस्तुलुङ्गम्। कति भदन्त! पैतृकाङ्गानि प्रज्ञप्तानि? गौतम! त्रीणि पैतृकाङ्गानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–अस्थि अस्थिमिञ्जा केशश्मश्रुरोमनखाः। (सू० ६) जीवो भदन्त! गर्भगतः सन् नरकेषूत्पद्यते?, गौतम! अस्त्येकक उत्पद्येत अस्त्येकको नोत्पद्येत, तत्केनार्थेन भदन्त! एवमुच्यते जीवो गर्भगतः सन् नरकेषु अस्त्येकक उत्पद्येत अस्त्येकको नोत्पद्येत?, गौतम! यो जीवो गर्भगतः सन् सञ्ज्ञी पञ्चेन्द्रियः सर्वाभिः पर्याप्तिभिः पर्याप्तको वीर्यलब्धिको विभङ्गज्ञानलब्धिको वैक्रियलब्धिकः, वैक्रियलब्धिप्राप्तः परानीकमागतं श्रुत्वा निशम्य प्रदेशान्निष्काशयति, निष्काश्य वैक्रि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	गर्भगत-जीवस्य नरकेषु उत्पत्ति:

| प्रत सूत्रांक [७] ॥१७॥ दीप अनुक्रम [२४] | पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:



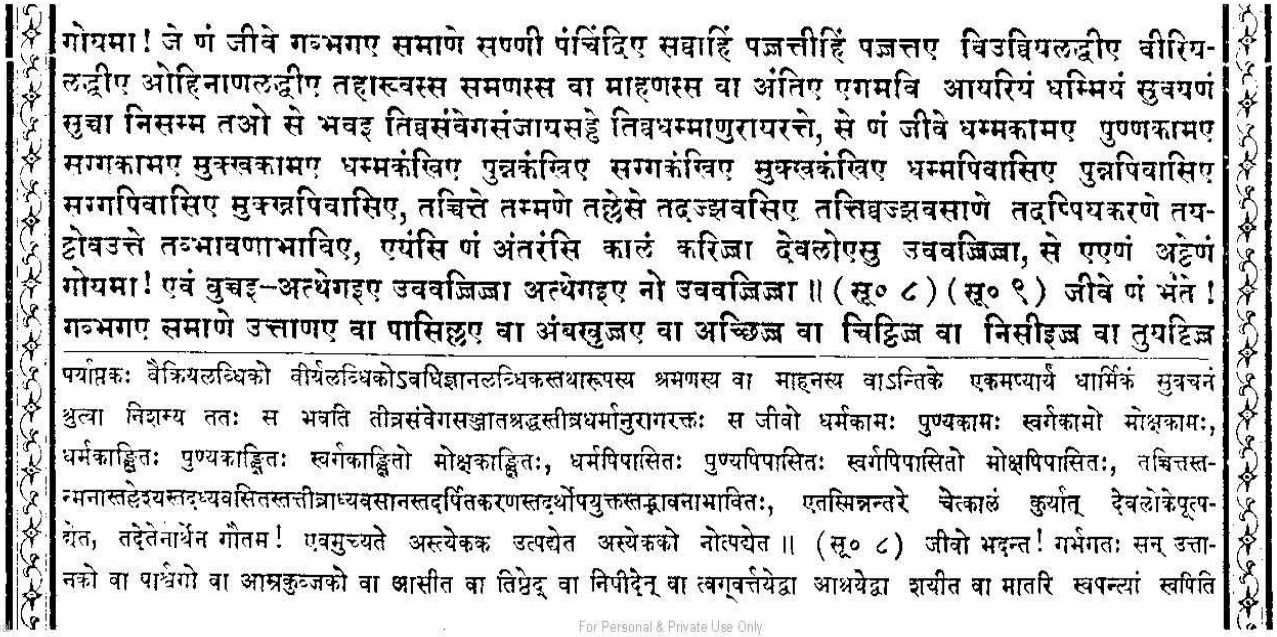
सुचा निसम्म पएसे निच्छूहइ निच्छूहित्ता वेउव्विसमुग्घाएणं समोहणइ समोहणित्ता चाउरंगिणिं सेन्नं सन्नाहेइ सन्नाहित्ता पराणीएण सद्धिं संगामं संगामेइ, से णं जीवे अत्थकामए रज्जकामए भोगकामए कामकामए अत्थकंखिए रज्जकंखिए भोगकंखिए कामकंखिए अत्थपिवासिए रज्जपिवासिए भोगपिवासिए कामपिवासिए, तच्चित्ते तम्मणे तल्लेसे तदज्झवसिए तत्तिव्वज्झवसाणे तयट्ठोवउत्ते तदप्पियकरणे तब्भावणाभाविए, एयंसिं च णं अंतरंसि कालं करिज्जा नेरइएसु उववज्जिज्जा, से एएणं अट्ठेणं एवं वुच्चइ–गोयमा ! जीवे णं गब्भगए समाणे नेरइएसु अत्थेगइए उववज्जिज्जा, अत्थेगइए नो उववज्जिज्जा (सू० ७) (सू० ८)। जीवे णं भंते! गब्भगए समाणे देवलोएसु उववज्जिज्जा?, गोयमा ! अत्थेगइए उववज्जिज्जा अत्थेगइए नो उववज्जिज्जा, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ–अत्थेगइए उववज्जिज्जा अत्थेगइए नो उववज्जिज्जा?,

यसमुद्घातेन समवहन्ति समवहत्य चातुरङ्गिनीं सेनां सन्नाहयति, सन्नह्य परानीकेन सार्द्धं सङ्गामं सङ्गामयति, स जीवोऽर्थकामको राज्यकामको भोगकामकः कामकामकः, अर्थकाङ्क्षितो राज्यकाङ्क्षितो भोगकाङ्क्षितः कामकाङ्क्षितः, अर्थपिपासितो राज्यपिपासितो भोगपिपासितः कामपिपासितः, तच्चित्तस्तन्मनास्तल्लेश्यस्तदध्यवसितस्तत्तीव्राध्यवसानः तदर्थोपयुक्तस्तदर्पितकरणस्तद्भावनाभावित एतस्मिंश्चेदन्तरे कालं कुर्यात् नैरयिकेषूत्पद्येत, तदेतेनार्थेन एवमुच्यते-गौतम! जीवो गर्भगतः सन् नैरयिकेषु अस्त्येकक उत्पद्येत अस्त्येकको नोत्पद्येत। (सू० ७) जीवो भदन्त! गर्भगतः सन् देवलोकेषूत्पद्येत? गौतम! अस्त्येकक उत्पद्येत अस्त्येकको नोत्पद्येत। तत्केनार्थेन भदन्त! एवमुच्यते? अस्त्येकक उत्पद्येत अस्त्येकको नोत्पद्येत?, गौतम! यो जीवो गर्भगतः सन् सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियः सर्वाभिः पर्याप्तिभिः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	गर्भगत-जीवस्य देवेषु उत्पत्ति:

प्रत सूत्रांक [८] ||१७|| दीप अनुक्रम [२५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

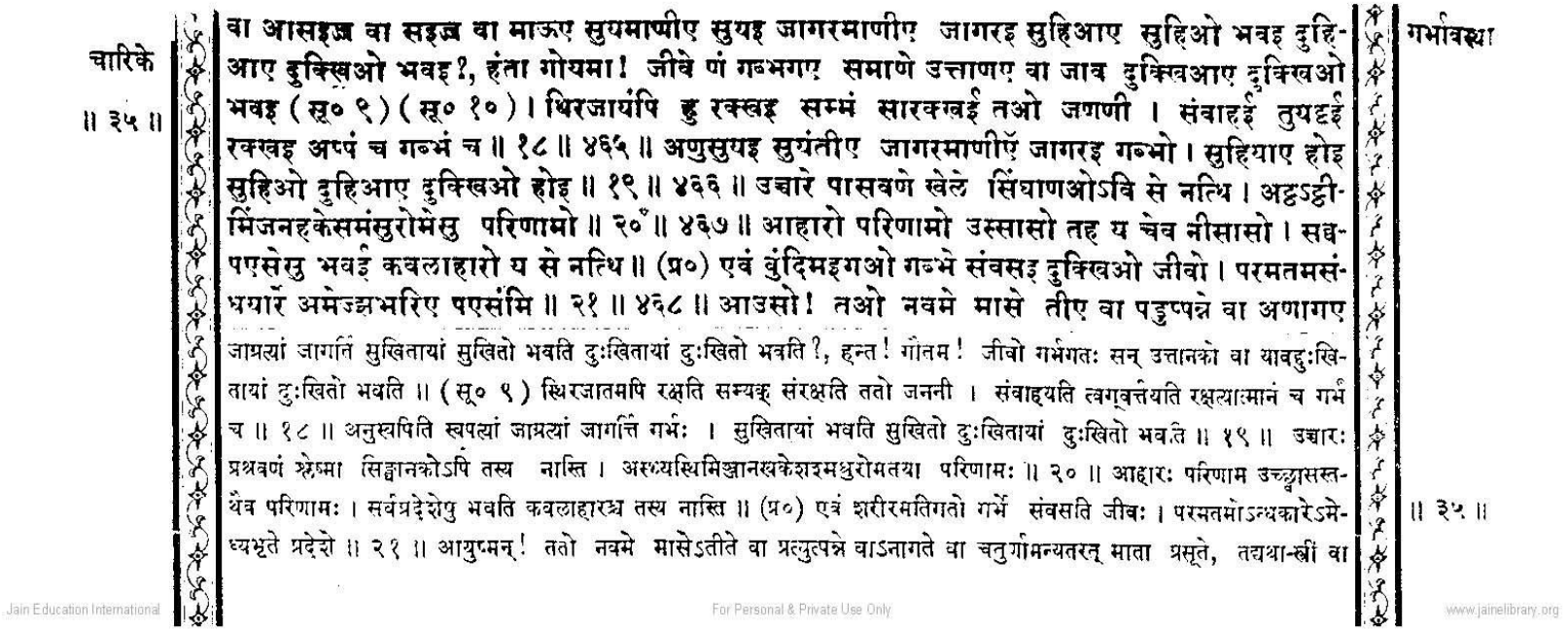


गोयमा! जे णं जीवे गब्भगए समाणे सण्णी पंचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तए विउव्वियलद्धीए वीरिय-लद्धीए ओहिनाणलद्धीए तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमवि आयरियं धम्मियं सुवयणं सुचा निसम्म तओ से भवइ तिव्वसंवेगसंजायसड्ढे तिव्वधम्माणुरायरत्ते, से णं जीवे धम्मकामए पुण्णकामए सग्गकामए मुक्खकामए धम्मकंखिए पुन्नकंखिए सग्गकंखिए मुक्खकंखिए धम्मपिवासिए पुन्नपिवासिए सग्गपिवासिए मुक्खपिवासिए, तच्चित्ते तम्मणे तल्लेसे तदज्झवसिए तत्तिव्वज्झवसाणे तदप्पियकरणे तय-ट्ठोवउत्ते तब्भावणाभाविए, एयंसि णं अंतरंसि कालं करिज्जा देवलोएसु उववज्जिज्जा, से एएणं अट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ–अत्थेगइए उववज्जिज्जा अत्थेगइए नो उववज्जिज्जा ॥ (सू० ८) (सू० ९) जीवे णं भंते! गब्भगए समाणे उत्ताणए वा पासिल्लए वा अंबखुज्जए वा अच्छिज्ज वा चिट्ठिज्ज वा निसीइज्ज वा तुयट्टिज्ज

पर्याप्तकः वैक्रियलब्धिको वीर्यलब्धिकोऽवधिज्ञानलब्धिकस्तथारूपस्य श्रमणस्य वा माहनस्य वाऽन्तिके एकमप्यार्यं धार्मिकं सुवचनं श्रुत्वा निशम्य ततः स भवति तीव्रसंवेगसञ्जातश्रद्धस्तीव्रधर्मानुरागरक्तः स जीवो धर्मकामः पुण्यकामः स्वर्गकामो मोक्षकामः, धर्मकाङ्क्षितः पुण्यकाङ्क्षितः स्वर्गकाङ्क्षितो मोक्षकाङ्क्षितः, धर्मपिपासितः पुण्यपिपासितः स्वर्गपिपासितो मोक्षपिपासितः, तच्चित्तस्त-न्मनास्तल्लेश्यस्तदध्यवसितस्तत्तीव्राध्यवसानस्तदर्पितकरणस्तदर्थोपयुक्तस्तद्भावनाभावितः, एतस्मिन्नन्तरे चेत्कालं कुर्यात् देवलोकेषूत्प-द्येत, तदेतेनार्थेन गौतम! एवमुच्यते अस्त्येकक उत्पद्येत अस्त्येकको नोत्पद्येत ॥ (सू० ८) जीवो भदन्त! गर्भगतः सन् उत्ता-नको वा पार्श्वगो वा आम्रकुब्जको वा आसीत वा तिष्ठेद् वा निषीदेत् वा त्वग्वर्त्तयेद्वा आश्रयेद्वा शयीत वा मातरि स्वपन्त्यां स्वपिति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९] ॥१७ +१॥ दीप अनुक्रम [२६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:



चारिके ॥ ३५ ॥

वा आसइज्ज वा सइज्ज वा माऊए सुयमाणीए सुयइ जागरमाणीए जागरइ सुहिआए सुहिओ भवइ दुहिआए दुक्खिओ भवइ?, हंता गोयमा! जीवे णं गब्भगए समाणे उत्ताणए वा जाव दुक्खिआए दुक्खिओ भवइ (सू० ९) (सू० १०)। थिरजायंपि हु रक्खइ सम्मं सारक्खई तओ जणणी । संवाहई तुयट्टई रक्खइ अप्पं च गब्भं च ॥ १८ ॥ ४६५ ॥ अणुसुयइ सुयंतीए जागरमाणीए जागरइ गब्भो। सुहियाए होइ सुहिओ दुहिआए दुक्खिओ होइ ॥ १९ ॥ ४६६ ॥ उच्चारे पासवणे खेले सिंघाणओऽवि से नत्थि। अट्ठऽट्ठीमिंजनहकेसमंसुरोमेसु परिणामो ॥ २०॥ ४६७ ॥ आहारो परिणामो उस्सासो तह य चेव नीसासो। सव्वपएसेसु भवइ कवलाहारो य से नत्थि॥ (प्र०) एवं बुंदिमइगओ गब्भे संवसइ दुक्खिओ जीवो। परमतमसंधयारे अमेज्झभरिए पएसंमि ॥ २१ ॥ ४६८ ॥ आउसो! तओ नवमे मासे तीए वा पडुप्पन्ने वा अणागए

गर्भावस्था

जाग्रत्यां जागर्ति सुखितायां सुखितो भवति दुःखितायां दुःखितो भवति?, हन्त! गौतम! जीवो गर्भगतः सन् उत्तानको वा यावद्दुःखितायां दुःखितो भवति ॥ (सू० ९) स्थिरजातमपि रक्षति सम्यक् संरक्षति ततो जननी । संवाहयति त्वग्वर्त्तयति रक्षत्यात्मानं च गर्भं च ॥ १८ ॥ अनुस्वपिति स्वपत्यां जाग्रत्यां जागर्त्ति गर्भः । सुखितायां भवति सुखितो दुःखितायां दुःखितो भवति ॥ १९ ॥ उच्चारः प्रश्रवणं श्लेष्मा सिङ्घानकोऽपि तस्य नास्ति । अस्थ्यस्थिमिञ्जानखकेशश्मश्रुरोमतया परिणामः ॥ २० ॥ आहारः परिणाम उच्छ्वासस्तथैव परिणामः । सर्वप्रदेशेषु भवति कवलाहारश्च तस्य नास्ति ॥ (प्र०) एवं शरीरमतिगतो गर्भे संवसति जीवः । परमतमोऽन्धकारेऽमेध्यभृते प्रदेशे ॥ २१ ॥ आयुष्मन्! ततो नवमे मासेऽतीते वा प्रत्युत्पन्ने वाऽनागते वा चतुर्णामन्यतरत् माता प्रसूते, तद्यथा-स्त्रीं वा

॥ ३५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र गर्भावस्थाया: वर्णनं वर्तते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१०] ॥२२॥

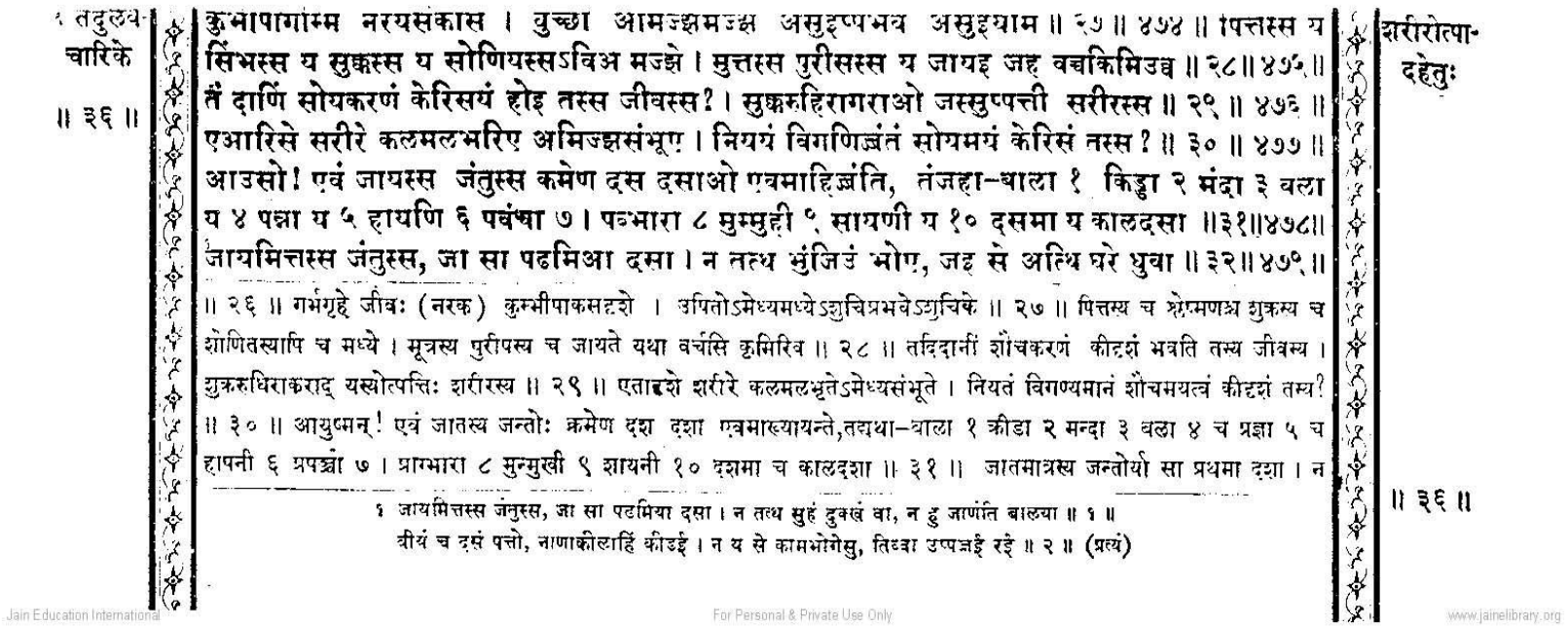
दीप अनुक्रम [३२]

वा चउण्हं माया अन्नयरं पयायइ, तंजहा–इत्थिं वा इत्थिरूवेणं १ पुरिसं वा पुरिसरूवेणं २ नपुंसगं वा नपुंसगरूवेणं ३ विंबं वा विंबरूवेणं ४। अप्पं सुक्कं बहुं अउयं, इत्थीया तत्थ जायई। अप्पं अउयं बहुं सुक्कं, पुरिसो तत्थ जायइ ॥ २२ ॥ ४६९ ॥ दुण्हंपि रत्तसुक्काणं, तुल्लभावे नपुंसओ । इत्थीओयसमाओगे, बिंबं (वा) तत्थ जायइ ॥२३॥४७०॥ (सू० १०) (सू० ११) ॥ अह णं पसवणकालसमयंसि सीसेण वा पाएहिं वा आगच्छइ समागच्छइ, तिरियमागच्छइ विणिघायमावज्जइ (सू० ११)(सू० १२)। कोई पुण पावकारी बारस संवच्छराइं उक्कोसं। अच्छइ उ गब्भवासे असुइप्पभवे असुइयंमि ॥ २४ ॥ ४७१ ॥ जायमाणस्स जं दुक्खं, मरमाणस्स वा पुणो । तेण दुक्खेण संमूढो, जाइं सरइ नऽप्पणो ॥ २५ ॥ ४७२ ॥ विस्सरसरं रसंतो सो जोणीमुहाउ निप्फिडइ। माऊए अप्पणोऽवि य वेयणमउलं जणेमाणे ॥ २६ ॥ ४७३ ॥ गब्भवरयम्मि जीवो

स्त्रीरूपेण, पुरुषं वा पुरुषरूपेण, नपुंसकं वा नपुंसकरूपेण, विम्बं वा विम्बरूपेण, अल्पं शुक्रं बह्वार्त्तवं स्त्री तत्र जायते। अल्पमार्त्तवं बहु शुक्रं पुरुषस्तत्र जायते ॥२२॥ द्वयोरपि रक्तशुक्रयोस्तुल्यभावे नपुंसकं, रुधार्त्तवसमायोगे विम्बं तत्र जायते ॥ २३ ॥ (सू० १०) अथ प्रसवकालसमये शीर्षेण वा पादाभ्यां वा आगच्छति समागच्छति, तिर्यगागच्छति विनिघातमापद्यते ॥ (सू० ११) कश्चित् पुनः पापकारी द्वादश संवत्सरान्युत्कृष्टतः। तिष्ठति तु गर्भवासे अशुचिप्रभवेऽशुचिके ॥ २४ ॥ जायमानस्य यद्दुःखं म्रियमाणस्य वा पुनः। तेन दुःखेन संमूढो जातिं स्मरति नात्मनः ॥ २५ ॥ विस्वरस्वरं रसन् स योनिमुखान्निर्गच्छति । मातुरात्मनोऽपि च वेदनामतुलां जनयन्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आगम (२८)	“तन्दुलवैचारिक” – प्रकीर्णकसूत्र-५ (मूलं+संस्कृतछाया) ---------- मूलं [११],गाथा [२७] ----------
प्रत सूत्रांक [११] ॥२७॥ दीप अनुक्रम [३९]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:
	अत्र शरीरोत्पादहेतु: वर्ण्यते, प्राणिनां बाला-क्रीडा आदि दश दाशानाम् वर्णनं क्रियते



तंदुलवैचारिके ॥ ३६ ॥

कुंभीपागम्मि नरयसंकास । वुच्छा आमज्झमज्झ असुइप्पभव असुइयाम ॥ २७ ॥ ४७४ ॥ पित्तस्स य सिंभस्स य सुक्कस्स य सोणियस्सऽविअ मज्झे । मुत्तस्स पुरीसस्स य जायइ जह वच्चकिमिउव्व ॥ २८ ॥ ४७५ ॥ तं दाणिं सोयकरणं केरिसयं होइ तस्स जीवस्स? । सुक्कुहिरागराओ जस्सुप्पत्ती सरीरस्स ॥ २९ ॥ ४७६ ॥ एआरिसे सरीरे कलमलभरिए अमिज्झसंभूए । नियतं विगणिज्जंतं सोयमयं केरिसं तस्स ? ॥ ३० ॥ ४७७ ॥ आउसो! एवं जायस्स जंतुस्स कमेण दस दसाओ एवमाहिज्जंति, तंजहा–बाला १ किड्डा २ मंदा ३ बला य ४ पन्ना य ५ हायणि ६ पवंचा ७ । पब्भारा ८ मुम्मुही ९ सायणी य १० दसमा य कालदसा ॥३१॥४७८॥ जायमित्तस्स जंतुस्स, जा सा पढमिआ दसा । न तत्थ भुंजिउं भोए, जह से अत्थि घरे धुवा ॥ ३२॥४७९॥

॥ २६ ॥ गर्भगृहे जीवः (नरक) कुम्भीपाकसदृशे । उषितोऽमेध्यमध्येऽशुचिप्रभवेऽशुचिके ॥ २७ ॥ पित्तस्य च श्लेष्मणश्च शुक्रस्य च शोणितस्यापि च मध्ये । मूत्रस्य पुरीषस्य च जायते यथा वर्चसि कृमिरिव ॥ २८ ॥ तदिदानीं शौचकरणं कीदृशं भवति तस्य जीवस्य । शुक्ररुधिराकराद् यस्योत्पत्तिः शरीरस्य ॥ २९ ॥ एतादृशे शरीरे कलमलभृतेऽमेध्यसंभूते । नियतं विगण्यमानं शौचमयत्वं कीदृशं तस्य? ॥ ३० ॥ आयुष्मन्! एवं जातस्य जन्तोः क्रमेण दश दशा एवमाख्यायन्ते,तद्यथा–बाला १ क्रीडा २ मन्दा ३ बला ४ च प्रज्ञा ५ च हापनी ६ प्रपञ्चा ७ । प्राग्भारा ८ मुन्मुखी ९ शायनी १० दशमा च कालदशा ॥ ३१ ॥ जातमात्रस्य जन्तोर्या सा प्रथमा दशा । न

१ जायमित्तस्स जंतुस्स, जा सा पढमिया दसा । न तत्थ सुहं दुक्खं वा, न हु जाणंति बालया ॥ १ ॥
बीयं च दसं पत्तो, नाणाकीलाहिं कीडई । न य से कामभोगेसु, तिव्वा उप्पज्जई रई ॥ २ ॥ (प्रत्यं)

शरीरोत्पादहेतुः

॥ ३६ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१२] ||३३||

दीप अनुक्रम [४७]

बीयाए किड्डया नामं, जं नरो दसमस्सिओ । किड्डारमणभावेण, दुलहं गमइ नरभवं ॥ ३३ ॥ ४८० ॥ तई-
याए मंदया नामं, जं नरो दसमस्सिओ । मंदस्स मोहभावेणं, इत्थीभोगेहिं मुच्छिओ ॥ ३४ ॥ ४८१ ॥
चउत्थी उ बलानाम, जं नरो दसमस्सिओ । समत्थो बलं दरिसेउं, जइ सो भवे निरुवद्दवो ॥ ३५ ॥ ४८२ ॥
पंचमी उ दसं पत्तो, आणुपुव्वीइ जो नरो । समत्थोऽत्थं विचिंतेउं, कुटुंबं चाभिगच्छइ ॥ ३६ ॥ ४८३ ॥ छट्ठी उ

तत्र भोक्तुं भोगान् (क्षमः) यदि तस्य सन्ति गृहे ध्रुवाः ॥ ३२ ॥ द्वितीयायाः क्रीडा नाम यां नरो दशामाश्रितः । क्रीडारमणभावेन दुर्लभं गमयति नरभवम् ॥ ३३ ॥ तृतीयाया मन्दा नाम यां नरो दशामाश्रितः । मन्दस्य मोहभावेन स्त्रीभोगैर्मूर्च्छितो (भवति) ॥३४॥ चतुर्थी तु बला नाम यां नरो दशामाश्रितः । समर्थो बलं दर्शयितुं यदि स भवेन्निरुपद्रवः ॥ ३५ ॥ पञ्चमीं तु दशां प्राप्त आनुपूर्व्या यो नरः । समर्थोऽर्थं विचिन्तयितुं कुटुम्बं चाभिगच्छति ॥ ३६ ॥ षष्ठी तु हापनी नाम यां नरो दशामाश्रितः । विरज्यते च कामेभ्य इन्द्रियैः

तहऽत्थ च दसं पत्तो, पंच कामगुणे नरो । समत्थो भुंजिउं भोए, जइ से अत्थि घरे धुवा ॥ ३ ॥
इति जीर्णप्रतौ ॥ ५ द०-१० ति० वृत्तौ च । 'सुखदुक्खाइं बहुं जाणंति' इत्यारभ्यगाथोत्तरार्द्धं ।
जातमात्रस्य जन्तोर्या सा प्रथमा दशा । न तत्र सुखं दुःखं वा नैव जानन्ति बालकाः ॥ १ ॥
द्वितीयां च दशां प्राप्तो नानाक्रीडाभिः क्रीडति । न च तस्य कामभोगेषु तीव्रोत्पद्यते रतिः ॥ २ ॥
तृतीयां च दशां प्राप्तः पञ्च कामगुणान् नरः । समर्थो भोक्तुं भोगान् यदि तस्य सन्ति गृहे ध्रुवाः ॥ ३ ॥

च. स. ७

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१२] ||३७||

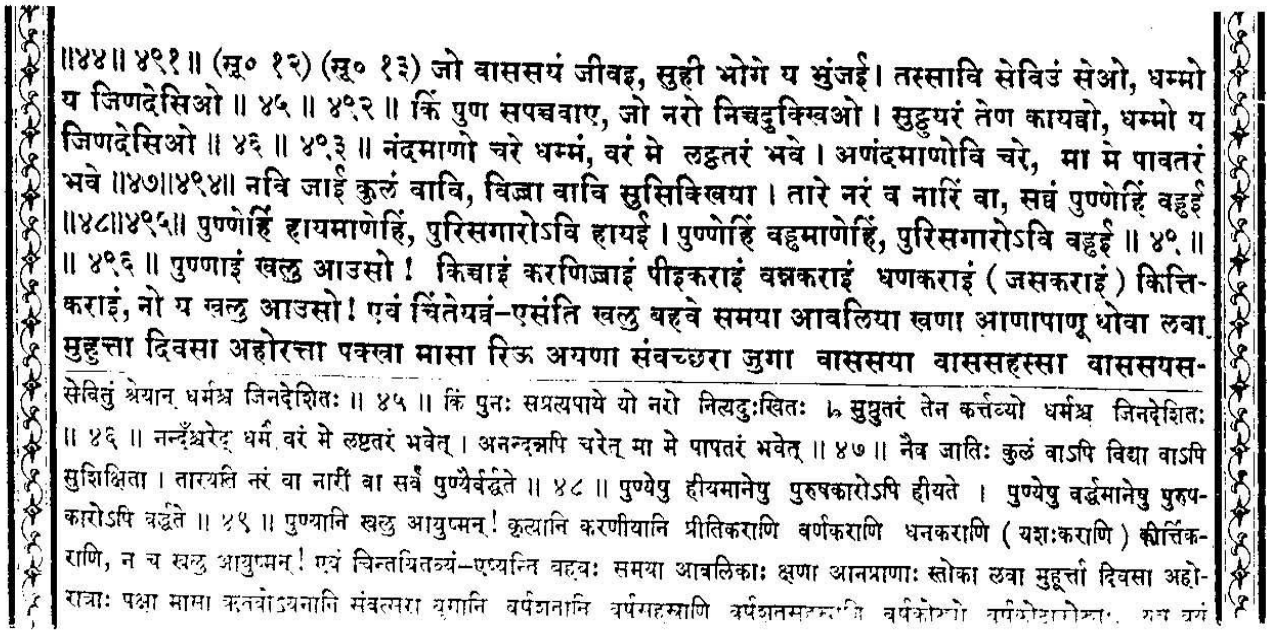
दीप अनुक्रम [५०]

हायणी नाम, जं नरो दसमस्सिओ । विरज्जई अ कामेसुं, इंदिएसु पहायई ॥ ३७॥ ४८४ ॥ सत्तमी य पवंचाउ, जं नरो दसमस्सिओ । निच्छुभइ चिक्कणं खेलं, खासई य खणे खणे ॥ ३८ ॥ ४८५ ॥ संकुडअवलीचम्मो, संपत्तो अट्ठमिं दसं । नारीणं च अणिट्ठो य, जराए परिणामिओ ॥ ३९ ॥ ४८६ ॥ नवमी मुम्मुहीनाम, जं नरो दसमस्सिओ । जराघरे विणस्संते, जीवो वसइ अकामओ ॥ ४० ॥ ४८७ ॥ हीणभिन्नसरो दीणो, विवरीओ विचित्तओ । दुब्बलो दुक्खिओ सुयइ, संपत्तो दसमिं दसं ॥ ४१ ॥ ४८८ ॥ दसगस्स उवक्खेवो वीसइवरिसो उ गिण्हई विज्जं । भोगा य तीसगस्स य चत्तालीसस्स बलमेव (विन्नाणं) ॥ ४२ ॥ ४८९ ॥ पन्नासयस्स चक्खुं हायइ सट्ठिक्कयस्स बाहुबलं । भोगा य सत्तरिस्स य, असीयस्सा य विन्नाणं ॥ ४३ ॥ ॥ ४९० ॥ नउई नमइ सरीरं वाससए जीविअं चयइ । किंत्तिओऽत्थ सुहो भागो दुहभागो य किंत्तिओ ?

प्रहीयते ॥ ३७ ॥ सप्तमी च प्रपद्या तु यां नरो दशामाश्रितः । निष्ठीव्यति चिक्कणं श्लेष्माणं कासते च क्षणे क्षणे ॥ ३८ ॥ सङ्कुचितबलीचर्मा संप्राप्तोऽष्टमीं दशाम् । नारीणां चानिष्टश्च जरया परिणामितः ॥ ३९ ॥ नवमी मुम्मुही नाम यां नरो दशामाश्रितः । जराग्रहे विनश्यति जीवो वसत्यकामः ॥ ४० ॥ हीनभिन्नस्वरो दीनो विपरीतो विचित्तकः । दुर्बलो दुःखितः स्वपिति संप्राप्तो दशमीं दशाम् ॥ ४१ ॥ दशवर्षस्योपनयनं विंशतिवर्षस्तु गृह्णाति विद्याम् । भोगाश्च त्रिंशत्कस्य चत्वारिंशत्कस्य बलमेव (विज्ञानं) ॥ ४२ ॥ पञ्चाशत्कस्य चक्षुर्हीयते षष्टिकस्य बाहुबलम् । भोगाश्च सप्ततिकस्य अशीतिकस्य चैव विज्ञानम् ॥४३॥ नवतिकस्य नमति शरीरं वर्षशते जीवितं त्यजति । कियान् अत्र सुखो भागो? दुःखभागश्च कियान्? ॥ ४४ ॥ (सू० १२) यो वर्षशतं जीवति सुखी भोगांश्च भुनक्ति । तस्यापि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१२] ॥४५॥ दीप अनुक्रम [५८]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

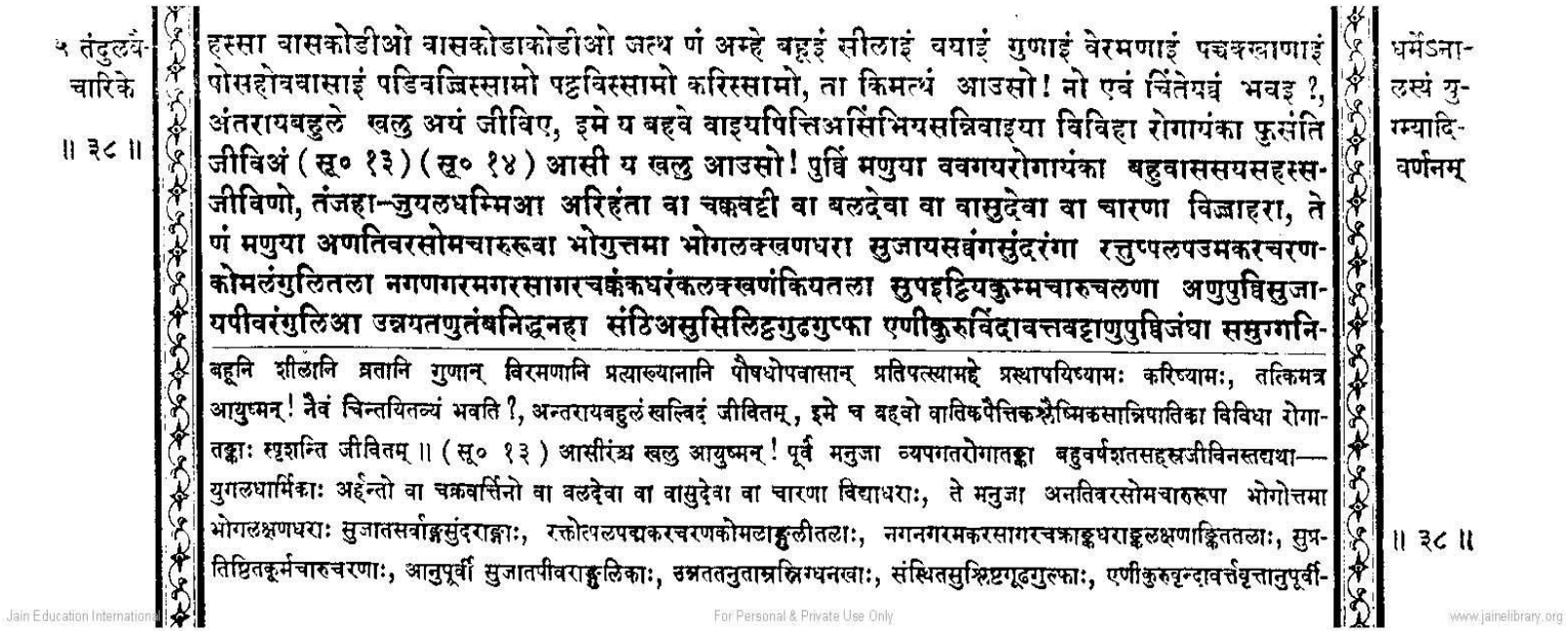


॥४४॥ ४९१॥ (सू० १२) (सू० १३) जो वाससयं जीवइ, सुही भोगे य भुंजई। तस्सावि सेविउं सेओ, धम्मो य जिणदेसिओ ॥ ४५ ॥ ४९२ ॥ किं पुण सपच्चवाए, जो नरो निच्चदुक्खिओ। सुट्ठुयरं तेण कायव्वो, धम्मो य जिणदेसिओ ॥ ४६ ॥ ४९३ ॥ नंदमाणो चरे धम्मं, वरं मे लट्ठतरं भवे। अणंदमाणोवि चरे, मा मे पावतरं भवे ॥४७॥४९४॥ नवि जाई कुलं वावि, विज्जा वावि सुसिक्खिया। तारे नरं व नारिं वा, सव्वं पुण्णेहिं वड्ढई ॥४८॥४९५॥ पुण्णेहिं हायमाणेहिं, पुरिसगारोऽवि हायई। पुण्णेहिं वड्ढमाणेहिं, पुरिसगारोऽवि वड्ढई ॥ ४९ ॥ ॥ ४९६ ॥ पुण्णाइं खलु आउसो! किच्चाइं करणिज्जाइं पीइकराइं वण्णकराइं धणकराइं (जसकराइं) कित्तिकराइं, नो य खलु आउसो! एवं चिंतेयव्वं–एसंति खलु बहवे समया आवलिया खणा आणापाणू थोवा लवा मुहुत्ता दिवसा अहोरत्ता पक्खा मासा रिऊ अयणा संवच्छरा जुगा वाससया वाससहस्सा वाससयस-

सेवितुं श्रेयान् धर्मश्च जिनदेशितः ॥ ४५ ॥ किं पुनः सप्रत्यपाये यो नरो नित्यदुःखितः । सुष्ठुतरं तेन कर्त्तव्यो धर्मश्च जिनदेशितः ॥ ४६ ॥ नन्दँश्चरेद् धर्मं वरं मे लष्टतरं भवेत् । अनन्दन्नपि चरेत् मा मे पापतरं भवेत् ॥ ४७ ॥ नैव जातिः कुलं वाऽपि विद्या वाऽपि सुशिक्षिता । तारयति नरं वा नारीं वा सर्वं पुण्यैर्वर्द्धते ॥ ४८ ॥ पुण्येषु हीयमानेषु पुरुषकारोऽपि हीयते । पुण्येषु वर्द्धमानेषु पुरुषकारोऽपि वर्द्धते ॥ ४९ ॥ पुण्यानि खलु आयुष्मन्! कृत्यानि करणीयानि प्रीतिकराणि वर्णकराणि धनकराणि (यशःकराणि) कीर्त्तिकराणि, न च खलु आयुष्मन्! एवं चिन्तयितव्यं–एष्यन्ति बहवः समया आवलिकाः क्षणा आनप्राणाः स्तोका लवा मुहूर्त्ता दिवसा अहोरात्राः पक्षा मासा ऋतवोऽयनानि संवत्सरा युगानि वर्षशतानि वर्षसहस्राणि वर्षशतसहस्राणि वर्षकोट्यो वर्षकोट्याकोट्यः, एवं यूयं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| प्रत सूत्रांक [१३] ॥४९॥ दीप अनुक्रम [६३] | पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:



५ तंदुलवैचारिके ॥ ३८ ॥

हस्सा वासकोडीओ वासकोडाकोडीओ जत्थ णं अम्हे बहूइं सीलाइं वयाइं गुणाइं वेरमणाइं पच्चक्खाणाइं पोसहोववासाइं पडिवज्जिस्सामो पट्ठविस्सामो करिस्सामो, ता किमत्थं आउसो! नो एवं चिंतेयव्वं भवइ ?, अंतरायबहुले खलु अयं जीविए, इमे य बहवे वाइयपित्तिअसिंभियसन्निवाइया विविहा रोगायंका फुसंति जीविअं (सू० १३) (सू० १४) आसी य खलु आउसो! पुविं मणुया ववगयरोगायंका बहुवाससयसहस्सजीविणो, तंजहा–जुयलधम्मिआ अरिहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा वासुदेवा वा चारणा विज्जाहरा, ते णं मणुया अणतिवरसोमचारुरूवा भोगुत्तमा भोगलक्खणधरा सुजायसव्वंगसुंदरंगा रत्तुप्पलपउमकरचरणकोमलंगुलितला नगणगरमगरसागरचक्कंकधरंकलक्खणंकियतला सुपइट्ठियकुम्मचारुचलणा अणुपुव्विसुजायपीवरंगुलिआ उन्नयतणुतंबनिद्धनहा संठिअसुसिलिट्ठगुढगुप्फा एणीकुरुविंदावत्तवट्टाणुपुव्विजंघा समुग्गनि-

बहूनि शीलानि व्रतानि गुणान् विरमणानि प्रत्याख्यानानि पौषधोपवासान् प्रतिपत्स्यामहे प्रस्थापयिष्यामः करिष्यामः, तत्किमत्र आयुष्मन्! नैवं चिन्तयितव्यं भवति ?, अन्तरायबहुलं खल्विदं जीवितम्, इमे च बहवो वातिकपैत्तिकश्लैष्मिकसान्निपातिका विविधा रोगातङ्काः स्पृशन्ति जीवितम् ॥ (सू० १३) आसीरंश्च खलु आयुष्मन्! पूर्वं मनुजा व्यपगतरोगातङ्का बहुवर्षशतसहस्रजीविनस्तद्यथा—युगलधार्मिकाः अर्हन्तो वा चक्रवर्त्तिनो वा बलदेवा वा वासुदेवा वा चारणा विद्याधराः, ते मनुजा अनतिवरसोमचारुरूपा भोगोत्तमा भोगलक्षणधराः सुजातसर्वाङ्गसुंदराङ्गाः, रक्तोत्पलपद्मकरचरणकोमलाङ्गुलीतलाः, नगनगरमकरसागरचक्राङ्कधराङ्गलक्षणाङ्किततलाः, सुप्रतिष्ठितकूर्मचारुचरणाः, आनुपूर्वी सुजातपीवराङ्गुलिकाः, उन्नततनुताम्रस्निग्धनखाः, संस्थितसुश्लिष्टगूढगुल्फाः, एणीकुरुवृन्दावर्त्तवृत्तानुपूर्वी-

धर्मेऽनालस्यं युग्म्यादिवर्णनम्

॥ ३८ ॥

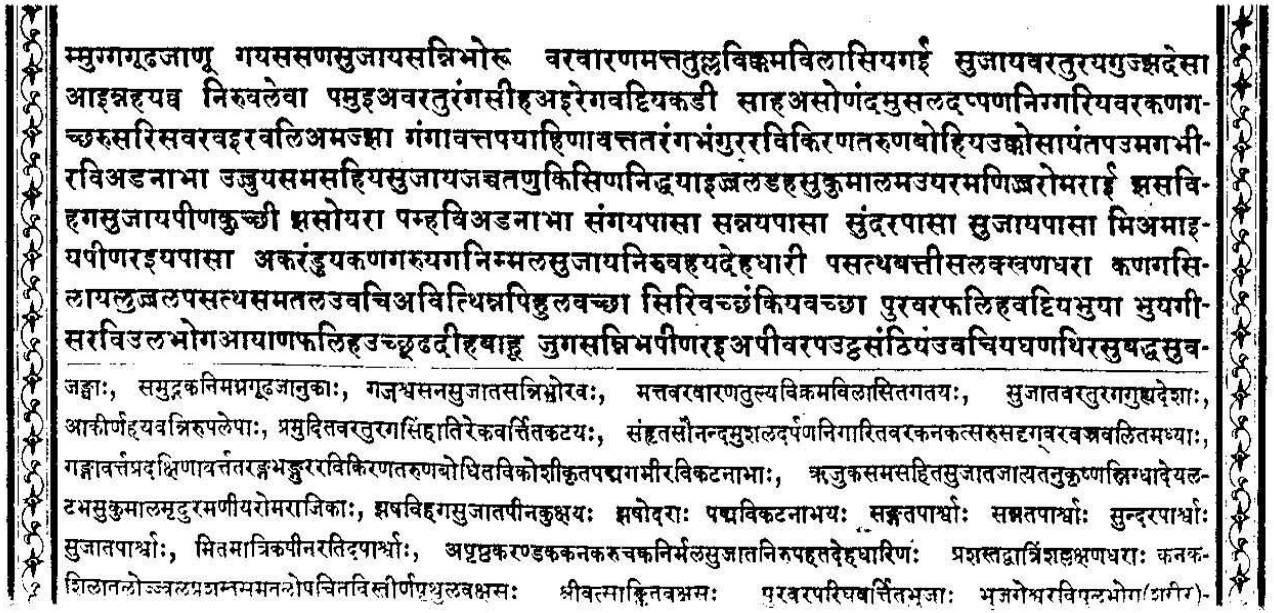
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ युगलधार्मिकादिनां वर्णनं क्रियते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१४] ॥४९॥

दीप अनुक्रम [६४]



म्मुग्गगूढजाणू गयससणसुजायसन्निभोरू वरवारणमत्ततुल्लविक्कमविलासियगई सुजायवरतुरयगुज्झदेसा आइन्नहयव्व निरुवलेवा पमुइअवरतुरंगसीहअइरेगवट्टियकडी साहअसोणंदमुसलदप्पणनिग्गरियवरकणग-च्छरुसरिसवरवइरवलिअमज्झा गंगावत्तपयाहिणावत्ततरंगभंगुररविकिरणतरुणबोहियउक्कोसायंतपउमगभीरविअडनाभा उज्जुयसमसहियसुजायजच्चतणुकिसिणनिद्धयाइज्जलडहसुकुमालमउयरमणिज्जरोमराई झसविहगसुजायपीणकुच्छी झसोयरा पम्हविअडनाभा संगयपासा सन्नयपासा सुंदरपासा सुजायपासा मिअमाइयपीणरइयपासा अकरंडुयकणगरुयगनिम्मलसुजायनिरुवहयदेहधारी पसत्थबत्तीसलक्खणधरा कणगसिलायलुज्जलपसत्थसमतलउवचिअवित्थिन्नपिहुलवच्छा सिरिवच्छंकियवच्छा पुरवरफलिहवट्टियभुया भुयगीसरविउलभोगआयाणफलिहउच्छूढदीहबाहू जुगसन्निभपीणरइअपीवरपउट्ठसंठियउवचियघणथिरसुबद्धसुव-

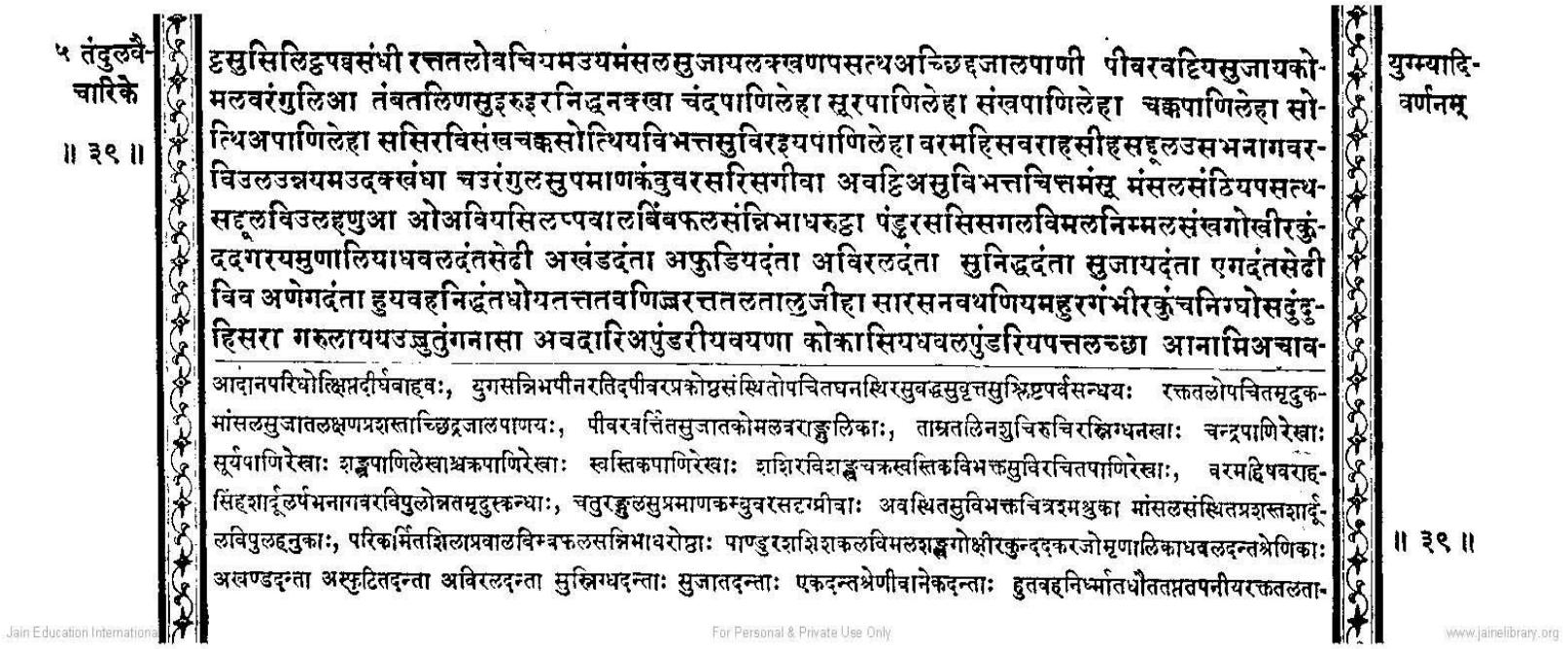
जङ्घाः, समुद्गकनिमग्नगूढजानुकाः, गजभ्वसनसुजातसन्निभोरवः, मत्तवरवारणतुल्यविक्रमविलासितगतयः, सुजातवरतुरगगुह्यदेशाः, आकीर्णहयवन्निरुपलेपाः, प्रमुदितवरतुरगसिंहातिरेकवर्त्तितकटयः, संहृतसौनन्दमुशलदर्पणनिगारितवरकनकत्सरुसदृग्वरवज्रवलितमध्याः, गङ्गावर्त्तप्रदक्षिणावर्त्ततरङ्गभङ्गुररविकिरणतरुणबोधितविकोशीकृतपद्मगभीरविकटनाभाः, ऋजुकसमसहितसुजातजात्यतनुकृष्णस्निग्धादेयलटभसुकुमालमृदुरमणीयरोमराजिकाः, झषविहगसुजातपीनकुक्षयः झषोदराः पद्मविकटनाभयः सङ्गतपार्श्वाः सन्नतपार्श्वाः सुन्दरपार्श्वाः सुजातपार्श्वाः, मितमात्रिकपीनरतिदपार्श्वाः, अपूष्टकरण्डककनकरुचकनिर्मलसुजातनिरुपहतदेहधारिणः प्रशस्तद्वात्रिंशल्लक्षणधराः कनकशिलातलोज्ज्वलप्रशस्तसमतलोपचितविस्तीर्णपृथुलवक्षसः श्रीवत्साङ्कितवक्षसः पुरवरपरिघवर्त्तितभुजाः भुजगेश्वरविपुलभोग(शरीर)-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१४] ॥४९॥

दीप अनुक्रम [६४]



५ तंदुलवैचारिके ॥ ३९ ॥

ट्ठसुसिलिट्ठपव्वसंधी रत्ततलोवचियमउयमंसलसुजायलक्खणपसत्थअच्छिद्दजालपाणी पीवरवट्टियसुजायकोमलवरंगुलिआ तंबतलिणसुइरुइरनिद्धनक्खा चंदपाणिलेहा सूरपाणिलेहा संखपाणिलेहा चक्कपाणिलेहा सोत्थिअपाणिलेहा ससिरविसंखचक्कसोत्थियविभत्तसुविरइयपाणिलेहा वरमहिसवराहसीहसद्दूलउसभनागवरविउलउन्नयमउदक्खंधा चउरंगुलसुपमाणकंबुवरसरिसगीवा अवट्टिअसुविभत्तचित्तमंसू मंसलसंठियपसत्थसद्दूलविउलहणुआ ओअवियसिलप्पवालबिंबफलसंन्निभाधरुट्ठा पंडुरससिसगलविमलनिम्मलसंखगोखीरकुंददगरयमुणालियाधवलदंतसेढी अखंडदंता अफुडियदंता अविरलदंता सुनिद्धदंता सुजायदंता एगदंतसेढी विव अणेगदंता हुयवहनिद्धंतधोयतत्ततवणिज्जरत्ततलतालुजीहा सारसनवथणियमहुरगंभीरकुंचनिग्घोसदुंदुहिसरा गरुलाययउज्जुतुंगनासा अवदारिअपुंडरीयवयणा कोकासियधवलपुंडरियपत्तलच्छा आनामिअचाव-

आदानपरिघोत्क्षिप्तदीर्घबाहवः, युगसन्निभपीनरतिदपीवरप्रकोष्ठसंस्थितोपचितघनस्थिरसुबद्धसुवृत्तसुश्लिष्टपर्वसन्धयः रक्ततलोपचितमृदुकमांसलसुजातलक्षणप्रशस्ताच्छिद्रजालपाणयः, पीवरवर्त्तितसुजातकोमलवराङ्गुलिकाः, ताम्रतलिनशुचिरुचिरस्निग्धनखाः चन्द्रपाणिरेखाः सूर्यपाणिरेखाः शङ्खपाणिलेखाश्चक्रपाणिरेखाः स्वस्तिकपाणिरेखाः शशिरविशङ्खचक्रस्वस्तिकविभक्तसुविरचितपाणिरेखाः, वरमहिषवराहसिंहशार्दूलर्षभनागवरविपुलोन्नतमृदुस्कन्धाः, चतुरङ्गुलसुप्रमाणकम्बुवरसदृग्ग्रीवाः अवस्थितसुविभक्तचित्रश्मश्रुका मांसलसंस्थितप्रशस्तशार्दूलविपुलहनुकाः, परिकर्मितशिलाप्रवालविम्बफलसन्निभाधरोष्ठाः पाण्डुरशशिशकलविमलशङ्खगोक्षीरकुन्ददकरजोमृणालिकाधवलदन्तश्रेणिकाः अखण्डदन्ता अस्फुटितदन्ता अविरलदन्ता सुस्निग्धदन्ताः सुजातदन्ताः एकदन्तश्रेणीवानेकदन्ताः हुतवहनिर्धौततप्ततपनीयरक्ततलता-

युग्म्यादि-वर्णनम्

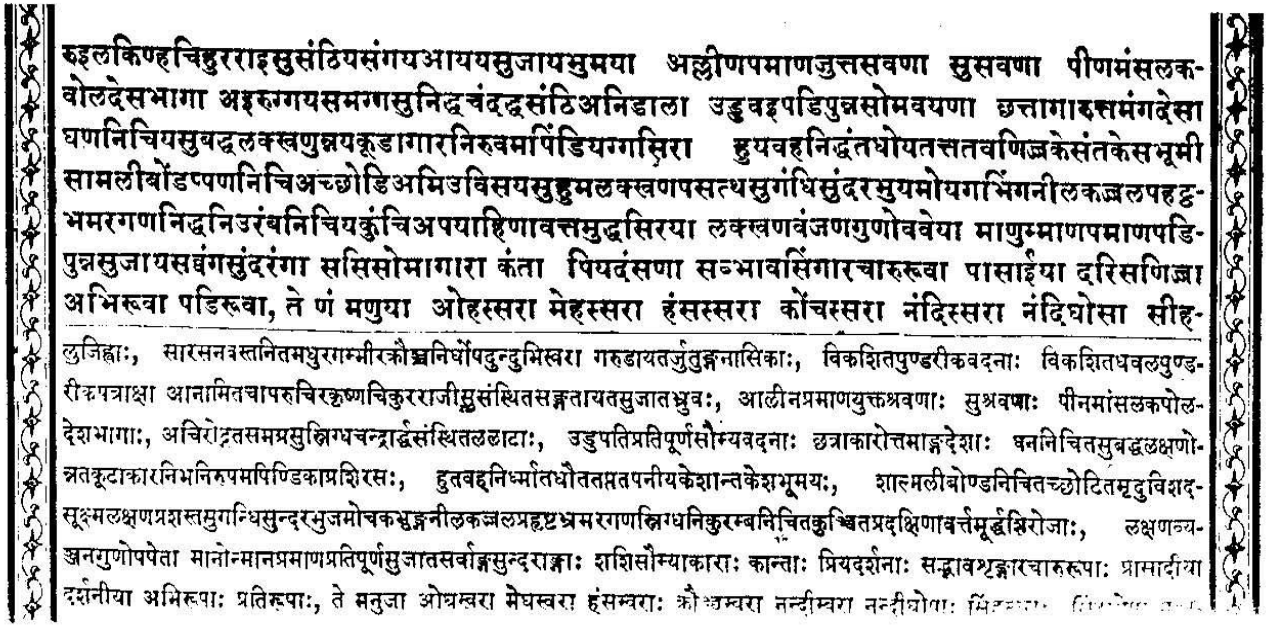
॥ ३९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१४] ॥४९॥

दीप अनुक्रम [६४]



रुइलकिण्हचिहुरराइसुसंठियसंगयआययसुजायसुमया अल्लीणपमाणजुत्तसवणा सुसवणा पीणमंसलक-
वोलदेसभागा अइरुग्गयसमग्गसुनिद्धचंदद्धसंठिअनिडाला उडुवइपडिपुन्नसोमवयणा छत्तागारुत्तमंगदेसा
घणनिचियसुबद्धलक्खणुन्नयकूडागारनिरुवमपिंडियग्गसिरा हुयवहनिद्धंतधोयतत्ततवणिज्जकेसंतकेसभूमी
सामलीबोंडप्पणनिचिअच्छोडिअमिउविसयसुहुमलक्खणपसत्थसुगंधिसुंदरसुयमोयगभिंगनीलकज्जलपहट्ठ-
भमरगणनिद्धनिउरंबनिचियकुंचिअपयाहिणावत्तमुद्धसिरया लक्खणवंजणगुणोववेया माणुम्माणपमाणपडि-
पुन्नसुजायसव्वंगसुंदरंगा ससिसोमागारा कंता पियदंसणा सब्भावसिंगारचारुरूवा पासाईया दरिसणिज्जा
अभिरूवा पडिरूवा, ते णं मणुया ओहस्सरा मेहस्सरा हंसस्सरा कोंचस्सरा नंदिस्सरा नंदिघोसा सीह-

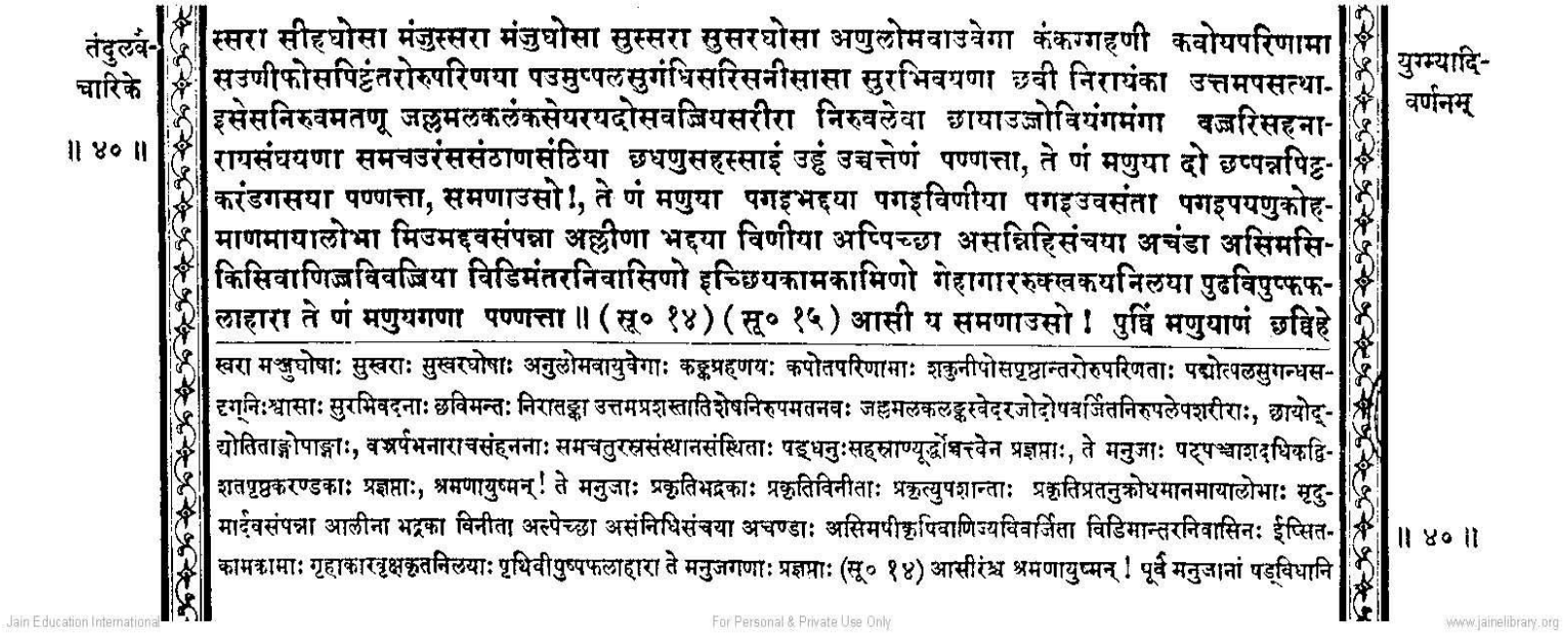
लुजिह्वाः, सारसनवस्तनितमधुरगाम्भीरकौञ्चनिर्घोषदुन्दुभिस्वरा गरुडायतर्जुतुङ्गनासिकाः, विकशितपुण्डरीकवदनाः विकशितधवलपुण्ड-
रीकपत्राक्षा आनामितचापरुचिरकृष्णचिकुरराजीसुसंस्थितसङ्गतायतसुजातभ्रुवः, आलीनप्रमाणयुक्तश्रवणाः सुश्रवणाः पीनमांसलकपोल-
देशभागाः, अचिरोद्गतसमग्रसुस्निग्धचन्द्रार्द्धसंस्थितललाटाः, उडुपतिप्रतिपूर्णसौम्यवदनाः छत्राकारोत्तमाङ्गदेशाः घननिचितसुबद्धलक्षणो-
न्नतकूटाकारनिभनिरुपमपिण्डिकाग्रशिरसः, हुतवहनिर्ध्मातधौततप्ततपनीयकेशान्तकेशभूमयः, शाल्मलीबोण्डनिचितच्छोटितमृदुविशद-
सूक्ष्मलक्षणप्रशस्तसुगन्धिसुन्दरभुजमोचकभृङ्गनीलकज्जलप्रहृष्टभ्रमरगणस्निग्धनिकुरम्बनिचितकुञ्चितप्रदक्षिणावर्त्तमूर्द्धशिरोजाः, लक्षणव्य-
ञ्जनगुणोपपेता मानोन्मानप्रमाणप्रतिपूर्णसुजातसर्वाङ्गसुन्दराङ्गाः शशिसौम्याकाराः कान्ताः प्रियदर्शनाः सद्भावशृङ्गारचारुरूपाः प्रासादीया
दर्शनीया अभिरूपाः प्रतिरूपाः, ते मनुजा ओघस्वरा मेघस्वरा हंसस्वराः कौञ्चस्वरा नन्दीस्वरा नन्दीघोषाः [illegible]

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१४] ॥४९॥

दीप अनुक्रम [६४]



तंदुलवैचारिके ॥ ४० ॥

स्सरा सीहघोसा मंजुस्सरा मंजुघोसा सुस्सरा सुसरघोसा अणुलोमवाउवेगा कंकग्गहणी कवोयपरिणामा सउणीफोसपिट्ठंतरोरुपरिणया पउमुप्पलसुगंधिसरिसनीसासा सुरभिवयणा छवी निरायंका उत्तमपसत्थाइसेसनिरुवमतणू जल्लमलकलंकसेयरयदोसवज्जियसरीरा निरुवलेवा छायाउज्जोवियंगमंगा वज्जरिसहनारायसंघयणा समचउरंससंठाणसंठिया छधणुसहस्साइं उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ता, ते णं मणुया दो छप्पन्नपिट्ठकरंडगसया पण्णत्ता, समणाउसो!, ते णं मणुया पगइभद्दया पगइविणीया पगइउवसंता पगइपयणुकोहमाणमायालोभा मिउमद्दवसंपन्ना अल्लीणा भद्दया विणीया अप्पिच्छा असन्निहिसंचया अचंडा असिमसिकिसिवाणिज्जविवज्जिया विडिमंतरनिवासिणो इच्छियकामकामिणो गेहागाररुक्खकयनिलया पुढविपुप्फफलाहारा ते णं मणुयगणा पण्णत्ता ॥ (सू० १४) (सू० १५) आसी य समणाउसो ! पुव्विं मणुयाणं छव्विहे

युग्म्यादि-वर्णनम्

स्वरा मञ्जुघोषाः सुस्वराः सुस्वरघोषाः अनुलोमवायुवेगाः कङ्कग्रहणयः कपोतपरिणामाः शकुनीपोसपृष्ठान्तरोरुपरिणताः पद्मोत्पलसुगन्धसदृग्निःश्वासाः सुरभिवदनाः छविमन्तः निरातङ्का उत्तमप्रशस्तातिशेषनिरुपमतनवः जल्लमलकलङ्कस्वेदरजोदोषवर्जितनिरुपलेपशरीराः, छायोद्योतिताङ्गोपाङ्गाः, वज्रर्षभनाराचसंहननाः समचतुरस्रसंस्थानसंस्थिताः षड्धनुःसहस्राण्यूर्द्धोच्चत्वेन प्रज्ञप्ताः, ते मनुजाः षट्पञ्चाशदधिकद्विशतपृष्ठकरण्डकाः प्रज्ञप्ताः, श्रमणायुष्मन्! ते मनुजाः प्रकृतिभद्रकाः प्रकृतिविनीताः प्रकृत्युपशान्ताः प्रकृतिप्रतनुक्रोधमानमायालोभाः मृदुमार्दवसंपन्ना आलीना भद्रका विनीता अल्पेच्छा असंनिधिसंचया अचण्डाः असिमषीकृषिवाणिज्यविवर्जिता विडिमान्तरनिवासिनः ईप्सितकामकामाः गृहाकारवृक्षकृतनिलयाः पृथिवीपुष्पफलाहारा ते मनुजगणाः प्रज्ञप्ताः (सू० १४) आसीरंश्च श्रमणायुष्मन्! पूर्वं मनुजानां षड्विधानि

॥ ४० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संघयणे, तंजहा—वज्जरिसहनारायसंघयणे १ रिसहनारायसंघयणे २ नारायसंघयणे ३ अद्धनारायसंघयणे ४ कीलियासंघयणे ५ छेवट्टसंघयणे ६, संपइ खलु आउसो! मणुयाणं छेवट्टसंघयणे वट्टइ। आसी य आउसो! पुव्विंमणुयाणं छव्विहे संठाणे, तंजहा–समचउरंसे १ नग्गोहपरिमंडले २ सादि ३ खुज्जे ४ वामणे ५ हुंडे ६, संपइ खलु आउसो! मणुयाणं हुंडे संठाणे वट्टइ ॥ (सू० १५) (सू० १६) संघयणं संठाणं उच्चत्तं आउयं च मणुयाणं। अणुसमयं परिहायइ ओसप्पिणिकालदोसेणं ॥ ५० ॥ ४९७ ॥ कोहमयमायलोभा, उस्सन्नं वड्ढए य मणुयाणं। कूडतुला कूडमाणा तेणऽणुमाणेण सव्वंति ॥ ५१ ॥ ४९८ ॥ विसमा अज्ज तुलाओ विसमाणि य जणवएसु माणाणि । विसमा रायकुलाइं, तेण उ विसमाइं वासाइं ॥ ५२ ॥ ४९९ ॥ विसमेसु य वासेसु हुंति असाराइं ओसहिबलाइं । ओसहिदुब्बलेण य, आउं परिहायइ नराणं ॥ ५३ ॥ ५०० ॥ एवं परिहाय-

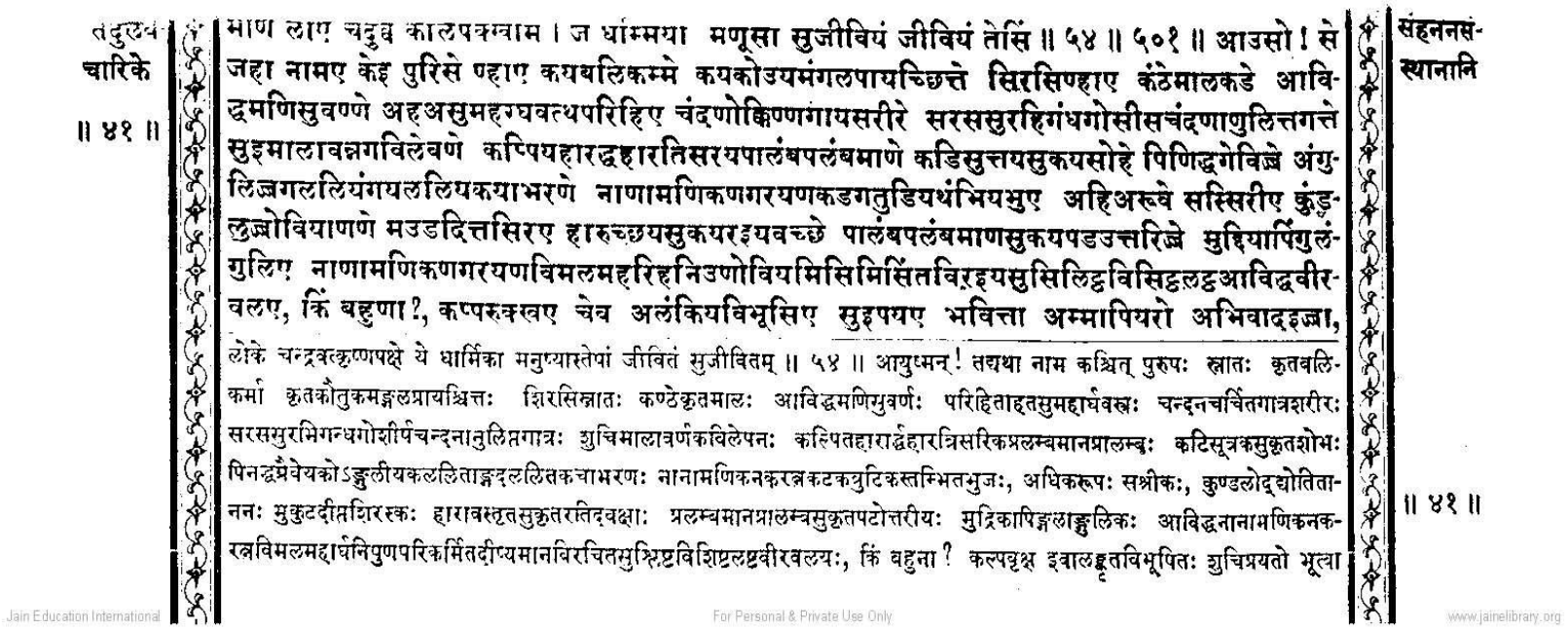
संहननानि, तद्यथा–वज्रर्षभनाराचसंहननं ऋषभनाराचसं० नाराचसं० अर्द्धनाराचसं० कीलिकासं० सेवार्त्तसंहननं, संप्रति खलु आयुष्मन्! मनुजानां सेवार्त्तं संहननं वर्त्तते । आसीरंश्चायुष्मन्! पूर्वं मनुजानां षड्विधानि संस्थानानि, तद्यथा–समचतुरस्रं न्यग्रोधपरिमण्डलं सादि कुब्जं वामनं हुण्डं, सम्प्रति खलु आयुष्मन्! मनुजानां हुण्डं संस्थानं वर्त्तते । (सू० १५) संहननं संस्थानमुच्चत्वमायुश्च मनुजानाम् । अनुसमयं परिहीयतेऽवसर्पिणीकालदोषेण ॥ ५० ॥ क्रोधमदमायालोभा उत्सन्नं वर्द्धते च मनुष्याणाम् । कूटतुलाः कूटमानास्तेनानुमानेन सर्वमिति ॥ ५१ ॥ विषमा अद्य तुला विषमाणि च जनपदेषु मानानि । विषमाणि राजकुलानि तेन तु विषमाणि वर्षाणि ॥ ५२ ॥ विषमेषु च वर्षेषु भवन्त्यसाराण्यौषधिबलानि । औषधिदौर्बल्येन च आयुः परिहीयते नराणाम् ॥ ५३ ॥ एवं परिहीयमाणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१६] ॥५४॥

दीप अनुक्रम [७१]



तंदुलवै चारिके ॥ ४१ ॥

माण लाए चउव्व कालपक्खाम । ज धाम्मया मणूसा सुजीवियं जीवियं तेसिं ॥ ५४ ॥ ५०१ ॥ आउसो ! से जहा नामए केइ पुरिसे ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउयमंगलपायच्छित्ते सिरसिण्हाए कंठेमालकडे आविद्धमणिसुवण्णे अहअसुमहग्घवत्थपरिहिए चंदणोक्किण्णगायसरीरे सरससुरहिगंधगोसीसचंदणाणुलित्तगत्ते सुइमालावन्नगविलेवणे कप्पियहारद्धहारतिसरयपालंबपलंबमाणे कडिसुत्तयसुकयसोहे पिणिद्धगेविज्जे अंगुलिज्जगललियंगयललियकयाभरणे नाणामणिकणगरयणकडगतुडियथंभियभुए अहिअरूवे सस्सिरीए कुंडलुज्जोवियाणणे मउडदित्तसिरए हारुच्छयसुकयरइयवच्छे पालंबपलंबमाणसुकयपडउत्तरिज्जे मुद्दियापिंगुलंगुलिए नाणामणिकणगरयणविमलमहरिहनिउणोवियमिसिमिसिंतविरइयसुसिलिट्ठविसिट्ठलट्ठआविद्धवीरवलए, किं बहुणा?, कप्परुक्खए चेव अलंकियविभूसिए सुइपयए भवित्ता अम्मापियरो अभिवादइज्जा,

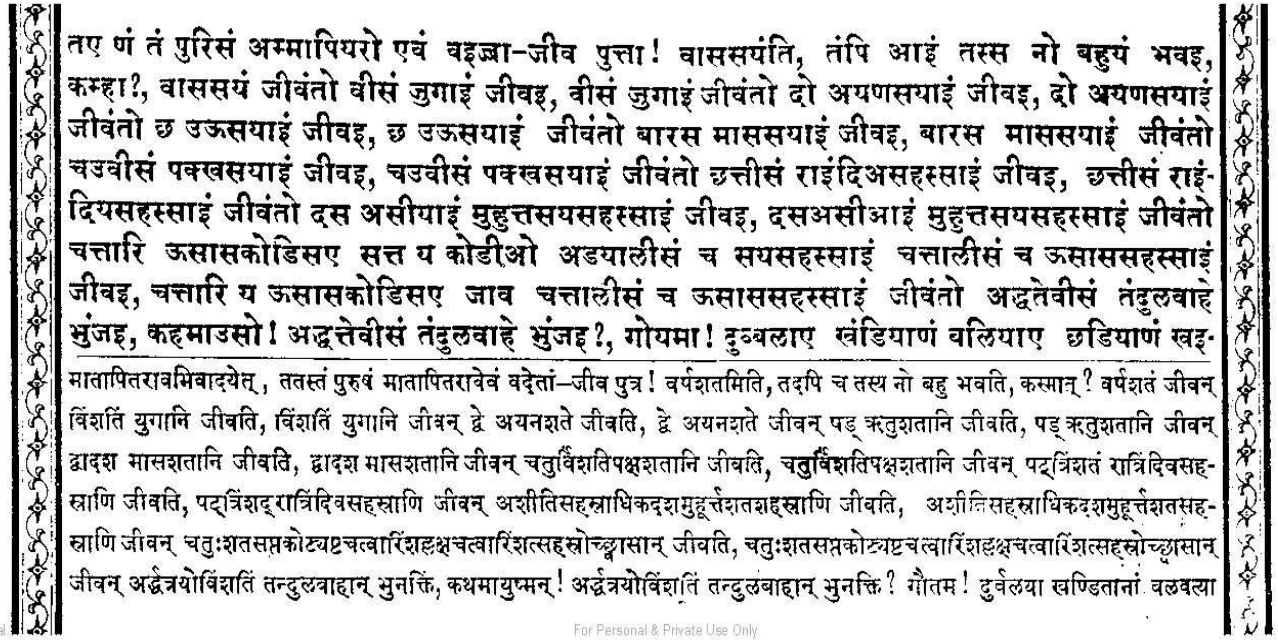
लोके चन्द्रवत्कृष्णपक्षे ये धार्मिका मनुष्यास्तेषां जीवितं सुजीवितम् ॥ ५४ ॥ आयुष्मन्! तद्यथा नाम कश्चित् पुरुषः स्नातः कृतबलिकर्मा कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्तः शिरसिस्नातः कण्ठेकृतमालः आविद्धमणिसुवर्णः परिहिताहतसुमहार्घवस्त्रः चन्दनचर्चितगात्रशरीरः सरससुरभिगन्धगोशीर्षचन्दनानुलिप्तगात्रः शुचिमालावर्णकविलेपनः कल्पितहारार्द्धहारत्रिसरिकप्रलम्बमानप्रालम्बः कटिसूत्रकसुकृतशोभः पिनद्धग्रैवेयकोऽङ्गुलीयकललिताङ्गदललितकचाभरणः नानामणिकनकरत्नकटकत्रुटिकस्तम्भितभुजः, अधिकरूपः सश्रीकः, कुण्डलोद्द्योतिताननः मुकुटदीप्तशिरस्कः हारावस्तृतसुकृतरतिदवक्षाः प्रलम्बमानप्रालम्बसुकृतपटोत्तरीयः मुद्रिकापिङ्गलाङ्गुलिकः आविद्धनानामणिकनकरत्नविमलमहार्घनिपुणपरिकर्मितदीप्यमानविरचितसुश्लिष्टविशिष्टलष्टवीरवलयः, किं बहुना? कल्पवृक्ष इवालङ्कृतविभूषितः शुचिप्रयतो भूत्वा

संहनन-संस्थानानि

॥ ४१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| प्रत सूत्रांक [१६] ॥५४॥ दीप अनुक्रम [७१] | पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:



तए णं तं पुरिसं अम्मापियरो एवं वइज्जा–जीव पुत्ता! वाससयंति, तंपि आइं तस्स नो बहुयं भवइ, कम्हा?, वाससयं जीवंतो वीसं जुगाइं जीवइ, वीसं जुगाइं जीवंतो दो अयणसयाइं जीवइ, दो अयणसयाइं जीवंतो छ उऊसयाइं जीवइ, छ उऊसयाइं जीवंतो बारस माससयाइं जीवइ, बारस माससयाइं जीवंतो चउवीसं पक्खसयाइं जीवइ, चउवीसं पक्खसयाइं जीवंतो छत्तीसं राइंदिअसहस्साइं जीवइ, छत्तीसं राइंदियसहस्साइं जीवंतो दस असीयाइं मुहुत्तसयसहस्साइं जीवइ, दसअसीआइं मुहुत्तसयसहस्साइं जीवंतो चत्तारि ऊसासकोडिसए सत्त य कोडीओ अडयालीसं च सयसहस्साइं चत्तालीसं च ऊसाससहस्साइं जीवइ, चत्तारि य ऊसासकोडिसए जाव चत्तालीसं च ऊसाससहस्साइं जीवंतो अद्धतेवीसं तंदुलवाहे भुंजइ, कहमाउसो! अद्धत्तेवीसं तंदुलवाहे भुंजइ?, गोयमा! दुब्बलाए खंडियाणं बलियाए छडियाणं खइ-

मातापितरावभिवादयेत्, ततस्तं पुरुषं मातापितरावेवं वदेतां–जीव पुत्र! वर्षशतमिति, तदपि च तस्य नो बहु भवति, कस्मात्? वर्षशतं जीवन् विंशतिं युगानि जीवति, विंशतिं युगानि जीवन् द्वे अयनशते जीवति, द्वे अयनशते जीवन् षड् ऋतुशतानि जीवति, षड् ऋतुशतानि जीवन् द्वादश मासशतानि जीवति, द्वादश मासशतानि जीवन् चतुर्विंशतिपक्षशतानि जीवति, चतुर्विंशतिपक्षशतानि जीवन् षट्त्रिंशतं रात्रिंदिवसहस्राणि जीवति, षट्त्रिंशद्रात्रिंदिवसहस्राणि जीवन् अशीतिसहस्राधिकदशमुहूर्त्तशतसहस्राणि जीवति, अशीतिसहस्राधिकदशमुहूर्त्तशतसहस्राणि जीवन् चतुःशतसप्तकोट्यष्टचत्वारिंशल्लक्षचत्वारिंशत्सहस्रोच्छ्वासान् जीवति, चतुःशतसप्तकोट्यष्टचत्वारिंशल्लक्षचत्वारिंशत्सहस्रोच्छ्वासान् जीवन् अर्द्धत्रयोविंशतिं तन्दुलवाहान् भुनक्ति, कथमायुष्मन्! अर्द्धत्रयोविंशतिं तन्दुलवाहान् भुनक्ति? गौतम! दुर्बलया खण्डितानां बलवत्या

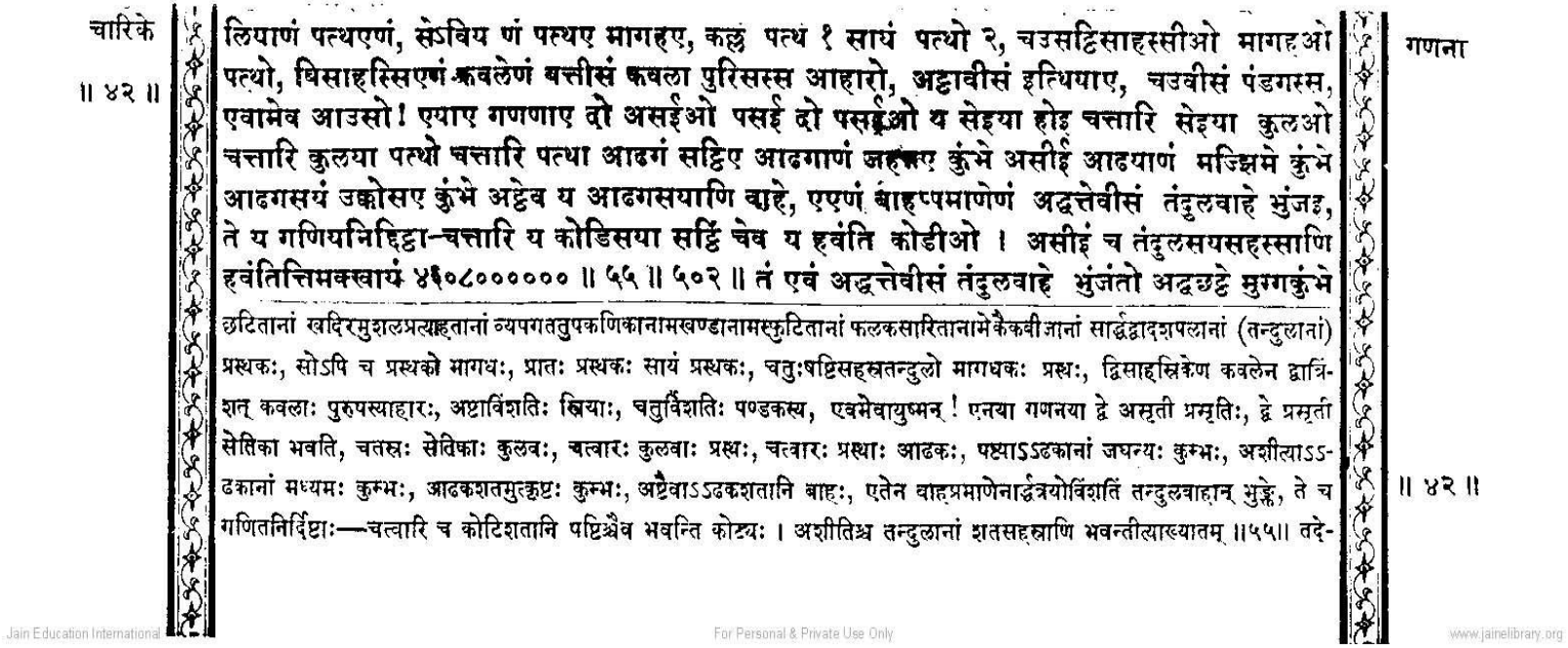
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	आयु-गणनायै शास्त्रिय-गणित दर्शयते, तन्दुलस्य उपमा द्वारा मनुष्याणाम् आहारस्य वर्णनं --

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१६] ॥५५॥

दीप अनुक्रम [७२]



चारिके ॥ ४२ ॥

लियाणं पत्थएणं, सेऽविय णं पत्थए मागहए, कल्लं पत्थे १ सायं पत्थो २, चउसट्ठिसाहस्सीओ मागहओ पत्थो, दिसाहस्सिएणं कवलेणं बत्तीसं कवला पुरिसस्स आहारो, अट्ठावीसं इत्थियाए, चउवीसं पंडगस्स, एवामेव आउसो! एयाए गणणाए दो असईओ पसई दो पसईओ य सेइया होइ चत्तारि सेइया कुलओ चत्तारि कुलया पत्थो चत्तारि पत्था आढगं सट्ठिए आढगाणं जहन्नए कुंभे असीई आढयाणं मज्झिमे कुंभे आढगसयं उक्कोसए कुंभे अट्ठेव य आढगसयाणि वाहे, एएणं वाहप्पमाणेणं अद्धत्तेवीसं तंदुलवाहे भुंजइ, ते य गणियनिद्दिट्ठा-चत्तारि य कोडिसया सट्ठिं चेव य हवंति कोडीओ । असीइं च तंदुलसयसहस्साणि हवंतित्तिमक्खायं ४६०८०००००० ॥ ५५ ॥ ५०२ ॥ तं एवं अद्धत्तेवीसं तंदुलवाहे भुंजंतो अद्धछट्ठे मुग्गकुंभे

गणना

छटितानां खदिरमुशलप्रत्याहतानां व्यपगततुषकणिकानामखण्डानामस्फुटितानां फलकसारितानामेकैकबीजानां सार्द्धद्वादशपलानां (तन्दुलानां) प्रस्थकः, सोऽपि च प्रस्थको मागधः, प्रातः प्रस्थकः सायं प्रस्थकः, चतुःषष्टिसहस्रतन्दुलो मागधकः प्रस्थः, द्विसाहस्रिकेण कवलेन द्वात्रिंशत् कवलाः पुरुषस्याहारः, अष्टाविंशतिः स्त्रियाः, चतुर्विंशतिः पण्डकस्य, एवमेवायुष्मन्! एतया गणनया द्वे असृती प्रसृतिः, द्वे प्रसृती सेतिका भवति, चतस्रः सेतिकाः कुलवः, चत्वारः कुलवाः प्रस्थः, चत्वारः प्रस्थाः आढकः, षष्टयाऽऽढकानां जघन्यः कुम्भः, अशीत्याऽऽढकानां मध्यमः कुम्भः, आढकशतमुत्कृष्टः कुम्भः, अष्टैवाऽऽढकशतानि वाहः, एतेन वाहप्रमाणेनार्द्धत्रयोविंशतिं तन्दुलवाहान् भुङ्क्ते, ते च गणितनिर्दिष्टाः—चत्वारि च कोटिशतानि षष्टिश्चैव भवन्ति कोट्यः । अशीतिश्च तन्दुलानां शतसहस्राणि भवन्तीत्याख्यातम् ॥५५॥ तदे-

॥ ४२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१६] ॥५६॥ दीप अनुक्रम [७४]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

भुंजइ अद्धछट्ठे मुग्गकुंभे भुंजंतो चउवीसं णेहाढगसयाइं भुंजइ चउवीसं णेहाढगसयाइं भुंजंतो छत्तीसं लवणपलसहस्साइं भुंजइ छत्तीसं लवणपलसहस्साइं भुंजंतो छप्पडसाडगसयाइं नियंसेइ दोमासिएणं परिअट्टएणं मासिएण वा परियट्टेणं बारस पडसाडगसयाइं नियंसेइ । एवामेव आउसो! वाससयाउयस्स सव्वं गणिअं तुलिअं मवियं नेहलवणभोयणच्छायणंपि, एयं गणियप्पमाणं दुविहं भणियं महरिसीहिं, जस्सऽत्थि तस्स गणिज्जइ, जस्स नत्थि तस्स किं गणिज्जइ?। ववहारगणिअ दिट्ठं सुहुमं निच्छयगयं मुणेयव्वं। जइ एयं नवि एयं विसमा गणणा मुणेयव्वा ॥ ५६ ॥ ५०३ ॥ कालो परमनिरुद्धो अविभज्जो तं तु जाण समयं तु। समया य असंखिज्जा हवंति उस्सासनिस्सासे ॥ ५७ ॥ ५०४ ॥ हट्ठस्स अणवगल्लस्स, निरुवकिट्ठस्स जंतुणो। एगे ऊसासनीसासे, एस पाणुत्ति वुच्चइ ॥ ५८ ॥ ५०५ ॥ सत्त पाणूणि से थोवे, सत्त थोवाणि से

चमर्द्धत्रयोविंशतिं तन्दुलबाहान् भुञ्जन् अर्द्धषष्ठान् मुद्गकुम्भान् भुनक्ति, अर्द्धषष्ठान् मुद्गकुम्भान् भुञ्जन् चतुर्विंशतिं स्नेहाढकशतानि भुनक्ति, चतुर्विंशतिं स्नेहाढकशतानि भुञ्जन् षट्त्रिंशतं लवणपलसहस्राणि भुङ्क्ते, षट्त्रिंशतं लवणपलसहस्राणि भुञ्जन् षट् पटशाटकशतानि परिदधाति द्विमासिकेन परिवर्त्तेन, मासिकेन वा परिवर्त्तेन द्वादश पटशाटकशतानि परिदधाति, एवमेवायुष्मन्! वर्षशतायुष्कस्य सर्वं गणितं तुलितं मापितं, स्नेहलवणभोजनाच्छादनान्यपि, एतद्गणितप्रमाणं द्विविधं भणितं महर्षिभिः। यस्यास्ति तस्य गण्यते, यस्य नास्ति तस्य किं गण्यते? । व्यवहारगणितं दृष्टं सूक्ष्मं निश्चयगतं ज्ञातव्यम्। यद्येतद् नैवैतद् विषमा गणना ज्ञातव्या ॥ ५६ ॥ कालः परमनिरुद्धोऽविभाज्यो जानीहि तं समयम्। समयाश्चासङ्ख्येया भवत उच्छ्वासनिःश्वासौ ॥ ५७ ॥ हृष्टस्यानवकल्पस्य निरुपक्लिष्टस्य जन्तोः। एक उच्छ्वा-

च. स. ८

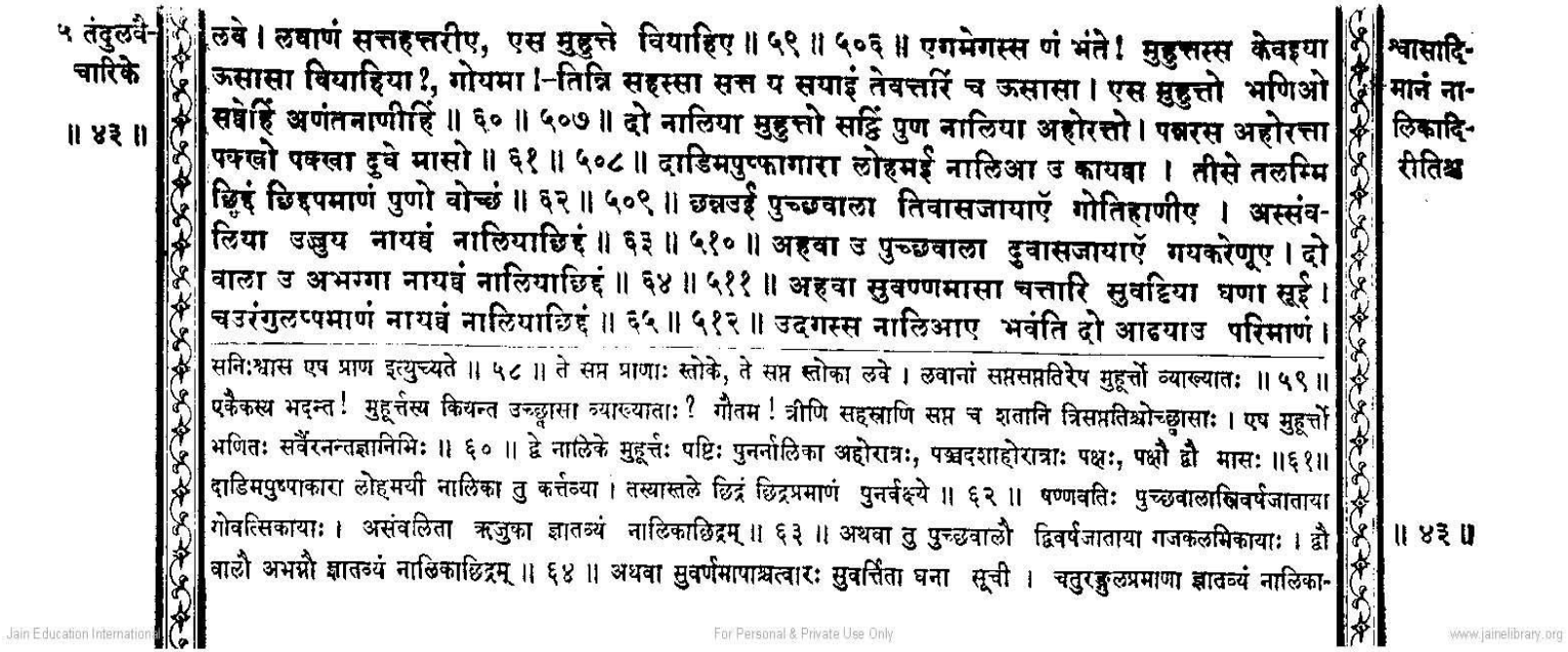
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	मनुष्यस्य उश्वास-नि:श्वासस्य वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१६] ॥५९॥

दीप अनुक्रम [७७]



५ तंदुलवै-चारिके ॥ ४३ ॥

लवे । लवाणं सत्तहत्तरीए, एस मुहुत्ते वियाहिए ॥ ५९ ॥ ५०६ ॥ एगमेगस्स णं भंते! मुहुत्तस्स केवइया ऊसासा वियाहिया?, गोयमा!-तिन्नि सहस्सा सत्त य सयाइं तेवत्तरिं च ऊसासा । एस मुहुत्तो भणिओ सव्वेहिं अणंतनाणीहिं ॥ ६० ॥ ५०७ ॥ दो नालिया मुहुत्तो सट्ठिं पुण नालिया अहोरत्तो । पन्नरस अहोरत्ता पक्खो पक्खा दुवे मासो ॥ ६१ ॥ ५०८ ॥ दाडिमपुप्फागारा लोहमई नालिआ उ कायव्वा । तीसे तलम्मि छिद्दं छिद्दपमाणं पुणो वोच्छं ॥ ६२ ॥ ५०९ ॥ छन्नउई पुच्छवाला तिवासजायाएँ गोतिहाणीए । अस्संवलिया उज्जुय नायव्वं नालियाछिद्दं ॥ ६३ ॥ ५१० ॥ अहवा उ पुच्छवाला दुवासजायाएँ गयकरेणूए । दो वाला उ अभग्गा नायव्वं नालियाछिद्दं ॥ ६४ ॥ ५११ ॥ अहवा सुवण्णमासा चत्तारि सुवट्टिया घणा सूई । चउरंगुलप्पमाणं नायव्वं नालियाछिद्दं ॥ ६५ ॥ ५१२ ॥ उदगस्स नालिआए भवंति दो आढयाउ परिमाणं ।

सनि:श्वास एष प्राण इत्युच्यते ॥ ५८ ॥ ते सप्त प्राणाः स्तोके, ते सप्त स्तोका लवे । लवानां सप्तसप्ततिरेष मुहूर्त्तो व्याख्यातः ॥ ५९ ॥ एकैकस्य भदन्त! मुहूर्त्तस्य कियन्त उच्छ्वासा व्याख्याताः? गौतम! त्रीणि सहस्राणि सप्त च शतानि त्रिसप्ततिश्चोच्छ्वासाः । एष मुहूर्त्तो भणितः सर्वैरनन्तज्ञानिभिः ॥ ६० ॥ द्वे नालिके मुहूर्त्तः षष्टिः पुनर्नालिका अहोरात्रः, पञ्चदशाहोरात्राः पक्षः, पक्षौ द्वौ मासः ॥६१॥ दाडिमपुष्पाकारा लोहमयी नालिका तु कर्त्तव्या । तस्यास्तले छिद्रं छिद्रप्रमाणं पुनर्वक्ष्ये ॥ ६२ ॥ षण्णवतिः पुच्छवालास्त्रिवर्षजातायाः गोवत्सिकायाः । असंवलिता ऋजुका ज्ञातव्यं नालिकाछिद्रम् ॥ ६३ ॥ अथवा तु पुच्छवालौ द्विवर्षजातायाः गजकलभिकायाः । द्वौ वालौ अभग्नौ ज्ञातव्यं नालिकाछिद्रम् ॥ ६४ ॥ अथवा सुवर्णमाषाश्चत्वारः सुवर्त्तिता घना सूची । चतुरङ्गुलप्रमाणा ज्ञातव्यं नालिका-

श्वासादि-मानं नालिकादि-रीतिश्च

॥ ४३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१६] ||६६||

दीप अनुक्रम [८५]

उदगं च भाणियव्वं जारिसयं तं पुणो वुच्छं ॥ ६६ ॥ ५१३ ॥ उदगं खलु नायव्वं कायव्वं दूसपट्टपरिपूयं । मेहोदगं पसन्नं सारइयं वा गिरिनईए ॥ ६७ ॥ ५१४ ॥ बारस मासा संवच्छरो उ पक्खा य ते उ चउवीसं । तिन्नेव य सट्ठिसया हवंति राइंदिआणं च ॥ ६८ ॥ ५१५ ॥ एगं च सयसहस्सं तेरस चेव य भवे सहस्साइं । एगं च सयं नउयं हवंति राइंदिऊसासा ॥ ६९ ॥ ५१६ ॥ तित्तीस सयसहस्सा पंचाणउई भवे सहस्साइं । सत्त य सया अणूणा हवंति मासेण ऊसासा ॥ ७० ॥ ५१७ ॥ चत्तारि य कोडीओ सत्तेव य हुंति सयसहस्साइं । अडयालीससहस्सा चत्तारि सया य वरिसेणं ॥ ७१ ॥५१८॥ चत्तारि य कोडिसया सत्त य कोडीओ हुंति अवराओ । अडयाल सयसहस्सा चत्तालीसं सहस्सा य ॥ ७२ ॥ ५१९ ॥ वाससयाउस्सेए उस्सासा

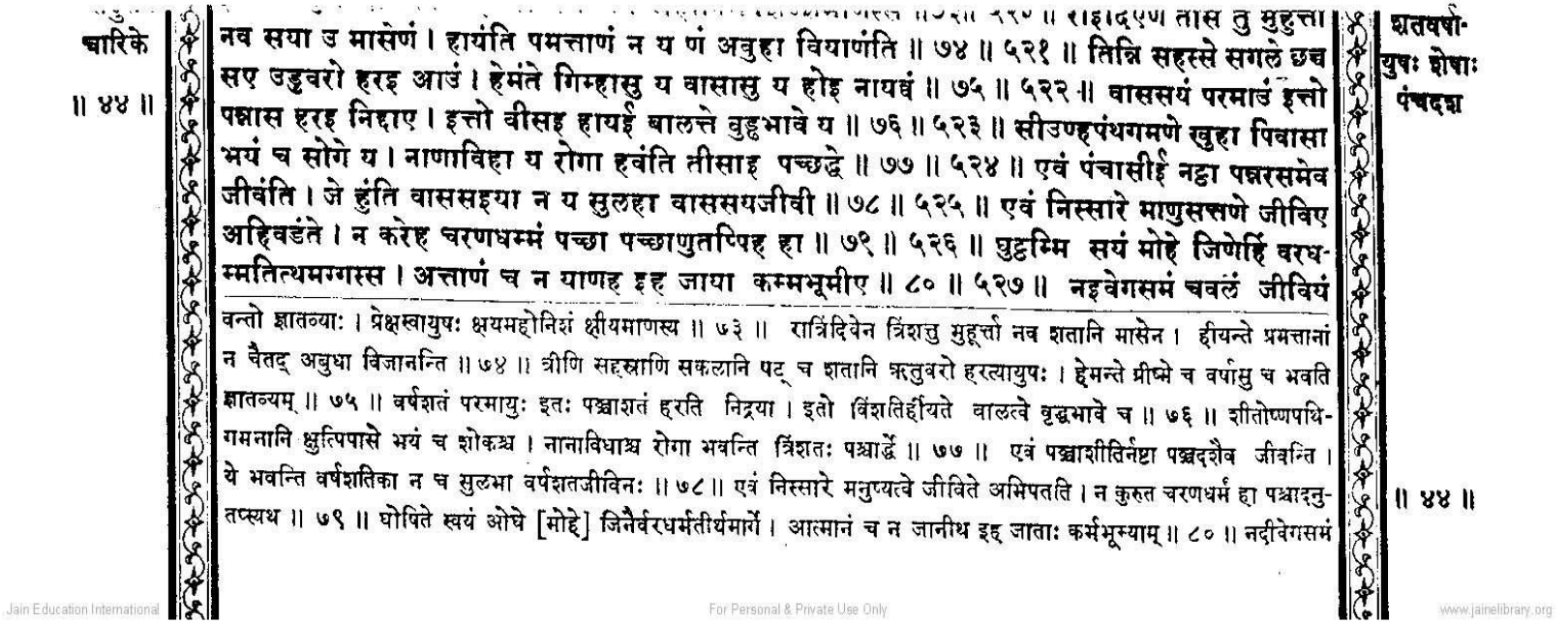
छिद्रम् ॥ ६५ ॥ उदकस्य नालिकायां भवतो द्वे आढके परिमाणम् । उदकं च भणितव्यं यादृशं तत्पुनर्वक्ष्ये ॥६६॥ उदकं खलु ज्ञातव्यं कर्त्तव्यं दूष्यपटपरिपूतम् । मेघोदकं प्रसन्नं शारदिकं वा गिरिनद्याः ॥ ६७ ॥ द्वादश मासाः संवत्सरश्च पक्षास्तु ते चतुर्विंशतिः । त्रीण्येव च शतानि षष्ट्यधिकानि भवन्ति रात्रिंदिवानाम् ॥ ६८ ॥ एकं च शतसहस्रं त्रयोदशैव भवेयुः सहस्राणि । एकं च शतं नवत्यधिकं भवन्ति रात्रिंदिवोच्छ्वासाः ॥ ६९ ॥ त्रयस्त्रिंशच्छतसहस्राणि पञ्चनवतिः सहस्राणि भवेयुः । सप्त च शतान्यन्यूनानि भवन्ति मासेनोच्छ्वासाः ॥ ७० ॥ चतस्रः कोट्यः सप्तैव भवन्ति शतसहस्राणि । अष्टचत्वारिंशत्सहस्राणि चत्वारि च शतानि वर्षेण ॥ ७१ ॥ चत्वारि कोटिशतानि सप्त च कोट्यो भवन्त्यपराः । अष्टचत्वारिंशच्छतसहस्राणि चत्वारिंशत्सहस्राणि ॥ ७२ ॥ वर्षशतायुष्कस्यैते उच्छ्वासा एता-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१६] ॥७३॥

दीप अनुक्रम [९२]



चारिके ॥ ४४ ॥

नव सया उ मासेणं । हायंति पमत्ताणं न य णं अवुहा वियाणंति ॥ ७४ ॥ ५२१ ॥ तिन्नि सहस्से सगले छच्च सए उडुवरो हरइ आउं । हेमंते गिम्हासु य वासासु य होइ नायव्वं ॥ ७५ ॥ ५२२ ॥ वाससयं परमाउं इत्तो पन्नास हरइ निद्दाए । इत्तो वीसइ हायई बालत्ते वुड्ढभावे य ॥ ७६ ॥ ५२३ ॥ सीउण्हपंथगमणे खुहा पिवासा भयं च सोगे य । नाणाविहा य रोगा हवंति तीसाइ पच्छद्धे ॥ ७७ ॥ ५२४ ॥ एवं पंचासीई नट्ठा पन्नरसमेव जीवंति । जे हुंति वाससइया न य सुलहा वाससयजीवी ॥ ७८ ॥ ५२५ ॥ एवं निस्सारे माणुसत्तणे जीविए अहिवडंते । न करेह चरणधम्मं पच्छा पच्छाणुतप्पिह हा ॥ ७९ ॥ ५२६ ॥ घुट्ठम्मि सयं मोहे जिणेहिं वरधम्मतित्थमग्गस्स । अत्ताणं च न याणह इह जाया कम्मभूमीए ॥ ८० ॥ ५२७ ॥ नइवेगसमं चवलं जीवियं

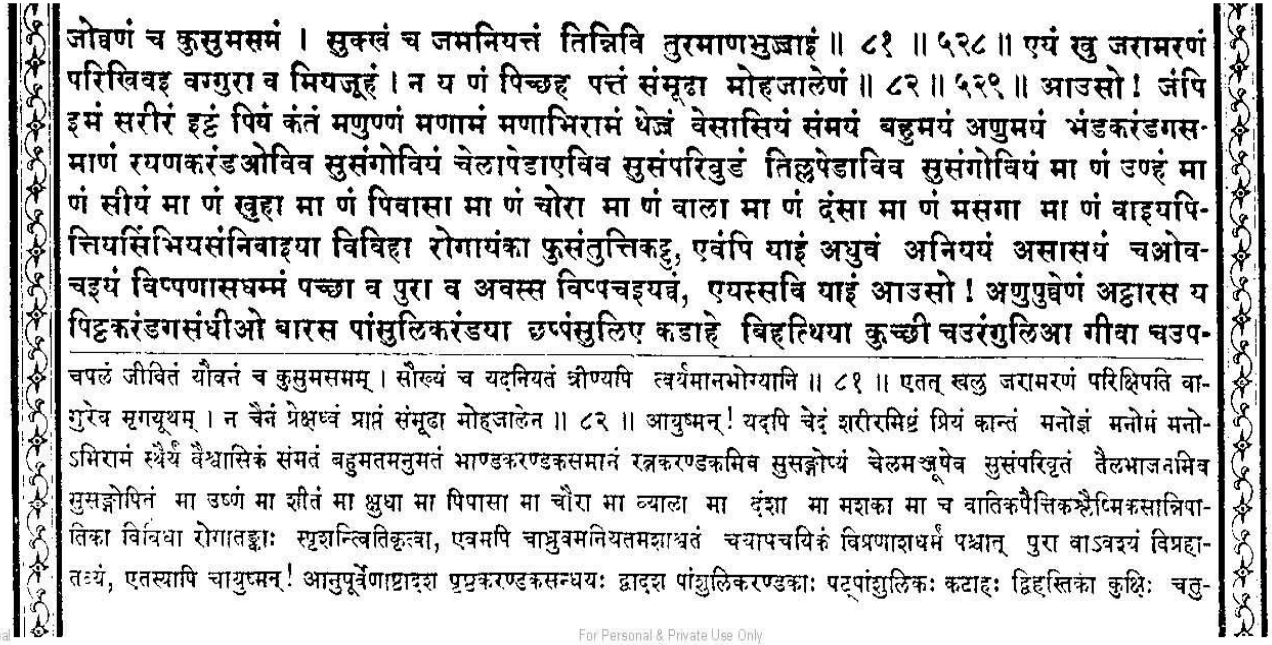
शतवर्षायुषः शेषाः पंचदश

॥ ४४ ॥

वन्तो ज्ञातव्याः । प्रेक्षस्वायुषः क्षयमहोनिशं क्षीयमाणस्य ॥ ७३ ॥ रात्रिंदिवेन त्रिंशत्तु मुहूर्त्ता नव शतानि मासेन । हीयन्ते प्रमत्तानां न चैतद् अबुधा विजानन्ति ॥ ७४ ॥ त्रीणि सहस्राणि सकलानि षट् च शतानि ऋतुवरो हरत्यायुषः । हेमन्ते ग्रीष्मे च वर्षासु च भवति ज्ञातव्यम् ॥ ७५ ॥ वर्षशतं परमायुः इतः पञ्चाशतं हरति निद्रया । इतो विंशतिर्हीयते बालत्वे वृद्धभावे च ॥ ७६ ॥ शीतोष्णपथिगमनानि क्षुत्पिपासे भयं च शोकश्च । नानाविधाश्च रोगा भवन्ति त्रिंशतः पश्चार्द्धे ॥ ७७ ॥ एवं पञ्चाशीतिर्नष्टा पञ्चदशैव जीवन्ति । ये भवन्ति वर्षशतिका न च सुलभा वर्षशतजीविनः ॥ ७८ ॥ एवं निस्सारे मनुष्यत्वे जीविते अभिपतति । न कुरुत चरणधर्मं हा पश्चादनुतप्स्यथ ॥ ७९ ॥ घोषिते स्वयं ओघे [मोहे] जिनैर्वरधर्मतीर्थमार्गे । आत्मानं च न जानीथ इह जाताः कर्मभूम्याम् ॥ ८० ॥ नदीवेगसमं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१६] ॥८१॥ दीप अनुक्रम [१००]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:



जोव्वणं च कुसुमसमं । सुक्खं च जमनियत्तं तिन्निवि तुरमाणभुज्जाइं ॥ ८१ ॥ ५२८ ॥ एयं खु जरामरणं परिखिवइ वग्गुरा व मियजूहं । न य णं पिच्छह पत्तं संमूढा मोहजालेणं ॥ ८२ ॥ ५२९ ॥ आउसो ! जंपि इमं सरीरं इट्ठं पियं कंतं मणुण्णं मणामं मणाभिरामं थेज्जं वेसासियं संमयं बहुमयं अणुमयं भंडकरंडगसमाणं रयणकरंडओविव सुसंगोवियं चेलापेडाएविव सुसंपरिवुडं तिल्लपेडाविव सुसंगोवियं मा णं उण्हं मा णं सीयं मा णं खुहा मा णं पिवासा मा णं चोरा मा णं वाला मा णं दंसा मा णं मसगा मा णं वाइयपित्तियसिंभियसंनिवाइया विविहा रोगायंका फुसंतुत्तिकट्टु, एवंपि याहं अधुवं अनिययं असासयं चओवचइयं विप्पणासधम्मं पच्छा व पुरा व अवस्स विप्पचइयव्वं, एयस्सवि याहं आउसो ! अणुपुव्वेणं अट्ठारस य पिट्ठकरंडगसंधीओ बारस पांसुलिकरंडया छप्पंसुलिए कडाहे बिहत्थिया कुच्छी चउरंगुलिआ गीवा चउप-

---

चपलं जीवितं यौवनं च कुसुमसमम् । सौख्यं च यदनियतं त्रीण्यपि त्वर्यमानभोग्यानि ॥ ८१ ॥ एतत् खलु जरामरणं परिक्षिपति वागुरेव मृगयूथम् । न चैनं प्रेक्षध्वं प्राप्तं संमूढा मोहजालेन ॥ ८२ ॥ आयुष्मन्! यदपि चेदं शरीरमिष्टं प्रियं कान्तं मनोज्ञं मनोमं मनोऽभिरामं स्थैर्यं वैश्वासिकं संमतं बहुमतमनुमतं भाण्डकरण्डकसमानं रत्नकरण्डकमिव सुसङ्गोप्यं चेलमञ्जूषेव सुसंपरिवृतं तैलभाजनमिव सुसङ्गोपितं मा उष्णं मा शीतं मा क्षुधा मा पिपासा मा चौरा मा व्याला मा दंशा मा मशका मा च वातिकपैत्तिकश्लैष्मिकसान्निपातिका विविधा रोगातङ्काः स्पृशन्त्वितिकृत्वा, एवमपि चाध्रुवमनियतमशाश्वतं चयापचयिकं विप्रणाशधर्मं पश्चात् पुरा वाऽवश्यं विप्रहातव्यं, एतस्यापि चायुष्मन्! आनुपूर्वेणाष्टादश पृष्ठकरण्डकसन्धयः द्वादश पांशुलिकरण्डकाः षट्पांशुलिकः कटाहः द्विहस्तिका कुक्षिः चतु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लिआ जिब्भा दुपलियाणि अच्छीणि चउक्कवालं सिरं बत्तीसं दंता सत्तंगुलिया जीहा अद्धट्ठपलियं हिययं पणवीसं पलाइं कालिज्जं, दो अंता पंचवामा पण्णत्ता, तंजहा–थूलंते य तणुअंते य, तत्थ णं जे से थूलंते तेणं उच्चारे परिणमइ, तत्थ णं जे से तणुयंते तेणं पासवणे परिणमइ, दो पासा पण्णत्ता, तंजहा—वामे पासे दाहिणे पासे य, तत्थ णं जे से वामे पासे से सुहपरिणामे, तत्थ णं जे से दाहिणे पासे से दुहपरिणामे। आउसो! इमंमि सरीरए सट्ठिं संधिसयं सत्तुत्तरं मम्मसयं तिन्नि अट्ठिदामसयाइं नव ण्हारुयसयाइं सत्त सिरासयाइं पंच पेसीसयाइं नव धमणीउ नवनउइं च रोमकूवसयसहस्साइं विणा केसमंसुणा, सह केसमंसुणा अट्ठट्ठाउ रोमकूवकोडीओ। आउसो! इमंमि सरीरए सट्ठिं सिरासयं नाभिप्पभवाणं उड्ढगामिणीणं सिरमुवागयाणं जाउ रसहरणीओत्ति वुचंति, जाणंसि निरुवघातेणं चक्खुसोयघाणजीहावलं च भवइ,

रज्जुलिका ग्रीवा चतुष्पला जिह्वा द्विपले अक्षिणी चतुष्कपालं शिरः द्वात्रिंशद्दन्ताः सप्ताङ्गुला जिह्वा अध्युष्टपलं हृदयं पञ्चविंशतिपलं कालेय्यकं द्वे अन्त्रे पञ्चवामे प्रज्ञप्ते, तद्यथा—स्थूलान्त्रं च तन्वन्त्रं च, यत्तत् स्थूलान्त्रं तेनोच्चारः परिणमति, तत्र यत्तत्तनुकान्त्रं तेन प्रश्रवणं परिणमति, द्वे पार्श्वे प्रज्ञप्ते, तद्यथा–वामपार्श्वं दक्षिणपार्श्वं च, तत्र यत्तद्वामपार्श्वं तत्सुखपरिणामं, तत्र यत्तद्दक्षिणपार्श्वं तद्दुःखपरिणामम्। आयुष्मन्! अस्मिन् शरीरे षष्टं सन्धिशतं सप्तोत्तरं मर्मशतं त्रीण्यस्थिदामशतानि नव स्नायुशतानि सप्त शिराशतानि पञ्च पेशीशतानि नव धमन्यः नवनवतिश्च रोमकूपशतसहस्राणि विना केशश्मश्रुणा अध्युष्टा रोमकूपकोट्यः सह केशश्मश्रुणा, आयुष्मन्! अस्मिन् शरीरे षष्ट्यधिकं शिराणां शतं नाभिप्रभवाणामूर्ध्वगामिनीनां शिर उपागतानां या रसहरण्य इत्युच्यन्ते, यासां निरुपघातेन चक्षुःश्रोत्रघ्राणजिह्वाबलं

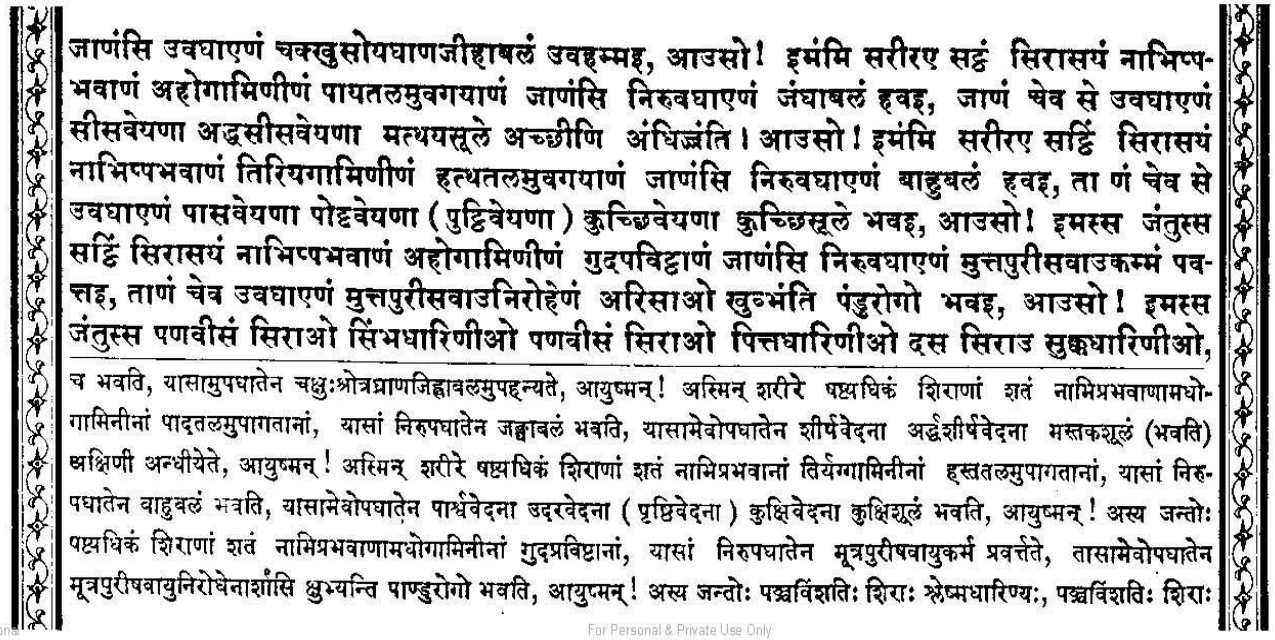
॥ ४५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१६] ॥८२॥

दीप अनुक्रम [१०१]



जाणंसि उवघाएणं चक्खुसोयघाणजीहाबलं उवहम्मइ, आउसो! इमंमि सरीरए सट्ठं सिरासयं नाभिप्पभवाणं अहोगामिणीणं पायतलमुवगयाणं जाणंसि निरुवघाएणं जंघाबलं हवइ, जाणं चेव से उवघाएणं सीसवेयणा अद्धसीसवेयणा मत्थयसूले अच्छीणि अंधिज्जंति। आउसो! इमंमि सरीरए सट्ठिं सिरासयं नाभिप्पभवाणं तिरियगामिणीणं हत्थतलमुवगयाणं जाणंसि निरुवघाएणं बाहुबलं हवइ, ता णं चेव से उवघाएणं पासवेयणा पोट्ठवेयणा (पुट्ठिवेयणा) कुच्छिवेयणा कुच्छिसूले भवइ, आउसो! इमस्स जंतुस्स सट्ठिं सिरासयं नाभिप्पभवाणं अहोगामिणीणं गुदपविट्ठाणं जाणंसि निरुवघाएणं मुत्तपुरीसवाउकम्मं पवत्तइ, ताणं चेव उवघाएणं मुत्तपुरीसवाउनिरोहेणं अरिसाओ खुब्भंति पंडुरोगो भवइ, आउसो! इमस्स जंतुस्स पणवीसं सिराओ सिंभधारिणीओ पणवीसं सिराओ पित्तधारिणीओ दस सिराउ सुक्कधारिणीओ,

च भवति, यासामुपघातेन चक्षुःश्रोत्रघ्राणजिह्वाबलमुपहन्यते, आयुष्मन्! अस्मिन् शरीरे षष्ट्यधिकं शिराणां शतं नाभिप्रभवाणामधोगामिनीनां पादतलमुपागतानां, यासां निरुपघातेन जङ्घाबलं भवति, यासामेवोपघातेन शीर्षवेदना अर्द्धशीर्षवेदना मस्तकशूलं (भवति) अक्षिणी अन्धीयेते, आयुष्मन्! अस्मिन् शरीरे षष्ट्यधिकं शिराणां शतं नाभिप्रभवानां तिर्यग्गामिनीनां हस्ततलमुपागतानां, यासां निरुपघातेन बाहुबलं भवति, यासामेवोपघातेन पार्श्ववेदना उदरवेदना (पृष्ठिवेदना) कुक्षिवेदना कुक्षिशूलं भवति, आयुष्मन्! अस्य जन्तोः षष्ट्यधिकं शिराणां शतं नाभिप्रभवाणामधोगामिनीनां गुदप्रविष्टानां, यासां निरुपघातेन मूत्रपुरीषवायुकर्म प्रवर्त्तते, तासामेवोपघातेन मूत्रपुरीषवायुनिरोधेनार्शांसि क्षुभ्यन्ति पाण्डुरोगो भवति, आयुष्मन्! अस्य जन्तोः पञ्चविंशतिः शिराः श्लेष्मधारिण्यः, पञ्चविंशतिः शिराः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

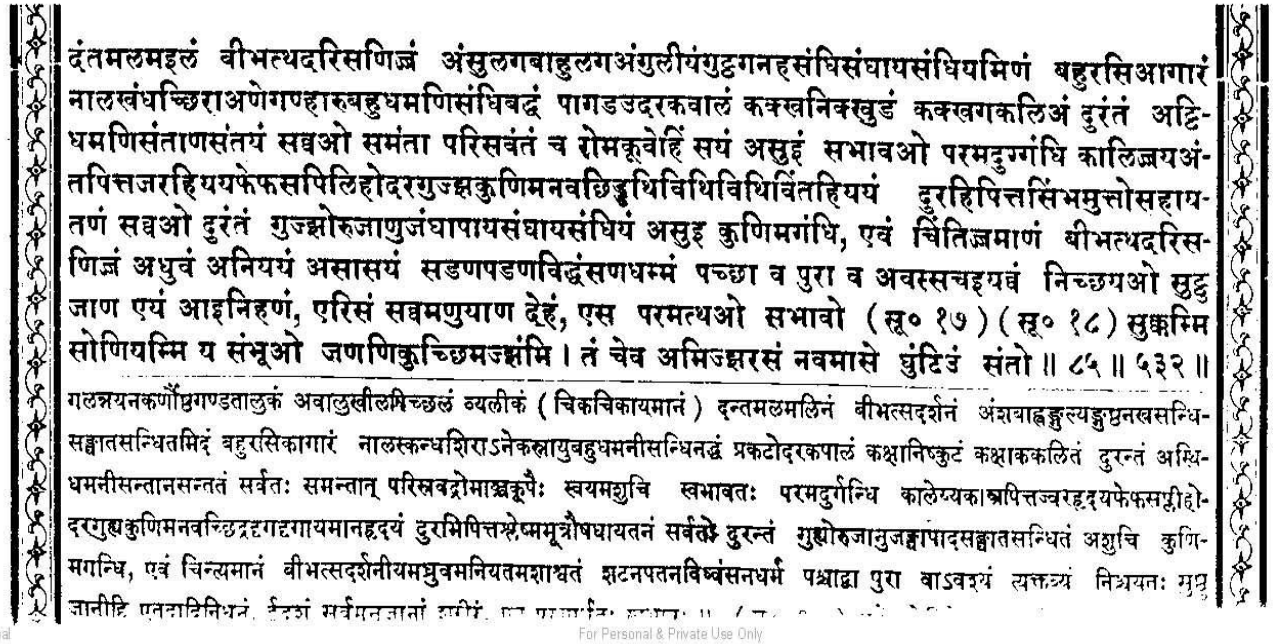
अथ मनुष्य-शरीरे शिरानां वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

सत्त सिरासयाइ पुरिसस्स तीसूणाइ इत्थियाए वीसूणाइ पंडगस्स, आउसा! इमस्स जंतुस्स रुहिरस्स आढयं वसाए अद्धाढयं मत्थुलुंगस्स पत्थो मुत्तस्स आढयं पुरीसस्स पत्थो पित्तस्स कुलवो सिंभस्स कुलवो सुक्कस्स अद्धकुलवो, जं जाहे दुट्ठं भवइ तं ताहे अइप्पमाणं भवइ, पंचकोट्ठे पुरिसे छक्कोट्ठा इत्थिया, नवसोए पुरिसे इक्कारससोया इत्थिया, पंच पेसीसयाइं पुरिसस्स तीसूणाइं इत्थियाए वीसूणाइं पंडगस्स (सू० १६) (सू० १७) अब्भंतरंसि कुणिमं जो (जइ) परियत्तेउ बाहिरं कुज्जा। तं असुइं दट्ठूणं सयावि जणणी दुगुंछिज्जा ॥ ८३ ॥ ५३० ॥ माणुस्सयं सरीरं पूइयं मंससुक्कहड्डेणं। परिसंठवियं सोहइ, अच्छायणगंधमल्लेणं ॥८४॥ ॥ ५३१ ॥ इमं चेव य सरीरं सीसघडीमेयमज्जमंसट्ठियमन्थुलुंगसोणिअवालुंडयचम्मकोसनासियसिंघाणयधीमलालयं अमणुण्णगं सीसघडीभंजियं गलंतनयणकण्णोट्ठगंडतालुयं अवालुयाखिल्लचिक्कणं चिलिचिलियं

पित्तधारिण्यः, दश शिराः शुक्रधारिण्यः, सप्त शिराशतानि पुरुषस्य त्रिंशदूनानि स्त्रियाः विंशत्यूनानि पण्डकस्य, आयुष्मन्! अस्य जन्तोः रुधिरस्याढकं वसाया अर्द्धाढकं मस्तुलुङ्गस्य प्रस्थः, मूत्रस्याढकं पुरीषस्य प्रस्थः पित्तस्य कुलवः श्लेष्मणः कुलवः शुक्रस्यार्द्धकुलवः, यद् यदा दुष्टं भवति तत्तदतिप्रमाणं भवति, पञ्चकोष्ठः पुरुषः षट्कोष्ठा स्त्री, नवस्रोताः पुरुषः एकादशस्रोताः स्त्री, पञ्च पेशीशतानि पुरुषस्य, त्रिंशदूनानि स्त्रियाः, विंशत्यूनानि पण्डकस्य, ॥ (सू० १६) अभ्यन्तरमस्य कुणिमं यदि परावर्त्य बाह्यं कुर्यात् । तदशुचि दृष्ट्वा सदा(स्वका)ऽपि जननी जुगुप्सेत ॥ ८३ ॥ मानुष्यकं शरीरं पूतिकं मांसशुक्रास्थिभिः । परिसंस्थापितं शोभते आच्छादनगन्धमाल्येन ॥ ८४ ॥ इदमेव शरीरं शीर्षघटिकामेदोमज्जामांसास्थिमस्तुलुङ्गशोणितबालुण्डकचर्मकोशनासिकासिङ्घानकधिङ्मलालयममनोज्ञं शीर्षघटीभक्तं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१७] ॥८४॥ दीप अनुक्रम [१०५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:  दंतमलमइलं बीभत्थदरिसणिज्जं अंसुलगबाहुलगअंगुलीयंगुट्ठगनहसंधिसंघायसंधियमिणं बहुरसिआगारं नालखंधच्छिराअणेगण्हारुबहुधमणिसंधिबद्धं पागडउदरकवालं कक्खनिक्खुडं कक्खगकलिअं दुरंतं अट्ठि-धमणिसंताणसंतयं सव्वओ समंता परिसवंतं च रोमकूवेहिं सयं असुइं सभावओ परमदुग्गंधि कालिज्जयअं-तपित्तजरहिययफेफसपिलिहोदरगुज्झकुणिमनवछिद्दुथिविथिविथिविंतहिययं दुरहिपित्तसिंभमुत्तोसहाय-तणं सव्वओ दुरंतं गुज्झोरुजाणुजंघापायसंघायसंधियं असुइ कुणिमगंधि, एवं चिंतिज्जमाणं बीभत्थदरिस-णिज्जं अधुवं अनिययं असासयं सडणपडणविद्धंसणधम्मं पच्छा व पुरा व अवस्सचइयव्वं निच्छयओ सुट्ठु जाण एयं आइनिहणं, एरिसं सव्वमणुयाण देहं, एस परमत्थओ सभावो (सू० १७) (सू० १८) सुक्कम्मि सोणियम्मि य संभूओ जणणिकुच्छिमज्झंमि। तं चेव अमिज्झरसं नवमासे घुंटिउं संतो ॥ ८५ ॥ ५३२ ॥ गलन्नयनकर्णौष्ठगण्डतालुकं अवालुखीलमिच्छलं व्यलीकं (चिकचिकायमानं) दन्तमलमलिनं बीभत्सदर्शनं अंशबाहङ्गुल्यङ्गुष्ठनखसन्धि-सङ्घातसन्धितमिदं बहुरसिकागारं नालस्कन्धशिराऽनेकस्नायुबहुधमनीसन्धिनद्धं प्रकटोदरकपालं कक्षानिष्कुटं कक्षाककलितं दुरन्तं अस्थि-धमनीसन्तानसन्ततं सर्वतः समन्तात् परिस्रवद्रोमाञ्चकूपैः स्वयमशुचि स्वभावतः परमदुर्गन्धि कालेय्यकाऽपित्तज्वरहृदयफेफसप्लीहो-दरगुह्यकुणिमनवच्छिद्रद्रवगद्गायमानहृदयं दुरभिपित्तश्लेष्ममूत्रौषधायतनं सर्वतो दुरन्तं गुह्योरुजानुजङ्घापादसङ्घातसन्धितं अशुचि कुणि-मगन्धि, एवं चिन्त्यमानं बीभत्सदर्शनीयमध्रुवमनियतमशाश्वतं शटनपतनविध्वंसनधर्मं पश्चाद्वा पुरा वाऽवश्यं त्यक्तव्यं निश्चयतः सुष्ठु जानीहि एतदादिनिधनं [illegible] Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org
	अथ कायस्य अशुचिता वर्ण्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१७] ॥८६॥

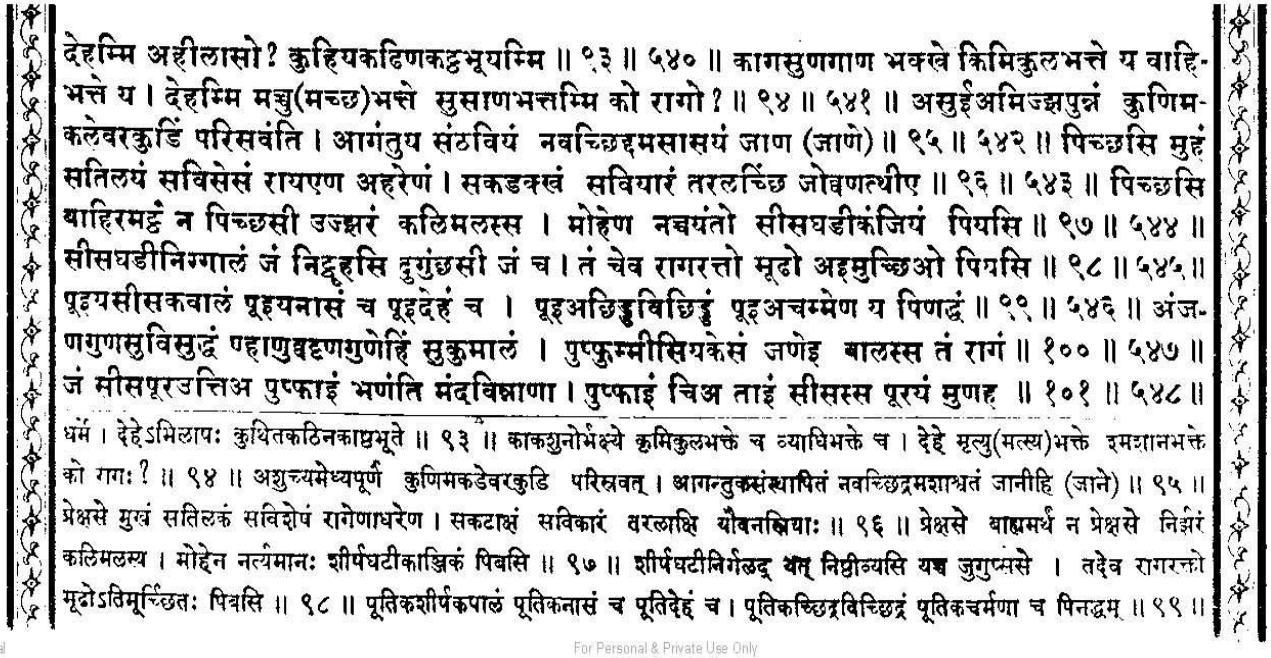
दीप अनुक्रम [१०७]

जोणीमुहनिप्फिडिओ थणगच्छीरेण वड्ढिओ जाओ । पगईअमिज्झमइओ कह देहो धोइउं सक्को ? ॥ ८६ ॥ ॥ ५३३ ॥ हा! असुइसमुप्पन्ना(न्नया) निग्गया य जेण चेव दारेणं । सत्ता(त्तया)मोहपसत्ता(त्तया) रमंति तत्थेव असुइदारम्मि ॥ ८७ ॥ ५३४ ॥ किह ताव घरकुडीरी कइसहस्सेहिं अपरितंतेहिं । वन्निज्जइ असुइ-बिलं जघणंति सकज्जमूढेहिं ? ॥ ८८ ॥ ५३५ ॥ रागेण न जाणंति य वराया कलमलस्स निद्धमणं । ताणं परिणं-दंती फुल्लं नीलुप्पलवणं व ॥ ८९ ॥ ५३६ ॥ कित्तिअमित्तं वण्णे ? अमिज्झमइयम्मि वच्चसंघाए । रागो हु न कायव्वो विरागमूले सरीरम्मि ॥ ९० ॥ ५३७ ॥ किमिकुलसयसंकिण्णे असुइमचुक्खे असासयमसारे । सेय-मलपुवडंमी निव्वेयं वच्चह सरीरे ॥ ९१ ॥ ५३८ ॥ दंतमलकण्णगूहगसिंघाणमले य लालमलबहुले । एयारिसे बीभत्थे दुगुंछणिज्जंमि को रागो ? ॥ ९२ ॥ ५३९ ॥ को सडणपडणविकिरिणविद्धंसणचयणमरणधम्मम्मि ।

तदेवामेध्यरसं नव मासान् घुष्टितं सत् (त्वा श्रान्तः) ॥८५॥ योनिमुखनिर्गतः स्तन्यक्षीरेण वृद्धिं गतः । प्रकृत्याऽमेध्यमयः कथं देहः क्षालयितुं शक्यः ? ॥ ८६ ॥ हा! अशुचिसमुत्पन्ना निर्गता येन चैव द्वारेण । सक्त्वा मोहप्रसक्ता रमन्ते तत्रैवाशुचिद्वारे ॥ ८७ ॥ कथं तावद्गृह-कुट्याः कविसहस्रैरपरितान्तैः । वर्ण्यतेऽशुचिबिलं जघनं स्वकार्यमूढैः इति ॥ ८८ ॥ रागेण न जानन्ति च वराकाः कलमलस्य निर्धमनम् । ततः (तासामक्षि) परिनन्दन्ति फुल्लनीलोत्पलवनमिव ॥ ८९ ॥ कियन्मात्रं वर्णयामि अमेध्यमये वर्चःसङ्घाते । रागो नैव कर्त्तव्यो विरागमूले शरीरे ॥ ९० ॥ कृमिकुलशतसङ्कीर्णे अशुचावचोक्षेऽशाश्वतेऽसारे । स्वेदमलचिकचिकायमाने निर्वेदं व्रजत शरीरे ॥ ९१ ॥ दन्तमलकर्ण-गूथकसिङ्घानकमले च लालामलबहुले । एतादृशि बीभत्से जुगुप्सनीये को रागः ? ॥ ९२ ॥ कः शटनपतनविकिरणविध्वंसनच्यवनमरण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१७] ॥९३॥ दीप अनुक्रम [११४]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

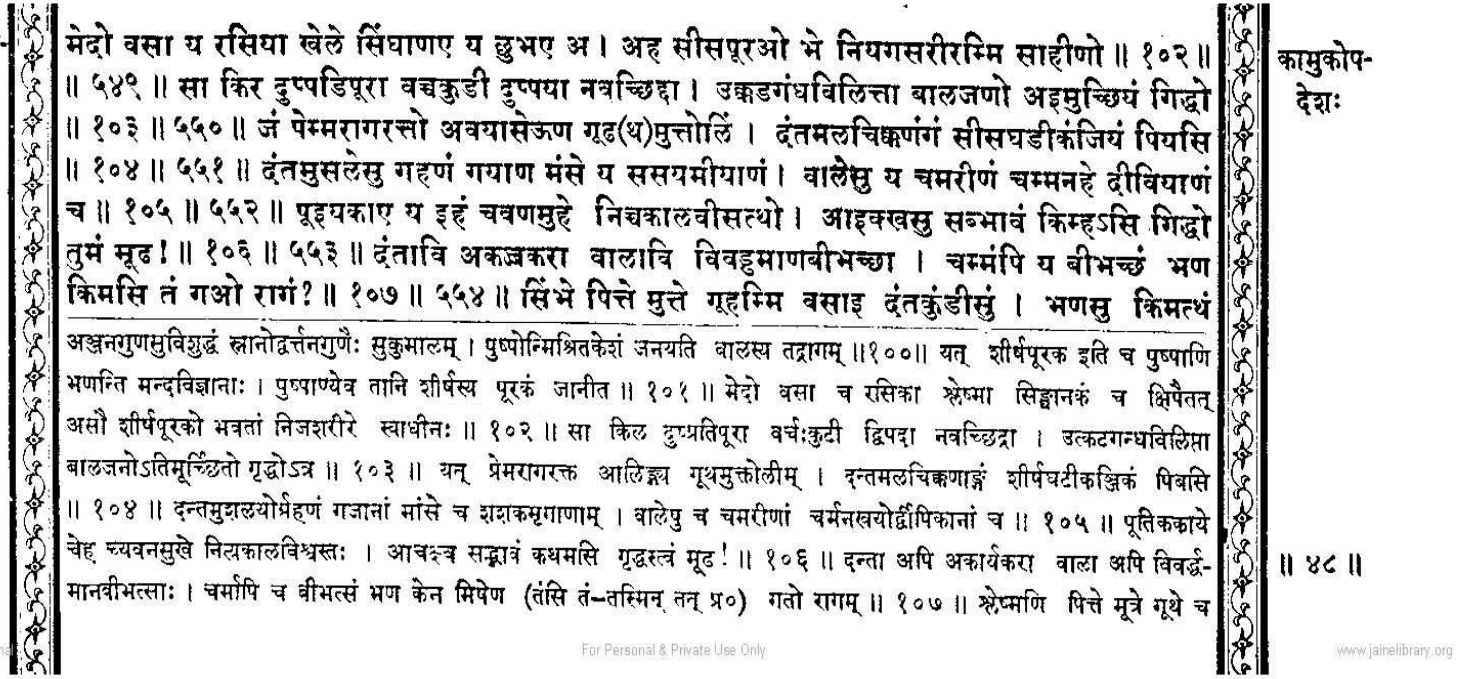


देहम्मि अहीलासो? कुहियकढिणकट्ठभूयम्मि ॥ ९३ ॥ ५४० ॥ कागसुणगाण भक्खे किमिकुलभत्ते य वाहि-
भत्ते य । देहम्मि मच्चु(मच्छ)भत्ते सुसाणभत्तम्मि को रागो? ॥ ९४ ॥ ५४१ ॥ असुईअमिज्झपुन्नं कुणिम-
कलेवरकुडिं परिसवंति । आगंतुय संठवियं नवच्छिद्दमसासयं जाण (जाणे) ॥ ९५ ॥ ५४२ ॥ पिच्छसि मुहं
सतिलयं सविसेसं रायएण अहरेणं । सकडक्खं सवियारं तरलच्छि जोव्वणत्थीए ॥ ९६ ॥ ५४३ ॥ पिच्छसि
बाहिरमट्ठं न पिच्छसी उज्झरं कलिमलस्स । मोहेण नच्चयंतो सीसघडीकंजियं पियसि ॥ ९७ ॥ ५४४ ॥
सीसघडीनिग्गालं जं निट्ठूहसि दुगुंछसी जं च । तं चेव रागरत्तो मूढो अहमुच्छिओ पियसि ॥ ९८ ॥ ५४५ ॥
पूइयसीसकवालं पूइयनासं च पूइदेहं च । पूइअछिद्दुविछिद्दं पूइअचम्मेण य पिणद्धं ॥ ९९ ॥ ५४६ ॥ अंज-
णगुणसुविसुद्धं ण्हाणुव्वट्टणगुणेहिं सुकुमालं । पुप्फुम्मीसियकेसं जणेइ बालस्स तं रागं ॥ १०० ॥ ५४७ ॥
जं सीसपूरउत्तिअ पुप्फाइं भणंति मंदविन्नाणा । पुप्फाइं चिअ ताइं सीसस्स पूरयं मुणह ॥ १०१ ॥ ५४८ ॥

धर्मे । देहेऽभिलाषः कुथितकठिनकाष्ठभूते ॥ ९३ ॥ काकशुनोर्भक्ष्ये कृमिकुलभक्ते च व्याधिभक्ते च । देहे मृत्यु(मत्स्य)भक्ते श्मशानभक्ते
को रागः? ॥ ९४ ॥ अशुच्यमेध्यपूर्णे कुणिमकडेवरकुडि परिस्रवत् । आगन्तुकसंस्थापितं नवच्छिद्रमशाश्वतं जानीहि (जाने) ॥ ९५ ॥
प्रेक्षसे मुखं सतिलकं सविशेषं रागेणाधरेण । सकटाक्षं सविकारं वरलक्षि यौवनस्त्रियाः ॥ ९६ ॥ प्रेक्षसे बाह्यमर्थं न प्रेक्षसे निर्झरं
कलिमलस्य । मोहेन नर्त्यमानः शीर्षघटीकाञ्जिकं पिबसि ॥ ९७ ॥ शीर्षघटीनिर्गलद् यत् निष्ठीव्यसि यच्च जुगुप्ससे । तदेव रागरक्तो
मूढोऽतिमूर्च्छितः पिबसि ॥ ९८ ॥ पूतिकशीर्षकपालं पूतिकनासं च पूतिदेहं च । पूतिकच्छिद्रविच्छिद्रं पूतिकचर्मणा च पिनद्धम् ॥ ९९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ कामुक-मनुष्यं वैराग्य/धर्मोपदेश: दीयते एवं शरीरस्य अशुचिताया: वर्णनं क्रियते



५ तंदुलवै-चारिके ॥ ४८ ॥

मेदो वसा य रसिया खेले सिंघाणए य छुभए अ। अह सीसपूरओ भे नियगसरीरम्मि साहीणो ॥ १०२ ॥ ॥ ५४९ ॥ सा किर दुप्पडिपूरा वच्चकुडी दुप्पया नवच्छिद्दा। उक्कडगंधविलित्ता बालजणो अइमुच्छियं गिद्धो ॥ १०३ ॥ ५५० ॥ जं पेम्मरागरत्तो अवयासेऊण गूढ(थ)मुत्तोलिं । दंतमलचिक्कणंगं सीसघडीकंजियं पियसि ॥ १०४ ॥ ५५१ ॥ दंतमुसलेसु गहणं गयाण मंसे य ससयमीयाणं। वालेसु य चमरीणं चम्मनहे दीवियाणं च ॥ १०५ ॥ ५५२ ॥ पूइयकाए य इहं चवणमुहे निच्चकालवीसत्थो। आइक्खसु सब्भावं किम्हऽसि गिद्धो तुमं मूढ! ॥ १०६ ॥ ५५३ ॥ दंताविं अकज्जकरा वालाविं विवड्ढमाणबीभच्छा । चम्मंपि य बीभच्छं भण किमसि तं गओ रागं? ॥ १०७ ॥ ५५४ ॥ सिंभे पित्ते मुत्ते गूहम्मि वसाइ दंतकुंडीसुं । भणसु किमत्थं

कामुकोप-देशः

अञ्जनगुणसुविशुद्धं स्नानोद्वर्त्तनगुणैः सुकुमालम् । पुष्पोन्मिश्रितकेशं जनयति बालस्य तद्रागम् ॥१००॥ यत् शीर्षपूरक इति च पुष्पाणि भणन्ति मन्दविज्ञानाः । पुष्पाण्येव तानि शीर्षस्य पूरकं जानीत ॥ १०१ ॥ मेदो वसा च रसिका श्लेष्मा सिङ्घानकं च क्षिपैतत् असौ शीर्षपूरको भवतां निजशरीरे स्वाधीनः ॥ १०२ ॥ सा किल दुष्प्रतिपूरा वर्चःकुटी द्विपदा नवच्छिद्रा । उत्कटगन्धविलिप्ता बालजनोऽतिमूर्च्छितो गृद्धोऽत्र ॥ १०३ ॥ यत् प्रेमरागरक्त आलिङ्ग्य गूथमुक्तोलीम् । दन्तमलचिक्कणाङ्गं शीर्षघटीकञ्जिकं पिबसि ॥ १०४ ॥ दन्तमुशलयोर्ग्रहणं गजानां मांसे च शशकमृगाणाम् । बालेषु च चमरीणां चर्मनखयोर्द्वीपिकानां च ॥ १०५ ॥ पूतिककाये चेह च्यवनसुखे नित्यकालविश्रब्धः । आचक्ष्व सद्भावं कथमसि गृद्धस्त्वं मूढ! ॥ १०६ ॥ दन्ता अपि अकार्यकरा बाला अपि विवर्द्धमानबीभत्साः । चर्मापि च बीभत्सं भण केन मिषेण (तंसि तं–तस्मिन् तत् प्र०) गतो रागम् ॥ १०७ ॥ श्लेष्मणि पित्ते मूत्रे गूथे च

॥ ४८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१७] ||१०८||

दीप अनुक्रम [१२९]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

तुज्झं असुइम्मिवि वड्ढिओ रागो? ॥ १०८ ॥ ५५५ ॥ जंघट्ठियासु ऊरू पइट्ठिया तट्ठिया कडीपिट्ठी । कडि-
यट्ठिवेढियाइं अट्ठारस पिट्ठिअट्ठीणि ॥ १०९ ॥ ५५६ ॥ दो अच्छिअट्ठियाइं सोलस गीवट्ठिया मुणेयव्वा ।
पिट्ठीपट्ठीयाओ बारस किल पंसुली हुंति ॥ ११० ॥ ५५७ ॥ अट्ठियकढिणे सिरण्हारुबंधणे मंसचम्मलेवम्मि ।
विट्ठाकोट्ठागारे को वच्चघरोवमे रागो? ॥ १११ ॥ ५५८ ॥ जह नाम वच्चकूवो निच्चं भिणिभिणिभिणंत काय-
कली । किमिएहिं सुलसुलायइ सोएहि य पूइयं वहइ ॥ ११२ ॥ ५५९ ॥ उद्धियनयणं खगमुहविकड्ढियं विप्प-
इन्नबाहुलयं । अंतविकड्ढियमालं सीसघडीपागडियघोरं ॥ ११३ ॥ ५६० ॥ भिणिभिणिभिणंतसद्दं विसप्पियं
सुलसुलंतमंसोडं । मिसिमिसिमिसंतकिमियं थिविथिविथिवंत बीभत्थं ॥ ११४ ॥ ५६१ ॥ पागडियपासु-
लीयं विगरालं सुक्कसंधिसंघायं । पडियं निव्वेयणयं सरीरमेयारिसं जाण ॥ ११५ ॥ ५६२ ॥ वच्चाओ असुइ-

वसायां दन्तकुड्याम् । भण किमत्र तवाशुचिनि अपि वर्द्धितो रागः ॥ १०८ ॥ जङ्घास्थोरूरू प्रतिष्ठितौ तत्स्थिते कटिपृष्ठी । कट्यस्थिवेष्टि-
तानि अष्टादश पृष्ठिकास्थीनि ॥ १०९ ॥ द्वे अक्षिणो अस्थिनी षोडश ग्रीवास्थीनि ज्ञातव्यानि । पृष्ठिप्रतिष्ठिता द्वादश किल पांशुलिका
भवन्ति ॥ ११० ॥ अस्थिकठिने शिरास्नायुबन्धने मांसचर्मलेपे । विष्ठाकोष्ठागारे को वर्चोगृहोपमे रागः? ॥ १११ ॥ यथा नाम
वर्चःकूपो नित्यं भिनिभिनिभणत्काककलिः । कृमिभिः सुलसुलायते श्रोतोभिश्च पूतिकं वहति ॥ ११२ ॥ उद्धृतनयनं खगमुखविकृष्टं
विप्रकीर्णबाहुलतम् । विकर्षिताम्त्रमालं शीर्षघटिकया प्रकटितघोरत्वम् ॥ ११३ ॥ भिनिभिनिभिनायमानशब्दं विसर्पत् सुलसुलायमानमां-
सपुटम् । मिसिमिसिमिसत्कृमिकं थिविथिविथिवद्वीभत्सम् ॥ ११४ ॥ प्रकटितपांशुलिकं विकरालं शुक्रसन्धिसङ्घातम् । पतितं निर्वे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१७] ||११६||

दीप अनुक्रम [१३७]

तरं नवहिं सोएहिं परिगलंतेहिं । आमगमल्लगरूवे निव्वेयं वच्चह सरीरे ॥ ११६ ॥ ५६३ ॥ दो हत्था दो पाया सीसं उच्चंपियं कबंधम्मि । कलिमलकोट्ठागारं परिवहसि दुयादुयं वच्चं ॥ ११७ ॥ ५६४ ॥ तुं च किर रूववंतं वच्चंतं रायमग्गमोइन्नं । परगंधेहिं सुगंधय मन्नंतो अप्पणो गंधं ॥ ११८ ॥ ५६५ ॥ पाडलचंपयमल्लियअगुरुयचंदणतुरुक्कवामीसं । गंधं समोयरंतं मन्नंतो अप्पणो गंधं ॥ ११९ ॥ ५६६ ॥ मुहवाससुरहिगंधं वातसुहं अगुरुगंधियं अंगं। केसा ण्हाणसुगंधा कयरो ते अप्पणो गंधो? ॥ १२० ॥ ५६७ ॥ अच्छिमलो कन्नमलो खेलो सिंघाणओ अ पूओ अ। असुई मुत्तपुरीसो एसो ते अप्पणो गंधो ॥१२१॥ [ ] (सू० १९) जाओवि अ इमाओ इत्थियाओ अणेगेहिं कइवरसहस्सेहिं विविहपासपडिबद्धेहिं कामरागमोहेहिं वन्नियाओ ताओऽवि एरिसाओ, तंजहा–पगइविसमाओ (पियरुसणाओ कतिपयइचडुप्परुन्नातो अवक्कहसियभासियविलास-

जकं शरीरमेतादृशं जानीहि ॥ ११५ ॥ वर्चसोऽशुचितरे नवभिः श्रोतोभिः परिगलद्भिः । आममल्लकरूपे निर्वेदं व्रजत शरीरे ॥ ११६ ॥ द्वौ हस्तौ द्वौ पादौ शीर्षमुच्चम्पितं कबन्धे । कलिमलकोष्ठागारे परिवहसि शीघ्रं वाच्यम् ॥ ११७ ॥ तच्च किल रूपवत् व्रजत् राज्यमार्गमवतीर्णम् । परगन्धैश्च सुगन्धं मन्यमान आत्मनो गन्धम् ॥ ११८ ॥ पाटलचम्पकमल्लिकाऽगुरुचन्दनतुरुष्कव्यामिश्रम् । गन्धं समवतरत् मन्यमान आत्मनो गन्धम् (मोदसे) ॥ ११९ ॥ मुखवाससुरभिगन्धं वातसुखमगुरुगन्धितमङ्गम् । केशाः स्नानसुगन्धाः कतरस्ते आत्मनो गन्धः ॥ १२० ॥ अक्षिमलः कर्णमलः श्लेष्मा सिङ्घानकश्च पूतिकश्च । अशुची मूत्रपुरीषौ एष ते आत्मनो गन्धः ॥ १२१ ॥ (सू० १८) या अपि चेमाः स्त्रियोऽनेकैः कविवरसहस्रैर्विविधपाशप्रतिबद्धैः कामरागमूढैर्वर्णितास्ता अपीदृश्यः, तद्यथा—प्रकृतिविषमाः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्त्रिया: विविध-पर्याय-नामानि (व्युत्पत्ति सह)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१७] ॥१२१॥

दीप अनुक्रम [१४२]

वीसंभभूयाओ अविणयवातुलीउ मोहमहावत्तिणीओ विसमाओ) पियवयणवल्लरीओ कइयवपेमगिरितडीओ अवराहसहस्सघरिणीओ ४, पभवो सोगस्स विणासो बलस्स सूणा पुरिसाणं नासो लज्जाए संकरो अविणयस्स निलओ निअडीण १० खाणी वइरस्स सरीरं सोगस्स भेओ मज्जायाणं आसओ रागस्स निलओ दुचरियाणं माईए सम्मोहो खलणा नाणस्स चलणं सीलस्स विग्घो धम्मस्स अरी साहूण २० दूसणं आयारपत्ताणं आरामो कम्मरयस्स फलिहो मुक्खमग्गस्स भवणं दरिद्दस्स २४, अवि आइं ताओ आसीविसो विव कुवियाओ मत्तगओ विव मयणपरवसाओ वग्घी विव दुट्ठहिअयाओ तणच्छन्नकूवो विव अप्पगासहिअयाओ मायाकारओ विव उवयारसयाबंधणपओत्तीओ आयरिसबिंबंपिव दुग्गिज्झसब्भावाओ ३० फुंफया विव अंतोदहनसीलाओ नग्गयमग्गो विव अणवट्ठिअचित्ताओ अंतोदुट्ठवणो विव कुहियहिययाओ कण्ह-

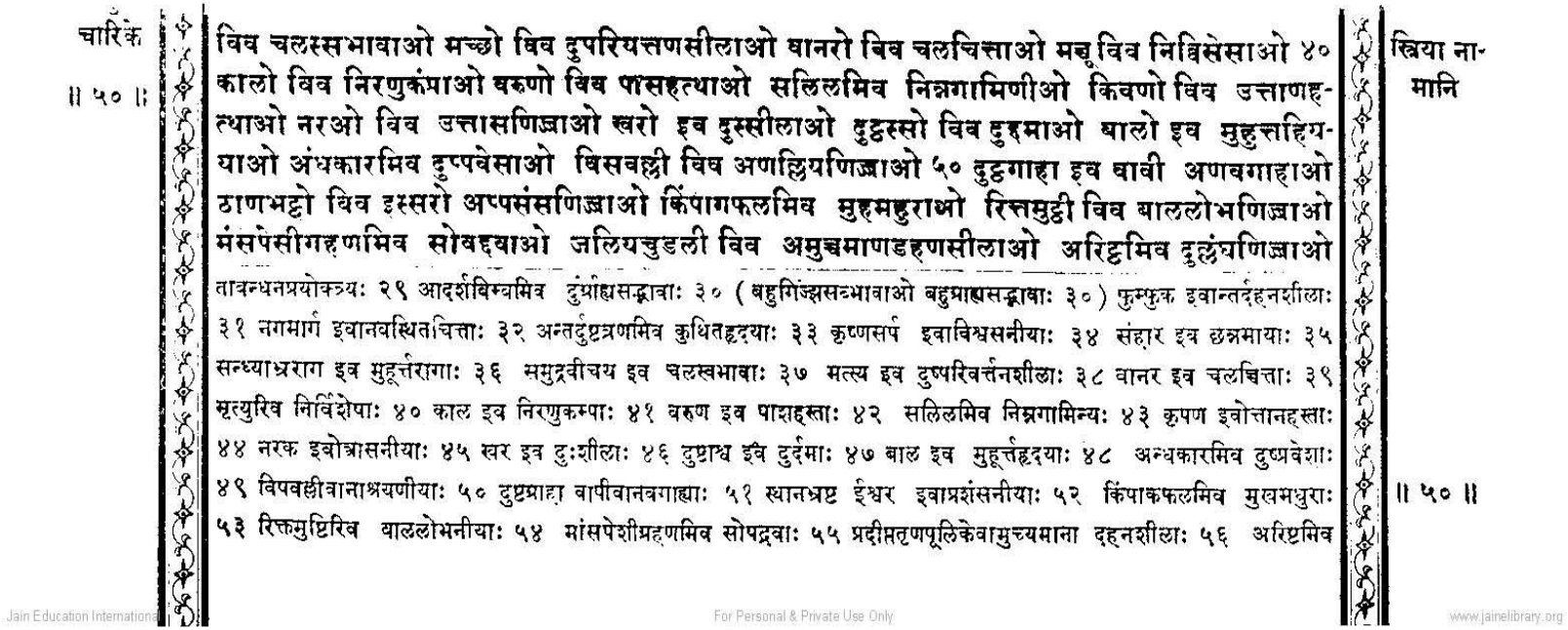
१ (प्रियरोषाः कतिपयातिचाटुप्ररुदिताः अवाक्यहसितभाषितविलासविश्रम्भभूताः अविनयवात्या मोहमहावर्त्तिन्यः विषमाः) प्रियवचनवल्ल्यः २ कैतवप्रेमगिरितटिन्यः ३ अपराधसहस्रगृहिण्यः ४ प्रभवः शोकस्य ५ विनाशो बलस्य ६ शूना पुरुषाणाम् ७ नाशो लज्जायाः ८ सङ्करोऽविनयस्य ९ निलयो निकृतीनाम् १० खानिर्वैरस्य ११ शरीरं शोकस्य १२ भेदो मर्यादानाम् १३ आश्रयो रागस्य १४ निलयो दुश्चरितानाम् १५ मातृकायाः संमोहः १६ स्खलना ज्ञानस्य १७ चलनं शीलस्य १८ विघ्नो धर्मस्य १९ अरिः साधूनां २० दूषणमाचारप्राप्तानाम् २१ आरामः कर्मरजसः २२ परिघो मोक्षमार्गस्य २३ भवनं दारिद्र्यस्य २४, अपिचेमा आशीविष इव कुपिताः २५ मत्तगज इव मदनपरवशाः २६ व्याघ्रीव दुष्टहृदयाः २७ तृणच्छन्नकूप इवाप्रकाशहृदयाः २८ मायाकारक इवोपचारश-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१८] ॥१२१॥

दीप अनुक्रम [१४३]



चारिके ॥ ५० ॥

विव चलस्सभावाओ मच्छो विव दुपरियत्तणसीलाओ वानरो विव चलचित्ताओ मणू विव निव्विसेसाओ ४० कालो विव निरणुकंपाओ वरुणो विव पासहत्थाओ सलिलमिव निन्नगामिणीओ किवणो विव उत्ताणह-त्थाओ नरओ विव उत्तासणिज्जाओ खरो इव दुस्सीलाओ दुट्ठस्सो विव दुद्दमाओ बालो इव मुहुत्तहिय-याओ अंधकारमिव दुप्पवेसाओ विसवल्ली विव अणल्लियणिज्जाओ ५० दुट्ठगाहा इव वावी अणवगाहाओ ठाणभट्ठो विव इस्सरो अप्पसंसणिज्जाओ किंपागफलमिव मुहमहुराओ रित्तमुट्ठी विव बाललोभणिज्जाओ मंसपेसीगहणमिव सोवद्दवाओ जलियचुडली विव अमुच्चमाणडहणसीलाओ अरिट्ठमिव दुल्लंघणिज्जाओ

तावन्धनप्रयोक्तव्यः २९ आदर्शबिम्बमिव दुर्ग्राह्यसद्भावाः ३० (बहुगिंज्झसब्भावाओ बहुग्राह्यसद्भावाः ३०) फुम्फुक इवान्तर्दहनशीलाः ३१ नगमार्ग इवानवस्थितचित्ताः ३२ अन्तर्दुष्टव्रणमिव कुथितहृदयाः ३३ कृष्णसर्प इवाविश्वसनीयाः ३४ संहार इव छन्नमायाः ३५ सन्ध्याभ्ररागा इव मुहूर्त्तरागाः ३६ समुद्रवीचय इव चलस्वभावाः ३७ मत्स्य इव दुष्परिवर्त्तनशीलाः ३८ वानर इव चलचित्ताः ३९ मृत्युरिव निर्विशेषाः ४० काल इव निरणुकम्पाः ४१ वरुण इव पाशहस्ताः ४२ सलिलमिव निम्नगामिन्यः ४३ कृपण इवोत्तानहस्ताः ४४ नरक इवोत्रासनीयाः ४५ खर इव दुःशीलाः ४६ दुष्टाश्व इव दुर्दमाः ४७ बाल इव मुहूर्त्तहृदयाः ४८ अन्धकारमिव दुष्प्रवेशाः ४९ विषवल्लीवानाश्रयणीयाः ५० दुष्टग्राह्या वापीवानवगाह्याः ५१ स्थानभ्रष्ट ईश्वर इवाप्रशंसनीयाः ५२ किंपाकफलमिव मुखमधुराः ५३ रिक्तमुष्टिरिव बाललोभनीयाः ५४ मांसपेशीग्रहणमिव सोपद्रवाः ५५ प्रदीप्ततृणपूलिकेवामुच्यमाना दहनशीला: ५६ अरिष्टमिव

स्त्रिया नामानि ॥ ५० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कूडकरिसावणो विव कालविसंवायणसीलाओ चंडसीलो विव दुक्खरक्खियाओ अइविसाओ ६० दुगुंछियाओ दुरुवचराओ अगंभीराओ अविस्ससणिज्जाओ अणवत्थियाओ दुक्खरक्खियाओ दुक्खपालियाओ अरइकराओ कक्कसाओ दढवेराओ ७० रूवसोहग्गमउम्मत्ताओ भुयगगइकुडिलहियययाओ कंतारगइट्ठाणभूयाओ कुलसयणमित्तभेयणकारियाओ परदोसपगासियाओ कयग्घाओ बलसोहियाओ एगंतहरणकोलाओ चंचलाओ जाइयभंडोवगारोविव (जचभंडोवरागो इव) मुहरागविरागाओ ८० अवि याइं ताओ अंतरं भंगसयं अरज्जुओ पासो अदारुया अडवी अणालस्सनिलओ अ(ण)इक्खा वेयरणी अनामिओ वाही अविओगो विप्पलावो अरू उवसग्गो रइवंतो चित्तविब्भमो सवंगओ दाहो ९० अणब्भप्पसूया (अणब्भा) वज्जासणी असलिलप्पवाहो समुद्दरओ ९३॥ अवि याइं तासिं इत्थिआणं अणेगाणि नामनिरुत्ताणि पुरिसे कामरागप्प-

दुर्लङ्घनीयाः ५७ कूटकार्षापण इव कालविसंवादनशीलाः ५८ चण्डशील इव दुःखरक्षिताः ५९ अतिविषाः ६० जुगुप्सनीयाः ६१ दुरुपचाराः ६२ अगम्भीराः ६३ अविश्वसनीयाः ६४ अनवस्थिताः ६५ दुःखरक्ष्याः ६६ दुःखपाल्याः ६७ अरतिकराः ६८ कर्कशाः ६९ दृढवैराः ७० रूपसौभाग्यमदोन्मत्ताः ७१ भुजगगतिकुटिलहृदयाः ७२ कान्तारगतिस्थानभूताः ७३ कुलस्वजनमित्रभेदनकारिकाः ७४ परदोषप्रकाशिकाः ७५ कृतघ्नयः ७६ बलशोधिकाः ७७ एकान्तहरणकोलाः ७८ चञ्चलाः ७९ याचितभाण्डोपकार (जात्यभाण्डोपराग) इव मुखरागविरागाः ८० अपि च-ता आन्तरं भङ्गशतम् ८१ अरज्जुः पाशः ८२ अदारुकाऽटवी ८३ अनालस्यनिलयः ८४ अनीक्ष्या वैतरणी ८५ अनामिको व्याधिः ८६ अवियोगो विप्रलापः ८७ अरुगपसर्गः ८८ रतिमान चित्तविभ्रमः ८९ सर्वा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१८] ॥१२१॥

दीप अनुक्रम [१४३]

डिबद्धे नाणाविहेहिं उवायसयसहस्सेहिं वहबंधणमाणयंति पुरिसाणं नो अन्नो एरिसो अरी अत्थित्ति नारीओ, तंजहा-नारीसमा न नराणं अरीओ नारीओ, नाणाविहेहिं कम्मेहिं सिप्पइयाएहिं पुरिसे मोहंतित्ति महिलाओ, पुरिसे मत्ते करंतित्ति पमयाओ, महंतं कलिं जणयंतित्ति महिलियाओ, पुरिसे हावभावमाइएहिं रमंतित्ति रामाओ, पुरिसे अंगाणुराए करिंतित्ति अंगणाओ, नाणाविहेसु जुद्धभंडणसंगामाडवीसु सुहारणगिण्हणसीउण्हदुक्खकिलेसमाइएसु पुरिसे लालंतित्ति ललणाओ, पुरिसे जोगनिओएहिं वसे ठावेंतित्ति जोसियाओ, पुरिसे नाणाविहेहिं भावेहिं वण्णंतित्ति वणिआओ, काई पमत्तभावं काई पणयं सविब्भमं काई सासिव ववहरंति काई सत्तुव रोरो इव काई पयएसु पणमंति काई उवणएसु उवणमंति काई कोउयनम्मंतिकाउं सुकडक्खनिरिक्खिएहिं सविलासमहुरेहिं उवहसिएहिं उवगूहिएहिं उवसदेहिं गुरु(उज्झ)ग-

ङ्गिको दाहः ९० अनभ्रप्रसूता (अनभ्रा) वज्राशनिः ९१ असलिलः प्रवाहः ९२ समुद्ररयः ९३॥ अपि च तासां स्त्रीणामनेकानि नामनिरुक्तानि, पुरुषान् कामरागप्रतिबद्धान् नानाविधैरुपायशतसहस्रैर्वधबन्धनमानयन्ति पुरुषाणां नान्य ईदृशोऽरिरस्तीति नार्यस्तद्यथा–नारीसमा न नराणामरयो नार्यः १, नानाविधैः कर्मशिल्पैः पुरुषान् मोहयन्तीति महिलाः २, पुरुषान् मत्तान् कुर्वन्तीति प्रमदाः ३, महान्तं कलिं जनयन्तीति महिलिकाः (महलिजा) ४ पुरुषान् हावभावै रमयन्तीति रामाः ५, पुरुषानङ्गानुरागान् कुर्वन्तीत्यङ्गनाः ६, नानाविधेषु युद्धमण्डनसङ्ग्रामाटवीषु सुधारणग्रहणशीतोष्णदुःखक्लेशादिषु पुरुषान् लालयन्तीति ललनाः ७, पुरुषान् योगनियोगैर्वशे स्थापयन्तीति योषितः ८, पुरुषान् नानाविधैर्भावैर्वर्णयन्तीति वनिताः ९, काश्चित् प्रमत्तभावं, काश्चित् प्रणयं सविभ्रमं, काश्चित्सशब्दं श्वासीव व्यव-

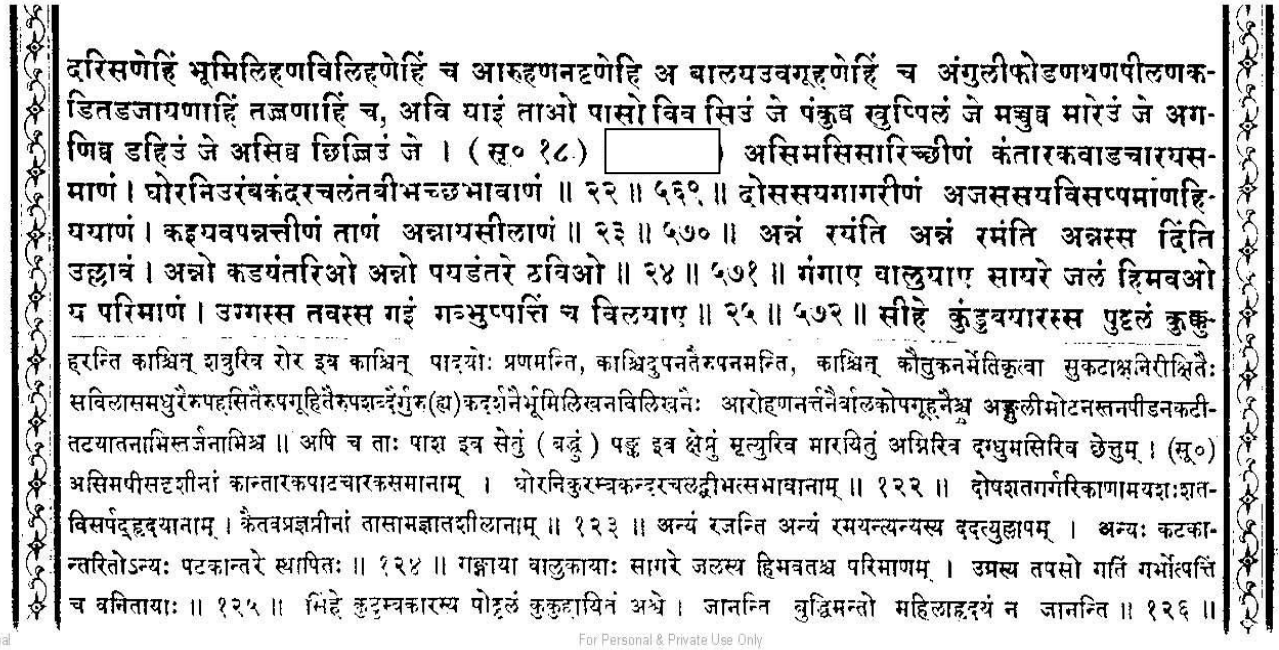
॥ ५१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१८] ||१२१||

दीप अनुक्रम [१४३]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:



दरिसणेहिं भूमिलिहणविलिहणेहिं च आरुहणनट्टणेहि अ बालयउवगूहणेहिं च अंगुलीफोडणथणपीलणकडितडजायणाहिं तज्जणाहिं च, अवि याइं ताओ पासो विव सिउं जे पंकुव खुप्पिलं जे मच्चुव मारेउं जे अग्गिव डहिउं जे असिव छिज्जिउं जे । (सू० १८) [ ] असिमसिसारिच्छीणं कंतारकवाडचारयसमाणं । घोरनिउरंबकंदरचलंतवीभच्छभावाणं ॥ २२ ॥ ५६९ ॥ दोससयगागरीणं अजससयविसप्पमाणहिययाणं । कइयवपन्नत्तीणं ताणं अन्नायसीलाणं ॥ २३ ॥ ५७० ॥ अन्नं रयंति अन्नं रमंति अन्नस्स दिंति उल्लावं । अन्नो कडयंतरिओ अन्नो पयडंतरे ठविओ ॥ २४ ॥ ५७१ ॥ गंगाए वालुयाए सायरे जलं हिमवओ य परिमाणं । उग्गस्स तवस्स गइं गब्भुप्पत्तिं च विलयाए ॥ २५ ॥ ५७२ ॥ सीहे कुंडुयगारस्स पुट्टलं कुक्कु-

हरन्ति काश्चित् शत्रुरिव रोर इव काश्चित् पादयोः प्रणमन्ति, काश्चिदुपनतैरुपनमन्ति, काश्चित् कौतुकनर्मेतिकृत्वा सुकटाक्षनिरीक्षितैः सविलासमधुरैरुपहसितैरुपगूहितैरुपशब्दैर्गुरु(ह्य)कदर्शनैर्भूमिलिखनविलिखनैः आरोहणनर्त्तनैर्बालकोपगूहनैश्च अङ्गुलीमोटनस्तनपीडनकटीतटयातनाभिस्तर्जनाभिश्च ॥ अपि च ताः पाश इव सेतुं (बद्धुं) पङ्क इव क्षेमुं मृत्युरिव मारयितुं अग्निरिव दग्धुमसिरिव छेत्तुम् । (सू०) असिमषीसदृशीनां कान्तारकपाटचारकसमानाम् । घोरनिकुरम्बकन्दरचलद्बीभत्सभावानाम् ॥ १२२ ॥ दोषशतगर्गरिकाणामयशःशतविसर्पद्धृदयानाम् । कैतवप्रज्ञप्तीनां तासामज्ञातशीलानाम् ॥ १२३ ॥ अन्यं रजन्ति अन्यं रमयन्त्यन्यस्य ददत्युल्लापम् । अन्यः कटकान्तरितोऽन्यः पटकान्तरे स्थापितः ॥ १२४ ॥ गङ्गाया वालुकायाः सागरे जलस्य हिमवतश्च परिमाणम् । उग्रस्य तपसो गतिं गर्भोत्पत्तिं च वनितायाः ॥ १२५ ॥ सिंहे कुटुम्बकारस्य पोट्टलं कुकुहायितं अश्वे । जानन्ति बुद्धिमन्तो महिलाहृदयं न जानन्ति ॥ १२६ ॥

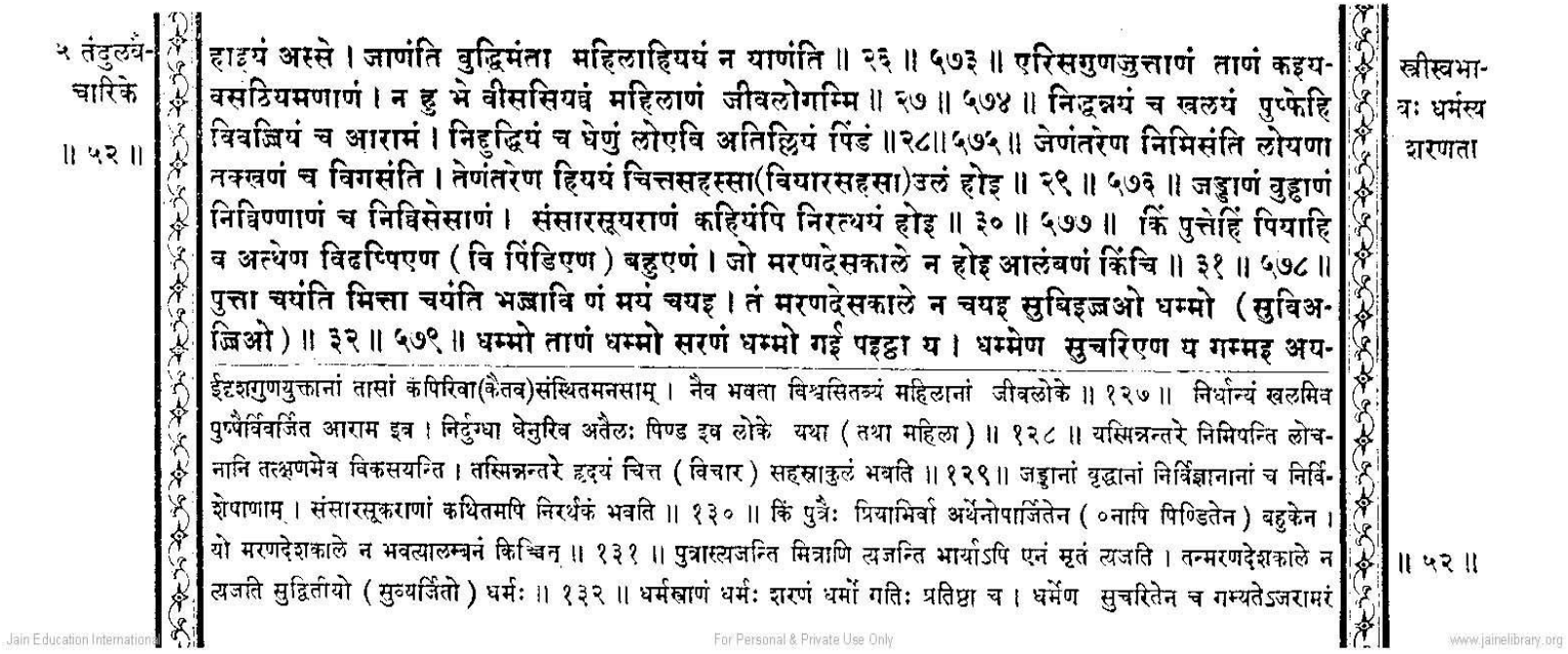
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ स्त्रिया: स्वभाव: एवं धर्मस्य शरणत्वं वर्णयते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१८] ॥१२६॥

दीप अनुक्रम [१४८]



५ तंदुलवैचारिके ॥ ५२ ॥

हाइयं अस्से । जाणंति बुद्धिमंता महिलाहिययं न याणंति ॥ २६ ॥ ५७३ ॥ एरिसगुणजुत्ताणं ताणं कइयवसठियमणाणं । न हु भे वीससियव्वं महिलाणं जीवलोगम्मि ॥ २७ ॥ ५७४ ॥ निद्धन्नयं च खलयं पुप्फेहि विवज्जियं च आरामं । निद्दुद्धियं च धेणुं लोएवि अतिल्लियं पिंडं ॥२८॥५७५॥ जेणंतरेण निमिसंति लोयणा तक्खणं च विगसंति । तेणंतरेण हिययं चित्तसहस्सा(वियारसहसा)उलं होइ ॥ २९ ॥ ५७६ ॥ जड्डाणं वुड्ढाणं निव्विण्णाणं च निव्विसेसाणं । संसारसूयराणं कहियंपि निरत्थयं होइ ॥ ३० ॥ ५७७ ॥ किं पुत्तेहिं पियाहि व अत्थेण विदप्पिएण (वि पिंडिएण) बहुएणं । जो मरणदेसकाले न होइ आलंबणं किंचि ॥ ३१ ॥ ५७८ ॥ पुत्ता चयंति मित्ता चयंति भज्जावि णं मयं चयइ । तं मरणदेसकाले न चयइ सुबिइज्जओ धम्मो (सुविअज्जिओ) ॥ ३२ ॥ ५७९ ॥ धम्मो ताणं धम्मो सरणं धम्मो गई पइट्ठा य । धम्मेण सुचरिएण य गम्मइ अय-

स्त्रीस्वभावः धर्मस्य शरणता

ईदृशगुणयुक्तानां तासां कपिरिव(कैतव)संस्थितमनसाम् । नैव भवता विश्वसितव्यं महिलानां जीवलोके ॥ १२७ ॥ निर्धान्यं खलमिव पुष्पैर्विवर्जितं आराम इव । निर्दुग्धा धेनुरिव अतैलः पिण्ड इव लोके यथा (तथा महिला) ॥ १२८ ॥ यस्मिन्नन्तरे निमिषन्ति लोचनानि तत्क्षणमेव विकसयन्ति । तस्मिन्नन्तरे हृदयं चित्त (विचार) सहस्राकुलं भवति ॥ १२९ ॥ जड्डानां वृद्धानां निर्विज्ञानानां च निर्विशेषाणाम् । संसारसूकराणां कथितमपि निरर्थकं भवति ॥ १३० ॥ किं पुत्रैः प्रियाभिर्वा अर्थेनोपार्जितेन (०नापि पिण्डितेन) बहुकेन । यो मरणदेशकाले न भवत्यालम्बनं किञ्चित् ॥ १३१ ॥ पुत्रास्त्यजन्ति मित्राणि त्यजन्ति भार्याऽपि एनं मृतं त्यजति । तन्मरणदेशकाले न त्यजति सुद्वितीयो (सुव्यर्जितो) धर्मः ॥ १३२ ॥ धर्मस्त्राणं धर्मः शरणं धर्मो गतिः प्रतिष्ठा च । धर्मेण सुचरितेन च गम्यतेऽजरामरं

॥ ५२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२८] प्रकीर्णकसूत्र-[०५] तन्दुलवैचारिक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक [१८] ||१३३--१३९||

दीप अनुक्रम [१५५--१६१]

रामरं ठाणं ॥ ३३ ॥ ५८० ॥ पीईकरो वण्णकरो भासकरो जसकरो रइकरो य । अभयकरनिव्वुइकरो (य अभयकरो। निव्वुडकरो य सयय) पारत्तविइज्जओ धम्मो॥ ३४ ॥ ५८१ ॥ अमरवरेसु अणोवमरूवं भोगोव-भोगरिद्धी य । विन्नाणनाणमेव य लब्भइ सुकएण धम्मेणं ॥ ३५ ॥ ५८२ ॥ देविंदचक्कवट्टित्तणाइं रज्जाइं इच्छिया भोगा । एयाइं धम्मलाभा फलाइं जं वावि निव्वाणं ॥ ३६ ॥ ५८३ ॥ आहारो उस्सासो संधिछि-राओ य रोमकूवाइं । पित्तं रुहिरं सुक्कं गणियं गणियप्पहाणेहिं ॥ ३७ ॥ ५८४ ॥ एयं सोउं सरीरस्स वासाणं गणिय पागडमहत्थं । मुक्खपउमस्स ईहह सम्मत्तसहस्सपत्तस्स ॥ ३८ ॥ ५८५ ॥ एयं सगडसरीरं जाइजरा-मरणवेयणाबहुलं । तह घत्तह कादं जे जह मुच्चह सव्वदुक्खाणं ॥ ३९ ॥ ५८६ ॥

॥ तन्दुलवेयालीपइण्णयं सम्मत्तं ॥ ५ ॥

स्थानम् ॥ १३३ ॥ प्रीतिकरो वर्णकरो भा:करो यश:करो रतिकरश्च अभयकरो निर्वृतिकरः । (०रश्चाभयकरो निर्वृतिकरश्च सततं) परत्र द्वितीयको धर्मः ॥ १३४ ॥ अमरवरेष्वनुपमरूपं भोगोपभोगा ऋद्धयश्च । विज्ञानं ज्ञानमेव च लभ्यते सुकृतेन धर्मेण ॥ १३५ ॥ देवेन्द्रचक्रवर्त्तित्वानि राज्यानीप्सिता भोगाः । एतानि धर्मलाभस्य फलानि यद्यापि निर्वाणम् ॥१३६॥ आहार उच्छ्वासः सन्धयः शिराश्च रोमकूपानि । पित्तं रुधिरं शुक्रं च गणितं गणितप्रधानैः ॥ १३७ ॥ एतत् श्रुत्वा शरीरस्य वर्णानां गणितं प्रकटं महार्थम् । मोक्षपद्मायेहध्वं सम्यक्त्वसहस्रपत्राय ॥ १३८ ॥ एतत् शरीरशकटं जातिजरामरणवेदनाबहुलम् । तथा यतध्वं कर्त्तुं यथा मुच्यध्वं सर्वदुःखैः ॥ १३९ ॥ इति तन्दुलवैचारिकप्रकीर्णकं समाप्तम् ॥ ५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भाग 26	तंदुलवैचारिक-प्रकीर्णकसूत्र [५] मूलं एवं संस्कृतछाया: परिसमाप्ता:

मूल संशोधकः सम्पादकश्च पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

किंचित् वैशिष्ट्य समर्पितेन सह पुन: संकलनकर्ता मुनि दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

[२९] श्री संस्तारक (प्रकीर्णकसूत्रम्-६)

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

“संस्तारक” मूलं एवं छाया

[मूलं एवं संस्कृतछाया]

[आद्य संपादकश्री]

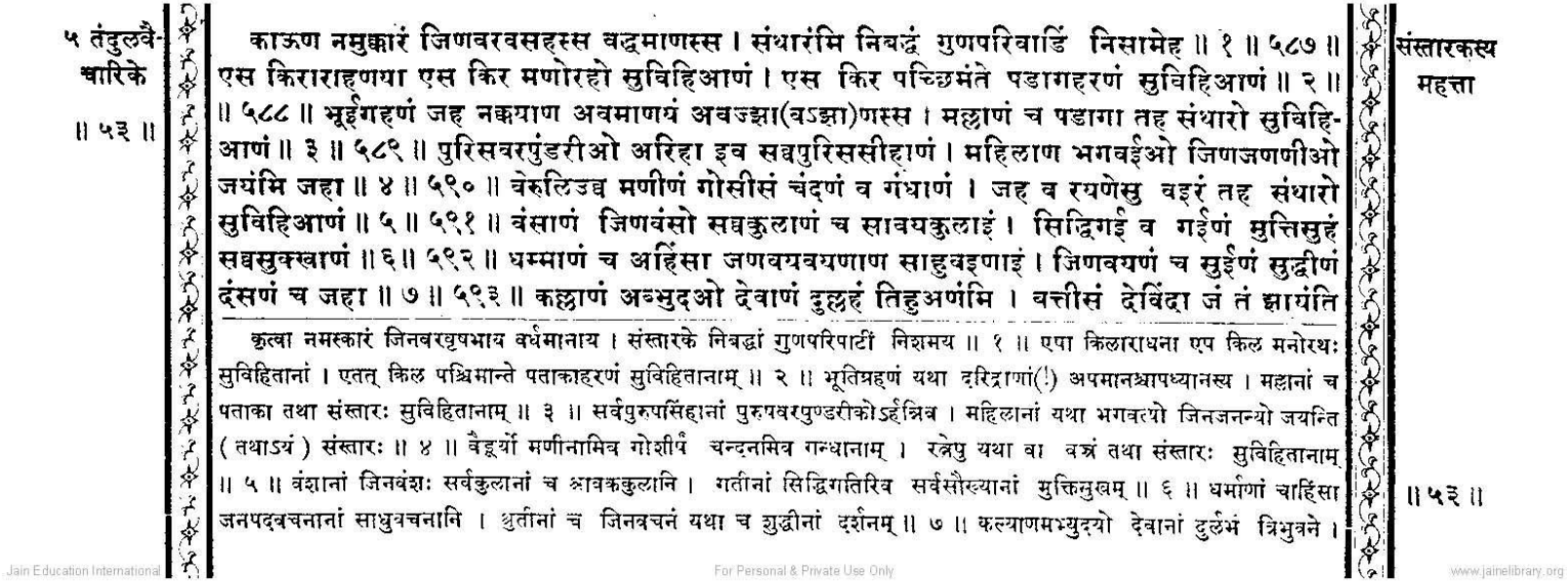
पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

पुन: संकलनकर्ता→ मुनि दीपरत्नसागर (M.Com., M.Ed., Ph.D.,श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५ ‘सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि’ श्रेणि भाग-२६

प्रत सूत्रांक ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२९] प्रकीर्णकसूत्र-[०६] संस्तारक मूलं एवं संस्कृतछाया:



५ तंदुलवै-चारिके ॥ ५३ ॥

काऊण नमुक्कारं जिणवरवसहस्स वद्धमाणस्स । संथारंमि निबद्धं गुणपरिवाडिं निसामेह ॥ १ ॥ ५८७ ॥ एस किराराहणया एस किर मणोरहो सुविहिआणं । एस किर पच्छिमंते पडागहरणं सुविहिआणं ॥ २ ॥ ॥ ५८८ ॥ भूईगहणं जह नक्खाण अवमाणयं अवज्झा(वऽझा)णस्स । मल्लाणं च पडागा तह संथारो सुविहि-आणं ॥ ३ ॥ ५८९ ॥ पुरिसवरपुंडरीओ अरिहा इव सव्वपुरिससीहाणं । महिलाण भगवईओ जिणजणणीओ जयंमि जहा ॥ ४ ॥ ५९० ॥ वेरुलिउव्व मणीणं गोसीसं चंदणं व गंधाणं । जह व रयणेसु वइरं तह संथारो सुविहिआणं ॥ ५ ॥ ५९१ ॥ वंसाणं जिणवंसो सव्वकुलाणं च सावयकुलाइं । सिद्धिगई व गईणं मुत्तिसुहं सव्वसुक्खाणं ॥ ६ ॥ ५९२ ॥ धम्माणं च अहिंसा जणवयवयणाण साहुवइणाइं । जिणवयणं च सुईणं सुद्धीणं दंसणं च जहा ॥ ७ ॥ ५९३ ॥ कल्लाणं अब्भुदओ देवाणं दुल्लहं तिहुअणंमि । वत्तीसं देविंदा जं तं झायंति

कृत्वा नमस्कारं जिनवरवृषभाय वर्धमानाय । संस्तारके निबद्धां गुणपरिपाटीं निशमय ॥ १ ॥ एषा किलाराधना एष किल मनोरथः सुविहितानां । एतत् किल पश्चिमान्ते पताकाहरणं सुविहितानाम् ॥ २ ॥ भूतिग्रहणं यथा दरिद्राणां(!) अपमानश्चापध्यानस्य । मल्लानां च पताका तथा संस्तारः सुविहितानाम् ॥ ३ ॥ सर्वपुरुषसिंहानां पुरुषवरपुण्डरीकोऽर्हन्निव । महिलानां यथा भगवत्यो जिनजनन्यो जयन्ति (तथाऽयं) संस्तारः ॥ ४ ॥ वैडूर्यो मणीनामिव गोशीर्षं चन्दनमिव गन्धानाम् । रत्नेषु यथा वा वज्रं तथा संस्तारः सुविहितानाम् ॥ ५ ॥ वंशानां जिनवंशः सर्वकुलानां च श्रावककुलानि । गतीनां सिद्धिगतिरिव सर्वसौख्यानां मुक्तिसुखम् ॥ ६ ॥ धर्माणां चाहिंसा जनपदवचनानां साधुवचनानि । श्रुतीनां च जिनवचनं यथा च शुद्धीनां दर्शनम् ॥ ७ ॥ कल्याणमभ्युदयो देवानां दुर्लभं त्रिभुवने ।

संस्तारकस्य महत्ता

॥ ५३ ॥

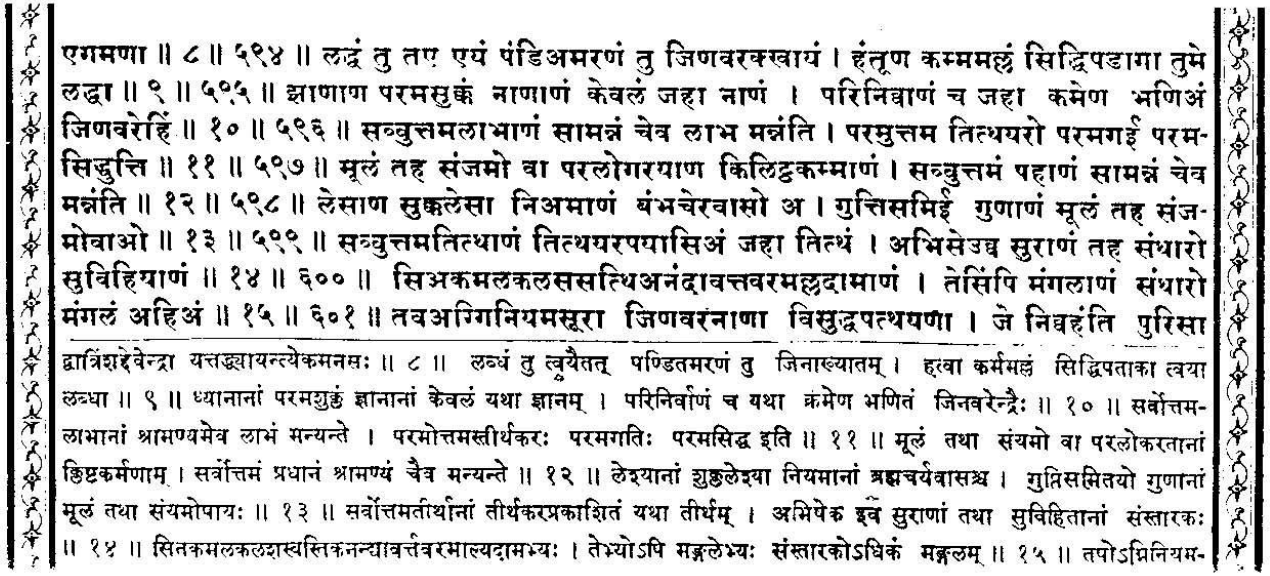
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	भगवंत वीर वंदना, अथ संस्तारकस्य महत्ता वर्णयते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२९] प्रकीर्णकसूत्र-[०६] संस्तारक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक ॥८॥

दीप अनुक्रम [८]

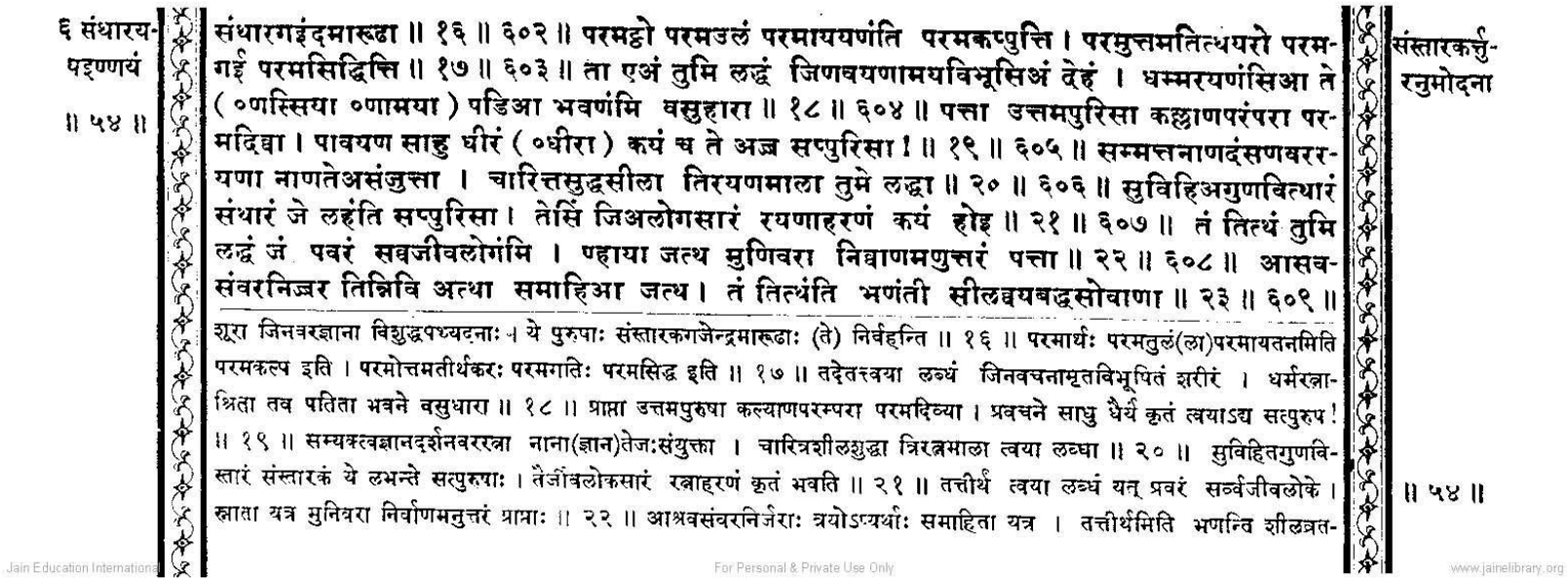


एगमणा ॥ ८ ॥ ५९४ ॥ लद्धं तु तए एयं पंडिअमरणं तु जिणवरक्खायं । हंतूण कम्ममल्लं सिद्धिपडागा तुमे लद्धा ॥ ९ ॥ ५९५ ॥ झाणाण परमसुक्कं नाणाणं केवलं जहा नाणं । परिनिव्वाणं च जहा कमेण भणिअं जिणवरेहिं ॥ १० ॥ ५९६ ॥ सव्वुत्तमलाभाणं सामन्नं चेव लाभ मन्नंति । परमुत्तम तित्थयरो परमगई परमसिद्धुत्ति ॥ ११ ॥ ५९७ ॥ मूलं तह संजमो वा परलोगरयाण किलिट्ठकम्माणं । सव्वुत्तमं पहाणं सामन्नं चेव मन्नंति ॥ १२ ॥ ५९८ ॥ लेसाण सुक्कलेसा निअमाणं बंभचेरवासो अ । गुत्तिसमिई गुणाणं मूलं तह संजमोवाओ ॥ १३ ॥ ५९९ ॥ सव्वुत्तमतित्थाणं तित्थयरपयासिअं जहा तित्थं । अभिसेउव्व सुराणं तह संथारो सुविहियाणं ॥ १४ ॥ ६०० ॥ सिअकमलकलससत्थिअनंदावत्तवरमल्लदामाणं । तेसिंपि मंगलाणं संथारो मंगलं अहिअं ॥ १५ ॥ ६०१ ॥ तवअग्गिनियमसूरा जिणवरनाणा विसुद्धपत्थयणा । जे निव्वहंति पुरिसा

द्वात्रिंशदेवेन्द्रा यत्तद्ध्यायन्त्येकमनसः ॥ ८ ॥ लब्धं तु त्वयैतत् पण्डितमरणं तु जिनाख्यातम् । हत्वा कर्ममलं सिद्धिपताका त्वया लब्धा ॥ ९ ॥ ध्यानानां परमशुक्लं ज्ञानानां केवलं यथा ज्ञानम् । परिनिर्वाणं च यथा क्रमेण भणितं जिनवरेन्द्रैः ॥ १० ॥ सर्वोत्तमलाभानां श्रामण्यमेव लाभं मन्यन्ते । परमोत्तमस्तीर्थकरः परमगतिः परमसिद्ध इति ॥ ११ ॥ मूलं तथा संयमो वा परलोकरतानां क्लिष्टकर्मणाम् । सर्वोत्तमं प्रधानं श्रामण्यं चैव मन्यन्ते ॥ १२ ॥ लेश्यानां शुक्ललेश्या नियमानां ब्रह्मचर्यवासश्च । गुप्तिसमितयो गुणानां मूलं तथा संयमोपायः ॥ १३ ॥ सर्वोत्तमतीर्थानां तीर्थकरप्रकाशितं यथा तीर्थम् । अभिषेक इव सुराणां तथा सुविहितानां संस्तारकः ॥ १४ ॥ सितकमलकलशस्वस्तिकनन्द्यावर्त्तवरमाल्यदामभ्यः । तेभ्योऽपि मङ्गलेभ्यः संस्तारकोऽधिकं मङ्गलम् ॥ १५ ॥ तपोऽग्निनियम-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| प्रत सूत्रांक ||१६|| दीप अनुक्रम [१६] | पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२९] प्रकीर्णकसूत्र-[०६] संस्तारक मूलं एवं संस्कृतछाया:



६ संथारय-पइण्णयं ॥ ५४ ॥

संथारगइंदमारूढा ॥ १६ ॥ ६०२ ॥ परमट्ठो परमउलं परमाययणंति परमकप्पुत्ति । परमुत्तमतित्थयरो परमगई परमसिद्धित्ति ॥ १७ ॥ ६०३ ॥ ता एअं तुमि लद्धं जिणवयणामयविभूसिअं देहं । धम्मरयणंसिआ ते (०णस्सिया ०णामया) पडिआ भवणंमि वसुहारा ॥ १८ ॥ ६०४ ॥ पत्ता उत्तमपुरिसा कल्लाणपरंपरा परमदिव्वा । पावयण साहु धीरं (०धीरा) कयं च ते अज्ज सप्पुरिसा ! ॥ १९ ॥ ६०५ ॥ सम्मत्तनाणदंसणवररयणा नाणतेअसंजुत्ता । चारित्तसुद्धसीला तिरयणमाला तुमे लद्धा ॥ २० ॥ ६०६ ॥ सुविहिअगुणवित्थारं संथारं जे लहंति सप्पुरिसा । तेसिं जिअलोगसारं रयणाहरणं कयं होइ ॥ २१ ॥ ६०७ ॥ तं तित्थं तुमि लद्धं जं पवरं सव्वजीवलोगंमि । पहाया जत्थ मुणिवरा निव्वाणमणुत्तरं पत्ता ॥ २२ ॥ ६०८ ॥ आसवसंवरनिज्जर तिन्निवि अत्था समाहिआ जत्थ । तं तित्थंति भणंती सीलव्वयबद्धसोवाणा ॥ २३ ॥ ६०९ ॥

शूरा जिनवरज्ञाना विशुद्धपथ्यदनाः । ये पुरुषाः संस्तारकगजेन्द्रमारूढाः (ते) निर्वहन्ति ॥ १६ ॥ परमार्थः परमतुलं(ला)परमायतनमिति परमकल्प इति । परमोत्तमतीर्थकरः परमगतिः परमसिद्ध इति ॥ १७ ॥ तदेतत्त्वया लब्धं जिनवचनामृतविभूषितं शरीरं । धर्मरत्नाश्रिता तव पतिता भवने वसुधारा ॥ १८ ॥ प्राप्ता उत्तमपुरुषा कल्याणपरम्परा परमदिव्या । प्रवचने साधु धैर्यं कृतं त्वयाऽद्य सत्पुरुष ! ॥ १९ ॥ सम्यक्त्वज्ञानदर्शनवररत्ना नाना(ज्ञान)तेजःसंयुक्ता । चारित्रशीलशुद्धा त्रिरत्नमाला त्वया लब्धा ॥ २० ॥ सुविहितगुणविस्तारं संस्तारकं ये लभन्ते सत्पुरुषाः । तैर्जीवलोकसारं रत्नाहरणं कृतं भवति ॥ २१ ॥ तत्तीर्थं त्वया लब्धं यत् प्रवरं सर्व्वजीवलोके । स्नाता यत्र मुनिवरा निर्वाणमनुत्तरं प्राप्ताः ॥ २२ ॥ आश्रवसंवरनिर्जराः त्रयोऽप्यर्थाः समाहिता यत्र । तत्तीर्थमिति भणन्ति शीलव्रत-

संस्तारकर्तुः-रनुमोदना

॥ ५४ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ संस्तारक-कर्तुः अनुमोदना क्रियते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२९] प्रकीर्णकसूत्र-[०६] संस्तारक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक ||२४||

दीप अनुक्रम [२४]

भंजिय परीसहचमूं उत्तमसंजमबलेण संजुत्ता। भुंजंति कम्मरहिआ निव्वाणमणुत्तरं रज्जं ॥२४॥६१०॥तिहुअणर-
ज्जसमाहिं पत्तोऽसि तुमं हि (पि) समयकप्पंमि(ति)। रज्जाभिसेयमउलं विउलफलं लोइ विहरंति ॥ २५ ॥६११॥
अभिनंदइ मे हिअयं तुब्भे मुक्खस्स साहणोवाओ। जं लद्धो संथारो सुविहिअ! परमत्थनित्थारो ॥ २६ ॥
॥ ६१२ ॥ देवावि देवलोए भुंजंता बहुविहाइं भोगाइं। संथारं चिंतंता आसणसयणाइं मुंचंति ॥ २७ ॥६१३॥
चंदुव पिच्छणिज्जो सूरो इव तेअसा विदिप्पंतो। धणवंतो गुणवंतो हिमवंतमहंतविक्खाओ ॥ २८ ॥ ६१४ ॥
गुत्तीसमिइउवेओ संजमतवनिअमजोगजुत्तमणो। समणो समाहिअमणो दंसणनाणे अणन्नमणो ॥ २९ ॥
॥ ६१५ ॥ मेरुव्व पव्वयाणं सयंभुरमणुव्व चेव उदहीणं। चंदो इव ताराणं तह संथारो सुविहिआणं ॥ ३० ॥
॥ ६१६ ॥ भण केरिसस्स भणिओ संथारो केरिसे व अवगासे। उक्खंपिगस्स (०भिकस्स) करणं एअं ता

च. स. १०

बद्धसोपानाः ॥ २३ ॥ भङ्क्त्वा परिषहचमूं उत्तमसंयमबलेन संयुक्ताः। भुञ्जन्ति कर्मरहिता निर्वाणमनुत्तरं राज्यं ॥ २४ ॥ त्रिभुवन-
राज्यसमार्धिं प्राप्तोऽसि त्वं हि सर्वकल्पेषु। राज्याभिषेकमतुलं विपुलफलं लोकेऽनुभूतवान् ॥ २५ ॥ अभिनन्दति मे हृदयं त्वया मोक्षस्य
साधनोपायः। यल्लब्धः संस्तारकः सुविहित! परमार्थनिस्तारः ॥ २६ ॥ देवा अपि देवलोके भुञ्जाना बहुविधान् भोगान्। संस्तारकं
चिन्तयन्त आसनशयनानि मुञ्चन्ति ॥ २७ ॥ चन्द्र इव प्रेक्षणीयः सूर्य इव तेजसा विदीप्यमानः। धनवान् गुणवान् हिमवद्वद् महान्
विख्यातः ॥ २८ ॥ गुप्तिसमितिभिरुपेतः संयमतपोनियमयोगयुक्तमनाः। श्रमणः समाहितमनाः दर्शनज्ञानयोरनन्यमनाः ॥ २९ ॥
मेरुरिव पर्वतानां स्वयम्भूरमण इव उदधीनामेव। चन्द्र इव तारकाणां तथा संस्तारकः सुविहितानाम् ॥ ३० ॥ भण कीदृशस्य भणितः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ॥३१॥ दीप अनुक्रम [३१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२९] प्रकीर्णकसूत्र-[०६] संस्तारक मूलं एवं संस्कृतछाया:

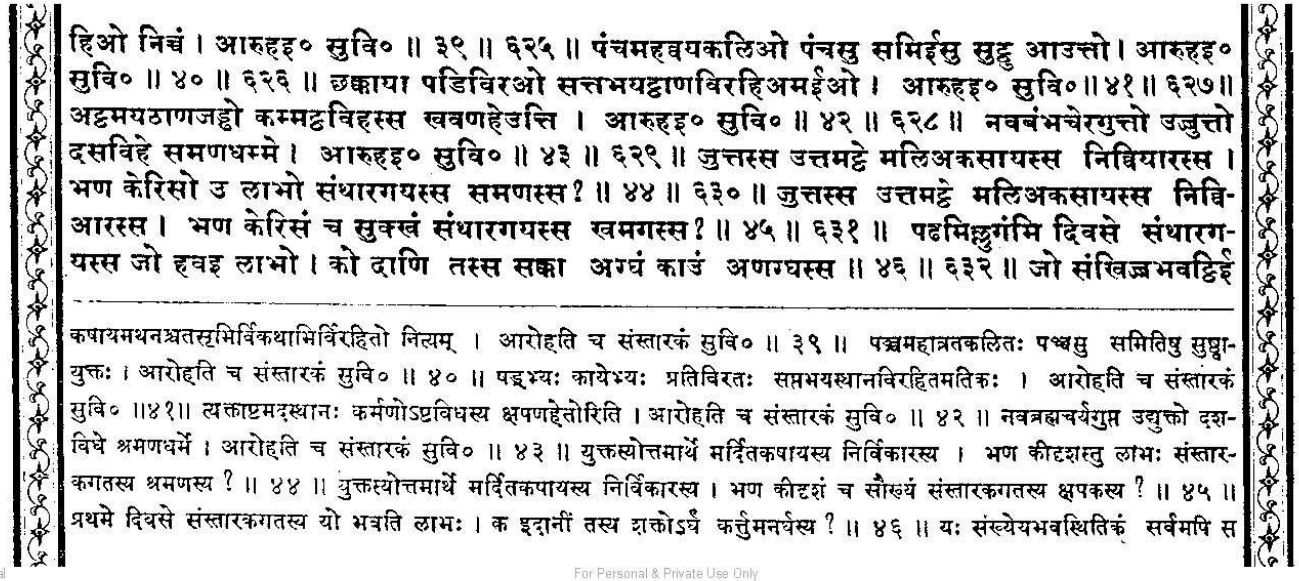
इच्छिमो नाउं ॥ ३१ ॥ ६१७ ॥ हायंति जस्स जोगा जरा य विविहा य हुंति आयंका । आरुहइ अ संथारं सुविसुद्धो तस्स संथारो ॥ ३२ ॥ ६१८ ॥ जो गारवेण मत्तो निच्छइ आलोअणं गुरुसगासे । आरुहइ अ संथारं अविसुद्धो तस्स संथारो ॥ ३३ ॥ ६१९ ॥ जो पुण पत्तब्भूओ करेइ आलोअणं गुरुसगासे । आरुहइ अ० सुवि० ॥ ३४ ॥ ६२० ॥ जो पुण दंसणमइलो सिढिलचरित्तो करेइ सामन्नं । आरु० अवि० ॥ ३५ ॥ ॥ ६२१ ॥ जो पुण दंसणसुद्धो आयचरित्तो करेइ सामन्नं । आरु० सुवि० ॥ ३६ ॥ ६२२ ॥ जो रागदोसरहिओ तिगुत्तिगुत्तो तिसल्लमयरहिओ । आरुहइ० सुवि० ॥ ३७ ॥ ६२३ ॥ तिहिं गारवेहिं रहिओ तिदंडपडिमोयगो पहिअकित्ती । आरुहइ० सुवि० ॥ ३८ ॥ ६२४ ॥ चउविहकसायमहणो चउहिं विकहाहिं विर-

संस्तारकः ? कीदृशे वाऽवकाशे ? । उत्सन्दितस्य (अनशनस्य) करणमेतत् तावदिच्छामो ज्ञातुम् ॥ ३१ ॥ हीयंते यस्य योगा जरा च विविधाश्च भवन्त्यातङ्काः । आरोहति च संस्तारकं सुविशुद्धस्तस्य संस्तारकः ॥ ३२ ॥ यो गौरवेण मत्तो नेच्छत्यालोचनां गुरोः सकाशे । आरोहति च संस्तारकं अविशुद्ध० ॥ ३३ ॥ यः पुनः पात्रभूतः करोत्यालोचनां गुरोः सकाशे । आरोहति च संस्तारकं सुविशुद्ध० ॥ ३४ ॥ यः पुनर्मलिनदर्शनः स्खलचारित्रः करोति श्रामण्यम् । आरोहति च संस्तारकं अविशुद्ध० ॥ ३५ ॥ यः पुनः शुद्धदर्शन आत्मचारित्रः करोति श्रामण्यम् । आरोहति च संस्तारकं सुवि० ॥ ३६ ॥ यो रागद्वेषरहितः त्रिगुप्तिगुप्तस्त्रिशल्यमदरहितः । आरोहति च संस्तारकं सुवि० ॥ ३७ ॥ त्रिभिर्गौरवैः रहितस्त्रिदण्डप्रतिमोचकः प्रथितकीर्तिः । आरोहति च संस्तारकं सुवि० ॥ ३८ ॥ चतुर्विध-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	संस्तारकस्य सुविशुद्धता-अविशुद्धताया: कथनं

| प्रत सूत्रांक ||३९|| दीप अनुक्रम [३९] | पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२९] प्रकीर्णकसूत्र-[०६] संस्तारक मूलं एवं संस्कृतछाया:



हिओ निचं । आरुहइ० सुवि० ॥ ३९ ॥ ६२५ ॥ पंचमहव्वयकलिओ पंचसु समिईसु सुट्ठु आउत्तो । आरुहइ० सुवि० ॥ ४० ॥ ६२६ ॥ छक्कायप डिविरओ सत्तभयट्ठाणविरहिअमईओ । आरुहइ० सुवि० ॥ ४१ ॥ ६२७ ॥ अट्ठमयठाणजहो कम्मट्ठविहस्स खवणहेउत्ति । आरुहइ० सुवि० ॥ ४२ ॥ ६२८ ॥ नवबंभचेरगुत्तो उज्जुत्तो दसविहे समणधम्मे । आरुहइ० सुवि० ॥ ४३ ॥ ६२९ ॥ जुत्तस्स उत्तमट्ठे मलिअकसायस्स निव्वियारस्स । भण केरिसो उ लाभो संथारगयस्स समणस्स? ॥ ४४ ॥ ६३० ॥ जुत्तस्स उत्तमट्ठे मलिअकसायस्स निविआरस्स । भण केरिसं च सुक्खं संथारगयस्स खमगस्स? ॥ ४५ ॥ ६३१ ॥ पढमिल्लुगंमि दिवसे संथारगयस्स जो हवइ लाभो । को दाणि तस्स सक्का अग्घं काउं अणग्घस्स ॥ ४६ ॥ ६३२ ॥ जो संखिज्जभवट्ठिई

कषायमथनश्चतसृभिर्विकथाभिर्विरहितो नित्यम् । आरोहति च संस्तारकं सुवि० ॥ ३९ ॥ पञ्चमहाव्रतकलितः पञ्चसु समितिषु सुष्ठ्वायुक्तः । आरोहति च संस्तारकं सुवि० ॥ ४० ॥ षड्भ्यः कायेभ्यः प्रतिविरतः सप्तभयस्थानविरहितमतिकः । आरोहति च संस्तारकं सुवि० ॥४१॥ त्यक्ताष्टमदस्थानः कर्मणोऽष्टविधस्य क्षपणहेतोरिति । आरोहति च संस्तारकं सुवि० ॥ ४२ ॥ नवब्रह्मचर्यगुप्त उद्युक्तो दशविधे श्रमणधर्मे । आरोहति च संस्तारकं सुवि० ॥ ४३ ॥ युक्तस्योत्तमार्थे मर्दितकषायस्य निर्विकारस्य । भण कीदृशस्तु लाभः संस्तारकगतस्य श्रमणस्य ? ॥ ४४ ॥ युक्तस्योत्तमार्थे मर्दितकषायस्य निर्विकारस्य । भण कीदृशं च सौख्यं संस्तारकगतस्य क्षपकस्य ? ॥ ४५ ॥ प्रथमे दिवसे संस्तारकगतस्य यो भवति लाभः । क इदानीं तस्य शक्तोऽर्घं कर्तुमनर्घस्य ? ॥ ४६ ॥ यः संख्येयभवस्थितिकं सर्वमपि स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	संस्तारक-श्रमणस्य को लाभ? तत् कथ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२९] प्रकीर्णकसूत्र-[०६] संस्तारक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक ||४७||

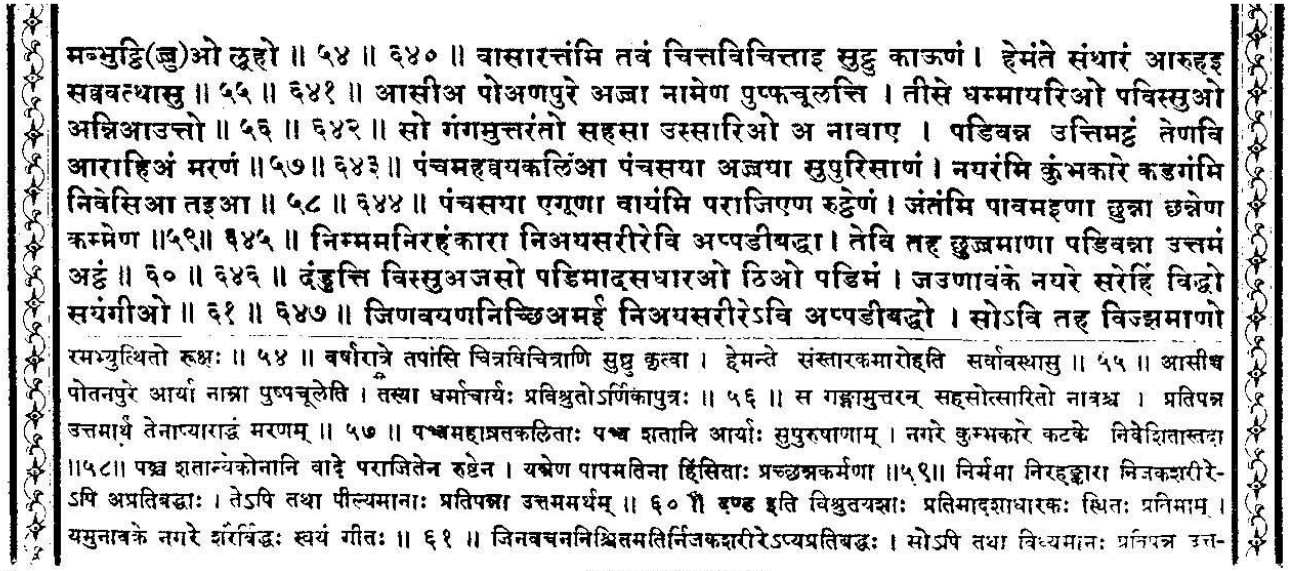
दीप अनुक्रम [४७]

सव्वंपि खवेइ सो तहिं कम्मं । अणुसमयं साहुपयं साहू वुत्तो तहिं समए ॥४७॥६३३॥ तणसंथारनिसन्नोऽवि मुणिवरो भट्ठरागमयमोहो । जं पावइ मुत्तिसुहं कत्तो तं चक्कवट्टीवि ? ॥ ४८ ॥ ६३४ ॥ तप्पु(नियपु०) रिसनाडयंमिवि न सा(जा)रई तह सहस्स(त्थ)वित्थारे । जिणवयणंमिवि सा ते हेउसहस्सोवगूढंमि ॥४९॥६३५॥ जं रागदोसमइअं सुक्खं जं होइ विसयमईयं च । अणुहवइ चक्कवट्टी न होइ तं वीअरागस्स ॥ ५० ॥ ६३६ ॥ मा होइ वासगणया न तत्थ वासाणि परिगणिज्जंति । बहवे गच्छं वुत्था जम्मणमरणं च ते खुत्ता ॥ ५१ ॥ ॥ ६३७ ॥ पच्छावि ते पयाया खिप्पं काहिंति अप्पणो पत्थं । जे पच्छिमंमि काले मरंति संथारमारूढा ॥५२॥ ॥ ६३८ ॥ नवि कारणं तणमओ संथारो नवि अ फासुआ भूमी । अप्पा खलु संथारो हवइ विसुद्धे चरित्तंमि ॥ ५३ ॥ ६३९ ॥ निच्चंपि तस्स भावुज्जुअस्स जत्थ व जहिं व संथारो । जो होइ अहक्खाओ विहार-

क्षपयति तत्र कर्म । अनुसमयं साधुपदात् साधुरुक्तस्तत्र समये ॥ ४७ ॥ तृणसंस्तारकनिषण्णोऽपि मुनिवरो भ्रष्टरागमदमोहः । यत् प्राप्नोति मुक्तिसौख्यं कुतस्तत् चक्रवर्त्त्यपि ? ॥४८॥ निजपुरुषनाटकेऽपि तथा स्वहस्तविस्तारे सा(या)रतिर्न । जिनवचनेऽपि सा ते हेतुसहस्रोपगूढे ॥ ४९ ॥ यद् रागद्वेषमयं सौख्यं यद् भवति विषयमयं च । अनुभवति चक्रवर्त्ती न भवति तद् वीतरागस्य ॥ ५० ॥ मा भूत् वर्षगणका न तत्र वर्षाणि परिगण्यन्ते । बहवो गच्छे उषिता जन्ममरणयोस्ते निमग्नाः ॥ ५१ ॥ पश्चादपि ते प्रयाताः क्षिप्रं करिष्यन्त्यात्मनः पथ्यम् । ये पश्चिमे काले म्रियन्ते संस्तारकमारूढाः ॥ ५२ ॥ नैव कारणं तृणमयः संस्तारको नैव च प्रासुका भूमिः । आत्मा खलु संस्तारको भवति विशुद्धे चारित्रे ॥ ५३ ॥ नित्यमपि तस्योद्युतभावस्य यत्र वा यदा वा संस्तारकः । यो भवति यथाख्यातो विहा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| प्रत सूत्रांक ||५४|| दीप अनुक्रम [५४] | पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२९] प्रकीर्णकसूत्र-[०६] संस्तारक मूलं एवं संस्कृतछाया:



मब्भुट्ठि(ड्ढु)ओ लूहो ॥ ५४ ॥ ६४० ॥ वासारत्तंमि तवं चित्तविचित्ताइ सुट्ठु काऊणं। हेमंते संथारं आरुहइ सव्ववत्थासु ॥ ५५ ॥ ६४१ ॥ आसीअ पोअणपुरे अज्जा नामेण पुप्फचूलत्ति । तीसे धम्मायरिओ पविस्सुओ अन्निआउत्तो ॥ ५६ ॥ ६४२ ॥ सो गंगमुत्तरंतो सहसा उस्सारिओ अ नावाए । पडिवन्न उत्तिमट्ठं तेणवि आराहिअं मरणं ॥५७॥ ६४३ ॥ पंचमहव्वयकलिआ पंचसया अज्जया सुपुरिसाणं। नयरंमि कुंभकारे कडगंमि निवेसिआ तइआ ॥ ५८ ॥ ६४४ ॥ पंचसया एगूणा वायंमि पराजिएण रुट्ठेणं। जंतंमि पावमइणा छुन्ना छन्नेण कम्मेण ॥५९॥ ६४५ ॥ निम्ममनिरहंकारा निअयसरीरेवि अप्पडीयद्धा। तेवि तह छुज्झमाणा पडिवन्ना उत्तमं अट्ठं ॥ ६० ॥ ६४६ ॥ दंडुत्ति विस्सुअजसो पडिमादसधारओ ठिओ पडिमं । जउणावंके नयरे सरेहिं विद्धो सयंगीओ ॥ ६१ ॥ ६४७ ॥ जिणवयणनिच्छिअमई निअयसरीरेऽवि अप्पडीबद्धो । सोऽवि तह विज्झमाणो

रमभ्युत्थितो रूक्षः ॥ ५४ ॥ वर्षारात्रे तपांसि चित्रविचित्राणि सुष्ठु कृत्वा । हेमन्ते संस्तारकमारोहति सर्वावस्थासु ॥ ५५ ॥ आसीच्च पोतनपुरे आर्या नाम्ना पुष्पचूलेति । तस्या धर्माचार्यः प्रविश्रुतोऽर्णिकापुत्रः ॥ ५६ ॥ स गङ्गामुत्तरन् सहसोत्सारितो नावश्च । प्रतिपन्न उत्तमार्थं तेनाप्याराद्धं मरणम् ॥ ५७ ॥ पञ्चमहाव्रतकलिताः पञ्च शतानि आर्याः सुपुरुषाणाम् । नगरे कुम्भकारे कटके निवेशितास्तदा ॥५८॥ पञ्च शतान्येकोनानि वादे पराजितेन रुष्टेन । यन्त्रेण पापमतिना हिंसिताः प्रच्छन्नकर्मणा ॥५९॥ निर्ममा निरहङ्कारा निजकशरीरेऽपि अप्रतिबद्धाः । तेऽपि तथा पील्यमानाः प्रतिपन्ना उत्तममर्थम् ॥ ६० ॥ दण्ड इति विश्रुतयशाः प्रतिमादशाधारकः स्थितः प्रतिमाम् । यमुनातटके नगरे शरैर्विद्धः स्वयं गीतः ॥ ६१ ॥ जिनवचननिश्चितमतिर्निजकशरीरेऽप्यप्रतिबद्धः । सोऽपि तथा विध्यमानः प्रतिपन्न उत्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ संस्तारक (उत्तमार्थ)आराधकस्य दृष्टान्ता:-(लघु कथा:) आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२९] प्रकीर्णकसूत्र-[०६] संस्तारक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक ||६२||

दीप अनुक्रम [६२]

५ तंदुलवैचारिके ॥ ५७ ॥

पडि० ॥ ६२ ॥ ६४८ ॥ आसी सुकोसलरिसी चाउम्मासस्स पारणादिवसे। ओरुहमाणो अ नगा खइओ मायाइ वग्घीए ॥ ६३ ॥ ६४९ ॥ धीधणिअबद्धकच्छो पच्चक्खाणम्मि सुट्ठु उवउत्तो। सो तहवि खज्जमाणो पडि० ॥ ६४ ॥ ६५० ॥ उज्जेणीनयरीए अवंतिनामेण विस्सुओ आसी । पाओवगमनिवन्नो सुसाणमज्झम्मि एगंतो ॥ ६५ ॥ ६५१ ॥ तिन्नि रयणीइ खइओ भल्लुंकी रुट्ठिया विकड्ढंती। सोवि तह खज्जमाणो पडि० ॥६६॥ ॥ ६५२ ॥ जल्लमलपंकधारी आहारो सीलसंजमगुणाणं। अज्जीरणो अ गीओ कत्तिअ अज्जो सुरवरं(णं)मि ॥ ६७ ॥ ६५३ ॥ रोहीडगंमि नयरे आहारं फासुअं गवेसंतो । कोवेण खत्तिएण य भिन्नो सत्तिप्पहारेणं ॥ ६८ ॥ ६५४ ॥ एगंतमणावाए विच्छिन्ने थंडिले चइअ देहं । सोऽवि तह भिन्नदेहो पडि० ॥ ६९ ॥ ६५५ ॥ पाडलिपुत्तंमि पुरे चंदयगुत्तस्स चेव आसीअ । नामेण धम्मसीहो चंदसिरिं सो पयहिऊणं ॥ ७० ॥ ६५६ ॥

ममर्थम् ॥ ६२ ॥ आसीत् सुकोशलर्षिः चतुर्मास्याः पारणकदिवसे । अवरोहन् नगात् खादितो मात्रा व्याघ्र्या ॥ ६३ ॥ गाढधृतिबद्धकक्षाकः प्रत्याख्याने सुष्ठु उपयुक्तः । स तथापि खाद्यमानः प्रतिपन्न उत्तममर्थम् ॥ ६४ ॥ उज्जयिनीनगर्यामवन्तिनाम्ना विश्रुत आसीत् । पादपोपगमनेन सुप्तः (निपण्णः) श्मशानमध्ये एकान्ते ॥ ६५ ॥ तिसृः रात्रीः खादितः शृगाल्या रुष्टया विकर्षयन्त्या । सोऽपि तथा खाद्यमानः प्रतिपन्न उत्तममर्थम् ॥ ६६ ॥ जल्लमलपङ्कधारक आधारः शीलसंयमगुणानाम् । अजीर्णवान् गीतार्थश्च कार्तिकार्यः सुरवणे ॥ ६७ ॥ रोहिडके नगरे आहारं प्रासुकं गवेषयन् । कोपेन च क्षत्रियेण भिन्नः शक्तिप्रहारेणं ॥६८॥ एकान्तेऽनापाते विस्तीर्णे स्थण्डिले त्यक्त्वा देहम् । सोऽपि तथा भिन्नदेहः प्रतिपन्न उत्तममर्थम् ॥ ६९ ॥ पाटलीपुत्रे पुरे चन्द्रगुप्तकस्यैव आसीत् । नाम्ना धर्मसिंहश्चन्द्रश्रि-

संस्तारकेण उत्तमार्थकारकाः ॥ ५७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२९] प्रकीर्णकसूत्र-[०६] संस्तारक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक ||७१||

दीप अनुक्रम [७१]

कुल्लउरंमि पुरवरे अह सो अब्भुट्ठिओ ठिओ धम्मे। कासीअ गिद्धपट्ठं पच्चक्खाणं विगयसोगो॥ ७१ ॥६५७॥ अह सोवि चत्तदेहो तिरिअसहस्सेहिं खज्जमाणो अ। सोऽवि तह० ॥ ७२ ॥ ६५८ ॥ पाडलिपुत्तंमि पुरे चाणक्को नाम विस्सुओ आसी। सवारंभनिअत्तो इंगिणिमरणं अह निवन्नो ॥ ७३ ॥ ६५९ ॥ अणुलोमपूअणाए अह से सत्तू जओ डहइ देहं। सो तहवि डज्झमाणो पडि० ॥ ७४ ॥ ६६० ॥ गुट्ठयपाओवगओ सुबंधुणा गोमये पलिवियंमि। डज्झंतो चाणक्को पडि० ॥ ७५ ॥ ६६१ ॥ काइंदीनयरीए राया नामेण अमयघोसुत्ति। तो सो सुअस्स रज्जं दाऊणं इह चरे धम्मे ॥ ७६ ॥ ६६२ ॥ आहिंडिऊण वसुहं सुत्तत्थविसारओ सुअरहस्सो। काइंदिं चेव पुरिं अह पत्तो विगयसोगो सो ॥ ७७ ॥ ६६३ ॥ नामेण चंडवेगो अह से पडि-

यं(भार्यां) स प्रहाय ॥ ७० ॥ कोल्लपुरे नगरे अथ सोऽभ्युत्थितः स्थितो धर्मे । अकार्षीच्च गृद्धपृष्ठं प्रत्याख्यानं विगतशोकः ॥ ७१ ॥ अथ सोऽपि त्यक्तदेहस्तिर्यक्सहस्रैः खाद्यमानः । सोऽपि तथा खाद्यमानः प्रतिपन्न उत्तममर्थम् ॥ ७२ ॥ पाटलीपुत्रे पुरे चाणक्यो नाम्ना विश्रुत आसीत् । सर्वारम्भनिवृत्त इङ्गिनीमरणमथ निषण्णः ॥ ७३ ॥ अनुलोमपूजनयाऽथ तस्य शत्रुर्दहति देहम् । स तथापि दह्यमानः प्रतिपन्न उत्तममर्थम् ॥ ७४ ॥ गोष्ठे पादपोपगतः सुबन्धुना गोमये प्रदीपिते । दह्यमानश्चाणक्यः प्रतिपन्न उत्तममर्थम् ॥ ७५ ॥ काकन्यां नगर्यां राजा नाम्नाऽमृतघोष इति । ततः स सुताय राज्यं दत्त्वा इहाचरत् धर्मम् ॥ ७६ ॥ आहिण्ड्य वसुधां सूत्रार्थविशारदः श्रुतरहस्यः । काकन्दीमेव पुरीमथ प्राप्तो विगतशोकः सः ॥ ७७ ॥ नाम्ना चण्डवेगोऽथ तस्य प्रतिच्छिनत्ति तर्कं देहम् । स तथापि छिद्य-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२९] प्रकीर्णकसूत्र-[०६] संस्तारक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक ||७८||

दीप अनुक्रम [७८]

५ तंदुलवैचारिके ॥ ५८ ॥

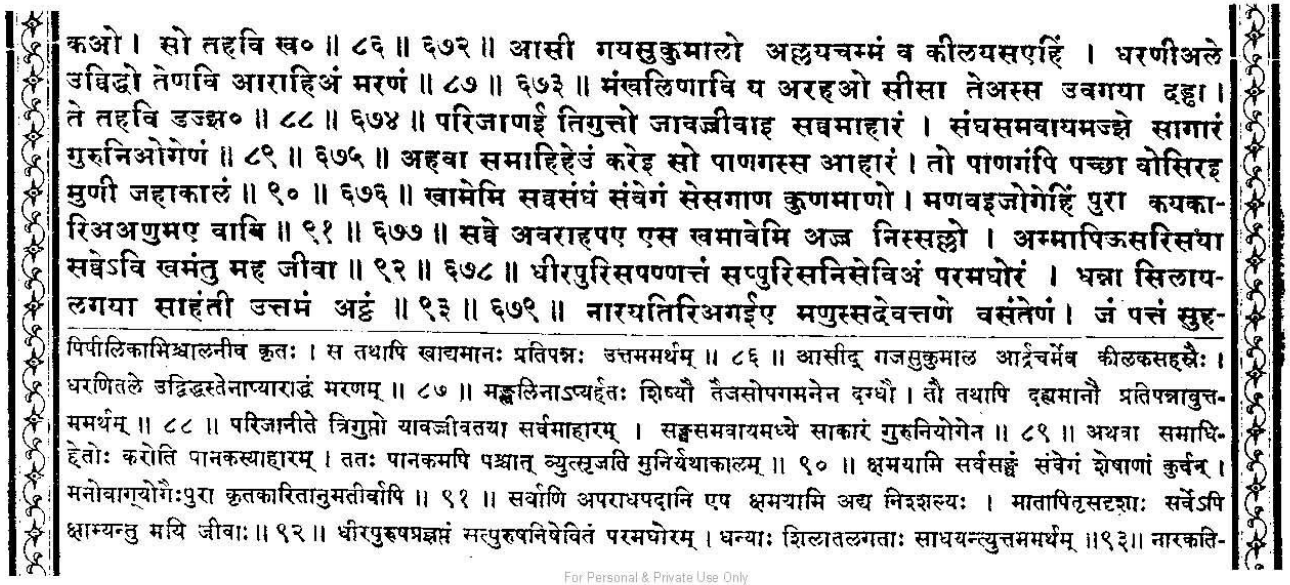
छिंदइ तयं देहं। सो तहवि छिज्जमाणो पडिवन्नो० ॥ ७८ ॥ ६६४ ॥ कोसंबीनयरीए ललिअघडा नाम विस्सुआ आसि। पाओवगमनिवन्ना बत्तीसं ते सुअरहस्सा ॥ ७९ ॥ ६६५ ॥ जलमज्झे ओगाढा नईइ पूरेण निम्ममसरीरा। तहवि हु जलदहमज्झे पडिवन्ना० ॥ ८० ॥ ६६६ ॥ आसी कुलाणनयरे राया नामेण वेसमणदासो। तस्स अमचो रिट्ठो मिच्छदिट्ठी पडिनिविट्ठो ॥ ८१ ॥ ६६७ ॥ तत्थ य मुणिवरवसहो गणिपिडगधरो तहासि आयरिओ। नामेण उसहसेणो सुअसायरपारगो धीरो ॥ ८२ ॥ ६६८ ॥ तस्सासी अ गणहरो नाणासत्थत्थगहिअपेआलो। नामेण सीहसेणो वायंमि पराजिओ रुट्ठो ॥ ८३ ॥ २६९ ॥ अह सो निराणुकंपो अग्गिं दाऊण सुविहिअपसंते। सो तहवि डज्झ० ॥ ८४ ॥ ६७० ॥ कुरुदत्तोऽवि कुमारो सिंबलिफालिव्व अग्गिणा दड्ढो। सो तहवि डज्झ० ॥ ८५ ॥ ६७१ ॥ आसी चिलाइपुत्तो सुइंगुलिआहिं चालणिव्व

मानः प्रतिपन्न उत्तममर्थम् ॥ ७८ ॥ कोशाम्ब्यां नगर्यां ललितघटानामानो विश्रुता आसीरन् । पादपोपगमने निपण्णा द्वात्रिंशत्ते शूतरहस्याः ॥ ७९ ॥ जलमध्येऽवगाढा नद्याः पूरेण निर्ममाः शरीरे । तथापि जलह्रदमध्ये प्रतिपन्ना उत्तममर्थम् ॥ ८० ॥ आसीन् कुलाण(कुणाल) नगरे राजा नाम्ना वैश्रमणदासः । तस्यामात्यो रिष्टो मिथ्यादृष्टिः प्रतिनिविष्टः ॥ ८१ ॥ तत्र च मुनिवरवृषभो गणिपिटकधरस्थाऽऽसीदाचार्यः । नाम्ना ऋषभसेनः श्रुतसागरपारगो धीरः ॥ ८२ ॥ तस्यासीच्च गणधरो गृहीतनानाशास्त्रार्थसारः । नाम्ना सिंहसेनो वादे पराजितो रुष्टः ॥८३॥ अथ स निरनुकम्पोऽग्निं दत्त्वा सुविहिते प्रशान्ते । स तथापि दह्यमानः प्रतिपन्नः उत्तममर्थम् ॥८४॥ कुरुदत्तोऽपि कुमारः शाल्मलीकाष्ठखण्ड इवाग्निना दग्धः । स तथापि दह्यमानः प्रतिपन्नः उत्तममर्थम् ॥ ८५ ॥ आसीत् चिलातिपुत्रः

संस्तारकेण उत्तमार्थकारकाः ॥ ५८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||८६|| दीप अनुक्रम [८६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२९] प्रकीर्णकसूत्र-[०६] संस्तारक मूलं एवं संस्कृतछाया:



कओ। सो तहवि स्व० ॥ ८६ ॥ ६७२ ॥ आसी गयसुकुमालो अल्लयचम्मं व कीलयसएहिं । धरणीअले उविद्धो तेणवि आराहिअं मरणं ॥ ८७ ॥ ६७३ ॥ मंखलिणावि य अरहओ सीसा तेअस्स उवगया दड्ढा। ते तहवि डज्झ० ॥ ८८ ॥ ६७४ ॥ परिजाणई तिगुत्तो जावज्जीवाइ सव्वमाहारं । संघसमवायमज्झे सागारं गुरुनिओगेणं ॥ ८९ ॥ ६७५ ॥ अहवा समाहिहेउं करेइ सो पाणगस्स आहारं। तो पाणगंपि पच्छा वोसिरइ मुणी जहाकालं ॥ ९० ॥ ६७६ ॥ खामेमि सव्वसंघं संवेगं सेसगाण कुणमाणो। मणवइजोगेहिं पुरा कयकारिअअणुमए वावि ॥ ९१ ॥ ६७७ ॥ सव्वे अवराहपए एस खमावेमि अज्ज निस्सल्लो । अम्मापिऊसरिसया सव्वेऽवि खमंतु मह जीवा ॥ ९२ ॥ ६७८ ॥ धीरपुरिसपण्णत्तं सप्पुरिसनिसेविअं परमघोरं । धन्ना सिलायलगया साहंती उत्तमं अट्ठं ॥ ९३ ॥ ६७९ ॥ नारयतिरिअगईए मणुस्सदेवत्तणे वसंतेणं। जं पत्तं सुह-

पिपीलिकाभिश्चालनीव कृतः । स तथापि खाद्यमानः प्रतिपन्नः उत्तममर्थम् ॥ ८६ ॥ आसीद् गजसुकुमाल आर्द्रचर्मेव कीलकसहस्रैः । धरणितले उद्विद्धस्तेनाप्याराद्धं मरणम् ॥ ८७ ॥ मङ्खलिनाऽप्यर्हतः शिष्यौ तैजसोपगमनेन दग्धौ । तौ तथापि दह्यमानौ प्रतिपन्नावुत्तममर्थम् ॥ ८८ ॥ परिजानीते त्रिगुप्तो यावज्जीवतया सर्वमाहारम् । सङ्घसमवायमध्ये साकारं गुरुनियोगेन ॥ ८९ ॥ अथवा समाधिहेतोः करोति पानकस्याहारम् । ततः पानकमपि पश्चात् व्युत्सृजति मुनिर्यथाकालम् ॥ ९० ॥ क्षमयामि सर्वसङ्घं संवेगं शेषाणां कुर्वन् । मनोवाग्योगैःपुरा कृतकारितानुमतीर्वापि ॥ ९१ ॥ सर्वाणि अपराधपदानि एष क्षमयामि अद्य निश्शल्यः । मातापितृसदृशाः सर्वेऽपि क्षाम्यन्तु मयि जीवाः ॥ ९२ ॥ धीरपुरुषप्रज्ञप्तं सत्पुरुषनिषेवितं परमघोरम् । धन्याः शिलातलगताः साधयन्त्युत्तममर्थम् ॥९३॥ नारकति-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	आहार-पान-ममत्व त्याग, क्षमापना आदीनां वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२९] प्रकीर्णकसूत्र-[०६] संस्तारक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक ||९४||

दीप अनुक्रम [९४]

५ तंदुलवैचारिके ॥ ५९ ॥

दुक्खं तं अणुचिंते अणन्नमणो ॥ ९४ ॥ ६८० ॥ नरएसु वेअणाओ अणोवमाओ असायबहुलाओ । कायनिमित्तं पत्तो अणंतखुत्तो बहुविहाओ ॥ ९५ ॥ ६८१ ॥ देवत्ते मणुअत्ते पराभिओगत्तणं उवगएणं । दुक्खपरिकिलेसकरी अणंतखुत्तो समणभूओ ॥ ९६ ॥ ६८२ ॥ तिरिअगइं अणुपत्तो भीममहावेअणा अणोअरया (यारा) । जम्मणमरणऽरहट्टे अणंतखुत्तो परिब्भमिओ ॥ ९७ ॥ ६८३ ॥ सुविहिअ ! अईयकाले अणंतकालं तु आगयगएणं । जम्मणमरणमणंतं अणंतखुत्तो समणुभूओ ॥ ९८ ॥ ६८४ ॥ नत्थि भयं मरणसमं जम्मणसरिसं न विज्जए दुक्खं । जम्मणमरणायंकं छिंद ममत्तं सरीराओ ॥ ९९ ॥ ६८५ ॥ अन्नं इमं सरीरं अन्नो जीवत्ति निच्छयमईओ । दुक्खपरिकिलेसकरं छिंद ममत्तं० ॥ १०० ॥ ६८६ ॥ जावंति केइ दुक्खा सारीरा माणसा व संसारे । पत्तो अणंतखुत्तो कायस्स ममत्तदोसेणं ॥ १०१ ॥ ६८७ ॥ तम्हा सरीरमाइं सव्विमतर-

आहार-त्यागः क्षामणं ममत्व-त्यागः

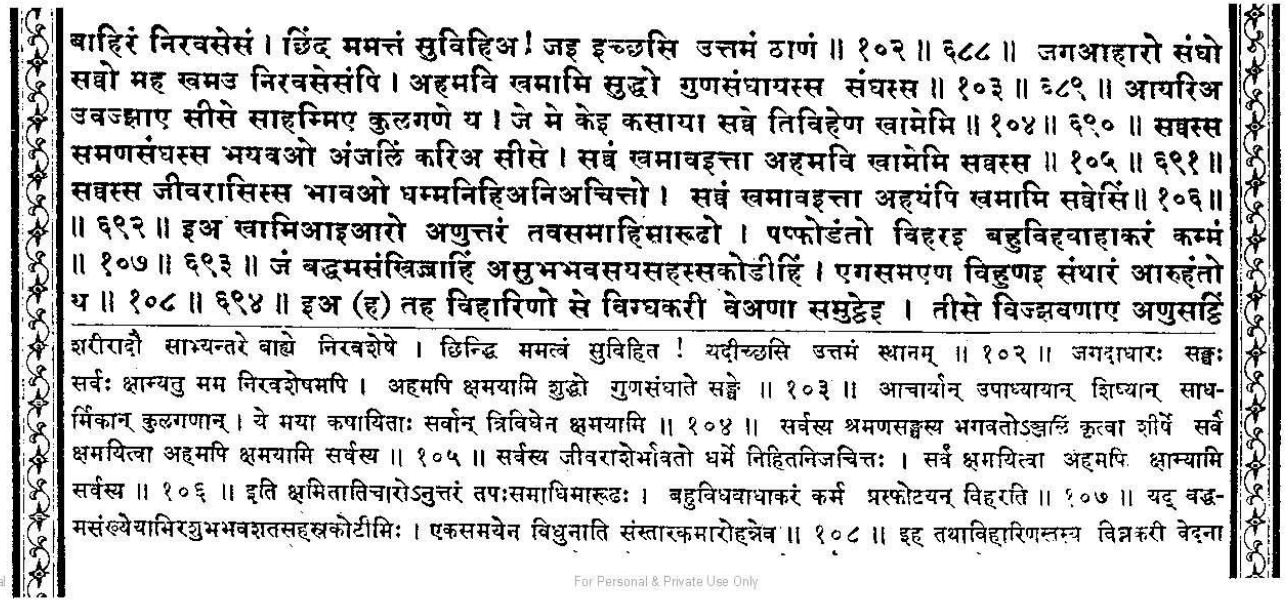
॥ ५९ ॥

यग्गत्योर्मानुष्यदेवत्वयोर्वसता । यत् प्राप्तं सुखदुःखं तदनुचिन्तयत्यनन्यमनाः ॥ ९४ ॥ नरकेषु वेदना अनुपमा असातबहुलाः । कायनिमित्तं प्राप्तोऽनन्तकृत्वो बहुविधाः ॥ ९५ ॥ देवत्वे मनुजत्वे पराभियोगत्वमुपगतेन । दुःखपरिक्लेशकरीरनन्तकृत्वः समनुभूतवान् ॥ ९६ ॥ तिर्यग्गतिमनुप्राप्तो भीमा महावेदना अनुत्ताराः । जन्ममरणारघट्टेऽनन्तकृत्वो(वेदयन्) परिभ्रान्तः ॥ ९७ ॥ सुविहित ! अतीतकालेऽनन्तकालं तु गतागताभ्यां । जन्ममरणमनन्तमनन्तकृत्वः समनुभूतवान् ॥ ९८ ॥ नास्ति भयं मरणसमं जन्मसदृशं न विद्यते दुःखम् । जन्ममरणातङ्कं छिन्द्धि ममत्वं शरीरात् ॥ ९९ ॥ अन्यदिदं शरीरमन्यो जीव इति निश्चयमतिकः । दुःखपरिक्लेशकरं छिन्द्धि ममत्वं शरीरात् ॥ १०० ॥ यावन्ति कानिचिद् दुःखानि शारीराणि मानसानि वा संसारे । प्राप्तोऽनन्तकृत्वः कायस्य ममत्वदोषेण ॥ १०१ ॥ तस्मात्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अन्यत्व, संसार आदि भावना वर्णयते

| प्रत सूत्रांक ||१०२|| दीप अनुक्रम [१०२] | पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२९] प्रकीर्णकसूत्र-[०६] संस्तारक मूलं एवं संस्कृतछाया:



बाहिरं निरवसेसं । छिंद ममत्तं सुविहिअ! जइ इच्छसि उत्तमं ठाणं ॥ १०२ ॥ ६८८ ॥ जगआहारो संघो सव्वो मह खमउ निरवसेसंपि । अहमवि खमामि सुद्धो गुणसंघायस्स संघस्स ॥ १०३ ॥ ६८९ ॥ आयरिअ उवज्झाए सीसे साहम्मिए कुलगणे य । जे मे केइ कसाया सव्वे तिविहेण खामेमि ॥ १०४ ॥ ६९० ॥ सव्वस्स समणसंघस्स भयवओ अंजलिं करिअ सीसे । सव्वं खमावइत्ता अहमवि खामेमि सव्वस्स ॥ १०५ ॥ ६९१ ॥ सव्वस्स जीवरासिस्स भावओ धम्मनिहिअनिअचित्तो । सव्वं खमावइत्ता अहयंपि खमामि सव्वेसिं ॥ १०६ ॥ ॥ ६९२ ॥ इअ खामिआइआरो अणुत्तरं तवसमाहिमारूढो । पप्फोडंतो विहरइ बहुविहवाहाकरं कम्मं ॥ १०७ ॥ ६९३ ॥ जं बद्धमसंखिज्जाहिं असुभभवसयसहस्सकोडीहिं । एगसमएण विहुणइ संथारं आरुहंतो य ॥ १०८ ॥ ६९४ ॥ इअ (ह) तह विहारिणो से विग्घकरी वेअणा समुट्ठेइ । तीसे विज्झवणाए अणुसट्ठिं

शरीरादौ साभ्यन्तरे बाह्ये निरवशेषे । छिन्द्धि ममत्वं सुविहित ! यदीच्छसि उत्तमं स्थानम् ॥ १०२ ॥ जगदाधारः सङ्घः सर्वः क्षाम्यतु मम निरवशेषमपि । अहमपि क्षमयामि शुद्धो गुणसंघाते सङ्घे ॥ १०३ ॥ आचार्यान् उपाध्यायान् शिष्यान् साधर्मिकान् कुलगणान् । ये मया कषायिताः सर्वान् त्रिविधेन क्षमयामि ॥ १०४ ॥ सर्वस्य श्रमणसङ्घस्य भगवतोऽञ्जलिं कृत्वा शीर्षे सर्वं क्षमयित्वा अहमपि क्षमयामि सर्वस्य ॥ १०५ ॥ सर्वस्य जीवराशेर्भावतो धर्मे निहितनिजचित्तः । सर्वं क्षमयित्वा अहमपि क्षाम्यामि सर्वस्य ॥ १०६ ॥ इति क्षमितातिचारोऽनुत्तरं तपःसमाधिमारूढः । बहुविधवाधाकरं कर्म प्रस्फोटयन् विहरति ॥ १०७ ॥ यद् बद्धमसंख्येयाभिरशुभभवशतसहस्रकोटीभिः । एकसमयेन विधुनाति संस्तारकमारोहन्नेव ॥ १०८ ॥ इह तथाविहारिणस्तस्य विघ्नकरी वेदना

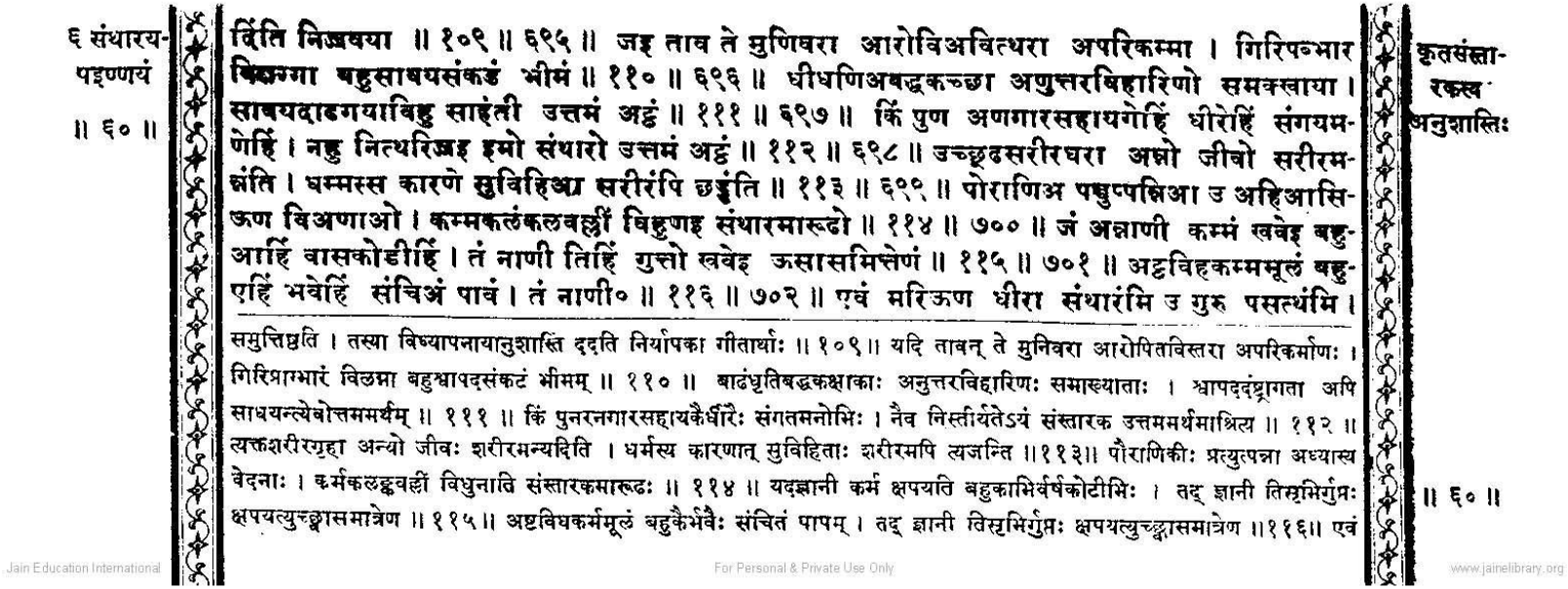
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ उत्तमार्थ-आराधना-पूर्व आचरणियविधि: कथ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२९] प्रकीर्णकसूत्र-[०६] संस्तारक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक ||१०९||

दीप अनुक्रम [१०९]



६ संथारय-पइण्णयं ॥ ६० ॥

दिंति निज्जवया ॥ १०९ ॥ ६९५ ॥ जइ ताव ते मुणिवरा आरोविअवित्थरा अपरिकम्मा । गिरिपब्भार विलग्गा बहुसाबयसंकडं भीमं ॥ ११० ॥ ६९६ ॥ धीधणिअबद्धकच्छा अणुत्तरविहारिणो समक्खाया । साबयदाढगयाविहु साहंती उत्तमं अट्ठं ॥ १११ ॥ ६९७ ॥ किं पुण अणगारसहायगेहिं धीरेहिं संगयमणेहिं । नहु नित्थरिज्जइ इमो संथारो उत्तमं अट्ठं ॥ ११२ ॥ ६९८ ॥ उच्छूढसरीरघरा अन्नो जीवो सरीरमन्नंति । धम्मस्स कारणे सुविहिआ सरीरंपि छड्डंति ॥ ११३ ॥ ६९९ ॥ पोराणिअ पच्चुप्पन्निआ उ अहिआसिऊण विअणाओ । कम्मकलंकलवल्लीं विहुणइ संथारमारूढो ॥ ११४ ॥ ७०० ॥ जं अन्नाणी कम्मं खवेइ बहुआहिं वासकोडीहिं । तं नाणी तिहिं गुत्तो खवेइ ऊसासमित्तेणं ॥ ११५ ॥ ७०१ ॥ अट्ठविहकम्ममूलं बहुएहिं भवेहिं संचिअं पावं । तं नाणी० ॥ ११६ ॥ ७०२ ॥ एवं मरिऊण धीरा संथारंमि उ गुरु पसत्थंमि ।

कृतसंस्तारकस्य अनुशास्तिः

समुत्तिष्ठति । तस्या विध्यापनायानुशास्तिं ददति निर्यापका गीतार्थाः ॥ १०९ ॥ यदि तावत् ते मुनिवरा आरोपितविस्तरा अपरिकर्माणः । गिरिप्राग्भारं विलग्ना बहुश्वापदसंकटं भीमम् ॥ ११० ॥ बाढंधृतिबद्धकक्षाकाः अनुत्तरविहारिणः समाख्याताः । श्वापददंष्ट्रागता अपि साधयन्त्येवोत्तममर्थम् ॥ १११ ॥ किं पुनरनगारसहायकैर्धीरैः संगतमनोभिः । नैव निस्तीर्यतेऽयं संस्तारक उत्तममर्थमाश्रित्य ॥ ११२ ॥ त्यक्तशरीरगृहा अन्यो जीवः शरीरमन्यदिति । धर्मस्य कारणात् सुविहिताः शरीरमपि त्यजन्ति ॥११३॥ पौराणिकीः प्रत्युत्पन्ना अध्यास्य वेदनाः । कर्मकलङ्कवल्लीं विधुनाति संस्तारकमारूढः ॥ ११४ ॥ यदज्ञानी कर्म क्षपयति बहुकाभिर्वर्षकोटीभिः । तद् ज्ञानी तिसृभिर्गुप्तः क्षपयत्युच्छ्वासमात्रेण ॥११५॥ अष्टविधकर्ममूलं बहुकैर्भवैः संचितं पापम् । तद् ज्ञानी तिसृभिर्गुप्तः क्षपयत्युच्छ्वासमात्रेण ॥११६॥ एवं

॥ ६० ॥

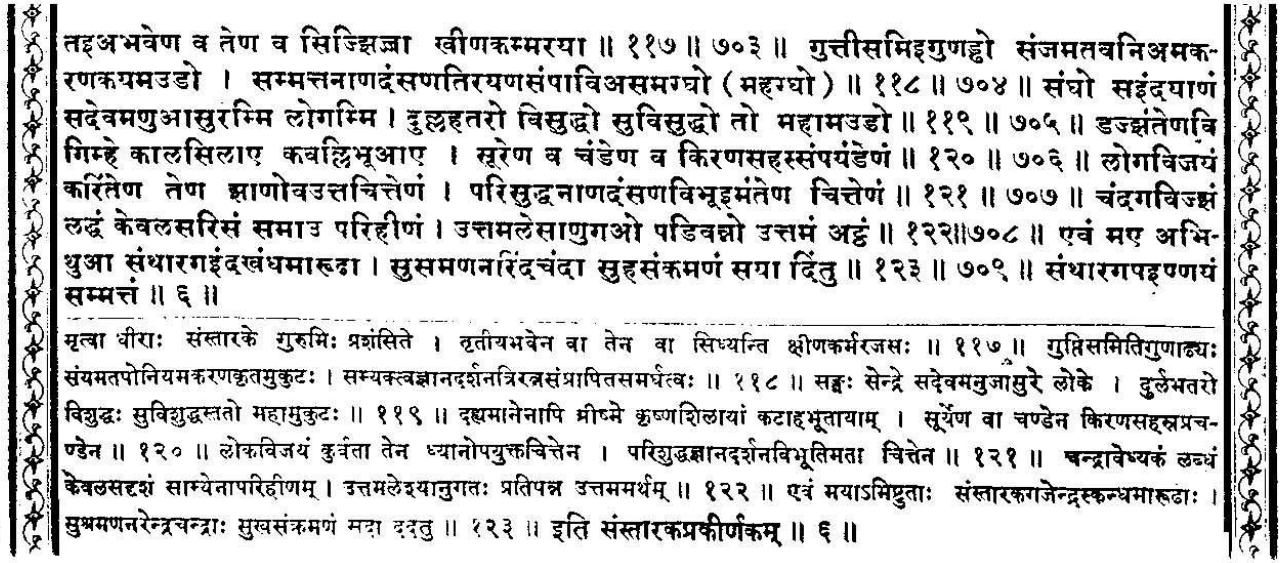
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संस्तारकस्य (उत्तमार्थ-आराधकस्य) प्राप्त आराधना-फ़लम्

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[२९] प्रकीर्णकसूत्र-[०६] संस्तारक मूलं एवं संस्कृतछाया:

प्रत सूत्रांक ||११७||

दीप अनुक्रम [११७]



तइअभवेण व तेण व सिज्झिअव्वा खीणकम्मरया ॥ ११७ ॥ ७०३ ॥ गुत्तीसमिइगुणड्ढो संजमतवनिअमकरणकयमउडो । सम्मत्तनाणदंसणतिरयणसंपाविअसमग्घो (महग्घो) ॥ ११८ ॥ ७०४ ॥ संघो सइंदघाणं सदेवमणुआसुरम्मि लोगम्मि । दुल्लहतरो विसुद्धो सुविसुद्धो तो महामउडो ॥ ११९ ॥ ७०५ ॥ डज्झंतेणवि गिम्हे कालसिलाए कवल्लिभूआए । सूरेण व चंडेण व किरणसहस्संपयंडेणं ॥ १२० ॥ ७०६ ॥ लोगविजयं करिंतेण तेण झाणोवउत्तचित्तेणं । परिसुद्धनाणदंसणविभूइमंतेण चित्तेणं ॥ १२१ ॥ ७०७ ॥ चंदगविज्झं लद्धं केवलसरिसं समाउ परिहीणं । उत्तमलेसाणुगओ पडिवन्नो उत्तमं अट्ठं ॥ १२२॥७०८ ॥ एवं मए अभिथुआ संथारगइंदखंधमारूढा । सुसमणनरिंदचंदा सुहसंकमणं सया दिंतु ॥ १२३ ॥ ७०९ ॥ संथारगपइण्णयं सम्मत्तं ॥ ६ ॥

मृत्वा धीराः संस्तारके गुरुभिः प्रशंसिते । तृतीयभवेन वा तेन वा सिध्यन्ति क्षीणकर्मरजसः ॥ ११७ ॥ गुप्तिसमितिगुणाढ्यः संयमतपोनियमकरणकृतमुकुटः । सम्यक्त्वज्ञानदर्शनत्रिरत्नसंप्रापितसमर्घत्वः ॥ ११८ ॥ सङ्घः सेन्द्रे सदेवमनुजासुरे लोके । दुर्लभतरो विशुद्धः सुविशुद्धस्ततो महामुकुटः ॥ ११९ ॥ दह्यमानेनापि ग्रीष्मे कृष्णशिलायां कटाहभूतायाम् । सूर्येण वा चण्डेन किरणसहस्रप्रचण्डेन ॥ १२० ॥ लोकविजयं कुर्वता तेन ध्यानोपयुक्तचित्तेन । परिशुद्धज्ञानदर्शनविभूतिमता चित्तेन ॥ १२१ ॥ चन्द्रावेध्यकं लब्धं केवलसदृशं साम्येनापरिहीणम् । उत्तमलेश्यानुगतः प्रतिपन्न उत्तममर्थम् ॥ १२२ ॥ एवं मयाऽभिष्टुताः संस्तारकगजेन्द्रस्कन्धमारूढाः । सुश्रमणनरेन्द्रचन्द्राः सुखसंक्रमणं सदा ददतु ॥ १२३ ॥ इति संस्तारकप्रकीर्णकम् ॥ ६ ॥

च. स. ११

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भाग 26	संस्तारक-प्रकीर्णकसूत्र [६] मूलं एवं संस्कृतछाया: परिसमाप्ता:

मूल संशोधकः सम्पादकश्च पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

किंचित् वैशिष्ट्य समर्पितेन सह पुन: संकलनकर्ता मुनि दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

“गच्छाचार” मूलं एवं छाया

[मूलं एवं संस्कृतछाया]

[आद्य संपादकश्री]

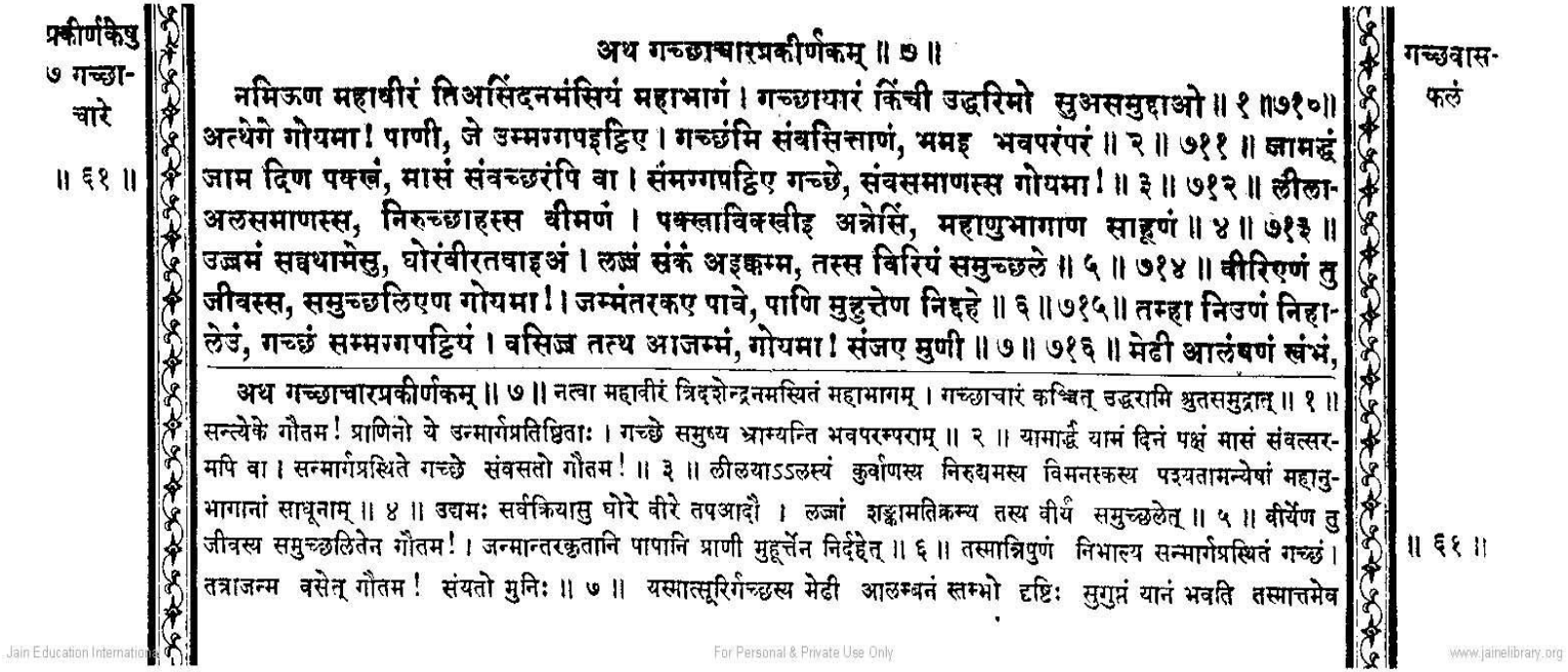
पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

पुन: संकलनकर्ता→ मुनि दीपरत्नसागर (M.Com., M.Ed., Ph.D.,श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५ ‘सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि’ श्रेणि भाग-२६

प्रत सूत्रांक ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र -[३०],प्रकीर्णकसूत्र-[०७] गच्छाचार मूलं एवं संस्कृतछाया



प्रकीर्णकेषु ७ गच्छाचारे ॥ ६१ ॥

अथ गच्छाचारप्रकीर्णकम् ॥ ७ ॥

नमिऊण महावीरं तिअसिंदनमंसियं महाभागं । गच्छायारं किंची उद्धरिमो सुअसमुद्दाओ ॥ १ ॥७१०॥ अत्थेगे गोयमा! पाणी, जे उम्मग्गपइट्ठिए । गच्छंमि संवसित्ताणं, भमइ भवपरंपरं ॥ २ ॥ ७११ ॥ जामद्धं जाम दिण पक्खं, मासं संवच्छरंपि वा । संमग्गपट्ठिए गच्छे, संवसमाणस्स गोयमा! ॥ ३ ॥ ७१२ ॥ लीला-अलसमाणस्स, निरुच्छाहस्स वीमणं । पक्खाविक्खीइ अन्नेसिं, महाणुभागाण साहूणं ॥ ४ ॥ ७१३ ॥ उज्जमं सव्वथामेसु, घोरंवीरतवाइअं । लज्जं संकं अइक्कम्म, तस्स विरियं समुच्छले ॥ ५ ॥ ७१४ ॥ वीरिएणं तु जीवस्स, समुच्छलिएण गोयमा!। जम्मंतरकए पावे, पाणि मुहुत्तेण निद्दहे ॥ ६ ॥७१५॥ तम्हा निउणं निहालेउं, गच्छं सम्मग्गपट्ठियं । वसिज्ज तत्थ आजम्मं, गोयमा! संजए मुणी ॥ ७ ॥ ७१६ ॥ मेढी आलंबणं खंभं,

अथ गच्छाचारप्रकीर्णकम् ॥ ७ ॥ नत्वा महावीरं त्रिदशेन्द्रनमस्कृतं महाभागम् । गच्छाचारं कश्चित् उद्धरामि श्रुतसमुद्रात् ॥ १ ॥ सन्त्येके गौतम! प्राणिनो ये उन्मार्गप्रतिष्ठिताः । गच्छे समुष्य भ्राम्यन्ति भवपरम्पराम् ॥ २ ॥ यामार्द्धं यामं दिनं पक्षं मासं संवत्सरमपि वा । सन्मार्गप्रस्थिते गच्छे संवसतो गौतम! ॥ ३ ॥ लीलयाऽऽलस्यं कुर्वाणस्य निरुद्यमस्य विमनस्कस्य पश्यतामन्येषां महानुभागानां साधूनाम् ॥ ४ ॥ उद्यमः सर्वक्रियासु घोरे वीरे तपआदौ । लज्जां शङ्कामतिक्रम्य तस्य वीर्यं समुच्छलेत् ॥ ५ ॥ वीर्येण तु जीवस्य समुच्छलितेन गौतम!। जन्मान्तरकृतानि पापानि प्राणी मुहूर्त्तेन निर्दहेत् ॥ ६ ॥ तस्मान्निपुणं निभाल्य सन्मार्गप्रस्थितं गच्छं। तत्राजन्म वसेत् गौतम! संयतो मुनिः ॥ ७ ॥ यस्मात्सूरिर्गच्छस्य मेढी आलम्बनं स्तम्भो दृष्टिः सुगुप्तं यानं भवति तस्मात्तमेव

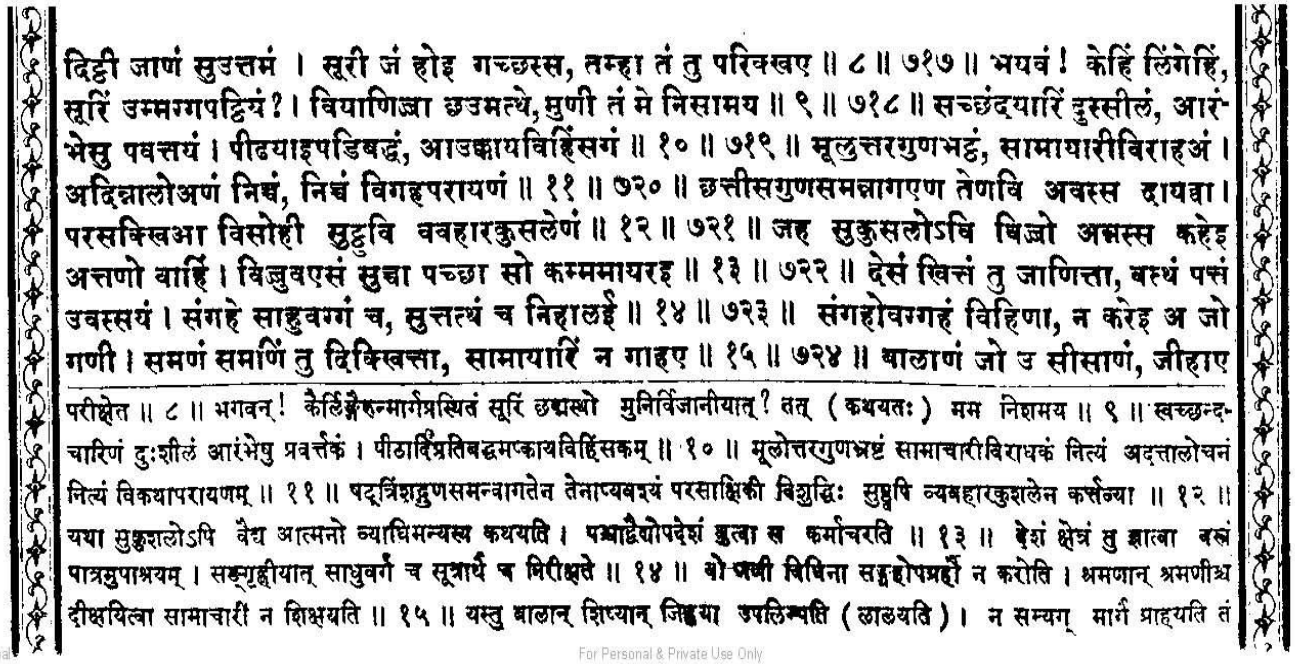
गच्छवास-फलं

॥ ६१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	भगवंत-वीर-वंदना, गच्छे संवसमानस्य फ़लम्

प्रत सूत्रांक ॥८॥ दीप अनुक्रम [८]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र -[३०],प्रकीर्णकसूत्र-[०७] गच्छाचार मूलं एवं संस्कृतछाया



दिट्ठी जाणं सुउत्तमं । सूरी जं होइ गच्छस्स, तम्हा तं तु परिक्खए ॥ ८ ॥ ७१७ ॥ भयवं ! केहिं लिंगेहिं, सूरिं उम्मग्गपट्ठियं ? । वियाणिज्जा छउमत्थे, मुणी तं मे निसामय ॥ ९ ॥ ७१८ ॥ सच्छंदयारिं दुस्सीलं, आरंभेसु पवत्तयं । पीढयाइपडिबद्धं, आउक्कायविहिंसगं ॥ १० ॥ ७१९ ॥ मूलुत्तरगुणभट्ठं, सामायारीविराहअं । अदिन्नालोअणं निच्चं, निच्चं विगहपरायणं ॥ ११ ॥ ७२० ॥ छत्तीसगुणसमन्नागएण तेणवि अवस्स दायव्वा । परसक्खिआ विसोही सुट्ठुवि ववहारकुसलेणं ॥ १२ ॥ ७२१ ॥ जह सुकुसलोऽवि विज्जो अन्नस्स कहेइ अत्तणो वाहिं । विज्जुवएसं सुच्चा पच्छा सो कम्ममायरइ ॥ १३ ॥ ७२२ ॥ देसं खित्तं तु जाणित्ता, वत्थं पत्तं उवस्सयं । संगहे साहुवग्गं च, सुत्तत्थं च निहालई ॥ १४ ॥ ७२३ ॥ संगहोवग्गहं विहिणा, न करेइ अ जो गणी । समणं समणिं तु दिक्खित्ता, सामायारिं न गाहए ॥ १५ ॥ ७२४ ॥ बालाणं जो उ सीसाणं, जीहाए

परीक्षेत ॥ ८ ॥ भगवन्! कैर्लिङ्गैरुन्मार्गप्रस्थितं सूरिं छद्मस्थो मुनिर्विजानीयात्? तत् (कथयतः) मम निशमय ॥ ९ ॥ स्वच्छन्दचारिणं दुःशीलं आरंभेषु प्रवर्त्तकं । पीठादिप्रतिबद्धमप्कायविहिंसकम् ॥ १० ॥ मूलोत्तरगुणभ्रष्टं सामाचारीविराधकं नित्यं अदत्तालोचनं नित्यं विकथापरायणम् ॥ ११ ॥ षट्त्रिंशद्गुणसमन्वागतेन तेनाप्यवश्यं परसाक्षिकी विशुद्धिः सुष्ठ्वपि व्यवहारकुशलेन कर्त्तव्या ॥ १२ ॥ यथा सुकुशलोऽपि वैद्य आत्मनो व्याधिमन्यस्य कथयति । पश्चाद्वैद्योपदेशं श्रुत्वा स कर्माचरति ॥ १३ ॥ देशं क्षेत्रं तु ज्ञात्वा वस्त्रं पात्रमुपाश्रयम् । सङ्गृह्णीयात् साधुवर्गं च सूत्रार्थं च निरीक्षते ॥ १४ ॥ यो गणी विधिना सङ्ग्रहोपग्रहौ न करोति । श्रमणान् श्रमणीश्च दीक्षयित्वा सामाचारीं न शिक्षयति ॥ १५ ॥ यस्तु बालान् शिष्यान् जिह्वया उपलिम्पति (लालयति) । न सम्यग् मार्गं ग्राहयति तं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ सूरि/गणि/आचार्यस्य स्वरुपस्य वर्णनं क्रियते

उवलिंपए । न सम्म मग्गं गाहेइ, सो सूरी जाण वेरिओ ॥१६॥ ७२५॥ जीहाए विलिहंतो न भद्दओ सारणा जहिं नत्थि । डंडेणवि ताडंतो स भद्दओ सारणा जत्थ ॥ १७ ॥ ७२६ ॥ सीसोऽवि वेरिओ सो उ, जो गुरुं नवि बोहए । पमायमइराघत्थं, सामायारीविराहयं ॥ १८ ॥ ७२७ ॥ तुम्हारिसावि मुणिवर ! पमायवसगा हवंति जइ पुरिसा । तो को अन्नो अम्हं आलंबण हुज्ज संसारे? ॥ १९ ॥ ७२८ ॥ नाणंमि दंसणम्मि अ चरणंमि य तिसुवि समयसारेसु । चोएइ जो ठवेउं गणमप्पाणं च सो य गणी ॥ २० ॥ ७२९ ॥ पिंडं उवहिं च सिज्जं उग्गमउप्पायणेसणासुद्धं । चारित्तरक्खणट्ठा सोहिंतो होइ सचरित्ती ॥ २१ ॥ ७३० ॥ अप्परिस्सावी सम्मं समपासी चेव होइ कज्जेसु । सो रक्खइ चक्खुंपिव सबालवुड्ढाउलं गच्छं ॥ २२ ॥ ७३१ ॥ सीआवेइ विहारं सुहसीलगुणेहिं जो अवुद्धीओ । सो नवरि लिंगधारी संजमजोएण निस्सारो ॥२३॥७३२॥ कुलगा-

---

सूरिं जानीहि वैरिणम् ॥ १६ ॥ जिह्वया विलिहन् यत्र स्मारणा नास्ति स न भद्रकः । दण्डेनापि ताडयन् स भद्रको यत्र स्मारणा ॥१७॥ शिष्योऽपि वैरीव स तु यो गुरुं नैव बोधयेत् । प्रमादमदिराग्रस्तं सामाचारीविराधकम् ॥ १८ ॥ युष्मादृशोऽपि मुनिवराः! प्रमादवशगा भवन्ति यदि पुरुषाः । तर्हि कोऽन्योऽस्माकमालम्बनं भवेत्संसारे ? ॥ १९ ॥ ज्ञाने दर्शने च चारित्रे च त्रिष्वपि समयसारेषु । प्रेरयति यः स्थापयितुं गणमात्मानं च स एव गणी ॥ २० ॥ पिण्डमुपधिं शय्यामुद्गमोत्पादनैषणाशुद्धम् । चारित्ररक्षणाय शोधयन् भवति सचारित्री ॥ २१ ॥ सम्यग् अपरिश्रावी कार्येषु भवत्येव समदर्शी । स रक्षति चक्षुरिव सबालवृद्धाकुलं गच्छम् ॥ २२ ॥ सादयति विहारं सुखशीलतागुणैर्योऽबुद्धिकः । स केवलं लिङ्गधारी संयमयोगेन निस्सारः ॥ २३ ॥ कुलग्रामनगरराज्यानि प्रहाय यस्तेषु करोति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||२४||

दीप अनुक्रम [२४]

मनगररज्जं पयहिअ जो तेसु कुणइ अ ममत्तं । सो नवरि लिंगधारी संजमजोएण निस्सारो ॥ २४ ॥ ७३३ ॥
विहिणा जो उ चोएइ, सुत्तं अत्थं च गाहए । सो धण्णो सो य पुण्णो य, स बंधू मुक्खदायगो ॥ २५ ॥
॥ ७३४ ॥ स एव भवसत्ताणं, चक्खुभूए विआहिए । दंसेइ जो जिणुद्दिट्ठं, अणुट्ठाणं जहट्ठिअं ॥ २६ ॥
॥ ७३५ ॥ तित्थयरसमो सूरी सम्मं जो जिणमयं पयासेइ । आणं अइक्कमंतो सो कापुरिसो न सप्पुरिसो ॥ २७ ॥ ७३६ ॥ भट्ठायारो सूरी भट्ठायाराणुवेक्खओ सूरी । उम्मग्गठिओ सूरी तिन्निवि मग्गं पणासंति ॥ २८ ॥ ७३७ ॥ उम्मग्गठिए सम्मग्गनासए जो अ सेवए सूरी । निअमेणं सो गोयम! अप्पं पाडेइ संसारे ॥ २९ ॥ ७३८ ॥ उम्मग्गठिओ इक्कोऽवि नासए भवसत्तसंघाए । तं मग्गमणुसरंते जह कुतारू नरो होइ ॥ ३० ॥ ७३९ ॥ उम्मग्गमग्गसंपट्ठिआण सूरीण गोअमा णूणं । संसारो य अणंतो होइ य सम्मग्ग-

ममत्वं स केवलं लिङ्गधारी संयमयोगेन निस्सारः ॥ २४ ॥ विधिना यस्तु प्रेरयति सूत्रमर्थं चावगाहयति । स धन्यः स च पुण्यश्च स बन्धुर्मोक्षदायकः ॥ २५ ॥ स एव भव्यसत्त्वानां चक्षुर्भूतो व्याख्यातः । दर्शयति यो जिनोद्दिष्टमनुष्ठानं यथास्थितम् ॥ २६ ॥ तीर्थकरसमः सूरिर्यो जिनमतं प्रकाशयति । आज्ञामतिक्राम्यन् स कापुरुषो न सत्पुरुषः ॥ २७ ॥ भ्रष्टाचारः सूरिर्भ्रष्टाचाराणामुपेक्षकः सूरिः । उन्मार्गस्थितः सूरिरन्योऽपि मार्गं प्रणाशयन्ति ॥ २८ ॥ उन्मार्गस्थितान् सन्मार्गनाशकान् यस्तु सेवते सूरीन् । नियमेन स गौतम! आत्मानं पातयति संसारे ॥ २९ ॥ उन्मार्गस्थित एकोऽपि नाशयति भव्यसत्त्वसङ्घातान् । तं मार्गमनुसरतो यथा कुतारको नरो भवति ॥ ३० ॥ उन्मार्गामार्गसंप्रस्थितानां सूरीणां गौतम! नूनम् । संसारश्चानन्तो भवत्येव सन्मार्गनाशकानाम् ॥ ३१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नासीणं ॥३१॥७४०॥ सुद्धं सुसाहुमग्गं कहमाणो ठवइ तइयपक्खंमि। अप्पाणं इयरो पुण गिहत्थधम्माओ चुकेति ॥३२॥ ७४१ ॥ जइवि न सक्कं काउं सम्मं जिणभासिजं अणुट्ठाणं। तो सम्मं भासिज्जा जह भणिअं खीणरागेहिं ॥ ३३ ॥ ७४२ ॥ ओसन्नोऽवि विहारे कम्मं सोहेइ सुलभबोही अ। चरणकरणं विसुद्धं उववूहिंतो परूविंतो ॥ ३४ ॥७४३॥ सम्मग्गमग्गसंपट्ठिआण साहूण कुणइ वच्छल्लं। ओसहभेसज्जेहि अ सयमन्नेणं तु कारेई ॥ ३५ ॥ ७४४ ॥ भूए अत्थि भविस्संति केइ तेलुक्कनमिअकमजुअला। जेसिं परहिअकरणेक्कबद्धलक्खाण वोलिही कालो ॥ ३६ ॥ ७४५ ॥ तीआणागयकाले केई होहिंति गोअमा! सूरी। जेसिं नामग्गहणेवि हुज्ज नियमेण पच्छित्तं ॥ ३७ ॥ ७४६ ॥ जओ-सयरीभवंति अणधिक्खयाइ जह भिच्चवाहणा लोए। पडिपुच्छसोहिनोअण तम्हा उ गुरू सया भयइ ॥३८॥७४७॥ जो उप्पमायदोसेणं, आलस्सेणं तहेव य।

शुद्धं सुसाधुमार्गं कथयन् स्थापयति तृतीयपक्षे। आत्मानं इतरः पुनर्गृहस्थधर्माद्भ्रश्यति ॥ ३२ ॥ यद्यपि न शक्यं कर्तुं सम्यग् जिनभाषितमनुष्ठानम्। तथाऽपि सम्यग् भाषेत यथा भणितं क्षीणरागैः ॥ ३३ ॥ अवसन्नोऽपि विहारे कर्म शोधयति सुलभबोधिश्च। चरणकरणं विशुद्धं उपबृंहयन् प्ररूपयंश्च ॥ ३४ ॥ सन्मार्गमार्गसंप्रस्थितानां साधूनां करोति वात्सल्यम्। औषधभैषज्यैश्च स्वयमन्येन तु कारयेत् ॥ ३५ ॥ भूताः सन्ति भविष्यन्ति केऽपि त्रैलोक्यनतक्रमयुगलाः। येषां परहितकरणैकबद्धलक्षाणां व्यतिव्रजति कालः ॥ ३६ ॥ ॥ ३६ ॥ अतीतानागतकालयोः केचिद्भविष्यन्ति गौतम! सूरयः। येषां नामग्रहणेऽपि भवति नियमेन प्रायश्चित्तम् ॥ ३७ ॥ यतः— अनपेक्षया यथा लोके भृत्यवाहनानि स्वैरीभवन्ति तथा प्रतिपृच्छाशुद्धिनोदना (विना शिष्याः) तस्माद्गुरुं सदा भजेत् ॥ ३८ ॥ यस्तु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||३९|| दीप अनुक्रम [३९]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र -[३०],प्रकीर्णकसूत्र-[०७] गच्छाचार मूलं एवं संस्कृतछाया

सीसवग्गं न चोएइ, तेण आणा विराहिआ ॥ ३९ ॥ ७४८ ॥ संखेवेण मए सोम्म!, वण्णिअं गुरुलक्खणं । गच्छस्स लक्खणं धीर!, संखेवेणं निसामय ॥ ४० ॥ ७४९ ॥ गीयत्थे जे सुसंविग्गे, अणालसी दढव्वए । अक्खलियचरित्ते सययं, रागद्दोसविवज्जए ॥ ४१ ॥ ७५० ॥ निट्ठविअअट्ठमयठाणे, सुसिअकसाए जिइंदिए । विहरिज्जा तेण सद्धिं तु, छउमत्थेणवि केवली ॥ ४२ ॥ ७५१ ॥ जे अणहिअपरमत्था, गोअमा! संजया भवे । तम्हा ते विवज्जिज्जा, दोग्गईपंथदायगे ॥ ४३ ॥ ७५२ ॥ गीअत्थस्स वयणेणं, विसं हलाहलं पिबे । निव्विकप्पो य भक्खिज्जा, तक्खणे जं समुद्दवे ॥ ४४ ॥ ७५३ ॥ परमत्थओ विसं णो तं, अमयरसायणं खु तं । निव्विग्घं जं न तं मारे, मओवि अमयस्समो ॥ ४५ ॥ ७५४ ॥ अगीअत्थस्स वयणेणं, अमयंपि न घुंटए । जेण नो तं भवे अमयं, जं अगीयत्थदेसियं ॥ ४६ ॥ ७५५ ॥ परमत्थओ न तं अमयं, विसं हालाहलं

प्रमाददोषेण आलस्येन तथैव च । शिष्यवर्गं न नोदयति तेनाज्ञा विराद्धा ॥ ३९ ॥ सङ्क्षेपेण मया सौम्य ! वर्णितं गुरोर्लक्षणम् । गच्छस्य लक्षणं धीर ! संक्षेपेण निशमय ॥ ४० ॥ गीतार्थो यः सुसंविग्नोऽनालस्यो दृढव्रतः । अस्खलितचारित्रः सततं रागद्वेषविवर्जकः ॥ ४१ ॥ निष्ठिताष्टमदस्थानः शोषितकषायो जितेन्द्रियः । विहरेत्तेन छद्मस्थेनापि सार्द्धं तु केवली ॥ ४२ ॥ येऽनधीतपरमार्था गौतम ! संयता भवेयुः । तस्मात् तान् दुर्गतिपथदायका इति विवर्जयेत् ॥ ४३ ॥ गीतार्थस्य वचनेन हालाहलं विषं पिबेत् । तत्क्षणे यत्समुपद्रवेत्तन्निर्विकल्पश्च भक्षयेत् ॥ ४४ ॥ परमार्थतो विषं न तत् अमृतरसायनमेव तत् । निर्विघ्नं यन्न तन्मारयेत् मृतोऽप्यमृतसमः ॥ ४५ ॥ अगीतार्थस्य वचनेनामृतमपि न पिबेत् । येन न तद्भवेदमृतं यदगीतार्थेन दिष्टम् ॥ ४६ ॥ परमार्थतो न तदमृतं विषं हालाहलमेव तत् ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	गीतार्थ-महिमा वर्णयते

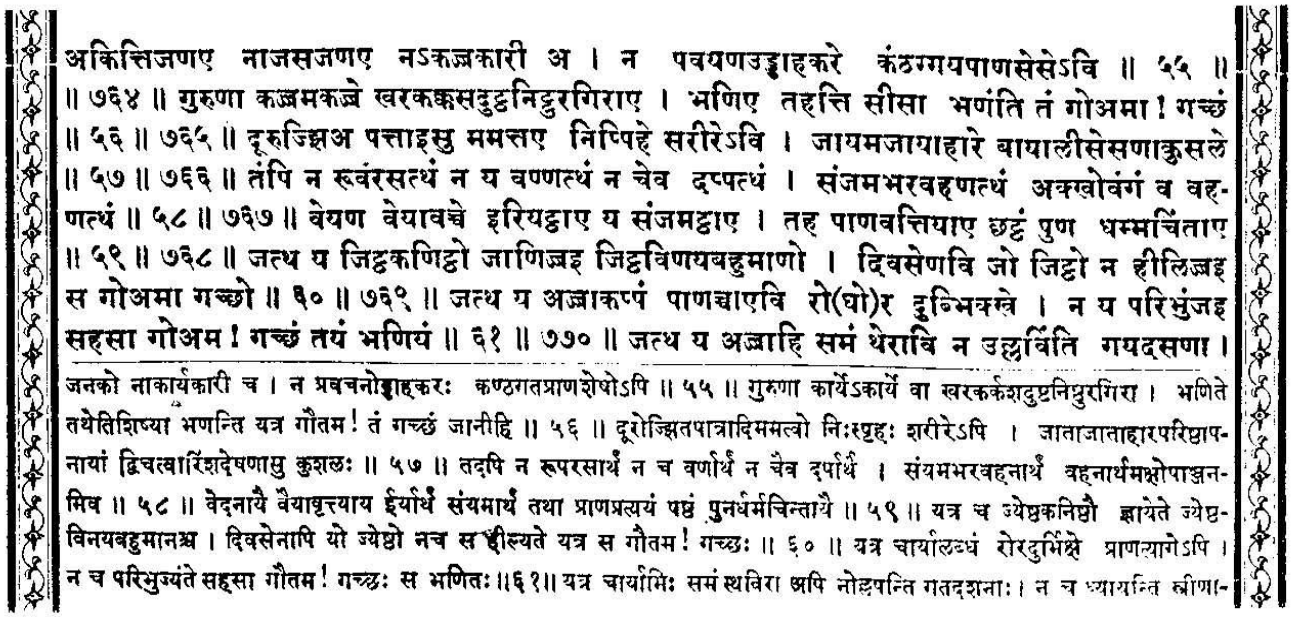
खु तं । न तेण अजरामरो हुज्जा, तक्खणा निहणं वए ॥ ४७ ॥ ७५६ ॥ अगीअत्थकुसीलेहिं, संगं तिविहेण वोसिरे । मुक्खमग्गसिमे विग्घं, पहंमी तेणगे जहा ॥ ४८ ॥ ७५७ ॥ पज्जलियं हुयवहं दट्ठुं, निस्संको तत्थ पवेसिउं । अत्ताणं निद्दहिज्जाहि, नो कुसीलस्स अल्लिए ॥ ४९ ॥ ७५८ ॥ पजलंति जत्थ धगधगधगस्स गुरुणावि चोइए सीसा । रागद्दोसेण विन्नुणसएण तं गोअम ! न गच्छं ॥ ५० ॥ ७५९ ॥ गच्छो महाणुभावो तत्थ वसंताण निज्जरा विउला । सारणवारणचोअणमाईहिं न दोसपडिवत्ती ॥ ५१ ॥ ७६० ॥ गुरुणो छंदणुवित्ती सुविणीए जिअपरीसहे धीरे। णवि थद्धे णवि लुद्धे णवि गारविए न विगहसीले ॥ ५२ ॥७६१॥ खंते दंते गुत्ते मुत्ते वेरग्गमग्गमल्लीणे । दसविहसामायारीआवस्सगसंजमुज्जुत्ते ॥ ५३ ॥ ७६२ ॥ खर-फरुसकक्कसाएऽणिट्ठदुट्ठाइ निट्ठुरगिराए । निब्भच्छणनिद्धाडणमाईहिं न जे पउस्संति ॥५४॥७६३॥ जे अ न

न तेनाजरामरो भवेत्तत्क्षणे निधनं व्रजेत् ॥ ४७ ॥ अगीतार्थकुशीलैः सङ्गं त्रिविधेन व्युत्सृजेत् । मोक्षमार्गस्येमे विघ्नाः पथि स्तेना यथा ॥ ४८ ॥ प्रज्वलितं हुतवहं दृष्ट्वा निःशङ्कस्तत्र प्रवेशय । आत्मानं निर्दहेत् नैव कुशीलमाश्रयेत् ॥ ४९ ॥ प्रज्वलन्ति यत्र धगध-गधगेति गुरुणाऽपि नोदिते शिष्याः । रागद्वेषाभ्यां व्यनुशयाभ्यां स गौतम! गच्छो न ॥ ५० ॥ गच्छो महानुभावस्तत्र वसतां निर्जरा विपुला । स्मारणावारणानोदनादिभिर्न दोषप्रतिपत्तिः ॥ ५१ ॥ गुरुच्छन्दोऽनुवृत्तिः सुविनीतो जितपरीषहो धीरः । नैव स्तब्धो नैव लुब्धो नैव गौरवितो न विकथाशीलः ॥ ५२ ॥ क्षान्तो दान्तो गुप्तो मुक्तो वैराग्यमार्गमाश्रितः । दशविधसामाचार्यावश्यकसंयमोद्युक्तः ॥ ५३ ॥ खरपरुषकर्कशयाऽनिष्टदुष्टया निष्ठुरगिरा । निर्भर्त्सननिर्घाटनादिभिर्न यः प्रद्विष्यति ॥ ५४ ॥ यश्च नाकीर्त्तिजनको नायशो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ गच्छस्य स्वरुपम् कथयते

प्रत सूत्रांक ॥५५॥ दीप अनुक्रम [५५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र -[३०],प्रकीर्णकसूत्र-[०७] गच्छाचार मूलं एवं संस्कृतछाया



अकित्तिजणए नाजसजणए नऽकज्जकारी अ । न पवयणउड्डाहकरे कंठग्गयपाणसेसेऽवि ॥ ५५ ॥
॥ ७६४ ॥ गुरुणा कज्जमकज्जे खरकक्कसदुट्ठनिट्ठुरगिराए । भणिए तहत्ति सीसा भणंति तं गोअमा ! गच्छं
॥ ५६ ॥ ७६५ ॥ दूरुज्झिअ पत्ताइसु ममत्तए निप्पिहे सरीरेऽवि । जायमजायाहारे बायालीसेसणाकुसले
॥ ५७ ॥ ७६६ ॥ तंपि न रूवंरसत्थं न य वण्णत्थं न चेव दप्पत्थं । संजमभरवहणत्थं अक्खोवंगं व वह-
णत्थं ॥ ५८ ॥ ७६७ ॥ वेयण वेयावच्चे इरियट्ठाए य संजमट्ठाए । तह पाणवत्तियाए छट्ठं पुण धम्मचिंताए
॥ ५९ ॥ ७६८ ॥ जत्थ य जिट्ठकणिट्ठो जाणिज्जइ जिट्ठविणयबहुमाणो । दिवसेणवि जो जिट्ठो न हीलिज्जइ
स गोअमा गच्छो ॥ ६० ॥ ७६९ ॥ जत्थ य अज्जाकप्पं पाणच्चाएवि रो(घो)र दुब्भिक्खे । न य परिभुंजइ
सहसा गोअम ! गच्छं तयं भणियं ॥ ६१ ॥ ७७० ॥ जत्थ य अज्जाहि समं थेरावि न उल्लविंति गयदसणा ।

जनको नाकार्यकारी च । न प्रवचनोड्डाहकरः कण्ठगतप्राणशेषोऽपि ॥ ५५ ॥ गुरुणा कार्येऽकार्ये वा खरकर्कशदुष्टनिष्ठुरगिरा । भणिते तथेतिशिष्या भणन्ति यत्र गौतम ! तं गच्छं जानीहि ॥ ५६ ॥ दूरोज्झितपात्रादिममत्वो निःस्पृहः शरीरेऽपि । जाताजाताहारपरिष्ठाप-
नायां द्विचत्वारिंशदेषणासु कुशलः ॥ ५७ ॥ तदपि न रूपरसार्थं न च वर्णार्थं न चैव दर्पार्थं । संयमभरवहनार्थं वहनार्थमक्षोपाङ्गन-
मिव ॥ ५८ ॥ वेदनायै वैयावृत्त्याय ईर्यार्थं संयमार्थं तथा प्राणप्रत्ययं षष्ठं पुनर्धर्मचिन्तायै ॥ ५९ ॥ यत्र च ज्येष्ठकनिष्ठौ ज्ञायेते ज्येष्ठ-
विनयबहुमानश्च । दिवसेनापि यो ज्येष्ठो नच सहील्यते यत्र स गौतम ! गच्छः ॥ ६० ॥ यत्र चार्यालब्धं घोरदुर्भिक्षे प्राणत्यागेऽपि ।
न च परिभुज्यते सहसा गौतम ! गच्छः स भणितः ॥६१॥ यत्र चार्याभिः समं स्थविरा अपि नोल्लपन्ति गतदशनाः । न च ध्यायन्ति स्त्रीणा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ गच्छ-स्वरुप-मध्ये आर्या-संसर्गस्य दोषा: वर्णयते

न य झायंति थीणं अंगोवंगाइं तं गच्छं ॥ ६२ ॥ ७७१ ॥ वज्जेह अप्पमत्ता अज्जासंसग्गि अग्गिविसस-
रिसी । अज्जाणुचरो साहू लहइ अकित्तिं खु अचिरेण ॥ ६३ ॥ ७७२ ॥ थेरस्स तवस्सियस्स व बहुसुयस्स
व पमाणभूअस्स । अज्जासंसग्गीए जणजंपणयं हविज्जाहि ॥ ६४ ॥ ७७३ ॥ किं पुण तरुणो अबहुस्सुओ अ
ण यऽविहु विगिट्ठतवचरणो । अज्जासंसग्गीए जणजंपणयं न पाविज्जा ? ॥ ६५ ॥ ७७४ ॥ जइवि सयं
थिरचित्तो तहावि संसग्गिलद्धपसराए । अग्गिसमीवेव घयं विलिज्ज चित्तं खु अज्जाए ॥ ६६ ॥ ७७५ ॥
सव्वत्थ इत्थिवग्गंमि अप्पमत्तो सया अवीसत्थो । नित्थरइ बंभचेरं तव्विवरीओ न नित्थरइ ॥ ६७ ॥ ७७६ ॥
सव्वत्थेसु विमुत्तो साहू सव्वत्थ होइ अप्पवसो । सो होइ अणप्पवसो अज्जाणं अणुचरंतो उ ॥ ६८ ॥ ७७७ ॥
खेलपडिअमप्पाणं न तरइ जह मच्छिआ विमोएउं । अज्जाणुचरो साहू न तरइ अप्पं विमोएउं ॥ ६९ ॥
॥ ७७८ ॥ साहुस्स नत्थि लोए अज्जासरिसी हु बंधणे उवमा । धम्मेण सह ठवंतो न य सरिसो जाण असि-

मङ्गोपाङ्गानि स गच्छः ॥ ६२ ॥ वर्जयताऽप्रमत्ता आर्यासंसर्गमग्निविषसदृशम् । आर्यानुचरः साधुर्लभतेऽकीर्त्तिं खल्वचिरेण ॥ ६३ ॥
स्थविरस्य तपस्विनो बहुश्रुतस्य प्रमाणभूतस्यापि । आर्यासंसर्ग्या जनजल्पनं भवेत् ॥ ६४ ॥ किं पुनस्तरुणोऽबहुश्रुतश्च न चैव विकृष्ट-
तपश्चरणः । आर्यासंसर्ग्या जनजल्पनं न प्राप्नुयात् ? ॥ ६५ ॥ यद्यपि स्वयं स्थिरचित्तस्तथाऽपि संसर्गीलब्धप्रसरायाः । अग्नेः समीपे घृत-
मिव विलीयेत चित्तमार्यायाः ॥ ६६ ॥ सर्वत्र स्त्रीवर्गेऽप्रमत्तः सदाऽविश्वस्तः । निस्तरति ब्रह्मचर्यं तद्विपरीतो न निस्तरति ॥ ६७ ॥
सर्वार्थेषु विमुक्तः साधुः सर्वत्र भवत्यात्मवशः । स भवत्यनात्मवश आर्याणामनुचरंस्तु ॥ ६८ ॥ श्लेष्मपतितमात्मानं यथा मक्षिका विमो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लेसो ॥ ७० ॥ ७७९ ॥ वायामित्तेणवि जत्थ भट्ठचरित्तस्स निग्गहं विहिणा । बहुलद्धिजुअस्सावि कीरइ गुरुणा तयं गच्छं ॥ ७१ ॥ ७८० ॥ जत्थ य सन्निहिउक्खउआहडमाईण नामगहणेऽवि । पूईकम्मा भीआ आउत्ता कप्पतिप्पेसु ॥ ७२ ॥ ७८१ ॥ मउए निहुअसहावे हासदवविवज्जिए विगहमुक्के । असमंजसमकरिंते गोअरभूमट्ठ विहरंति ॥ ७३ ॥ ७८२ ॥ मुणिणं नाणाभिग्गह दुक्करपच्छित्तमणुचरंताणं । जायइ चित्तचमक्कं देविंदाणंपि तं गच्छं ॥ ७४ ॥ ७८३ ॥ पुढवि-दग-अगणि-मारुअ-वणप्फइ-तसाण विविहजीवाणं । मरणंतेवि न पीडा कीरइ मणसा तयं गच्छं ॥ ७५ ॥ ७८४ ॥ खज्जूरिपत्तभुंजेण, जो पमज्जे उवस्सयं । नो दया तस्स जीवेसु, सम्मं जाणाहि गोयमा ! ॥ ७६ ॥ ७८५ ॥ जत्थ य बाहिरपाणिस्स बिंदूमित्तंपि गिम्ह-

---

चयितुं न शक्नोति तथाऽऽर्यानुचरः साधुर्न शक्नोत्यात्मानं विमोचयितुम् ॥ ६९ ॥ आर्यासदृशी साधोर्बन्धने लोके उपमा नास्त्येव । धर्मेण सह स्थापयन् न च सदृशोऽलेपं च तं जानीहि ॥७०॥ यत्र वाङ्मात्रेणापि भ्रष्टचारित्रस्य बहुलब्धियुक्तस्यापि । विधिना निग्रहो गुरुणा (यत्र) क्रियते स गच्छः ॥७१॥ यत्र च संनिध्युपस्कृताहृतादीनां नामग्रहणेऽपि पूतिकर्मभीताः कल्पत्रेषेष्वायुक्ताः ॥ ७२ ॥ मृदुको निभृत-स्वभावो हास्यनर्मविवर्जितो विग्रहमुक्तः । असमञ्जसमकुर्वन् गोचरभूम्यष्टकेन विहरति ॥ ७३ ॥ मुनीनां नानाभिग्रहान् दुष्करप्रायश्चित्तं चानुचरताम् । देवेन्द्राणामपि चित्तचमत्कारो जायते यत्र स गच्छः ॥ ७४ ॥ पृथ्वीदकाग्निमारुतवनस्पतित्रसानां विविधजीवानां । मरणान्तेऽपि न पीडा क्रियते मनसा यत्र स गच्छः ॥ ७५ ॥ खर्जूरीपत्रमुञ्जेन यः प्रमार्जयेदुपाश्रयम् । गौतम ! तस्य जीवेषु दया नेति सम्यग् जानीहि ॥ ७६ ॥ यत्र च बाह्यपानकस्य बिन्दुमात्रमपि ग्रीष्मादिषु । तृष्णाशोषितप्राणा मरणेऽपि मुनयो न गृह्णन्ति ॥ ७७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

माईसु । तण्हासोसिअपाणा मरणेऽवि मुणी न गिण्हंति ॥ ७७ ॥ ७८६ ॥ इच्छिज्जइ जत्थ सया बीअपएणावि फासुयं उदयं । आगमविहिणा निउणं गोअम! गच्छं तयं भणियं ॥ ७८ ॥ ७८७ ॥ जत्थ य सूल विसूइअ अन्नयरे वा विचित्तमायंके । उप्पन्ने जलणुज्जालणाइ न करेइ तं गच्छं ॥ ७९ ॥ ७८८ ॥ बीअपएणं सारूविगाइसद्दाइमाइएहिं च । कारिंती जयणाए गोयम! गच्छं तयं भणियं ॥ ८० ॥ ७८९ ॥ पुप्फाणं बीआणं तयमाईणं च विविहदव्वाणं । संघट्टणपरिआवण जत्थ न कुज्जा तयं गच्छं ॥ ८१ ॥ ७९० ॥ हासं खेड्डा कंदप्पं नाहियवायं न कीरए जत्थ । धावणडेवणलंघणममकारावण्णउच्चरणं ॥ ८२ ॥ ७९१ ॥ जत्थित्थीकरफरिसं अंतरिअं कारणेऽवि उप्पन्ने । दिट्ठीविसदित्तग्गी विसं व वज्जिज्जए गच्छे ॥ ८३ ॥ ॥ ७९२ ॥ बालाए वुड्ढाए नत्तुय दुहिआए अहव भइणीए । न य कीरइ तणुफरिसं गोअम! गच्छं तयं

इष्यते यत्र च सदा द्वितीयपदेनापि प्रासुकमुदकम् । आगमविधिना निपुणं गौतम! गच्छः स भणितः ॥ ७८ ॥ यत्र च शूलविशूचिकादौ अन्यतरस्मिन् वा विचित्रे आतङ्के उत्पन्ने ज्वलनोज्ज्वलनादि न करोति स गच्छः ॥७९॥ द्वितीयपदेन सारूपिकादिश्राद्धादिकैश्च । कारयन्ति यतनया गौतम! गच्छः स भणितः ॥ ८० ॥ पुष्पाणां बीजानां त्वगादीनां च विविधद्रव्याणाम् । सङ्घट्टनपरितापने यत्र न कुर्यात् स गच्छः ॥ ८१ ॥ हास्यं क्रीडाकन्दर्पौ नास्तिकवादश्च यत्र न क्रियते धावनप्लवनलङ्घनानि ममकारावर्णोच्चारणं च ॥ ८२ ॥ यत्रान्तरितोऽपि स्त्रीकरस्पर्शः कारणेऽप्युत्पन्ने । वर्ज्यते दृष्टिविषदीप्ताग्निरिव विषवच्च स गच्छः ॥८३॥ बालाया वृद्धाया नप्त्रीर्दुहितुरथवा भगिन्याः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||८४||

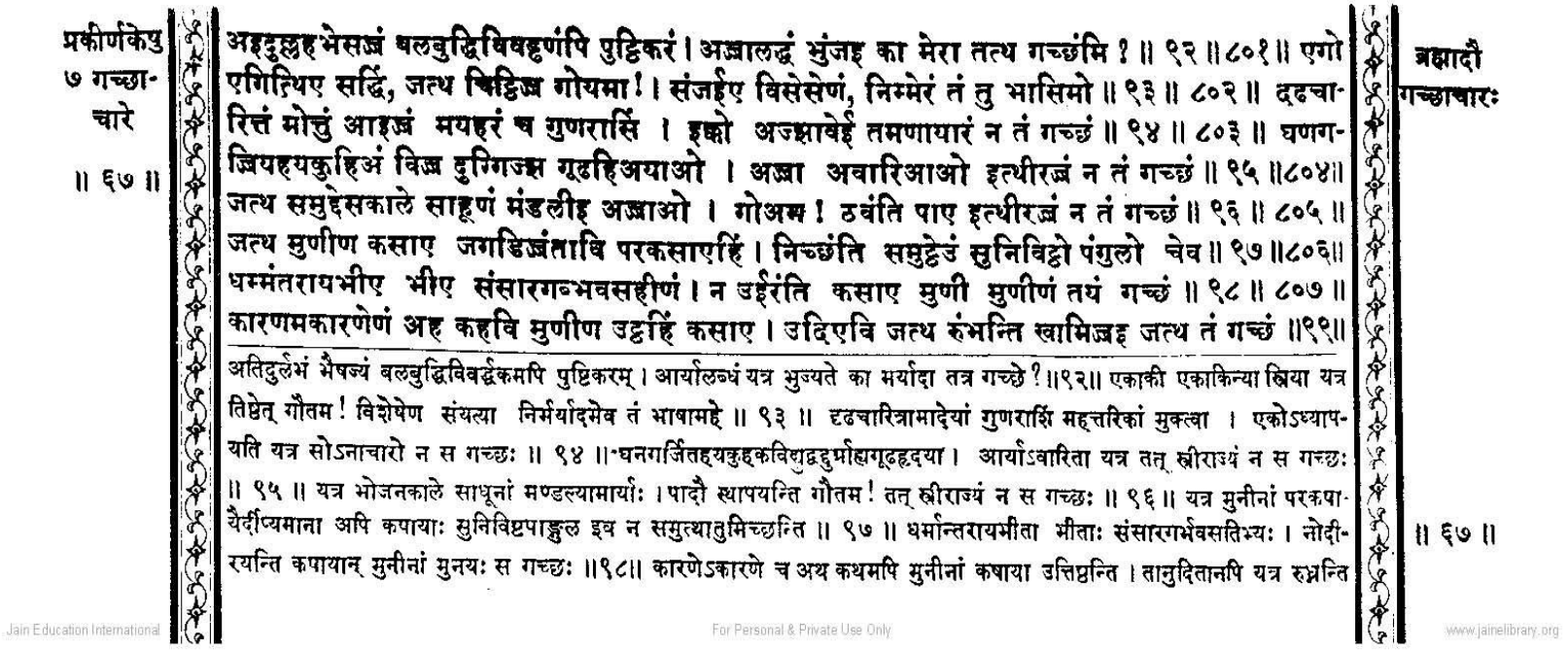
दीप अनुक्रम [८४]

भणियं ॥ ८४ ॥ ७९३ ॥ जत्थित्थीकरफरिसं लिंगी अरिहावि सयमवि करिज्जा। तं निच्छयओ गोअम! जाणिज्जा मूलगुणभट्ठं ॥ ८५ ॥ ७९४ ॥ कीरइ बीअपएणं सुत्तमभणियं न जत्थऽविहिणा उ। उप्पन्ने पुण कज्जे दिक्खाआयंकमाईए ॥ ८६ ॥ ७९५ ॥ मूलगुणेहि विमुक्कं बहुगुणकलिअंपि लद्धिसंपण्णं। उत्तमकुलेऽवि जायं निद्धाडिज्जइ तयं गच्छं ॥ ८७ ॥ ७९६ ॥ जत्थ हिरण्णसुवण्णे धणधण्णे कंसतंबफलिहाणं। सयणाण आसणाण य झुसिराणं चेव परिभोगो ॥ ८८ ॥ ७९७ ॥ जत्थ य वारडिआणं तस्स(तेकू)डिआणं च तह य परिभोगो। मोत्तुं सुक्किलवत्थं का मेरा तत्थ गच्छम्मि ? ॥८९॥७९८॥ जत्थ हिरण्णसुवण्णं हत्थेण परागयं(णगं)पि नो छिप्पे। कारणसमप्पिअंपि हु निमिसखणद्धंपि तं गच्छं ॥ ९० ॥ ७९९ ॥ जत्थ य अज्जालद्धं पडिगहभाई विविहमुवगरणं। परिभुंजइ साहूहिं तं गोअम! केरिसं गच्छं ? ॥ ९१ ॥ ८०० ॥

न च क्रियते तनुस्पर्शो गौतम! स गच्छो भणितः ॥ ८४ ॥ यत्र स्त्रीकरस्पर्शं लिङ्गी अर्हन्नपि स्वयमपि कुर्यात् । गौतम ! निश्चयतस्तं मूलगुणभ्रष्टं जानीयाः ॥ ८५ ॥ क्रियते द्वितीयपदेन सूत्रेऽभणितं न यत्राविधिना । उत्पन्ने पुनर्दीक्षाऽऽतङ्कादिके कार्ये ॥ ८६ ॥ मूलगुणैर्विमुक्तं बहुगुणकलितमपि लब्धिसंपन्नम् । उत्तमकुलेऽपि जातं निर्धाटयति स गच्छः ॥ ८७ ॥ यत्र हिरण्यसुवर्णयोर्धनधान्ययोः कांस्यताम्रस्फटिकानाम् । शयनानामासनानां च शुषिराणां चैव परिभोगः ॥ ८८ ॥ यत्र च रङ्गयुक्तवस्त्राणां भरतादियुक्तानां च तथा च परिभोगः । मुक्त्वा शुक्लं वस्त्रं का मर्यादा तत्र गच्छे ? ॥८९॥ यत्र हिरण्यसुवर्णं परकीयमपि कारणे समापतितेऽपि । निमेषक्षणार्द्धमपि न स्पृशेत् स गच्छः ॥ ९० ॥ यत्र चार्यालब्धं प्रतिग्रहाद्यपि विविधमुपकरणम् । साधुभिः परिभुज्यते स गौतम! कीदृशो गच्छः ? ॥ ९१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ॥९२॥ दीप अनुक्रम [९२]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र -[३०],प्रकीर्णकसूत्र-[०७] गच्छाचार मूलं एवं संस्कृतछाया



प्रकीर्णकेषु ७ गच्छाचारे ॥ ६७ ॥

अइदुल्लहभेसज्जं बलबुद्धिविवड्ढणंपि पुट्ठिकरं। अज्जालद्धं भुंजइ का मेरा तत्थ गच्छंमि ? ॥ ९२ ॥८०१॥ एगो एगित्थिए सद्धिं, जत्थ चिट्ठिज्ज गोयमा! । संजईए विसेसेणं, निम्मेरं तं तु भासिमो ॥ ९३ ॥ ८०२ ॥ दढचारित्तं मोचुं आइज्जं मयहरं च गुणरासिं । इक्को अज्झावेई तमणायारं न तं गच्छं ॥ ९४ ॥ ८०३ ॥ घणगज्जियहयकुहिअं विज्ज दुग्गिज्झ गूढहिअयाओ । अज्जा अवारिआओ इत्थीरज्जं न तं गच्छं ॥ ९५ ॥८०४॥ जत्थ समुद्देसकाले साहूणं मंडलीइ अज्जाओ । गोअम ! ठवंति पाए इत्थीरज्जं न तं गच्छं ॥ ९६ ॥ ८०५ ॥ जत्थ मुणीण कसाए जगडिज्जंतावि परकसाएहिं । निच्छंति समुट्ठेउं सुनिविट्ठो पंगुलो चेव ॥ ९७ ॥८०६॥ धम्मंतरायभीए भीए संसारगब्भवसहीणं । न उईरंति कसाए मुणी मुणीणं तयं गच्छं ॥ ९८ ॥ ८०७ ॥ कारणमकारणेणं अह कहवि मुणीण उट्ठहिं कसाए । उदिएवि जत्थ रुंभन्ति खामिज्जइ जत्थ तं गच्छं ॥९९॥

अतिदुर्लभं भैषज्यं बलबुद्धिविवर्द्धकमपि पुष्टिकरम् । आर्यालब्धं यत्र भुज्यते का मर्यादा तत्र गच्छे ?॥९२॥ एकाकी एकाकिन्या स्त्रिया यत्र तिष्ठेत् गौतम! विशेषेण संयत्या निर्मर्यादमेव तं भाषामहे ॥ ९३ ॥ दृढचारित्रामादेयां गुणराशिं महत्तरिकां मुक्त्वा । एकोऽध्यापयति यत्र सोऽनाचारो न स गच्छः ॥ ९४ ॥ घनगर्जितहयकुहकविगुद्गदुर्ग्राह्यगूढहृदया। आर्याऽवारिता यत्र तत् स्त्रीराज्यं न स गच्छः ॥ ९५ ॥ यत्र भोजनकाले साधूनां मण्डल्यामार्याः । पादौ स्थापयन्ति गौतम! तत् स्त्रीराज्यं न स गच्छः ॥ ९६ ॥ यत्र मुनीनां परकषायैर्दीप्यमाना अपि कषायाः सुनिविष्टपाङ्गुल इव न समुत्थातुमिच्छन्ति ॥ ९७ ॥ धर्मान्तरायभीता भीताः संसारगर्भवसतिभ्यः । नोदीरयन्ति कषायान् मुनीनां मुनयः स गच्छः ॥९८॥ कारणेऽकारणे च अथ कथमपि मुनीनां कषाया उत्तिष्ठन्ति । तानुदितानपि यत्र रुन्धन्ति

ब्रह्मादौ गच्छाचारः

॥ ६७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

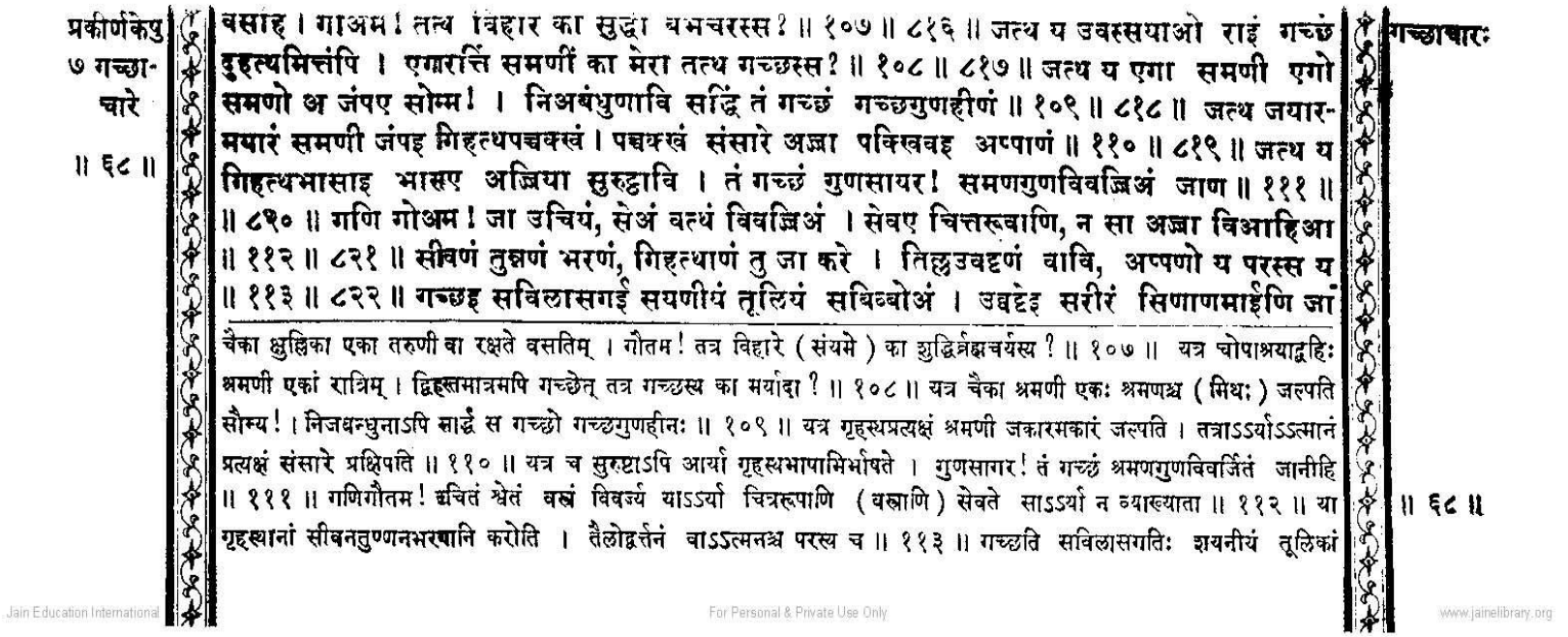
	गच्छ-स्वरूप वर्णनं मध्ये गच्छ-मर्यादाया: अभावस्य आर्या/साध्वी आश्रित कारणानि दर्शयते (गच्छ के स्वरुप का वर्णन करते करते बिचमे सूत्रकारश्री ने "साध्वीओ के कारण से" गच्छ की मर्यादा कैसे नही रहती, उस बात का वर्णन यहा बताया है)

॥ ८०८ ॥ सीलतवदाणभावण चउविहधम्मंतरायभयभीए । जत्थ बहू गीअत्थे गोअम! गच्छं तयं भणियं ॥ १०० ॥ ८०९ ॥ जत्थ य गोयम! पंचण्ह कहवि सूणाण इक्कमवि हुज्जा । तं गच्छं तिविहेणं वोसिरिय वइज्ज अन्नत्थ ॥ १०१ ॥ ८१० ॥ सूणारंभपवत्तं गच्छं वेसुज्जलं न सेविज्जा । जं चारित्तगुणेहिं उज्जलं तं तु सेविज्जा ॥ १०२ ॥ ८११ ॥ जत्थ य मुणिणो कयविक्कयाइं कुव्वंति संजमुव्भट्ठा । तं गच्छं गुणसायर! विसं व दूरं परिहरिज्जा ॥ १०३ ॥ ८१२ ॥ आरंभेसु पसत्ता सिद्धंतपरम्मुहा विसयगिद्धा । मोत्तुं मुणिणो गोअम! वसिज्ज मज्झे सुविहिआणं ॥ १०४ ॥ ८१३ ॥ तम्हा सम्मं निहालेउं, गच्छं सम्मग्गपट्ठिअं । वसिज्जा पक्ख मासं वा, जावज्जीवं तु गोयमा ॥ १०५ ॥ ८१४ ॥ कुड्डो वुड्ढो तहा सेहो, जत्थ रक्खे उवस्सयं । तरुणो वा जत्थ एगागी, का मेरा तत्थ भासिमो? ॥ १०६ ॥ ८१५ ॥ जत्थ य एगा खुड्डी एगा तरुणी उ रक्खए

क्षाम्यते च यत्र स गच्छः ॥ ९९ ॥ शीलतपोदानभावनारूपचतुर्विधधर्मान्तरायभयभीताः । यत्र बहवो गीतार्थाः गौतम ! गच्छः स भणितः ॥ १०० ॥ यत्र च गौतम! कथमपि पञ्चानां शूनानामेकमपि भवेत् । तं गच्छं त्रिविधेन व्युत्सृज्यान्यत्र व्रजेत् ॥ १०१ ॥ शूनारम्भप्रवृत्तं गच्छं वेपोज्वलं न सेवेत । यश्चारित्रगुणैरुज्वलस्तमेव सेवेत ॥ १०२ ॥ यत्र च मुनयः क्रयविक्रयादि कुर्वन्ति संयमोद्भ्रष्टाः । तं गच्छं गुणसागर! विषवद्दूरं परिहरेत् ॥ १०३ ॥ आरम्भेषु प्रसक्तान् सिद्धान्तपराङ्मुखान् विषयगृद्धान् । मुनीन् मुक्त्वा गौतम! सुविहितानां मध्ये वसेत् ॥ १०४ ॥ तस्मात्सम्यग् निभाल्य गच्छं सन्मार्गप्रस्थितम् । वसेत् पक्षं मासं वा यावज्जीवमेव वा गौतम! ॥ १०५ ॥ क्षुल्लको वृद्धस्तथा शैक्षो यत्र रक्षेदुपाश्रयम् । तरुणो वा यत्रैकाकी कां मर्यादां तत्र भाषामहे ? ॥ १०६ ॥ यत्र

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आगम (३०)	“गच्छाचार” – प्रकीर्णकसूत्र-७ (मूलं+संस्कृतछाया) ---------- मूलं [१०७]----------
प्रत सूत्रांक ||१०७|| दीप अनुक्रम [१०७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र -[३०],प्रकीर्णकसूत्र-[०७] गच्छाचार मूलं एवं संस्कृतछाया
	श्रमणी/साध्वी/प्रवर्तिनी आदिनां आचार/स्वरुपम् वर्णयते



प्रकीर्णकेषु ७ गच्छाचारे ॥ ६८ ॥

वसाहं । गोअम! तत्थ विहार का सुद्धा बंभचरस्स? ॥ १०७ ॥ ८१६ ॥ जत्थ य उवस्सयाओ राइं गच्छं दुइत्थमित्तंपि । एगारत्तिं समणीं का मेरा तत्थ गच्छस्स? ॥ १०८ ॥ ८१७ ॥ जत्थ य एगा समणी एगो समणो अ जंपए सोम्म! । निअबंधुणावि सद्धिं तं गच्छं गच्छगुणहीणं ॥ १०९ ॥ ८१८ ॥ जत्थ जयारमयारं समणी जंपइ गिहत्थपच्चक्खं । पच्चक्खं संसारे अज्जा पक्खिवइ अप्पाणं ॥ ११० ॥ ८१९ ॥ जत्थ य गिहत्थभासाइ भासए अज्जिया सुरुट्ठावि । तं गच्छं गुणसायर! समणगुणविवज्जिअं जाण ॥ १११ ॥ ॥ ८२० ॥ गणि गोअम! जा उचियं, सेअं वत्थं विवज्जिअं । सेवए चित्तरूवाणि, न सा अज्जा विआहिआ ॥ ११२ ॥ ८२१ ॥ सीवणं तुन्नणं भरणं, गिहत्थाणं तु जा करे । तिल्लुव्वट्टणं वावि, अप्पणो य परस्स य ॥ ११३ ॥ ८२२ ॥ गच्छइ सविलासगई सयणीयं तूलियं सविब्बोअं । उव्वट्टइ सरीरं सिणाणमाईणि जा

चैका क्षुल्लिका एका तरुणी वा रक्षते वसतिम् । गौतम! तत्र विहारे (संयमे) का शुद्धिर्ब्रह्मचर्यस्य? ॥ १०७ ॥ यत्र चोपाश्रयाद्बहिः श्रमणी एकां रात्रिम् । द्विहस्तमात्रमपि गच्छेत् तत्र गच्छस्य का मर्यादा? ॥ १०८ ॥ यत्र चैका श्रमणी एकः श्रमणश्च (मिथः) जल्पति सौम्य! । निजबन्धुनाऽपि सार्द्धं स गच्छो गच्छगुणहीनः ॥ १०९ ॥ यत्र गृहस्थप्रत्यक्षं श्रमणी जकारमकारं जल्पति । तत्राऽऽर्याऽऽत्मानं प्रत्यक्षं संसारे प्रक्षिपति ॥ ११० ॥ यत्र च सुरुष्टाऽपि आर्या गृहस्थभाषाभिर्भाषते । गुणसागर! तं गच्छं श्रमणगुणविवर्जितं जानीहि ॥ १११ ॥ गणिगौतम! श्वेतं वस्त्रं विवर्ज्य याऽऽर्या चित्ररूपाणि (वस्त्राणि) सेवते साऽऽर्या न व्याख्याता ॥ ११२ ॥ या गृहस्थानां सीवनतुण्णनभरणानि करोति । तैलोद्वर्त्तनं वाऽऽत्मनश्च परस्य च ॥ ११३ ॥ गच्छति सविलासगतिः शयनीयं तूलिकां

गच्छाचारः ॥ ६८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कुणइ ॥ ११४ ॥ ८२३ ॥ गेहेसु गिहत्थाणं गंतूण कहा कहेइ काहीआ । तरुणाइअहिवडंते अणुजाणे जा उ सा पडणी (साइ पडिणीया) ॥ ११५ ॥ ८२४ ॥ वुड्ढाणं तरुणाणं रत्तिं अज्जा कहेइ जा धम्मं । सा गणिणी गुणसायर! पडणीआ होइ गच्छस्स ॥ ११६ ॥ ८२५ ॥ जत्थ य समणीणमसंखडाइं गच्छंमि नेव जायंति । तं गच्छं गच्छवरं गिहत्थभासाओ नो जत्थ ॥ ११७ ॥ ८२६ ॥ जो जत्तो वा जाओ नालोअइ दिवसपक्खिअं वावि । सच्छंदा समणीओ मयहरयाए न ठायंति ॥ ११८ ॥ ८२७ ॥ विंटलिआणि पउंजंति गिलाणसेहीण नेव तिप्पंति । अणगाढे आगाढं करेंति अणगाढि अणगाढं ॥ ११९ ॥ ८२८ ॥ अजयणाए पकुव्वंति, पाहुणगाण अवच्छला । चित्तलयाणि सेवंति, चित्ता रयहरणे तहा ॥ १२० ॥ ८२९ ॥ गइविब्भमाइएहिं आगारविगार तह पगासिंति । जह वुड्ढाणवि मोहो समुईरइ किं नु तरुणाणं? ॥ १२१ ॥ ८३० ॥

सविब्बोकां (करोति) । शरीरमुद्वर्त्तयति स्नानादीनि या करोति ॥११४॥ गृहस्थानां गृहेषु गत्वा कथिका कथाः कथयति । तरुणानभ्यापततोऽनुजानाति सा प्रत्यनीका ॥ ११५ ॥ वृद्धानां तरुणानां याऽऽर्या रात्रौ धर्मं कथयति । गुणसागर! सा गणिनी गच्छस्य प्रत्यनीका भवति ॥ ११६ ॥ यत्र च गच्छे श्रमणीनां कलहा नैव जायन्ते । यत्र च न गृहस्थभाषा तं गच्छं गच्छवरं जानीहि ॥ ११७ ॥ यो यतो वा जातस्तमतिचारं दैवसिकं पाक्षिकं वा नालोचयन्ति स्वच्छन्दाः श्रमण्यो महत्तरिकाज्ञायां न तिष्ठन्ति ॥ ११८ ॥ विण्टलिकानि प्रयुञ्जन्ति ग्लानानां शैक्षीणां च न तर्पयन्ति । अनागाढेऽागाढं आगाढेऽनागाढं च कुर्वन्ति ॥ ११९ ॥ अयतनया प्रकुर्वन्ति प्राघूर्णकानामवत्सलाः । चित्राणि वस्त्राणि तथा चित्राणि रजोहरणानि सेवन्ते ॥ १२० ॥ गतिविभ्रमादिभिराकारविकारान् तथा प्रकाशयन्ति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र -[३०],प्रकीर्णकसूत्र-[०७] गच्छाचार मूलं एवं संस्कृतछाया

प्रत सूत्रांक ॥१२२॥

दीप अनुक्रम [१२२]

बहुसो उच्छोलिंती मुहनयणे हत्थपायकक्खाओ । गिण्हेइ रागमंडल (मंडणु) भोइंति अ तह य कव्वट्टे ॥१२२॥८३१॥ जत्थ य थेरी तरुणी थेरी तरुणी य अंतरे सुयइ । गोअम! तं गच्छवरं वरनाणचरित्तआहारं ॥ १२३ ॥ ८३२ ॥ धोइंति कंठिआओ पोइंति तह य दिंति पोत्ताणि । गिहकज्जचिंतगीओ न हु अज्जा गोअमा! ताओ ॥ १२४ ॥ ८३३ ॥ खरघोडाइट्ठाणे वयंति ते वावि तत्थ वचंति । वेसित्थीसंसग्गी उवस्साओ समीवंमि ॥ १२५ ॥ ८३४ ॥ सज्झाय (छक्कायं) मुक्कजोगा धम्मकहा विगहपेसण गिहीणं । गिहिनिस्सज्जं वाहिंति संथवं तह करंतीओ ॥ १२६॥८३५॥ समा सीसपरिच्छीणं, चोअणासु अणालसा । गणिणी गुणसंपण्णा, पसत्थपुरिसाणुगा ॥ १२७ ॥ ८३६ ॥ संविग्गा भीयपरिसा य, उग्गदंडा य कारणे । सज्झाय-

यथा वृद्धानामपि मोहः समुदेति किं नु तरुणानाम्? ॥ १२१ ॥ बहुशो मुखनयनानि हस्तपादकक्षाश्च क्षालयन्ति । शिक्षते च रागमण्डलं भोजयन्ति तथा च कल्पस्थकान् । (कल्पस्थकान् गृह्णाति रञ्जयति मण्डयति भोजयति च तथा) ॥ १२२ ॥ यत्र च स्थविरा तरुणी स्थविरा तरुणी अन्तरा स्वपिति । गौतम! स गच्छवरो वरज्ञानचारित्राधारः ॥ १२३ ॥ क्षालयन्ति कण्ठप्रदेशान् प्रोतयन्ति च तथा च ददति वस्त्राणि गृहिकार्यचिन्तिकाः गौतम! नैव ता आर्याः ॥ १२४ ॥ खरघोटकादिस्थाने व्रजन्ति ते (नटविटादयः) वाऽपि तत्र व्रजन्ति । उपाश्रयसमीपे वेश्यास्त्रीसंसर्गी ॥ १२५ ॥ मुक्तस्वाध्याययोगा धर्मकथां विकथा गृहिणां प्रेषणं च (कुर्वन्ति) गृहिनिषद्यां वाहयन्ति संस्तवं तथा कुर्वन्ति च (यत्रार्या स न गच्छः) ॥ १२६ ॥ शिष्यप्रतीच्छकयोः समा नोदनासु अनलसा । गुणसंपन्ना प्रशस्तपुरुषानुगा गणिनी ॥ १२७ ॥ संविग्ना भीतपर्षच्च कारणे उग्रदण्डा । स्वाध्यायध्यानयुक्ता सद्गृहे च विशारदा ॥ १२८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जझाणजुत्ता य, संगहे अ विसारया ॥ १२८ ॥ ८३७ ॥ जत्थुत्तरपडिउत्तरवडिआ अज्जा व साहुणा सद्धिं। पलवंति सुरुट्ठावी गोअम! किं तेण गच्छेण? ॥ १२९ ॥ ८३८ ॥ जत्थ य गच्छे गोअम ! उप्पण्णे कारणंमि अज्जाओ। गणिणी पिट्ठिठिआओ भासंती मउअसद्देणं ॥ १३० ॥ ८३९ ॥ माऊए दुहिआए सुण्हाए अहव भइणिमाईणं। जत्थ न अज्जा अक्खइ गुत्तिविभेयं तयं गच्छं ॥ १३१ ॥ ८४० ॥ दंसणयारं कुणई चरित्त-नासं जणेइ मिच्छत्तं । दुण्हवि वग्गेणऽज्जा विहारभेअं करेमाणी ॥ १३२ ॥ ८४१ ॥ तंमूलं संसारं जणेइ अज्जावि गोअमा ! नूणं। तम्हा धम्मुवएसं मुत्तुं, अन्नं न भासिज्जा ॥ १३३ ॥ ८४२ ॥ मासे मासे उ जा अज्जा, एगसित्थेण पारए । कलहइ गिहत्थभासाहिं, सव्वं तीए निरत्थयं ॥ १३४ ॥ ८४३ ॥ महानिसीहकप्पाओ, ववहाराओ तहेव य । साहुसाहुणिअट्ठाए, गच्छायारं समुद्धिअं ॥ १३५ ॥ ८४४ ॥ पढंतु साहुणो एअं, अस-

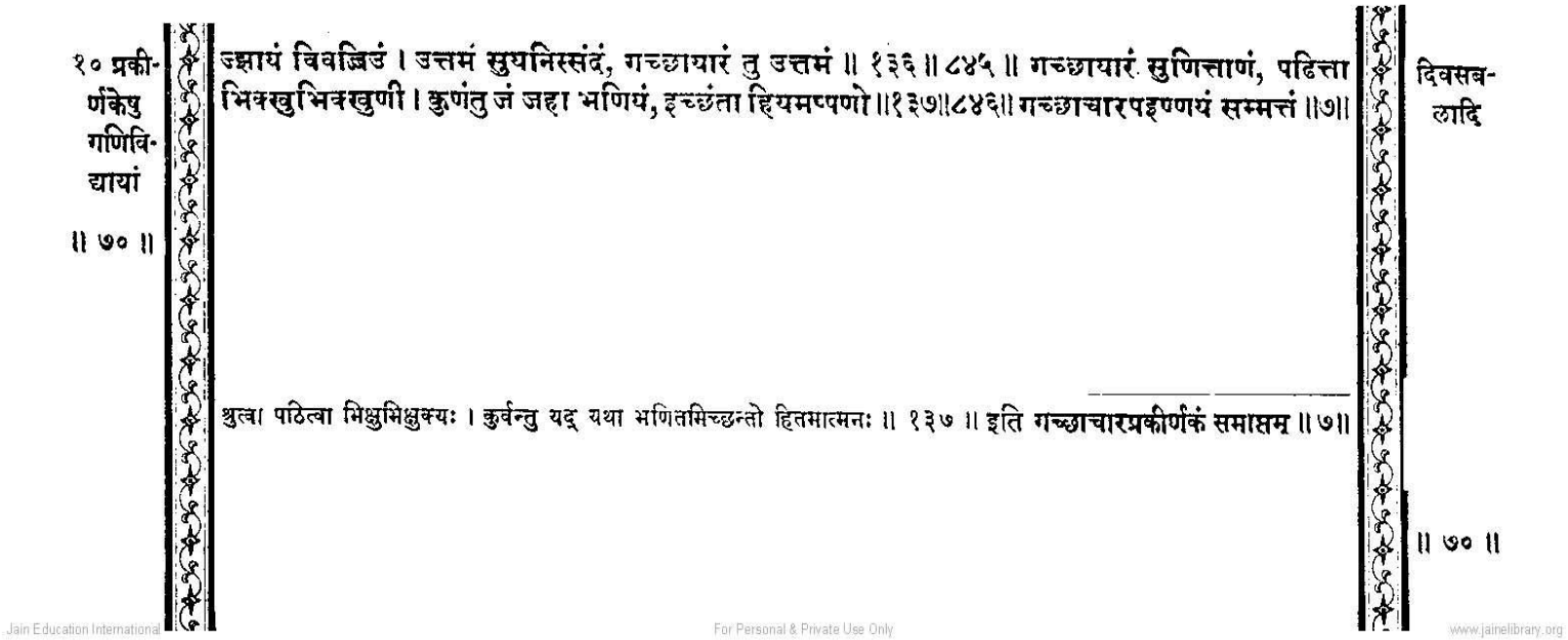
---

यत्रोत्तरप्रत्युत्तरपतिता आर्या रुष्टा अपि साधुना सार्द्धं प्रलपन्ति गौतम! किं तेन गच्छेन? ॥ १२९ ॥ यत्र च गच्छे गौतम! आर्याः कारणे उत्पन्ने । गणिनीपृष्ठस्थिता मृदुशब्देन भाषन्ते ॥ १३० ॥ मातुर्दुहितुः स्नुषाया अथवा भगिन्यादीनां । यत्रार्या गुप्तिविभेदं नाख्याति स गच्छः ॥ १३१ ॥ यत्रार्या विहारभेदं कुर्वती दर्शनातिचारं करोति । चारित्रनाशं जनयति द्वयोरपि वर्गयोर्मिथ्यात्वं करोति ॥ १३२ ॥ तन्मूलमार्याऽपि गौतम! नूनं संसारं जनयति । तस्माद्धर्मोपदेशं मुक्त्वा नान्यद् भाषेत ॥ १३३ ॥ याऽऽर्या मासे मासे तु एकसि-क्थेन पारयेत् । गृहस्थभाषाभिः कलहयेच्च तस्याः सर्वं निरर्थकम् ॥ १३४ ॥ महानिशीथात् कल्पात् व्यवहारात्तथैव च । साधुसाध्व्यर्थं गच्छाचारः समुद्धृतः ॥ १३५ ॥ पठन्तु साधव एनमस्वाध्यायं विवर्ज्य । उत्तमं श्रुतनिस्यन्दं सूत्तमं गच्छाचारम् ॥ १३६ ॥ गच्छाचारं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||१३६||

दीप अनुक्रम [१३६]



१० प्रकीर्णकेषु गणिविद्यायां ॥ ७० ॥

उज्झायं विवज्जिउं । उत्तमं सुयनिस्संदं, गच्छायारं तु उत्तमं ॥ १३६ ॥ ८४५ ॥ गच्छायारं सुणित्ताणं, पढित्ता भिक्खुभिक्खुणी । कुणंतु जं जहा भणियं, इच्छंता हियमप्पणो ॥१३७॥८४६॥ गच्छाचारपइण्णयं सम्मत्तं ॥७॥

दिवसव-लादि

श्रुत्वा पठित्वा भिक्षुभिक्षुक्यः । कुर्वन्तु यद् यथा भणितमिच्छन्तो हितमात्मनः ॥ १३७ ॥ इति गच्छाचारप्रकीर्णकं समाप्तम् ॥ ७॥

॥ ७० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भाग 26	गच्छाचार-प्रकीर्णकसूत्र [७] मूलं एवं संस्कृतछाया: परिसमाप्ता:

मूल संशोधकः सम्पादकश्च पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

किंचित् वैशिष्ट्य समर्पितेन सह पुन: संकलनकर्ता मुनि दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

“गणिविद्या” मूलं एवं छाया

[मूलं एवं संस्कृतछाया]

[आद्य संपादकश्री]

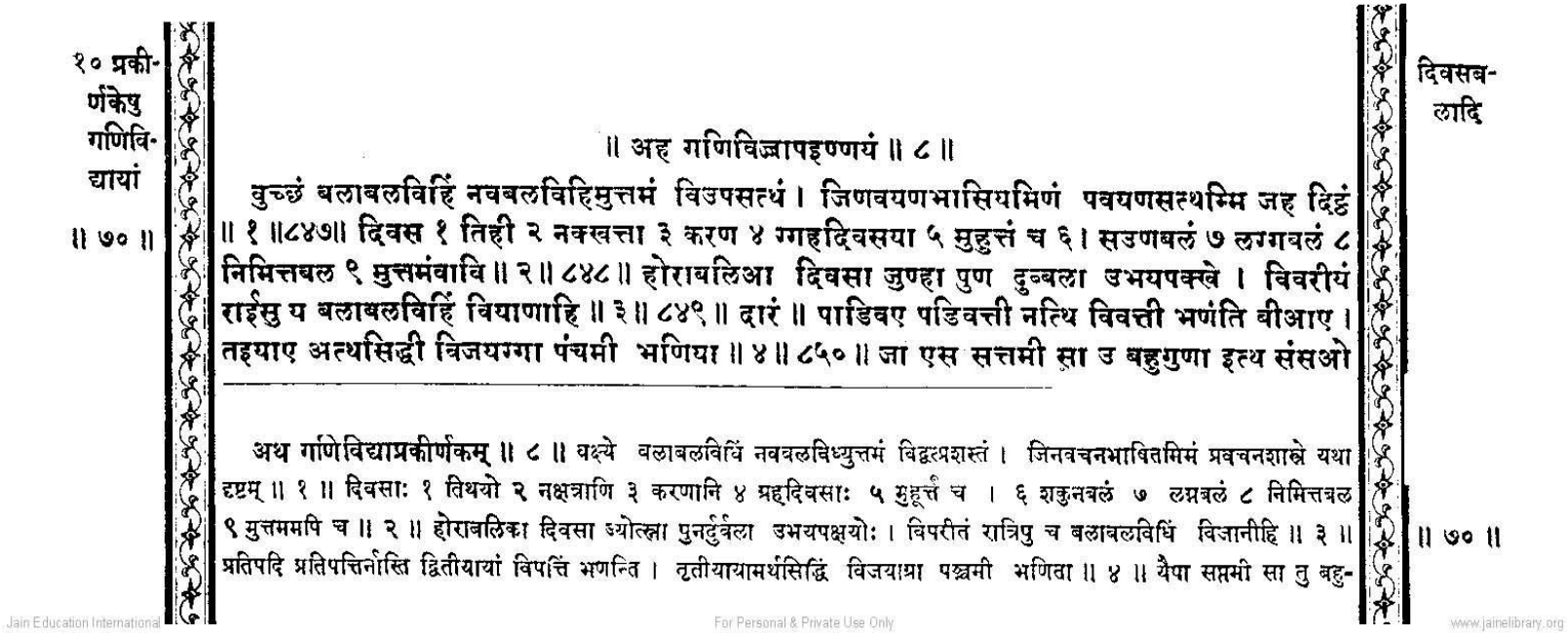
पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

पुन: संकलनकर्ता→ मुनि दीपरत्नसागर (M.Com., M.Ed., Ph.D.,श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५ ‘सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि’ श्रेणि भाग-२६

आगम (३१)	“गणिविध्या” – प्रकीर्णकसूत्र-८ (मूलं+संस्कृतछाया) ---------- मूलं [१]----------
प्रत सूत्रांक ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३१],प्रकीर्णकसूत्र-[०८] गणिविध्या मूलं एवं संस्कृतछाया



२० प्रकीर्णकेषु गणिविद्यायां ॥ ७० ॥

॥ अह गणिविज्जापइण्णयं ॥ ८ ॥

वुच्छं बलाबलविहिं नवबलविहिमुत्तमं विउपसत्थं । जिणवयणभासियमिणं पवयणसत्थम्मि जह दिट्ठं ॥ १ ॥८४७॥ दिवस १ तिही २ नक्खत्ता ३ करण ४ ग्गहदिवसया ५ मुहुत्तं च ६ । सउणबलं ७ लग्गबलं ८ निमित्तबल ९ मुत्तमंवावि ॥ २ ॥ ८४८ ॥ होराबलिआ दिवसा जुण्हा पुण दुब्बला उभयपक्खे । विवरीयं राईसु य बलाबलविहिं वियाणाहि ॥ ३ ॥ ८४९ ॥ दारं ॥ पाडिवए पडिवत्ती नत्थि विवत्ती भणंति बीआए । तइयाए अत्थसिद्धी विजयग्गा पंचमी भणिया ॥ ४ ॥ ८५० ॥ जा एस सत्तमी सा उ बहुगुणा इत्थ संसओ

अथ गणिविद्याप्रकीर्णकम् ॥ ८ ॥ वक्ष्ये बलाबलविधिं नवबलविधयुत्तमं विद्वत्प्रशस्तं । जिनवचनभाषितमिमं प्रवचनशास्त्रे यथा दृष्टम् ॥ १ ॥ दिवसाः १ तिथयो २ नक्षत्राणि ३ करणानि ४ ग्रहदिवसाः ५ मुहूर्त्तं च । ६ शकुनबलं ७ लग्नबलं ८ निमित्तबल ९ मुत्तममपि च ॥ २ ॥ होराबलिका दिवसा ज्योत्स्ना पुनर्दुर्बला उभयपक्षयोः । विपरीतं रात्रिषु च बलाबलविधिं विजानीहि ॥ ३ ॥ प्रतिपदि प्रतिपत्तिर्नास्ति द्वितीयायां विपत्तिं भणन्ति । तृतीयायामर्थसिद्धिं विजयाग्रा पञ्चमी भणिता ॥ ४ ॥ यैषा सप्तमी सा तु बहु-

दिवसब-लादि

॥ ७० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ दिवस एवं तिथि-द्वारम् वर्णयेते

प्रत सूत्रांक ॥५॥ दीप अनुक्रम [५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३१],प्रकीर्णकसूत्र-[०८] गणिविध्या मूलं एवं संस्कृतछाया

नत्थि । दसमीइ पत्थियाणं भवंति निक्कंटया पंथा ॥ ५ ॥ ८५१ ॥ आरुग्गमविग्घं खेमियं च इक्कारसिं वियाणाहि । जेऽवि हु हुंति अमित्ता ते तेरसि पिट्ठओ जिणइ ॥ ६ ॥ ८५२ ॥ चाउद्दसिं पन्नरसिं वज्जिज्जा अट्ठमिं च नवमिं च । छट्ठिं चउत्थिं बारसिं च दुण्हंपि पक्खाणं ॥ ७ ॥ ८५३ ॥ पढमीपंचमि दसमी पन्नरसिक्कारसीविय तहेव । एएसु य दिवसेसुं सेहे निक्खमणं करे ॥ ८ ॥ ८५४ ॥ नंदा भद्दा विजया उच्छा पुन्ना य पंचमी होइ । मासेण य छव्वारे इक्किक्कावत्तए नियए ॥ ९ ॥ ८५५ ॥ नंदे जए य पुन्ने, सेहनिक्खमणं करे । नंदे भद्दे सुभद्दावे, पुन्ने अणसणं करे ॥ १० ॥ दारं ॥ ८५६ ॥ पुस्सऽस्सिणिमिगसिररेवई य हत्थो तहेव चित्ता य । अणुराहजिट्ठमूला नव नक्खत्ता गमणसिद्धा ॥ ११ ॥ ८५७ ॥ मिगसिर महा य मूलो विसाहा तहेव होइ अणुराहा । हत्थुत्तररेवइअस्सिणी य सवणे य नक्खत्ते ॥ १२ ॥ ८५८ ॥ एएसु य अद्धाणं पत्थाणं ठाणयं

गुणाऽत्र संशयो नास्ति । दशम्यां प्रस्थितानां भवन्ति निष्कण्टकाः पन्थानः ॥ ५ ॥ आरोग्यमविघ्नं क्षेमं चैकादश्यां विजानीहि । यान्यपि च भवन्त्यमित्राणि तानि त्रयोदश्यां प्रस्थातो जयति (प्रस्थाता) ॥ ६ ॥ चतुर्दशीं पूर्णिमां वर्जयेदष्टमीं च नवमीं च । षष्ठीं चतुर्थीं द्वादशीं च द्वयोरपि पक्षयोः ॥ ७ ॥ प्रतिपत् पञ्चमी दशमी पूर्णिमैकादश्यपि च तथैव । एतेषु च दिवसेषु शिष्यो निष्क्रमणं कुर्यात् ॥ ८ ॥ नन्दा भद्रा विजया तुच्छा पूर्णा च पञ्चमी भवति । मासेन च षड्वारा एकैकाऽऽवर्त्तते नियताः ॥ ९ ॥ नन्दायां जयायां पूर्णायां च शैक्षस्य निष्क्रमणं कुर्यात् । नन्दायां भद्रायां च मण्डयेत् पूर्णायां चानशनं कुर्यात् ॥ १० ॥ पुष्योऽश्विनी मृगशिरो रेवती च हस्तस्तथैव चित्रा च । अनुराधा ज्येष्ठा मूलं नव नक्षत्राणि गमनसिद्धानि ॥ ११ ॥ मृगशिरो मघा च मूलं विशाखा तथैव भवत्यनुराधा । हस्तो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ नक्षत्रं-द्वारम् वर्णयते

च कायव्वं । जइ य गहुत्थं न चिट्ठइ संझामुक्कं च जइ होइ ॥ १३ ॥ ८५९ ॥ उप्पन्नभत्तपाणो अद्धाणम्मि सया उ जो होइ । फलपुप्फोवगवेओ गओवि खेमेण सो एइ ॥ १४ ॥ ८६० ॥ संझागयं रविगयं विड्डेरं सग्गहं विलंबिं च । राहुगयं गहभिन्नं च वज्जए सव्वनक्खत्ते ॥ १५ ॥ ८६१ ॥ अत्थमणे संझागय रविगय जहियं ठिओ उ आइच्चो । विड्डेरमवहारिय सग्गह कूरग्गहठियं तु ॥ १६ ॥८६२॥ आइच्चपिट्ठओ से विलंबि राहूहयं जहिं गहणं । मज्झेण गहो जस्स उ गच्छइ तं होइ गहभिन्नं ॥ १७ ॥ ८६३ ॥ संज्झागयम्मि कलहो होइ विवाओ विलंबिनक्खत्ते । विड्डेरे परविजओ आइच्चगए अनिव्वाणी ॥ १८ ॥ ८६४ ॥ जं सग्गहम्मि कीरइ नक्खत्ते तत्थ निग्गहो होई । राहुहयम्मि य मरणं गहभिन्ने सोणिउग्गाले ॥ १९ ॥ ८६५ ॥ संझागयं

तिथि-नक्षत्रबले

त्तरा रेवती अश्विनी च श्रवणं च नक्षत्राणि ॥ १२ ॥ एतेषु चाध्वा प्रस्थानं स्थानं च कर्त्तव्यम् । यदि च ग्रहणमत्र न तिष्ठति सन्ध्यामुक्तं च यदि भवति ॥ १३ ॥ उत्पन्नभक्तपानोऽध्वनि सदा तु यो भवति । फलपुष्पोपगोपेतः (फलपुष्पाणि गौरिव) गतोऽपि क्षेमेण स एति ॥ १४ ॥ सन्ध्यागतं रविगतं विड्वेरं सग्रहं विलम्बि च । राहुगतं ग्रहभिन्नं वर्जयेत्सर्वनक्षत्रेषु ॥ १५ ॥ अस्तमयेन सन्ध्यागतं यत्र तु आदित्यः स्थितस्तद्रविगतम् । अवदीर्णं विड्वेरं क्रूरग्रहस्थितिमत् सग्रहम् ॥ १६ ॥ आदित्यपृष्ठतः यत् तद्विलम्बि, यत्र ग्रहणं तद्राहुहतम् । यस्य मध्येन ग्रहो गच्छति तद्भवति ग्रहभिन्नम् ॥ १७ ॥ सन्ध्यागते कलहः भवति विवादो विलम्बिनक्षत्रे । विड्वेरे परविजयः आदित्यगते अनिर्वाणी (परमदुःखम्) ॥ १८ ॥ यत् सग्रहे क्रियते नक्षत्रे तत्र निग्रहो भवति । राहुहते च मरणं ग्रहभिन्ने शोणितोद्गारः ॥ १९ ॥ सन्ध्यागतं राहुगतमादित्यगतं च दुर्बलमृक्षम् । सन्ध्यादिचतुर्विमुक्तं ग्रहमुक्तं चैव बलिष्ठानि ॥ २० ॥

॥ ७१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||२०||

दीप अनुक्रम [२०]

राहुगयं आइच्चगयं च दुब्बलं रिक्खं । संझाइचउविमुक्कं गहमुक्कं चेव बलियाइं ॥ २० ॥८६६ ॥ पुस्सो हत्थो अभीई य, अस्सिणी भरणी तहा । एएसु य रिक्खेसुं, पाओवगमणं करे ॥ २१ ॥ ८६७ ॥ सवणेण धणिट्ठाइ पुणव्वसू नवि करिज्ज निक्खमणं । सयभिसयपूसधंभे (हत्थे) विज्जारंभे पवित्तिज्जा ॥२२॥८६८॥ मिगसिर अद्दा पुस्सो तिन्नि धणिट्ठा पुणव्वसू रोहिणी । पुस्सो (?) ॥ २३ ॥ ८६९ ॥ पुणव्वसूणा पुस्सेण, सवणेण धणिट्ठया । एएहिं चउरिक्खेहिं, लोयकम्माणि कारए ॥ २४ ॥ ८७० ॥ कित्तियाहिं विसाहाहिं, मघाहिं भरणीहि य । एएहिं चउरिक्खेहिं, लोयकम्माणि वज्जए ॥ २५ ॥ ८७१ ॥ तिहिं उत्तराहिं रोहिणीहिं कुज्जा उ सेहनिक्खमणं । सेहोवट्ठावणं कुज्जा, अणुन्ना गणिवायए ॥ २६ ॥ ८७२ ॥ गणसंगहणं कुज्जा, गणहरं चेव ठावए । उग्गहं वसहिं ठाणं, थावराणि पवत्तए ॥ २७ ॥ ८७३ ॥ पुस्सो हत्थो अभिइ,

पुष्यो हस्तोऽभिजिदश्विनी भरणी तथा । एतेषु च नक्षत्रेषु पादपोपगमनं कुर्यात् ॥२१॥ श्रवणे धनिष्ठायां पुनर्वसौ नैव कुर्यान्निष्क्रमणम् । शतभिषक्पुष्यहस्तेषु विद्यारम्भं प्रवर्त्तयेत् ॥ २२ ॥ (मिगसिर अद्दा पुस्सो तिन्नि य पुव्वाइ मूलमस्सेसा । हत्थो चित्ता य तहा दस वुड्ढिकराइं नाणस्स) मृगशिर आर्द्रा पुष्यं तिस्रश्च पूर्वाः मूलमश्लेषा । हस्तश्चित्रा च तथा दश वृद्धिकराणि ज्ञानस्य ॥

॥ २३ ॥ पुनर्वसौ पुष्ये श्रवणे धनिष्ठायाम् । एतेषु चतुर्षु नक्षत्रेषु लोचकर्म कारयेत् ॥ २४ ॥ कृत्तिकायां विशाखायां मघायां भरणौ च । एतेषु चतुर्षु नक्षत्रेषु लोचकर्म वर्जयेत् ॥ २५ ॥ त्रिषूत्तरासु रोहिण्यां च कुर्यात् शैक्षस्य निष्क्रमणम् । शैक्षोपस्थापनं कुर्यात् अनुज्ञां गणिवाचकयोः ॥ २६ ॥ गणसंग्रहं कुर्यात् गणधरं चैव स्थापयेत् । अवग्रहं वसतिं स्थानं च स्थावराणि प्रवर्त्तयेत् ॥ २७ ॥ पुष्यो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अस्सिणी य तहेव य । चत्तारि किखप्पकारीणी, कज्जारंभेसु सोहणा ॥ २८ ॥ ८७४ ॥ विज्जाणं धारणं कुज्जा, बंभजोगे य साहए । सज्झायं च अणुन्नं च, उद्देसे य समुद्दिसे ॥ २९ ॥ ८७५ ॥ अणुराहा रेवई चेव, चित्ता मिगसिरं तहा । भिऊनियाणि चत्तारि, भिउकम्मं तेसु कारए ॥ ३० ॥ ८७६ ॥ भिक्खायरणमत्ताणं, कुज्जा गहणधारणं । संगहोवग्गहं चेव, बालवुड्ढाण कारए ॥ ३१ ॥ ८७७ ॥ अद्दा अस्सेस जिट्ठा य, मूलो चेव चउत्थओ । गुरूणो कारए पडिमं, तवोकम्मं च कारए ॥ ३२ ॥ ८७८ ॥ दिव्वमाणुसतेरिच्छे, उवसग्गाहियासए । गुरू सुचरणकरणो, उग्गहोवग्गहं करे ॥ ३३ ॥ ८७९ ॥ महा भरणिपुव्वाणि, तिन्नि उग्गा वियाहिया । एएसु तवं कुज्जा, सब्भिंतरबाहिरं चेव ॥ ३४ ॥ ८८० ॥ तिन्नि सयाणि सट्ठाणि, तवोकम्माणि आहिया । उग्गनक्खत्तजोएसुं, तेसुमन्नंतरे करे ॥ ३५ ॥ ८८१ ॥ कित्तिया य विसाहा य, उम्हा एयाणि दुन्नि उ । लेपणं

हस्तोऽभिजित् अश्विनी च तथैव च । चत्वारि क्षिप्रकर्तृणि कार्यारम्भेषु शोभनानि ॥ २८ ॥ विद्यानां धारणं कुर्यात् ब्रह्मयोगांश्च साधयेत् । स्वाध्यायं चानुज्ञां च उद्देशं च समुद्देशम् ॥ २९ ॥ अनुराधा रेवती चैव चित्रा मृगशिरस्तथा । मृदून्येतानि चत्वारि मृदुकर्मसु कारयेत् ॥ ३० ॥ भिक्षाचरणमार्गानां कुर्याद् ग्रहणधारणम् । सङ्ग्रहोपग्रहं चैव बालवृद्धानां कुर्यात् ॥ ३१ ॥ आर्द्राऽश्लेषा ज्येष्ठा मूलं चैव चतुर्थम् । गुरोः कारयेत् प्रतिमां तपःकर्म च कारयेत् ॥ ३२ ॥ दिव्यमानुष्यतैरश्चान् उपसर्गानध्यासीत । गुरुः चरणसुकरणयोरुद्ग्रहोपग्रहं कुर्यात् ॥ ३३ ॥ मघा भरणी पूर्वाणि त्रीणि उग्राणि व्याख्यातानि । एतेषु तपः कुर्यात् साभ्यन्तरबाह्यम् ॥३४॥ त्रीणि शतानि षष्टानि तपःकर्माण्याख्यातानि । उग्रनक्षत्रयोगेषु तेषामन्यतरत् कुर्यात् ॥ ३५ ॥ कृत्तिका विशाखा च उष्णे एते द्वे तु । लेपनं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||३६|| दीप अनुक्रम [३६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३१],प्रकीर्णकसूत्र-[०८] गणिविध्या मूलं एवं संस्कृतछाया

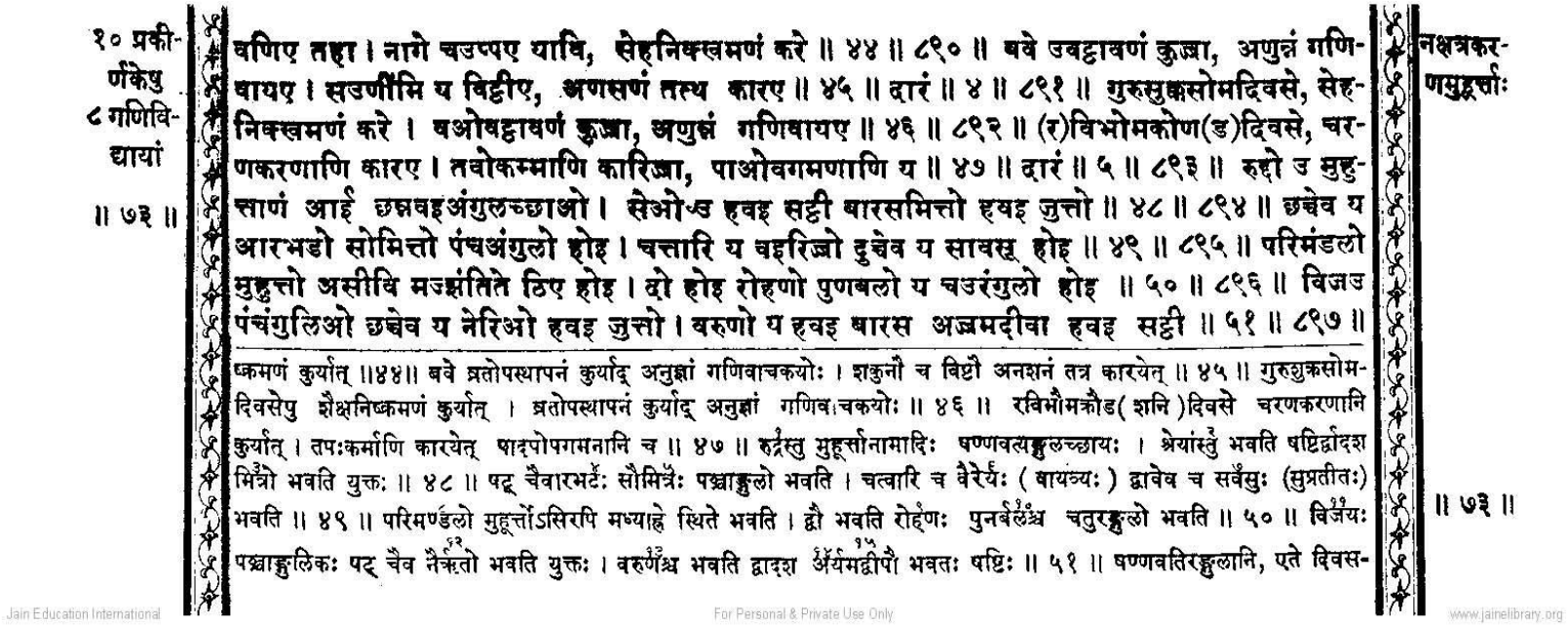
सीवणं कुज्जा, संथारुग्गहधारणं ॥ ३६ ॥ ८८२ ॥ उवकरणभंडमाईणं, विवायं चीवराणि य । उवगरणं विभागं च, आयरियाणं तु कारए ॥ ३७ ॥ ८८३ ॥ धणिट्ठा सयभिसा साई, सवणो य पुणव्वसू । एएसु गुरुसुस्सूसं, चेइयाणं च पूयणं ॥ ३८ ॥ ८८४ ॥ सज्झायकरणं कुज्जा, विज्जारय(विरइं च)कारए । वओवट्ठावणं कुज्जा, अणुन्नं गणिवायए ॥ ३९ ॥ ८८५ ॥ गणसंगहणं कुज्जा, सेहनिक्खमणं करे । संगहोवग्गहं कुज्जा, गणावच्छेइयं तहा ॥ ४० ॥ दारं ॥ ३ ॥ ८८६ ॥ बव १ बालवं च २ तह कोलवं च ३ थीलोयणं ४ गराइं च ५ । वणियं ६ विट्ठी य तहा ७ सुद्धपडिवए निसाईया ॥ ४१ ॥ ८८७ ॥ सउणि चउप्पय नागं किंथुग्घं च करणा धुवा हुंति । किण्हचउद्दसरत्तिं सउणी पडिवज्जए करणं ॥ ४२ ॥ ८८८ ॥ काऊण तिहिं बिऊणं जुण्हगे सोहए न पुण काले । सत्तहिं हरिज्ज भागं सेसं जं तं भवे करणं ॥ ४३ ॥ ८८९ ॥ बवे य बालवे चेव, कोलवे

च. स. १३

सीवनं कुर्यात्संस्तारोपग्रहधारणम् ॥ ३६ ॥ उपकरणभाण्डादीनां विवादं चीवराणि च । उपकरणं विभागं च आचार्यैः कारयेत् ॥३७॥ धनिष्ठा शतभिषक् स्वातिः श्रवणं च पुनर्वसुः । एतेषु गुरुशुश्रूषां चैत्यानां च पूजनम् ॥ ३८ ॥ स्वाध्यायकरणं कुर्यात् विद्यां विरतिं च कारयेत्। व्रतोपस्थापनं कुर्यात् अनुज्ञां गणिवाचकयोः ॥३९॥ गणसंग्रहणं कुर्यात् शैक्षनिष्क्रमणं कुर्यात्। सङ्गहोपग्रहं कुर्याद् गणावच्छेदिकतां तथा॥४०॥बवं बालवं च तथा कोलवं च स्त्रीलोचनं गरादि च । वणिक् विष्टिश्च तथा शुक्लप्रतिपन्निशादिकानि ॥४१॥ शकुनिश्चतुष्पदं नागं किंस्तुघ्नं च करणानि ध्रुवाणि भवन्ति । कृष्णचतुर्दशीरात्रौ शकुनिः प्रतिपद्यते करणम् ॥ ४२ ॥ कृत्वा तिथिं द्विगुणां ज्योत्स्ने शोधयेत् न पुनः कृष्णे । सप्तभिर्हरेद् भागं शेषं यत्तद् भवेत्करणम् ॥ ४३ ॥ बवे च बालवे चैव कौलवे वणिजि तथा । नागे चतुष्पदे चापि शैक्षनि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ करण-द्वारम् वर्णयते



१० प्रकीर्णकेषु ८ गणिविद्यायां ॥ ७३ ॥

वणिए तहा । नागे चउप्पए यावि, सेहनिक्खमणं करे ॥ ४४ ॥ ८९० ॥ बवे उवट्ठावणं कुज्जा, अणुन्नं गणिवायए । सउणीमि य विट्ठीए, अणसणं तत्थ कारए ॥ ४५ ॥ दारं ॥ ४ ॥ ८९१ ॥ गुरुसुक्कसोमदिवसे, सेहनिक्खमणं करे । बओवट्ठावणं कुज्जा, अणुन्नं गणिवायए ॥ ४६ ॥ ८९२ ॥ (र)विभोमकोण(ड)दिवसे, चरणकरणाणि कारए । तवोकम्माणि कारिज्जा, पाओवगमणाणि य ॥ ४७ ॥ दारं ॥ ५ ॥ ८९३ ॥ रुद्दो उ मुहुत्ताणं आई छन्नवइअंगुलच्छाओ । सेओ-ऽवि हवइ सट्ठी बारसमित्तो हवइ जुत्तो ॥ ४८ ॥ ८९४ ॥ छच्चेव य आरभडो सोमित्तो पंचअंगुलो होइ । चत्तारि य वइरिज्जो दुचेव य सावसू होइ ॥ ४९ ॥ ८९५ ॥ परिमंडलो मुहुत्तो असीवि मज्झंतिते ठिए होइ । दो होइ रोहणो पुणबलो य चउरंगुलो होइ ॥ ५० ॥ ८९६ ॥ विजउ पंचंगुलिओ छच्चेव य नेरिओ हवइ जुत्तो । वरुणो य हवइ बारस अज्जमदीवा हवइ सट्ठी ॥ ५१ ॥ ८९७ ॥

ष्कमणं कुर्यात् ॥४४॥ बवे व्रतोपस्थापनं कुर्याद् अनुज्ञां गणिवाचकयोः । शकुनौ च विष्टौ अनशनं तत्र कारयेत् ॥ ४५ ॥ गुरुशुक्रसोमदिवसेषु शैक्षनिष्क्रमणं कुर्यात् । व्रतोपस्थापनं कुर्याद् अनुज्ञां गणिवाचकयोः ॥ ४६ ॥ रविभौमक्रौड(शनि)दिवसे चरणकरणानि कुर्यात् । तपःकर्माणि कारयेत् पादपोपगमनानि च ॥ ४७ ॥ रुद्रस्तु मुहूर्त्तानामादिः षण्णवत्यङ्गुलच्छायः । श्रेयांस्तु भवति षष्टिर्द्वादश मित्रो भवति युक्तः ॥ ४८ ॥ षट् चैवारभटेः सौमित्रेः पञ्चाङ्गुलो भवति । चत्वारि च वैरेर्यः (वायव्यः) द्वावेव च सर्वसुः (सुप्रतीतः) भवति ॥ ४९ ॥ परिमण्डलो मुहूर्त्तोऽसिरपि मध्याह्ने स्थिते भवति । द्वौ भवति रोहणः पुनर्बलेश्च चतुरङ्गुलो भवति ॥ ५० ॥ विजयः पञ्चाङ्गुलिकः षट् चैव नैर्ऋतो भवति युक्तः । वरुणश्च भवति द्वादश अर्यमद्वीपौ भवतः षष्टिः ॥ ५१ ॥ षण्णवतिरङ्गुलानि, एते दिवस-

नक्षत्रकरणमुहूर्त्ताः ॥ ७३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ ग्रह एवं मुहूर्त-द्वारम् वर्णयेते

प्रत सूत्रांक ||५२||

दीप अनुक्रम [५२]

छन्नउइ अंगुलाइं ॥ एसा (ए) दिवसमुहुत्ता रत्तिमुहुत्ता वियाहिया। दिवसमुहुत्तगईए छायामाणं मुणेयव्वं ॥५२॥
॥ ८९८ ॥ मित्ते नंदे तह सुट्ठिए य, अभिई चंदे तहेव या । वरुणग्गिवेसईसाणे आणंदे विजए इय ॥ ५३ ॥
॥ ८९९ ॥ एएसु मुहुत्तजोएसु, सेहनिक्खमणं करे । बउवट्टावणाइं च, अणुन्ना गणिवायए ॥ ५४ ॥ ९०० ॥
बंभे वलए वाउम्मि उसभे वरुण तहा । अणसणपाउवगमणं, उत्तमट्ठं च कारए ॥ ५५ ॥ दारं ॥ ६ ॥ ९०१ ॥
पुन्नामधिज्जसउणेसु, सेहनिक्खमणं करे । थीनामेसु सउणेसु, समाहिं कारए विऊ ॥ ५६ ॥ ९०२ ॥ नपुंस-
एसु सउणेसु, सव्वकम्माणि वज्जए । वामिस्सेसु निमित्तेसु, सव्वारंभाणि वज्जए ॥ ५७ ॥ ९०३ ॥ तिरियं वाह-
रंतेसु, अद्धाणागमणं करे । पुप्फियफलिए वच्छे, सज्झायं करणं करे ॥ ५८ ॥ ९०४ ॥ दुमखंधे वाहरंतेसु,
सेहुवट्टावणं करे । गयणे वाहरंतेसु, उत्तमट्ठं तु कारए ॥ ५९ ॥ ९०५ ॥ बिलमूले वाहरंतेसु, ठाणं तु परिगि-

मुहूर्त्ता रात्रिमुहूर्त्ताश्च व्याख्याताः । दिवसमुहूर्त्तगत्या छायामानं ज्ञातव्यम् ॥ ५२ ॥ मित्रे (३) नन्दे (१६) तथा सुस्थिते (५) च अभि-
जिति (७) चन्द्रे (६) । वारुणा (१५) ग्निवेश्ययोः (२२) ईशाने (११) आनन्दे (१६) विजये (१७) इति ॥ ५३ ॥ एतेषु मुहूर्त्तयोगेषु
शैक्षनिष्क्रमणं कुर्यात् । व्रतोपस्थापनानि च अनुज्ञां गणिवाचकयोः ॥ ५४ ॥ ब्रह्मणि (९) वलये (८) वायौ (३) वृषभे (२८) वरुणे
(१५) तथा । अनशनपादोपगमने उत्तमार्थं च कारयेत् ॥ ५५ ॥ पुंनामधेयशकुनेषु शैक्षनिष्क्रमणं कुर्यात् । स्त्रीनामसु शकुनेषु समाधिं
कारयेद् विद्वान् ॥ ५६ ॥ नपुंसकेषु शकुनेषु सर्वकर्माणि वर्जयेत् । व्यामिश्रेषु निमित्तेषु सर्वारम्भान् वर्जयेत् ॥ ५७ ॥ तिर्यग् व्याहरत्सु
अध्वगमनं कुर्यात् । पुष्पितफलिते वृक्षे स्वाध्यायं क्रियां च कुर्यात् ॥ ५८ ॥ द्रुमस्कन्धेषु व्याहरत्सु शैक्षोपस्थापनं कुर्यात् । गगने व्याह-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ शकुन-द्वारम् वर्णयते

प्रत सूत्रांक ||६०||

दीप अनुक्रम [६०]

पहए । उप्पायम्मि वयंतेसु, सउणेसु मरणं भवे ॥ ६० ॥ ९०६ ॥ पक्कमंतेसु सउणेसु, हरिसं तुट्ठिं च वागरे । दारं ७ । चलरासिविलग्गेसु, सेहनिक्खमणं करे ॥ ६१ ॥ ९०७ ॥ थिररासिविलग्गेसु, वओवट्ठावणं करे । सुयक्खंधाणुन्नाओ, उद्दिसे य समुद्दिसे ॥ ६२ ॥ ९०८ ॥ बिसरीरविलग्गेसु, सज्झायकरणं करे । रविहोराविलग्गेसु, सेहनिक्खमणं करे ॥ ६३ ॥ ९०९ ॥ चंदहोराविलग्गेसु, सेहीणं संगहं करे । सुम्मदिक्कोणलग्गेसु, चरणकरणं तु कारए ॥ ६४ ॥ ९१० ॥ कूणदिक्कोणलग्गेसु, उत्तमट्ठं तु कारए । एवं लग्गाणि जाणिज्ज, दिक्कोणेसु ण संसओ ॥ ६५ ॥ ९११ ॥ सोमग्गहँविलग्गेसु, सेहनिक्खमणं करे । कूरग्गहविलग्गेसु, उत्तमट्ठं तु कारए ॥ ६६ ॥ ९१२ ॥ राहुकेउविलग्गेसु सवकम्माणि वज्जए । विलग्गेसु पसत्थेसु, पसत्थाणि उ आरभे ॥ ६७ ॥ ॥९१३॥ अप्पसत्थेसु लग्गेसु, सवकम्माणि वज्जए । विलग्गाणि जाणिज्जा, गहाण जिणभासिए ॥६८॥९१४॥

रत्सु उत्तमार्थं तु कारयेत् ॥ ५९ ॥ बिलमूले व्याहरत्सु स्थानं तु परिगृह्णीयात् । उत्पाते व्रजत्सु शकुनेषु मरणं भवेत् ॥ ६० ॥ प्रक्रामत्सु शकुनेषु हर्षं तुष्टिं च व्याकुर्यात् । चलराशिविलग्नेषु शैक्षनिष्क्रमणं कुर्यात् ॥ ६१ ॥ स्थिरराशिविलग्नेषु व्रतोपस्थापनं कुर्यात् । श्रुतस्कन्धानुज्ञा उद्देशांश्च समुद्देशान् ॥ ६२ ॥ द्विशरीरविलग्नेषु स्वाध्यायकरणं कुर्यात् । रविहोराविलग्नेषु शैक्षनिष्क्रमणं कुर्यात् ॥ ६३ ॥ चन्द्रहोराविलग्नेषु शैक्षीणां सङ्गहं कुर्यात् । सौम्यदिक्कोणलग्नेषु चरणकरणं तु कारयेत् ॥ ६४ ॥ कूणदिक्कोणलग्नेषु उत्तमार्थं तु कारयेत् । एवं लग्नानि जानीयात् दिक्कोणेषु न संशयः ॥ ६५ ॥ सोमग्रहविलग्नेषु शैक्षनिष्क्रमणं कुर्यात् । क्रूरग्रहविलग्नेषु उत्तमार्थं तु कारयेत् ॥ ६६ ॥ राहुकेतुविलग्नेषु सर्वकर्माणि वर्जयेत् । विलग्नेषु प्रशस्तेषु प्रशस्तानि तु आरभेत् ॥ ६७ ॥ अप्रशस्तेषु लग्नेषु सर्वकर्मार-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ लग्न-द्वारम् वर्णयते

प्रत सूत्रांक ||६९||

दीप अनुक्रम [६९]

दारं ८। न निमित्ता विवज्जंति, न मिच्छा रिसिभासियं। दुद्दिट्ठेणं निमित्तेणं, आदेसो उ विणस्सइ ॥ ६९ ॥
॥ ९१५ ॥ सुदिट्ठेण निमित्तेणं, आदेसो न विणस्सइ । जाय उप्पाइया भासा, जं च जंपंति बालया ॥ ७० ॥
॥९१६॥ जं वित्थीओ पभासंति, नत्थि तस्स वइक्कमो। तज्जाएण य तज्जायं, तन्निभेण य तन्निभं ॥७१॥९१७॥
तारूवेण य तारूवं, सरिसं सरिसेण निद्दिसे । थीपुरिसनिमित्तेसु, सेहनिक्खमणं करे ॥ ७२ ॥ ९१८ ॥
नपुंसकनिमित्तेसु, सव्वकज्जाणि वज्जए । वामिस्सेसु निमित्तेसु, सव्वारंभे विवज्जए ॥ ७३ ॥ ९१९ ॥ निमित्ते
कित्तिमे नत्थि, निमित्ते भावि सुज्झए। जेण सिद्धा वियाणंति, निमित्तुप्पायलक्खणं ॥ ७४ ॥ ९२० ॥ निमि-
त्तेसु पसत्थेसु, दढेसु बलिएसु य। सेहनिक्खमणं कुज्जा, वउवट्ठावणाणि य ॥ ७५ ॥ ९२१ ॥ गणसंगहणं

वर्जयेत्। विलग्नानि जानीयाद् ग्रहाणां जिनभाषिते ॥ ६८ ॥ न निमित्ताद् विपद्यन्ते न मिथ्या ऋषिभाषितम्। दुर्दिष्टेन निमित्तेन आदेशस्तु विनश्यति । सुदृष्टेन निमित्तेनादेशो न विनश्यति ॥ ६९ ॥ या चोत्पातिकी भाषा यच्च जल्पन्ति बालकाः ॥ ७० ॥ यच्चापि स्त्रियः प्रभाषन्ते नास्ति तस्य व्यतिक्रमः । तज्जातेन च तज्जातं तन्निभेन च तन्निभम् ॥ ७१ ॥ तादृप्येण च तादृप्यं सदृशं सदृशेन निर्दिशेत्। स्त्रीपुरुषनिमित्तेषु शैक्षनिष्क्रमणं कुर्यात् ॥ ७२ ॥ नपुंसकनिमित्तेषु सर्वकार्याणि वर्जयेत्। व्यामिश्रेषु निमित्तेषु सर्वारम्भान् विवर्जयेत् ॥ ७३ ॥ निमित्ते कृत्रिमता नास्ति निमित्तं भावि दर्शयेत् । येन सिद्धा विजानन्ति निमित्तोत्पातलक्षणम् ॥ ७४ ॥ निमित्तेषु प्रशस्तेषु दृढेषु बलिकेषु च । शैक्षनिष्क्रमणं कुर्याद् व्रतोपस्थापनानि च ॥ ७५ ॥ गणसङ्ग्रहणं कुर्यात् गणधरोऽत्र वा व्रजेत्। श्रुतस्कन्धा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ निमित्तबलं-द्वारम् वर्णयते

कुज्जा, गणहरे इत्थ वा वए। सुयक्खंधाणुन्नाओ अणुन्ना गणिवायए ॥ ७६ ॥ ९२२ ॥ निमित्तेसुऽपसत्थेसु, सिट्ठिलेसुऽबलेसु य। सव्वकज्जाणि वज्जिज्जा, अप्पसाहरणं करे ॥ ७७ ॥ ९२३ ॥ पसत्थेसु निमित्तेसु, पसत्थाणि सयारभे। अप्पसत्थनिमित्तेसु, सव्वकज्जाणि वज्जए ॥ ७८ ॥ ९२४ ॥ दिवसाओ तिही बलिओ तिहीउ बलियं तु सुद्धई रिक्खं। नक्खत्ता करणमाहंसु करणाउ गहदिणा बलिणो ॥ ७९ ॥ ९२५ ॥ गहदिणा उ मुहुत्ता, मुहुत्ता सउणो बली। सउणाओ बलवं लग्गं, तओ निमित्तं पहाणं तु ॥ ८० ॥ ९२६ ॥ विलग्गाओ निमित्ताओ, निमित्तबलमुत्तमं। न तं संविज्जए लोए, निमित्ता जं बलं भवे ॥ ८१ ॥ ९२७ ॥ एसो बलाबलविही समासओ कित्तिओ सुविहिएहिं। अणुओगनाणगज्झो नायव्वो अप्पमत्तेहिं ॥ ८२ ॥ ९२८ ॥ गणिविज्जापइण्णं सम्मत्तं ॥ ८ ॥

नुज्ञामनुज्ञां गणिवाचकयोः ॥ ७६ ॥ निमित्तेष्वप्रशस्तेषु स्थेष्वबलेषु च। सर्वकार्याणि वर्जयेत् आत्मसंधारणं कुर्यात् ॥ ७७ ॥ प्रशस्तेषु निमित्तेषु प्रशस्तानि सदाऽऽरभेत्। अप्रशस्तनिमित्तेषु सर्वकार्याणि वर्जयेत् ॥ ७८ ॥ दिवसात्तिथिर्बलीयान् तिथेर्बलीयस्तु श्रूयते ऋक्षम्। नक्षत्रात्करणमाहुः करणाद् ग्रहदिनं बलिनः ॥ ७९ ॥ ग्रहदिनेभ्यो मुहूर्त्तो मुहूर्त्तोच्छकुनो बली। शकुनाद्बलवल्लग्नं ततो निमित्तं प्रधानं तु ॥ ८० ॥ विलग्नान्निमित्तान्निमित्तबलमुत्तमम्। न तद्विद्यते लोके निमित्ताद् यद्बलवद् भवेत् ॥ ८१ ॥ एष बलाबलविधिः समासतः कीर्त्तितः सुविहितैः। अनुयोगज्ञानग्राह्यो ज्ञातव्योऽप्रमत्तैः ॥ ८२ ॥ इति गणिविद्याप्रकीर्णकम् ॥ ८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मूल संशोधकः सम्पादकश्च पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

किंचित् वैशिष्ट्य समर्पितेन सह पुन: संकलनकर्ता मुनि दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

“देवेन्द्रस्तव” मूलं एवं छाया

[मूलं एवं संस्कृतछाया]

[आद्य संपादकश्री]

पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

पुन: संकलनकर्ता→ मुनि दीपरत्नसागर (M.Com., M.Ed., Ph.D.,श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५ ‘सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि’ श्रेणि भाग-२६

प्रत सूत्रांक ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया

॥ अह देविंदथयपइण्णयं ॥ ९ ॥

अमरनरवंदिए वंदिऊण उसभाइजिणवरिंदे । वीरवरअपच्छिमंते तेलुक्कगुरू पणमिऊणं ॥ १ ॥ ९२९ ॥ कोइ पढमपाउसंमि सावओ समयनिच्छयविहिण्णू । वन्नेइ थयमुयारं जिणमाणे (माणो) वद्धमाणम्मि ॥२॥ ॥ ९३० ॥ तस्स थुणंतस्स जिणं सोइ(सामि)यकडा पिया सुहनिसन्ना । पंजलिउडा अभिमुही सुणइ थयं वद्धमाणस्स ॥ ३ ॥ ९३१ ॥ इंदविलयाहिं तिलयरयणंकिए लक्खणंकिए सिरसा । पाए अवगयमाणस्स वंदिमो वद्धमाणस्स ॥ ४ ॥ ९३२ ॥ विणयपणएहि सिढिलमउडेहिं अप(पय)डियजसस्स देवेहिं । पाया पसंतरोसस्स वंदिमो वद्धमाणस्स ॥ ५ ॥ ९३३ ॥ बत्तीसं देविंदा जस्स गुणेहिं उवहम्मिया छायं । तो (नो) तस्स वियच्छेयं पायच्छायं उवेहामो ॥ ६ ॥ ९३४ ॥ बत्तीसं देविंदत्ति भणियमित्तंमि सा पियं भणइ । अंत-

---

अथ देवेन्द्रस्तवप्रकीर्णकम् ॥ ९ ॥ अमरनरवन्दितान् वन्दित्वा ऋषभादिजिनवरेन्द्रान् । अपश्चिमवीरवरान् तान् (शेषान्) त्रैलोक्यगुरून् प्रणम्य ॥१॥ कश्चित् श्रावकः समयनिश्चयविधिज्ञः प्रथमप्रावृषि वर्णयति स्तवमुदारं जातबहुमाने(?) वर्द्धमाने ॥ २ ॥ तस्य जिनं स्तुवतः समीपे कृतश्रुतिका प्राञ्जलिपुटाऽभिमुखी प्रिया वर्द्धमानस्य स्तवं सुखनिषण्णा शृणोति ॥ ३ ॥ इन्द्रवनितामिस्तिलकरत्नाङ्कितान् लक्षणाङ्कितान् । अपगतमानस्य वर्द्धमानस्य पादान् शिरसा वन्दामहे ॥ ४ ॥ विनयप्रणतैः शिथिलमुकुटैर्देवैः प्रशान्तरोषस्यापति(प्रकटि)-तयशसो वर्द्धमानस्य पादान् वन्दामहे ॥ ५ ॥ द्वात्रिंशद् देवेन्द्रा गुणैर्यस्य छायायामागताः । ततस्तस्य विगतच्छेदां पादच्छायामाश्रयामः

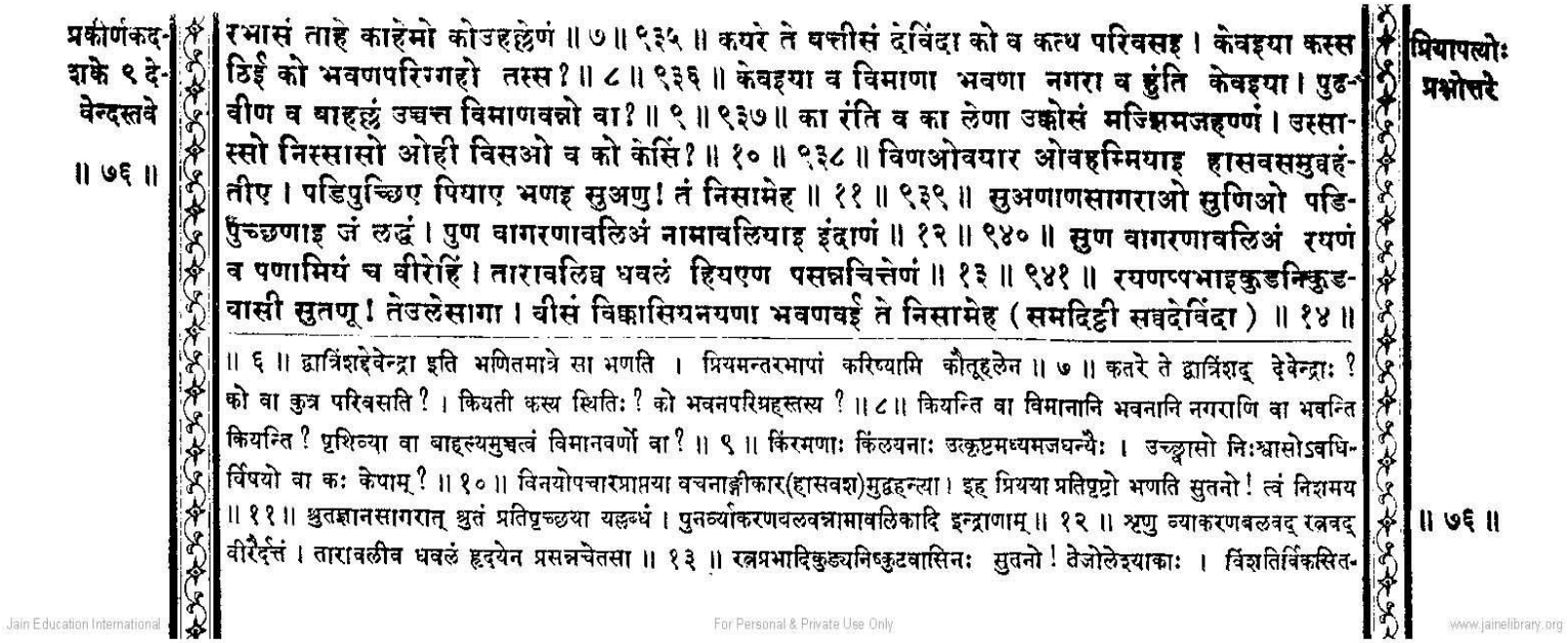
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र मङ्गलं कृत्वा देवेन्द्र-पृच्छा प्रदर्श्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया

प्रत सूत्रांक ॥७॥

दीप अनुक्रम [७]



प्रकीर्णकद-शके ९ दे-वेन्दस्तवे

॥ ७६ ॥

रभासं ताहे काहेमो कोउहल्लेणं ॥ ७ ॥ ९३५ ॥ कयरे ते बत्तीसं देविंदा को व कत्थ परिवसइ । केवइया कस्स ठिई को भवणपरिग्गहो तस्स ? ॥ ८ ॥ ९३६ ॥ केवइया व विमाणा भवणा नगरा व हुंति केवइया । पुढ-वीण व बाहल्लं उच्चत्त विमाणवन्नो वा ? ॥ ९ ॥ ९३७ ॥ का रंति व का लेणा उक्कोसं मज्झिमजहण्णं । उस्सा-स्सो निस्सासो ओही विसओ व को केसिं ? ॥ १० ॥ ९३८ ॥ विणओवयार ओवहम्मियाइ हासवसमुव्वहं-तीए । पडिपुच्छिए पियाए भणइ सुअणु ! तं निसामेह ॥ ११ ॥ ९३९ ॥ सुअणाणसागराओ सुणिओ पडि-पुच्छणाइ जं लद्धं । पुण वागरणावलिअं नामावलियाइ इंदाणं ॥ १२ ॥ ९४० ॥ सुण वागरणावलिअं रयणं व पणामियं च वीरेहिं । तारावलिव्व धवलं हियएण पसन्नचित्तेणं ॥ १३ ॥ ९४१ ॥ रयणप्पभाइकुडनिक्कुड-वासी सुतणू ! तेउलेसागा । वीसं विक्कासियनयणा भवणवई ते निसामेह (समदिट्ठी सव्वदेविंदा) ॥ १४ ॥

॥ ६ ॥ द्वात्रिंशद्देवेन्द्रा इति भणितमात्रे सा भणति । प्रियमन्तरभाषां करिष्यामि कौतूहलेन ॥ ७ ॥ कतरे ते द्वात्रिंशद् देवेन्द्राः ? को वा कुत्र परिवसति ? । कियती कस्य स्थितिः ? को भवनपरिग्रहस्तस्य ? ॥ ८ ॥ कियन्ति वा विमानानि भवनानि नगराणि वा भवन्ति कियन्ति ? पृथिव्या वा बाहल्यमुच्चत्वं विमानवर्णो वा ? ॥ ९ ॥ किंरमणाः किंलयनाः उत्कृष्टमध्यमजघन्यैः । उच्छ्वासो निःश्वासोऽवधि-र्विषयो वा कः केषाम् ? ॥ १० ॥ विनयोपचारप्राप्तया वचनाङ्गीकार(हासवश)मुद्वहन्त्या । इह प्रियया प्रतिपृष्टो भणति सुतनो ! त्वं निशमय ॥ ११ ॥ श्रुतज्ञानसागरात् श्रुतं प्रतिपृच्छया यल्लब्धं । पुनर्व्याकरणबलवन्नामावलिकादि इन्द्राणाम् ॥ १२ ॥ शृणु व्याकरणबलवद् रत्नवद् वीरैर्दत्तं । तारावलीव धवलं हृदयेन प्रसन्नचेतसा ॥ १३ ॥ रत्नप्रभादिकुड्यनिष्कुटवासिनः सुतनो ! तेजोलेश्याकाः । विंशतिर्विकसित-

प्रियापत्योः प्रश्नोत्तरे

॥ ७६ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ भवनपति-अधिकार: आरभ्यते

प्रत सूत्रांक ||१५|| दीप अनुक्रम [१५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया

॥ ९४२ ॥ भवणवई दो इंदा चमरे वइरोअणे असुराणं (चमरिंदबलिंद असुरनिकायं च)। दो नागकुमारिंदा भूयाणंदे य धरणे य ॥१५॥ ९४३ ॥ दो सुयणु! सुवण्णिदा वेणूदेवे य वेणुदाली य। दो दीवकुमारिंदा पुण्णे य तहा वसिट्ठे य ॥ १६ ॥ ९४४ ॥ दो उदहिकुमारिंदा जलकंते जलपभे य नामेणं। अमियगइअमियवाहण दिसाकुमाराण दो इंदा ॥ १७ ॥ ९४५ ॥ दो वाउकुमारिंदा वेलंब पभंजणे य नामेण। दो थणियकुमारिंदा घोसे य तहा महाघोसे ॥ १८ ॥ ९४६ ॥ दो विज्जुकुमारिंदा हरिकंत हरिस्सहे य नामेणं। अग्गिसिहअग्गिमाणव हुयासणवइंवि दो इंदा ॥ १९ ॥ ९४७ ॥ एए विकसियनयणे! दसदिसि वियसियजसा मए कहिया। भवणवरसुहनिसन्ने सुण भवणपरिग्गहमिमेसिं ॥ २० ॥ ९४८ ॥ चमरवइरोअणाणं असुरिंदाणं महाणुभागाणं। तेसिं भवणवराणं चउसट्ठिमहे सयसहस्से ॥ २१ ॥ ९४९ ॥ नागकुमारिंदाणं भूयाणं-

---

नयना भवनपतयस्तान् निशमय (सम्यग्दृष्टयः सर्वदेवेन्द्राः) ॥ १४ ॥ द्वौ भवनपतीन्द्रौ चमरो वैरोचनोऽसुराणाम्। द्वौ नागकुमारेन्द्रौ भूतानन्दश्च धरणश्च ॥ १५ ॥ द्वौ सुतनो! सुवर्णकुमारेन्द्रौ वेणुदेवश्च वेणुदालिश्च। द्वौ द्वीपकुमारेन्द्रौ पूर्णश्च तथा वशिष्टश्च ॥ १६ ॥ द्वावुदधिकुमारेन्द्रौ जलकान्तो जलप्रभश्च नाम्ना। अमितगतिरमितवाहनो दिक्कुमाराणां द्वाविन्द्रौ ॥ १७ ॥ द्वौ वायुकुमारेन्द्रौ वेलम्बः प्रभञ्जनश्च नाम्ना। द्वौ स्तनितकुमारेन्द्रौ घोषश्च तथा महाघोषः ॥ १८ ॥ द्वौ विद्युत्कुमारेन्द्रौ हरिकान्तो हरिसहश्च नाम्ना। अग्निशिखाऽग्निमानवौ हुताशनपती अपि द्वाविन्द्रौ ॥ १९ ॥ एते विकसितनयने! दशदिग्विकसितयशसो मया कथिताः। भवनवरसुखनिषण्णे! शृणु भवनपरिग्रहमेषाम् ॥ २० ॥ चमरवैरोचनयोरसुरेन्द्रयोर्महानुभागयोः। तेषां भवनवराणां चतुःषष्टिरधः शतसहस्राणि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



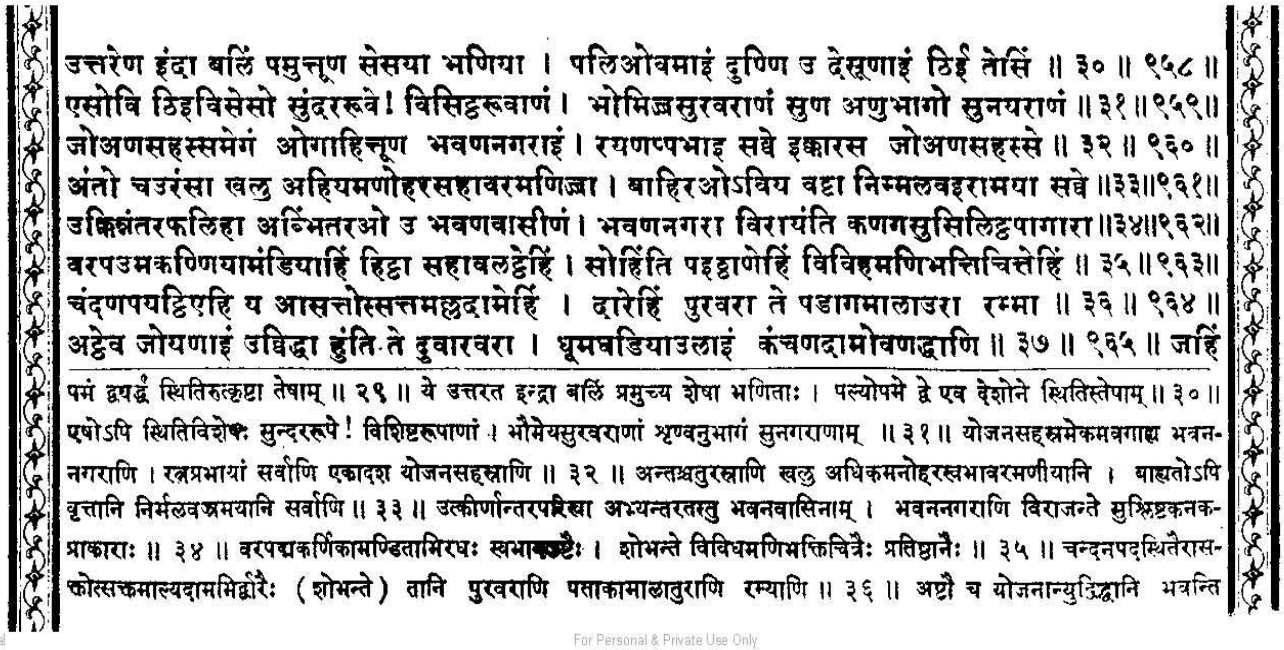
द्धरणाण दुण्हंपि । तेसिं भवणवराणं चुलसीइमहे सयसहस्से ॥ २२ ॥ ९५० ॥ दो सुयणु ! सुवण्णिंदा वेणु- देवे य वेणुदाली य । तेसिं भवणवराणं बावत्तरिमो सयसहस्सा ॥ २३ ॥ ९५१ ॥ वाउकुमारिंदाणं वेलंब- पभंजणाण दुण्हंपि । तेसिं भवणवराणं छन्नवइमहे सयसहस्सा ॥ २४ ॥ ९५२ ॥ चउसट्ठी असुराणं चुलसीई चेव होइ नागाणं । बावत्तरि सुवण्णाणं वाउकुमाराण छन्नउई ॥ २५ ॥ ९५३ ॥ दीवदिसाउदहीणं विज्जुकु- मारिंदथणियमग्गीणं । छण्हंपि जुयलयाणं बावत्तरिमो सयसहस्सा ॥ २६ ॥ ९५४ ॥ इक्किक्कम्मि य जुयले नियमा बावत्तरि सयसहस्सा । सुंदरि! लीलाइ ठिए ठिईविसेसं निसामेहि ॥ २७ ॥ ९५५ ॥ चमरस्स सागरोवम सुंदरि! उक्कोसिया ठिई भणिया । साहीया बोद्धवा बलिस्स वइरोयणिंदस्स ॥ २८ ॥ ९५६ ॥ जे दाहिणाण इंदा चमरं मुत्तूण सेसया भणिया । पलिओवमं दिवड्ढं ठिई उक्कोसिया तेसिं ॥ २९ ॥ ९५७ ॥ जे

॥ २१ ॥ नागकुमारेन्द्रयोर्भूतानन्दधरणयोर्द्वयोरपि । तेषां भवनवराणां चतुरशीतिरधः शतसहस्राणि ॥ २२ ॥ द्वौ सुतनो! सुवर्णेन्द्रौ वेणुदेवश्च वेणुदालिश्च । तयोर्भवनवराणां द्वासप्ततिः शतसहस्राणि ॥ २३ ॥ वायुकुमारेन्द्रयोर्वेलम्बप्रभञ्जनयोर्द्वयोरपि । तेषां भवनवराणां पण्णवतिरधः शतसहस्राणि ॥ २४ ॥ चतुःषष्टिरसुराणां चतुरशीतिश्चैव भवति नागानाम् । द्वासप्ततिः सुवर्णानां वायुकुमाराणां पण्णवतिः ॥ २५ ॥ द्वीपदिगुदधीनां विद्युत्कुमारेन्द्रस्तनितानामीनाम् । षण्णामपि युगलानां द्वासप्ततिः शतसहस्राणि ॥ २६ ॥ एकैकस्मिंश्च युगले नियमाद्वासप्ततिः शतसहस्राणि । सुन्दरि! लीलया स्थिते! स्थितिविशेषं निशमय ॥ २७ ॥ चमरस्य सागरोपमं सुन्दरि! उत्कृष्टा स्थितिर्भणिता । साधिका बोद्धव्या बलेर्वैरोचनेन्द्रस्य ॥ २८ ॥ ये दक्षिणानामिन्द्राश्चमरं मुक्त्वा शेषा भणिताः । पल्यो-



Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||३०|| दीप अनुक्रम [३०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया



उत्तरेण इंदा बलिं पमुत्तूण सेसया भणिया । पलिओवमाइं दुण्णि उ देसूणाइं ठिई तेसिं ॥ ३० ॥ ९५८ ॥
एसोवि ठिइविसेसो सुंदररूवे! विसिट्ठरूवाणं । भोमिज्जसुरवराणं सुण अणुभागो सुनयराणं ॥३१॥९५९॥
जोअणसहस्समेगं ओगाहित्तूण भवणनगराइं । रयणप्पभाइ सव्वे इक्कारस जोअणसहस्से ॥ ३२ ॥ ९६० ॥
अंतो चउरंसा खलु अहियमणोहरसहावरमणिज्जा । बाहिरओऽविय वट्टा निम्मलवइरामया सव्वे ॥३३॥९६१॥
उक्किन्नंतरफलिहा अब्भिंतरओ उ भवणवासीणं । भवणनगरा विरायंति कणगसुसिलिट्ठपागारा ॥३४॥९६२॥
वरपउमकण्णियामंडियाहिं हिट्ठा सहावलट्ठेहिं । सोहिंति पइट्ठाणेहिं विविहमणिभत्तिचित्तेहिं ॥ ३५ ॥९६३॥
चंदणपयट्ठिएहि य आसत्तोसत्तमल्लदामेहिं । दारेहिं पुरवरा ते पडागमालाउरा रम्मा ॥ ३६ ॥ ९६४ ॥
अट्ठेव जोयणाइं उविद्धा हुंति ते दुवारवरा । धूमवडियाउलाइं कंचणदामोवणद्धाणि ॥ ३७ ॥ ९६५ ॥ जाहिं

पमं द्वयर्द्धं स्थितिरुत्कृष्टा तेषाम् ॥ २९ ॥ ये उत्तरत इन्द्रा बलिं प्रमुच्य शेषा भणिताः । पल्योपमे द्वे एव देशोने स्थितिस्तेषाम् ॥ ३० ॥ एषोऽपि स्थितिविशेषः सुन्दररूपे! विशिष्टरूपाणां । भौमेयसुरवराणां शृण्वनुभागं सुनगराणाम् ॥ ३१ ॥ योजनसहस्रमेकमवगाह्य भवननगराणि । रत्नप्रभायां सर्वाणि एकादश योजनसहस्राणि ॥ ३२ ॥ अन्तश्चतुरस्राणि खलु अधिकमनोहरस्वभावरमणीयानि । बाह्यतोऽपि वृत्तानि निर्मलवज्रमयानि सर्वाणि ॥ ३३ ॥ उत्कीर्णान्तरपरिखा अभ्यन्तरतस्तु भवनवासिनाम् । भवननगराणि विराजन्ते सुश्लिष्टकनकप्राकाराः ॥ ३४ ॥ वरपद्मकर्णिकामण्डितामिरधः स्वभावसुष्टैः । शोभन्ते विविधमणिभक्तिचित्रैः प्रतिष्ठानैः ॥ ३५ ॥ चन्दनपदस्थितैरासक्तोत्सक्तमाल्यदामभिर्द्वारैः (शोभन्ते) तानि पुरवराणि पताकामालातुराणि रम्याणि ॥ ३६ ॥ अष्टौ च योजनान्युद्विद्धानि भवन्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया

प्रत सूत्रांक ||३८||

दीप अनुक्रम [३८]

प्रकीर्णकदशके ९ देवेन्द्रस्तवे ॥ ७८ ॥

देवा भवणवई वरतरुणीगीयवाइयरवेणं । निच्चसुहिया पमुइया गयंपि कालं न याणंति ॥ ३८॥९६६॥ चमरे धरणे तह वेणुदेव पुण्णे य होइ जलकंते । अमियगई वेलंबे घोसे हरी अ अग्गिसिहे ॥ ३९ ॥ ९६७ ॥ कणगमणिरयणथूभियरम्माइं सवेइयाइं भवणाइं । एएसिं दाहिणओ सेसाणं दाहिणे(उत्तरे)पासे ॥४०॥९६८॥ चउतीसा चोयाला अट्ठतीसं च सयसहस्साइं । चत्ता पन्नासा खलु दाहिणओ हुंति भवणाइं ॥ ४१ ॥९६९॥ तीसा चत्तालीसा चउतीसं चेव सयसहस्साइं । छत्तीसा छायाला उत्तरओ हुंति भवणाइं ॥ ४२ ॥ ९७० ॥ भवणविमाणवईणं तायत्तीसा य लोगपाला य । सव्वेसिं तिन्नि परिसा समाणचउगुणायरक्खा उ ॥ ४३ ॥ ॥ ९७१ ॥ चउसट्ठी सट्ठी खलु छच्च सहस्सा तहेव चत्तारि । भवणवइवाणमंतरजोइसियाणं च सामाणे

चमरादि भवनादि

तानि द्वारवराणि । धूपघटिकाकुलानि काञ्चनदामोपनद्धानि ॥ ३७ ॥ यत्र देवा भवनपतयो वरतरुणीगीतवादितरवेण । नित्यसुखिताः प्रमुदिता गतमपि कालं न जानन्ति ॥ ३८ ॥ चमरो धरणस्तथा वेणुदेवः पूर्णश्च भवति जलकान्तः । अमितगतिर्वेलम्बो घोषो हरिश्चाग्निशिखः ॥ ३९ ॥ कनकमणिरत्नस्तूपिकारम्याणि सवेदिकानि भवनानि । एतेषां दक्षिणतः शेषाणामुत्तरे पार्श्वे ॥ ४० ॥ चतुस्त्रिंशत् चतुश्चत्वारिंशत् अष्टत्रिंशच्च शतसहस्राणि । चत्वारिंशत् पञ्चाशत् खलु दक्षिणस्यां भवन्ति भवनानि ॥ ४१ ॥ त्रिंशत् चत्वारिंशत् चतुस्त्रिंशदेव शतसहस्राणि । षट्त्रिंशत् षट्चत्वारिंशत् उत्तरस्यां भवन्ति भवनानि ॥ ४२ ॥ भवनविमानपतीनां त्रायस्त्रिंशाश्च लोकपालाश्च । सर्वेषां तिस्रः पर्षदः सामानिकचतुर्गुणा आत्मरक्षाः ॥ ४३ ॥ चतुःषष्टिः षष्टिः खलु षट् च सहस्राणि तथैव चत्वारि । भवन-

॥ ७८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||४५||

दीप अनुक्रम [४५]

॥ ४४ ॥ ९७२ ॥ पंचग्गमहिसीओ चमरबलीणं हवंति नायव्वा । सेसयभवणिंदाणं छच्चेव य अग्गमहिसीओ ॥ ४५ ॥ ९७३ ॥ दो चेव जंबुदीवे चत्तारि य माणुसुत्तरे सेले । छच्चारुणे समुद्दे अट्ठ य अरुणम्मि दीवम्मि ॥४६॥ ९७४ ॥ जंनामए समुद्दे दीवे वा जंमि हुंति आवासा । तन्नामए समुद्दे दीवे वा तेसि उप्पाया ॥४७॥ ॥ ९७५ ॥ असुराणं नागाणं उदहिकुमाराण हुंति आवासा । वरुणवरे दीवम्मी तत्थेव य तेसि उप्पाया ॥ ४८ ॥ ९७६ ॥ दीवदिसाअग्गीणं थणियकुमाराण हुंति आवासा । अरुणवरे दीवम्मि य तत्थेव य तेसि उप्पाया ॥ ४९ ॥ ९७७ ॥ वाउसुवण्णिंदाणं एएसिं माणुसुत्तरे सेले । हरिणो हरिप्पहस्स य विज्जुप्पभमालवंतेसु ॥ ५० ॥ ९७८ ॥ एएसिं देवाणं बलवीरियपरक्कमो अ जो जस्स । ते सुंदरि ! वण्णेहं अहक्कमं आणुपुव्वीए ॥ ५१ ॥ ९७९ ॥ जाव य जंबुदीवो जाव य चमरस्स चमरचंचा उ । असुरेहिं असुरकण्णाहिं तस्स

पतिव्यन्तरज्योतिष्काणां सामानिकाः ॥ ४४ ॥ पञ्चाग्रमहिष्यश्चमरबलिनोः भवन्ति ज्ञातव्याः । शेषभवनेन्द्राणां षट् चैव चाग्रमहिष्यः ॥ ४५ ॥ द्वावेव जम्बूद्वीपे चत्वारश्च मानुषोत्तरे शैले । षड् वारुणे समुद्रे अष्टौ चारुणे द्वीपे ॥ ४६ ॥ यन्नामके समुद्रे द्वीपे वा यस्मिन् भवन्त्यावासाः । तन्नामके द्वीपे समुद्रे वा तेषामुत्पातपर्वताः ॥ ४७ ॥ असुराणां नागानामुदधिकुमाराणां भवन्त्यावासाः । वरुणवरे द्वीपे तत्रैव च तेषामुत्पाताः ॥ ४८ ॥ द्वीपदिगग्नीनां स्तनितकुमाराणां भवन्त्यावासाः । अरुणवरे द्वीपे तत्रैव च तेषामुत्पातपर्वताः ॥ ४९ ॥ वायुसुपर्णेन्द्राणामेतेषां मानुषोत्तरे शैले । हरेर्हरिप्रभस्य च विद्युत्प्रभमाल्यवतोः ॥ ५० ॥ एतेषां देवानां बलवीर्यपराक्रमञ्च यो यस्य । तं सुन्दरि! वर्णयेऽहं यथाक्रममानुपूर्व्या ॥ ५१ ॥ यावच्च जम्बूद्वीपो यावच्च चमरस्य चमरचञ्चा । असुरैरसुरकन्याभिर्भवेत् तस्य

च. स. १४

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ॥५२॥

दीप अनुक्रम [५२]

विसओ भरेउं जे ॥ ५२ ॥ ९८० ॥ तं चेव समइरेगं बलिस्स वइरोयणस्स बोद्धव्वं । असुरेहिं असुरकण्णाहिं तस्स विसओ भरेउं जे ॥ ५३ ॥ ९८१ ॥ धरणोवि नागराया जंबुदीवं फडाइ छाइज्जा । तं चेव समइरेगं भूयाणंदे य बोद्धव्वं ॥ ५४ ॥ ९८२ ॥ गुरुलोऽवि वेणुदेवो जंबुदीवं छइज्ज पक्खेणं । तं चेव समइरेगं वेणुदालिम्मि बोद्धव्वं ॥ ५५ ॥ ९८३ ॥ पुण्णोवि जंबुदीवं पाणितलेणं छइज्ज इक्केणं । तं चेव समइरेगं हवइ वसिट्ठेवि बोद्धव्वं ॥ ५६ ॥ ९८४ ॥ इक्काइ जलुम्मीए जंबुदीवं भरिज्ज जलकंतो । तं चेव समइरेगं जलप्पभे होइ बोद्धव्वं ॥ ५७ ॥ ९८५ ॥ अमियगइस्सवि विसओ जंबुदीवं तु पायपण्हीए । कंपिज्ज निरवसेसं इयरो पुण तं समइरेगं ॥ ५८ ॥ ९८६ ॥ इक्काइ वायुगुंजाइ जंबुदीवं भरिज्ज वेलंबो । तं चेव समइरेगं पभंजणे होइ बोद्धव्वं ॥ ५९ ॥ ९८७ ॥ घोसोऽवि जंबुदीवं सुंदरि ! इक्केण थणियसद्देणं । बहिरीकरिज्ज सव्वं इयरो पुण तं समइरेगं

विषयः ॥ ५२ ॥ स एव समतिरेको बलेर्वैरोचनस्य बोद्धव्यः । असुरैरसुरकन्याभिर्भर्त्तुं तस्य विषयः ॥ ५३ ॥ धरणोऽपि नागराजो जम्बूद्वीपं फणेनाच्छादयेत् । तमेव समतिरेकं भूतानन्दे च बोद्धव्यः ॥ ५४ ॥ गरुडोऽपि वेणुदेवो जम्बूद्वीपमाच्छादयेत् पक्षेण । तमेव समतिरेकं वेणुदालौ बोद्धव्यः ॥ ५५ ॥ पूर्णोऽपि जम्बूद्वीपं पाणितलेनाच्छादयेदेकेन । तमेव समतिरेकं भवति वशिष्टेऽपि बोद्धव्यः ॥ ५६ ॥ एकया जलोर्म्या जम्बूद्वीपं भरेज्जलकान्तः । तमेव समतिरेकं जलप्रभे भवति बोद्धव्यः ॥ ५७ ॥ अमितगतेरपि विषयो जम्बूद्वीपं तु पादपार्ष्णिना । कम्पयेन्निरवशेषमितरः पुनस्तं समतिरेकम् ॥ ५८ ॥ एकया वातगुञ्जया जम्बूद्वीपं भरेद्वेलम्बः । तमेव समतिरेकं प्रभञ्जने भवति बोद्धव्यः ॥ ५९ ॥ घोषोऽपि जम्बूद्वीपं सुन्दरि ! एकेन स्तनितशब्देन । बधिरीकुर्यात्सर्वमितरः पुनस्तं समतिरे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ॥६१॥ दीप अनुक्रम [६१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया

॥ ६० ॥ ९८८ ॥ इक्काइ विज्जुयाए जंबुदीवं हरी पकासिज्ज । तं चेव समइरेगं हरिस्सहे होइ बोद्धव्वं ॥ ६१ ॥
॥ ९८९ ॥ इक्काइ अग्गिजालाइ जंबुदीवं डहिज्ज अग्गिसिहो । तं चेव समइरेगं माणवए होइ बोद्धव्वं ॥ ६२ ॥
॥ ९९० ॥ तिरियं तु असंखिज्जा दीवसमुद्दा सएहिं रूवेहिं । अवगाढाउ करिज्जा सुंदरि ! एएसि एगयरो
॥ ६३ ॥ ९९१ ॥ पभू अन्नयरो इंदो जंबुदीवं तु वामहत्थेण । छत्तं जहा धरिज्जा अन्नयओ मंदरं घित्तुं ॥ ६४ ॥
॥ ९९२ ॥ जंबुदीवं काऊण छत्तयं मंदरं व से दंडं । पभू अन्नयरो इंदो एसो तेसिं बलविसेसो ॥ ६५ ॥ ९९३ ॥
एसा भवणवईणं भवणठिई वन्निया समासेणं । सुण वाणमंतराणं भवणवईआणुपुव्वीए ॥ ६६ ॥ ९९४ ॥
पिसाय भूआ जक्खा य रक्खसा किन्नरा य किंपुरिसा । महोरगा य गंधव्वा अट्ठविहा वाणमंतरिया ॥ ६७ ॥
॥ ९९५ ॥ एए उ समासेणं कहिया भे वाणमंतरा देवा । पत्तेयंपि य वुच्छं सोलस इंदे महिड्ढीए ॥६८॥ ९९६ ॥

कम् ॥ ६० ॥ एकया विद्युता जम्बूद्वीपं हरिः प्रकाशयेत् । तमेव समतिरेकं हरिसहे भवति बोद्धव्यः ॥ ६१ ॥ एकयाऽग्निज्वालया जम्बूद्वीपं दहेदग्निशिखः । तमेव समतिरेकं माणवके भवति बोद्धव्यः ॥ ६२ ॥ तिर्यक् तु असङ्ख्येयान् द्वीपसमुद्रान् स्वकै रूपैः । अवगाढान् कुर्यात् सुन्दरि! एतेषामेकतरः ॥ ६३ ॥ प्रभुरेकतर इन्द्रो जम्बूद्वीपं तु वामहस्तेन । छत्रं यथा धर्त्तुमन्यतो मन्दरं ग्रहीतुम् ॥ ६४ ॥ जम्बूद्वीपं कर्त्तुं छत्रं मन्दरं च तस्य दण्डम् । प्रभुरन्यतर इन्द्र एष तेषां बलविशेषः ॥ ६५ ॥ एषा भवनपतीनां भवनस्थितिर्वर्णिता समासेन । शृणु व्यन्तराणां भवनपत्यानुपूर्व्या ॥ ६६ ॥ पिशाचा भूता यक्षाश्च राक्षसाः किन्नराश्च किंपुरुषाः । महोरगाश्च गान्धर्वा अष्टविधा व्यन्तराः ॥ ६७ ॥ एते तु समासेन कथिता भवत्या व्यन्तरा देवाः । प्रत्येकमपि च वक्ष्ये षोडशेन्द्रान् महर्धिकान्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ वानव्यंतर-अधिकार: आरभ्यते

काल य महाकाल सुरूव पडिरूव पुन्नभद्द य । अमरवइ माणिभद्द भीम य तहा महाभीम ॥ ६९ ॥ ९९७ ॥
किन्नरकिंपुरिसे खलु सप्पुरिसे खलु तहा महापुरिसे । अइकायमहाकाए गीयरई चेव गीयजसे ॥७०॥९९८॥
सन्निहिए सामाणे धाइ विधाए विसी य इसिपाले । इस्सर महिस्सरे या हवइ सुवच्छे विसाले य ॥ ७१ ॥
॥ ९९९ ॥ हासे हासरईविअ सेए अ तहा भवे महासेए । पयए पययावईविय नेयव्वा आणुपुवीइ ॥ ७२ ॥
॥१०००॥ उड्ढमहे तिरियंमि य वसहिं ओविंति वंतरा देवा । भवणा पुणण्ह रयणप्पभाइ उवरिल्लए कंडे
॥ ७३ ॥ १००१ ॥ इक्किक्कम्मि य जुयले नियमा भवणा वरा असंखिज्जा । संखिज्जवित्थडा पुण नवरं एतत्थ
नाणत्तं ॥ ७४ ॥ १००२ ॥ जंबुद्दीवसमा खलु उक्कोसेणं भवंति भवणवरा । खुड्डा खित्तसमाविअ विदेहसमया य मज्झिमया ॥ ७५ ॥ १००३ ॥ जहिं देवा वंतरिया वरतरुणीगीयवाइयरवेणं । निच्चसुहिया पमु-

॥ ६८ ॥ कालश्च महाकालः सुरूपः प्रतिरूपः पूर्णभद्रश्च । अमरपतिर्माणिभद्रो भीमश्च तथा महाभीमः ॥ ६९ ॥ किन्नरः किंपुरुषः
खलु सत्पुरुषः खलु तथा महापुरुषः । अतिकायो महाकायो गीतरतिश्चैव गीतयशाः ॥ ७० ॥ सन्निहितः सामानो धाता विधाता
ऋषिः ऋषिपालः । ईश्वरो महेश्वरश्च भवति सुवत्सो विशालश्च ॥ ७१ ॥ हासो हासरतिरपि च श्वेतश्च तथा भवति महाश्वेतः । पत-
ङ्गश्च पतङ्गपतिरपि च ज्ञातव्या आनुपूर्व्या ॥ ७२ ॥ ऊर्ध्वमधस्तिरश्चि च वसतिमुपयन्ति व्यन्तरा देवाः । भवनानि पुनरेषां रत्नप्रभायां
उपरितने काण्डे ॥ ७३ ॥ एकैकस्मिंश्च युगले नियमाद्भवनानि वराण्यसङ्ख्येयानि । सङ्ख्यातविस्तृतानि पुनः परमत्र नानात्वम् ॥ ७४ ॥
जम्बूद्वीपसमानि खलु उत्कृष्टेन भवन्ति भवनवराणि । क्षुल्लानि भरतक्षेत्रसमान्यपि च विदेहसमानि च मध्यमानि ॥ ७५ ॥ यत्र देवा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||७६|| दीप अनुक्रम [७६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया

इया गयंपि कालं न याणंति ॥ ७६ ॥ १००४ ॥ काले सुरूव पुण्णे भीमे तह किन्नरे य सप्पुरिसे । अइकाए गीयरई अट्ठेव य हुंति दाहिणओ ॥ ७७ ॥ १००५ ॥ मणिकणगरयणथूभिअजंबूणयवेइयाइं भवणाइं । एएसिं दाहिणओ सेसाणं उत्तरे पासे ॥ ७८ ॥ १००६ ॥ दस वाससहस्साइं ठिई जहन्ना उ वंतरसुराणं । पलिओवमं तु इक्कं ठिई उ उक्कोसिया तेसिं ॥ ७९ ॥ १००७ ॥ एसा वंतरियाणं भवणठिई वन्निया समासेणं । सुण जोइसालयाणं आवासविहिं सुरवराणं ॥८०॥ १००८ ॥ चंदा सूरा तारागणा य नक्खत्त गहगण समत्ता । पंचविहा जोइसिया ठिई वियारी य ते गणिया ॥ ८१ ॥ १००९ ॥ अद्धकविट्ठगसंठाणसंठिया फालियामया रम्मा । जोइसियाण विमाणा तिरियंलोए असंखिज्जा ॥ ८२ ॥ १०१० ॥ धरणियलाउ समाओ सत्तहिं नउएहिं जोयणसएहिं । हिट्ठिल्लो होइ तलो सूरो पुण अट्ठहिं सएहिं ॥ ८३ ॥ १०११ ॥ अट्ठसए आसीए चंदो

व्यन्तरा वरतरुणीगीतवादित्ररवेण । नित्यसुखिताः प्रमुदिता गतमपि कालं न जानन्ति ॥ ७६ ॥ कालः सुरूपः पूर्णो भीमस्तथा किन्नरश्च सत्पुरुषः । अतिकायो गीतरतिः अष्टैव च भवन्ति दक्षिणस्याम् ॥७७॥ मणिकनकरत्नस्तूपिकानि जाम्बूनदवेदिकानि भवनानि । एतेषां दक्षिणतः शेषाणामुत्तरे पार्श्वे ॥ ७८ ॥ दश वर्षसहस्राणि जघन्या स्थितिस्तु व्यन्तरसुराणाम् । पल्योपमं त्वेकं स्थितिस्तूत्कृष्टैषाम् ॥७९॥ एषा व्यन्तराणां भवनस्थितिर्वर्णिता समासेन । शृणु ज्योतिष्काणामावासविधिं सुरवराणाम् ॥ ८० ॥ चन्द्राः सूर्यास्तारकागणश्च नक्षत्राणि ग्रहगणः समस्ताः । पञ्चविधा ज्योतिष्काः स्थितिमन्तो विचारिणश्च ते गणिताः ॥ ८१ ॥ अर्द्धकपित्थसंस्थानसंस्थितानि स्फटिकमयानि रम्याणि । ज्योतिष्काणां विमानानि तिर्यग्लोकेऽसङ्ख्यातानि ॥ ८२ ॥ समाद् धरणितलात्सप्तभिर्नवतैर्योजनशतैः । अधस्तनं

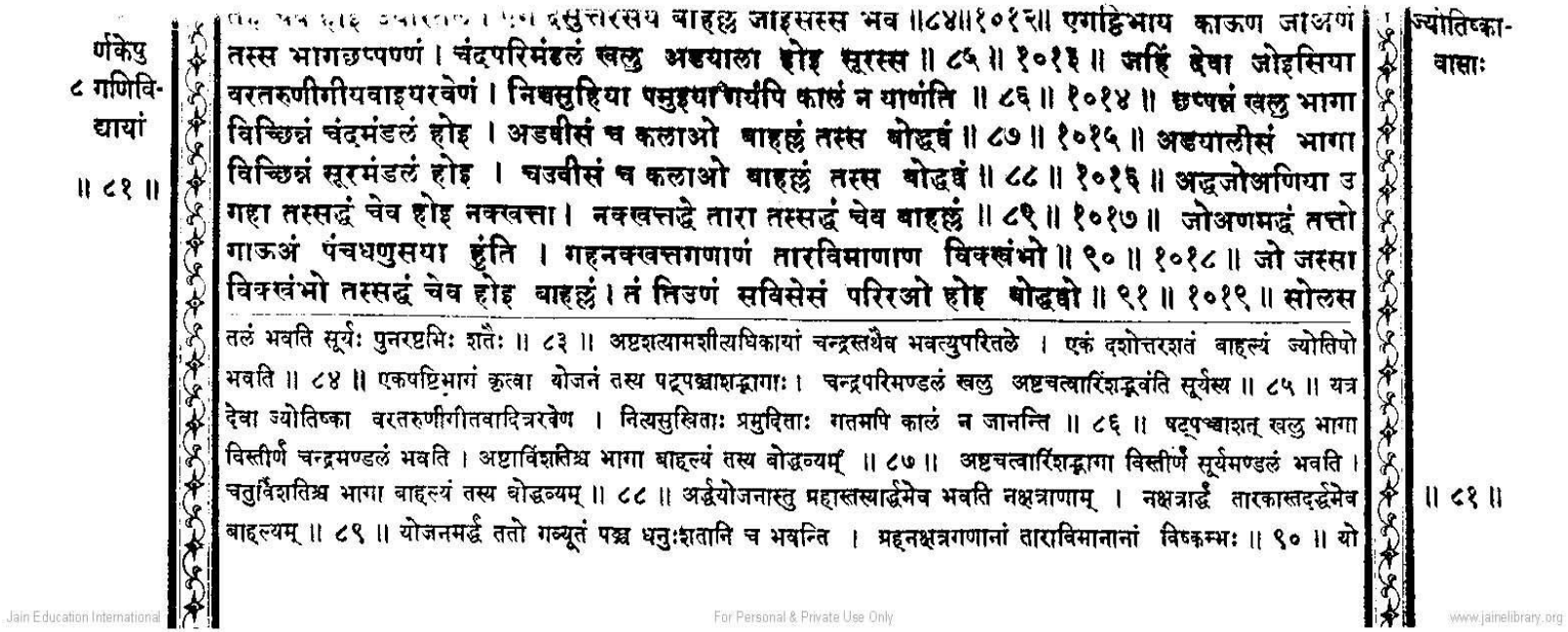
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ ज्योतिष्क-अधिकार: आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया

प्रत सूत्रांक ||८४||

दीप अनुक्रम [८४]



णकेषु ८ गणिवि- द्यायां ॥ ८१ ॥

[illegible] [illegible] [illegible] [

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया

प्रत सूत्रांक ||९२||

दीप अनुक्रम [९२]

चेव सहस्सा अट्ठ य चउरो य दुन्नि य सहस्सा । जोइसिआण विमाणा वहंति देवाभिउगाओ ॥९२॥१०२०॥ पुरओ वहंति सीहा दाहिणओ कुंजरा महाकाया । पच्चत्थिमेण वसहा तुरगा पुण उत्तरे पासे ॥९३॥१०२१॥ चंदेहि उ सिग्घयरा सूरा सूरेहिं तह गहा सिग्घा । नक्खत्ता उ गहेहि य नक्खत्तेहिं तु ताराओ ॥ ९४ ॥ ॥ १०२२ ॥ सव्वप्पगई चंदा तारा पुण हुंति सव्वसिग्घगई । एसो गईविसेसो जोइसियाणं तु देवाणं ॥ ९५ ॥ ॥ १०२३ ॥ अप्पिड्ढियाओ तारा नक्खत्ता खलु तओ महिड्ढियए । नक्खत्तेहिं तु गहा गहेहिं सूरा तओ चंदा ॥ ९६ ॥ १०२४ ॥ सव्वब्भितरऽभीई मूलो पुण सव्वबाहिरो भमइ । सव्वोवरिं च साई भरणी पुण सव्वहिट्ठिमया ॥ ९७ ॥ १०२५ ॥ साहा गहनक्खत्ता मज्झेगा हुंति चंदसूराणं । हिट्ठा समं च उप्पिं ताराओ

यस्य विष्कम्भस्तस्य तदर्द्धमेव भवति बाहल्यम् । सविशेषत्रिगुणः परिरयो भवति बोद्धव्यः ॥ ९१ ॥ षोडशैव सहस्राणि अष्टौ च चत्वारि च द्वे च सहस्रे । ज्योतिष्काणां विमानानि आभियोगिका देवा वहन्ति ॥ ९२ ॥ पुरतो वहन्ति सिंहा दक्षिणतः कुञ्जरा महाकायाः । पश्चिमायां वृषभास्तुरगाः पुनरुत्तरे पार्श्वे ॥ ९३ ॥ चन्द्रेभ्यस्तु शीघ्रतराः सूर्याः सूर्येभ्यस्तथा ग्रहाः शीघ्राः । नक्षत्राणि तु ग्रहेभ्यश्च नक्षत्रेभ्यस्तु तारकाः ॥ ९४ ॥ सर्वाल्पगतयश्चन्द्रास्तारकाः पुनर्भवन्ति सर्वशीघ्रगतयः । एष गतिविशेषो ज्योतिष्काणां तु देवानाम् ॥ ९५ ॥ अल्पर्द्धिकास्तारका नक्षत्राणि खलु ततो महर्द्धिकतराणि । नक्षत्रेभ्यस्तु ग्रहा ग्रहेभ्यः सूर्यास्तेभ्यः चन्द्राः ॥ ९६ ॥ सर्वाभ्यन्तरेऽभिजिन्मूलः पुनः सर्वबाह्ये भ्राम्यति । सर्वोपरिष्टाच्च स्वातिर्भरणिः पुनः सर्वाधस्तात् ॥ ९७ ॥ शाखा ग्रहनक्षत्राणि चन्द्रसूर्ययोः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चंदसूराणं ॥ ९८ ॥ १०२६ ॥ पंचेव धणुसयाइं जहन्नयं अंतरं तु ताराणं । दो चेव गाउआइं निव्वाघाएण उक्कोसं ॥ ९९ ॥ १०२७ ॥ दोन्नि सए छावट्ठे जहन्नयं अंतरं तु ताराणं । बारस चेव सहस्सा दो बायाला य उक्कोसा ॥ १०० ॥ १०२८ ॥ एयस्स चंदजोगो सत्तट्ठिं खंडिओ अहोरत्तो । ते हुंति नव मुहुत्ता सत्तावीसं कलाओ अ ॥ १०१ ॥ १०२९ ॥ सयभिसया भरणीओ अद्दा अस्सेस साइ जिट्ठा य । एए छन्नक्खत्ता पन्नरसमुहुत्तसंजोगा ॥ १०२ ॥ १०३० ॥ तिन्नेव उत्तराइं पुणवसू रोहिणी विसाहा य । एए छन्नक्खत्ता पणयालमुहुत्तसंजोगा ॥ १०३ ॥ १०३१ ॥ अवसेसा नक्खत्ता पनरसया हुंति तीसइमुहुत्ता । चंदंमि एस जोगो नक्खत्ताणं मुणेयव्वो ॥ १०४ ॥ १०३२ ॥ अभिई छच्च मुहुत्ते चत्तारि अ केवले अहोरत्ते । सूरेण समं वच्चइ इत्तो सेसाण वुच्छामि ॥ १०५ ॥ १०३३ ॥ सयभिसया भरणीओ अद्दा अस्सेस साइ जिट्ठा य । वच्चंति

काश्चिन्मध्ये । अधः समुपरि च तारकाश्चन्द्रसूर्ययोः ॥ ९८ ॥ पञ्चैव धनुःशतानि जघन्यमन्तरं तु तारकाणाम् । द्वे एव गव्यूते निर्व्याघातेनोत्कृष्टम् ॥ ९९ ॥ द्वे शते षट्पष्ट्यधिके जघन्यमन्तरं तु तारकयोः । द्वादश चैव सहस्राणि द्वे शते द्विचत्वारिंशदुत्कृष्टतः ॥ १०० ॥ एतैश्चन्द्रयोगः सप्तषष्टिखण्डितोऽहोरात्रः । ते भवन्ति नव मुहूर्त्ताः सप्तविंशतिश्च भागाः (अभिजिति) ॥ १०१ ॥ शतमिषग् भरणी आर्द्राऽश्लेषा स्वातिर्ज्येष्ठा च । एतानि पञ्चदशमुहूर्त्तसंयोगानि ॥ १०२ ॥ त्रीण्येवोत्तराणि पुनर्वसू रोहिणी विशाखा च । एतानि पञ्चचत्वारिंशन्मुहूर्त्तसंयोगानि ॥ १०३ ॥ अवशेषाणि नक्षत्राणि पञ्चदश त्रिंशन्मुहूर्त्तसंयोगानि । चन्द्रे एष योगो नक्षत्राणां ज्ञातव्यः ॥ १०४ ॥ अभिजित् षट् च मुहूर्त्तान् चतुरश्च केवलानहोरात्रान् । सूर्येण समं व्रजति अतः शेषाणां वक्ष्ये ॥ १०५ ॥ शतभि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||१०६||

दीप अनुक्रम [१०६]

छऽहोरत्ते इक्कवीसं मुहुत्ते य ॥ १०६ ॥ १०३४ ॥ तिन्नेव उत्तराइं पुणवसू रोहिणी विसाहा य। वचंति मुहुत्ते तिन्नि चेव वीसवऽहोरत्ते ॥ १०७ ॥ १०३५ ॥ अवसेसा नक्खत्ता पण्णरसवि सूरसहगया जंति । बारस चेव मुहुत्ते तेरस य समे अहोरत्ते ॥ १०८ ॥ १०३६ ॥ दो चंदा दो सूरा नक्खत्ता खलु हवंति छप्पन्ना । छावत्तरं गहसयं जंबुदीवे वियारीणं ॥ १०९ ॥ १०३७ ॥ इक्कं च सयसहस्सं तित्तीसं खलु भवे सहस्साइं । नव य सया पण्णासा तारागणकोडिकोडीणं ॥ ११० ॥ १०३८ ॥ चत्तारि चेव चंदा चत्तारि य सूरिया लवणजले । बारं नक्खत्तसयं गहाण तिन्नेव बावन्ना ॥ १११ ॥ १०३९ ॥ दो चेव सयसहस्सा सत्तट्ठिं खलु भवे सहस्साइं । नव य सया लवणजले तारागणकोडिकोडीणं ॥ ११२ ॥ १०४० ॥ चउवीसं ससिरविणो नक्खत्तसया य तिण्णि छत्तीसा । इक्कं च गहसहस्सं छप्पन्नं धायईसंडे ॥ ११३ ॥ १०४१ ॥ अट्ठेव सयसहस्सा

पग् भरणी आर्द्राऽश्लेषा स्वातिर्ज्येष्ठा । व्रजन्ति षडहोरात्रान् एकविंशतिं मुहूर्त्तान् ॥ १०६ ॥ त्रीण्येवोत्तराणि पुनर्वसू रोहिणी विशाखा च । व्रजन्ति त्रीनेव मुहूर्त्तान् विंशतिं चाहोरात्रान् ॥ १०७ ॥ अवशेषाणि नक्षत्राणि पञ्चदशाऽपि सूर्यसहगतानि यान्ति । द्वादशैव मुहूर्त्तान् त्रयोदश च समानहोरात्रान् ॥ १०८ ॥ द्वौ चन्द्रौ द्वौ सूर्यौ नक्षत्राणि खलु भवन्ति षट्पञ्चाशत् । षट्सप्तत्यधिकं ग्रहशतं जम्बूद्वीपे विचारि ॥१०९॥ एकं च शतसहस्रं त्रयस्त्रिंशत्खलु भवन्ति सहस्राणि । नव च शतानि पञ्चाशच्च तारागणकोटीकोट्यः ॥ ११० ॥ चत्वार एव चन्द्राश्चत्वारश्च सूर्या लवणजले । द्वादशं नक्षत्रशतं ग्रहाणां द्वापञ्चाशदधिकानि त्रीणि शतानि ॥ १११ ॥ द्वे एव शतसहस्रे सप्तषष्टिश्च खलु भवन्ति सहस्राणि । नव च शतानि लवणजले तारकगणकोटीकोटीनाम् ॥ ११२ ॥ चतुर्विंशतिः शशिनो रवयश्च नक्ष-

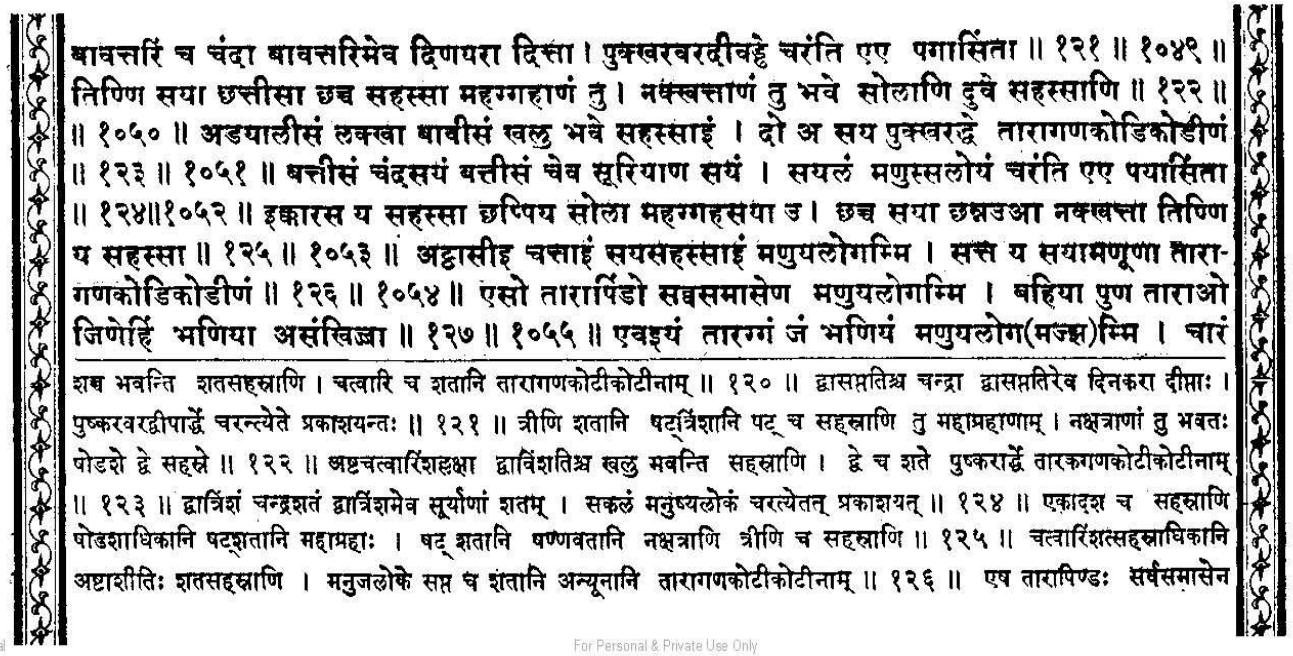
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तिण्णि सहस्सा य सत्त य सया उ । धायईसंडे दीवे तारागणकोडिकोडीणं ॥ ११४ ॥ १०४२ ॥ बायालीसं चंदा बायालीसं च दिणयरा दित्ता । कालोदहिंमि एए चरंति संबद्धलेसाया ॥ ११५ ॥ १०४३ ॥ नक्खत्तमिगसहस्सं एगमेव छावत्तरिं च सयमन्नं । छच्च सया छन्नउआ महग्गहाण तिन्नि य सहस्सा ॥११६॥१०४४॥ अट्ठावीसं कालोदहिम्मि बारस य सहस्साइं । नव य सया पन्नासा तारागणकोडिकोडीणं ॥११७॥ १०४५ ॥ चोयालं चंदसयं चोयालं चेव सूरियाण सयं । पुक्खवरम्मि एए चरंति संबद्धलेसाया ॥ ११८ ॥ १०४६ ॥ चत्तारिं च सहस्सा बत्तीसं चेव हुंति नक्खत्ता । छच्च सया बावत्तर महग्गहा बारस सहस्सा ॥११९॥१०४७॥ छन्नउइ सयसहस्सा चोयालीसं भवे सहस्साइं । चत्तारी य सयाइं तारागणकोडिकोडीणं ॥ १२० ॥ १०४८ ॥

त्रशतानि च त्रीणि षट्त्रिंशानि । एकं च ग्रहसहस्रं षट्पञ्चाशं धातकीखण्डे ॥ ११३ ॥ अष्टैव शतसहस्राणि त्रीणि सहस्राणि सप्त च शतानि । धातकीखण्डे तारागणकोटीकोटीनाम् ॥ ११४ ॥ द्विचत्वारिंशच्चन्द्राः द्विचत्वारिंशच्च दिनकरा दीप्ताः । कालोदधावेते चरन्ति संबद्धलेश्याकाः ॥ ११५ ॥ नक्षत्राणामेकं सहस्रं षट्सप्ततं शतमेकमन्यच्च । षट् च शतानि षण्णवतानि महाग्रहाणां त्रीणि च सहस्राणि ॥११६॥ अष्टाविंशतिर्लक्षाः कालोदधौ द्वादश च सहस्राणि । नव च शतानि पञ्चाशच्च तारागणकोटीकोटीनाम् ॥११७॥ चतुश्चत्वारिंशं चन्द्रशतं चतुश्चत्वारिंशमेव सूर्याणां शतम् । पुष्करवरे एते चरन्ति संबद्धलेश्याकाः ॥ ११८ ॥ चत्वारि च सहस्राणि द्वात्रिंशान्येव भवन्ति नक्षत्राणि । षट् च शतानि द्वासप्ततानि महाग्रहा द्वादश सहस्राणि ॥ ११९ ॥ षण्णवतिः शतसहस्राणि चतुश्चत्वारिं-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ॥१२१॥ दीप अनुक्रम [१२१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया



बावत्तरिं च चंदा बावत्तरिमेव दिणयरा दित्ता । पुक्खरवरदीवड्ढे चरंति एए पगासिंता ॥ १२१ ॥ १०४९ ॥ तिण्णि सया छत्तीसा छच्च सहस्सा महग्गहाणं तु । नक्खत्ताणं तु भवे सोलाणि दुवे सहस्साणि ॥ १२२ ॥ ॥ १०५० ॥ अडयालीसं लक्खा बावीसं खलु भवे सहस्साइं । दो अ सय पुक्खरद्धे तारागणकोडिकोडीणं ॥ १२३ ॥ १०५१ ॥ बत्तीसं चंदसयं बत्तीसं चेव सूरियाण सयं । सयलं मणुस्सलोयं चरंति एए पयासिंता ॥ १२४॥१०५२ ॥ इक्कारस य सहस्सा छप्पिय सोला महग्गहसया उ । छच्च सया छन्नउआ नक्खत्ता तिण्णि य सहस्सा ॥ १२५ ॥ १०५३ ॥ अट्ठासीइ चत्ताइं सयसहस्साइं मणुयलोगम्मि । सत्त य सयामणूणा तारागणकोडिकोडीणं ॥ १२६ ॥ १०५४ ॥ एसो तारापिंडो सव्वसमासेण मणुयलोगम्मि । बहिया पुण ताराओ जिणेहिं भणिया असंखिज्जा ॥ १२७ ॥ १०५५ ॥ एवइयं तारग्गं जं भणियं मणुयलोग(मज्झ)म्मि । चारं

शत भवन्ति शतसहस्राणि । चत्वारि च शतानि तारागणकोटीकोटीनाम् ॥ १२० ॥ द्वासप्ततिश्च चन्द्रा द्वासप्ततिरेव दिनकरा दीप्ताः । पुष्करवरद्वीपार्द्धे चरन्त्येते प्रकाशयन्तः ॥ १२१ ॥ त्रीणि शतानि षट्त्रिंशानि षट् च सहस्राणि तु महाग्रहाणाम् । नक्षत्राणां तु भवतः षोडशे द्वे सहस्रे ॥ १२२ ॥ अष्टचत्वारिंशल्लक्षा द्वाविंशतिश्च खलु भवन्ति सहस्राणि । द्वे च शते पुष्करार्द्धे तारकगणकोटीकोटीनाम् ॥ १२३ ॥ द्वात्रिंशं चन्द्रशतं द्वात्रिंशमेव सूर्याणां शतम् । सकलं मनुष्यलोकं चरत्येतत् प्रकाशयत् ॥ १२४ ॥ एकादश च सहस्राणि षोडशाधिकानि षट्शतानि महाग्रहाः । षट् शतानि षण्णवतानि नक्षत्राणि त्रीणि च सहस्राणि ॥ १२५ ॥ चत्वारिंशत्सहस्राधिकानि अष्टाशीतिः शतसहस्राणि । मनुजलोके सप्त च शतानि अन्यूनानि तारागणकोटीकोटीनाम् ॥ १२६ ॥ एष तारापिण्डः सर्वसमासेन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया

प्रत सूत्रांक ||१२८||

दीप अनुक्रम [१२८]

कलंबुयापुप्फसंठियं जोइसं चरइ ॥ १२८ ॥ १०५६ ॥ रविससिगहनक्खत्ता एवइआ आहिया मणुयलोए । जेसिं नामागोयं न पागया पन्नवेइंति ॥ १२९ ॥ १०५७ ॥ छावट्ठिं पिडयाइं चंदाइच्चाण मणुयलोगम्मि । दो चंदा दो सूरा य हुंति इक्किक्कए पिडये ॥ १३० ॥ १०५८ ॥ छावट्ठिं पिडयाइं नक्खत्ताणं तु मणुयलोगम्मि । छप्पन्नं नक्खत्ता य हुंति इक्किक्कए पिडए ॥ १३१ ॥ १०५९ ॥ छावट्ठी पिडयाणं महग्गहाणं तु मणुयलोगम्मि । छावत्तरं गहसयं च होइ इक्किक्कए पिडए ॥ १३२ ॥ १०६० ॥ चत्तारि य पंतीओ चंदाइच्चाण मणुयलोगम्मि । छावट्ठिं छावट्ठिं होइ इक्किक्कया पंती ॥ १३३ ॥ १०६१ ॥ छप्पन्नं पंतीणं नक्खत्ताणं तु मणुयलोगम्मि । छावट्ठिं छावट्ठिं च होइ इक्किक्कया पंती ॥ १३४ ॥ १०६२ ॥ छावत्तरं गहाणं पंतिसयं होइ मणुय-

---

मनुजलोके । बहिस्तात्पुनस्तारका जिनैर्भणिता असङ्ख्येयाः ॥ १२७ ॥ एतावत्तारामं यद्भणितं मनुजलोकमध्ये । कदम्बकपुष्पसंस्थितं ज्योतिश्चारं चरति ॥ १२८ ॥ रविशशिग्रहनक्षत्राण्येतावन्त्याख्यातानि मनुजलोके । येषां नामगोत्रं न प्राकृताः प्रज्ञापयन्ति ॥ १२९ ॥ षट्षष्टिः पिटकानि चन्द्रादित्ययोर्मनुजलोके । द्वौ चन्द्रौ द्वौ सूर्यौ च भवन्त्येकैकस्मिन् पिटके ॥ १३० ॥ षट्षष्टिः पिटकानि नक्षत्राणां तु मनुजलोके । षट्पञ्चाशन्नक्षत्राणि च भवन्त्येकैकस्मिन् पिटके ॥ १३१ ॥ षट्षष्टिः पिटकानि महाग्रहाणां तु मनुजलोके । षट्सप्तत्यधिकं ग्रहशतं च भवत्येकैकस्मिन् पिटके ॥१३२॥ चतस्रश्च पङ्क्तयश्चन्द्रादित्यानां मनुजलोके । षट्षष्टिः षट्षष्टिर्भवन्त्येकैकस्यां पङ्क्तौ ॥१३३॥ षट्पञ्चाशत् पङ्क्तयो नक्षत्राणां तु मनुजलोके । षट्षष्टिः २ भवन्त्येकैकस्यां पङ्क्तौ ॥ १३४ ॥ षट्सप्तत्यं ग्रहाणां पङ्क्तिशतं भवति मनुज-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||१३५|| दीप अनुक्रम [१३५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया

लोगम्मि । छावट्ठिं छावट्ठिं च होइ इक्किक्कया पंती ॥ १३५ ॥ १०६३ ॥ ते मेरुमाणुसुत्तर पयाहिणावत्तमंडला सव्वे । अणवट्ठिएहिं जोएहिं चंदा सूरा गहगणा य ॥ १३६ ॥ १०६४ ॥ नक्खत्ततारयाणं अवट्ठिया मंडला मुणेयव्वा । तेवि य पयाहिणावत्तमेव मेरुं अणुचरंति ॥ १३७ ॥ १०६५ ॥ रयणियरदिणयराणं उड्ढमहे एव संकमो नत्थि । मंडलसंकमणं पुण अब्भिंतरबाहिरं तिरियं ॥ १३८ ॥ १०६६ ॥ रयणियरदिणयराणं नक्खत्ताणं च महग्गहाणं च । चारविसेसेण भवे सुहदुक्खविही मणुस्साणं ॥ १३९ ॥ १०६७ ॥ तेसिं पविसंताणं तावक्खित्ते उ वड्ढए नियमा । तेणेव कमेण पुणो परिहायइ निक्खमिन्ताणं ॥ १४० ॥ १०६८ ॥ तेसिं कलंबुयापुप्फसंठिया हुंति तावक्खित्तमुहा । अंतो अ संकुला बाहिं च वित्थडा चंदसूराणं ॥ १४१ ॥ १०६९ ॥ केणं वड्ढइ चंदो? परिहाणी केण होइ चंदस्स? । कालो वा जुण्हा वा केणऽणुभावेण चंदस्स ? ॥ १४२ ॥

लोके । षट्षष्टिः २ भवन्त्येकैकस्यां पङ्क्तौ ॥ १३५ ॥ ते मेरुमानुषोत्तरयोः प्रदक्षिणावर्त्तमण्डलाः सर्वे । अनवस्थितैर्योगैश्चन्द्राः सूर्या ग्रहगणाश्च ॥ १३६ ॥ नक्षत्रतारकाणामवस्थितानि मण्डलानि ज्ञातव्यानि । तेऽपि च प्रदक्षिणावर्त्तमेव मेरुमनुचरन्ति ॥ १३७ ॥ रजनीकरदिनकराणामूर्द्ध्वमधश्च सङ्क्रमो नास्ति । मण्डलसङ्क्रमणं पुनरभ्यन्तरबाह्येषु तिरश्चि ॥ १३८ ॥ रजनीकरदिनकराणां नक्षत्राणां महाग्रहाणां च । चारविशेषेण भवति सुखदुःखविधिर्मनुष्याणाम् ॥ १३९ ॥ तेषु प्रविशत्सु तापक्षेत्रं तु वर्द्धते नियमात् । तेनैव क्रमेण पुनः परिहीयते निष्क्रामत्सु ॥ १४० ॥ तेषां कदम्बकपुष्पसंस्थितानि भवन्ति तापक्षेत्रमुखानि । अन्तश्च सङ्कटानि बहिश्च विस्तृतानि चन्द्रसूर्याणाम् ॥ १४१ ॥ केन चन्द्रो वर्द्धते ? परिहाणिः केन भवति चन्द्रस्य ? । कालिमा वा ज्योत्स्ना वा केनानुभावेन चन्द्रस्य ? ॥ १४२ ॥

च. स. १५

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

॥ १०७० ॥ किण्हं राहुविमाणं निचं चंदेण होइ अविरहियं । चउरंगुलमप्पत्तं हिट्ठा चंदस्स तं चरइ ॥१४३॥
॥१०७१॥ छावट्ठिं छावट्ठिं दिवसे दिवसे उ सुक्कपक्खस्स । जं परिवड्ढइ चंदो खवेइ तं चेव कालेणं ॥१४४॥१०७२॥
पन्नरसइ भागेण य चंदं पन्नरसमेव चंकमइ । पन्नरसइभागेण य पुणोवि तं चेव पक्कमइ ॥ १४५ ॥ १०७३ ॥
एवं वड्ढइ चंदो परिहाणी एव होइ चंदस्स । कालो वा जुण्हा वा तेण य(ऽणु) भावेण चंदस्स ॥१४६॥१०७४॥
अंतो मणुस्सखेत्ते हवंति चारोवगा य उववण्णा । पंचविहा जोइसिया चंदा सूरा गहगणा य ॥१४७॥१०७५॥
तेण परं जे सेसा चंदाइच्च गहतारनक्खत्ता । नत्थि गई नवि चारो अवट्ठिया ते मुणेयव्वा ॥ १४८ ॥ १०७६ ॥
दो चंदा इह दीवे चत्तारि य सागरे लवणतोए । धायइसंडे दीवे बारस चंदा य सूरा य ॥ १४९ ॥ १०७७ ॥
एगे जंबुद्दीवे दुगुणा लवणे चउग्गुणा हुंति । कालोयए तिगुणिया ससिसूरा धायईसंडे ॥ १५० ॥ १०७८ ॥

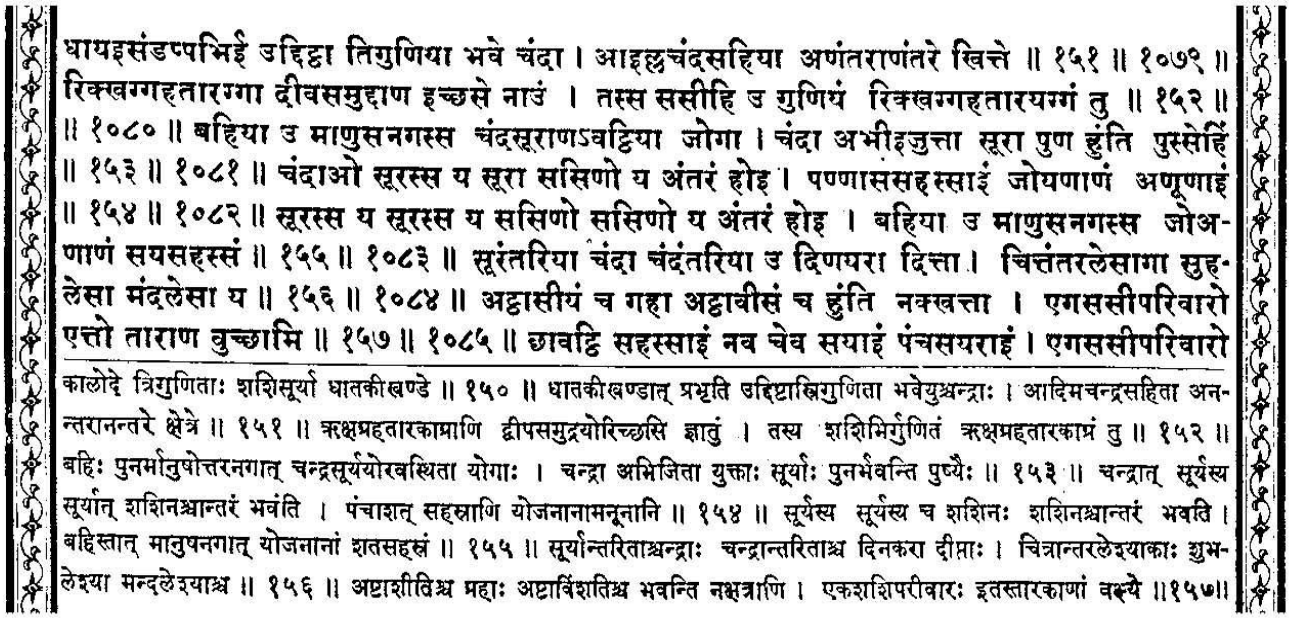
कृष्णं राहुविमानं नित्यं चन्द्रेण भवत्यविरहितम् । चतुरङ्गुलान्यप्राप्तमधस्ताच्चन्द्रस्य तच्चरति ॥ १४३ ॥ षट्षष्टिं षट्षष्टिं (भागं) दिवसे दिवसे तु शुक्लपक्षस्य । यत्परिवर्द्धयति चन्द्रं क्षपयति तावन्तमेव कृष्णस्य ॥ १४४ ॥ पञ्चदशभागेन च चन्द्रस्य पञ्चदशभागमेवाक्रामति । पञ्चदशभागेन च पुनरपि तत एव प्रक्राम्यति ॥१४५॥ एवं वर्द्धते चन्द्रः परिहाणिरेव भवति चन्द्रस्य । कालिमा वा ज्योत्स्ना वा तेन च भावेन चन्द्रस्य ॥ १४६ ॥ अन्तर्मनुष्यक्षेत्रे भवन्ति चारोपगाश्चो(श्चारो)पपन्नाः । पंचविधा ज्योतिषिकाः, चंद्राः सूर्या ग्रहगणाश्च ॥१४७॥ ततः परं ये शेषाश्चन्द्रादित्या ग्रहनक्षत्रारका नक्षत्राणि । नास्ति गतिर्नैव चारः अवस्थितास्ते ज्ञातव्याः ॥ १४८ ॥ द्वौ चन्द्राविह द्वीपे चत्वारश्च सागरे लवणतोये । धातकीखण्डे द्वीपे द्वादश चन्द्राश्च सूर्याश्च ॥ १४९ ॥ एको जम्बूद्वीपे द्विगुणा लवणे चतुर्गुणा भवन्ति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||१५१||

दीप अनुक्रम [१५१]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया



धायइसंडप्पभिई उद्दिट्ठा तिगुणिया भवे चंदा । आइल्लचंदसहिया अणंतराणंतरे खित्ते ॥ १५१ ॥ १०७९ ॥
रिक्खग्गहतारग्गा दीवसमुद्दाण इच्छसे नाउं । तस्स ससीहि उ गुणियं रिक्खग्गहतारयग्गं तु ॥ १५२ ॥
॥ १०८० ॥ बहिया उ माणुसनगस्स चंदसूराणऽवट्ठिया जोगा । चंदा अभीइजुत्ता सूरा पुण हुंति पुस्सेहिं
॥ १५३ ॥ १०८१ ॥ चंदाओ सूरस्स य सूरा ससिणो य अंतरं होइ । पण्णाससहस्साइं जोयणाणं अणूणाइं
॥ १५४ ॥ १०८२ ॥ सूरस्स य सूरस्स य ससिणो ससिणो य अंतरं होइ । बहिया उ माणुसनगस्स जोअ-
णाणं सयसहस्सं ॥ १५५ ॥ १०८३ ॥ सूरंतरिया चंदा चंदंतरिया उ दिणयरा दित्ता । चित्तंतरलेसागा सुह-
लेसा मंदलेसा य ॥ १५६ ॥ १०८४ ॥ अट्ठासीयं च गहा अट्ठावीसं च हुंति नक्खत्ता । एगससीपरिवारो
एत्तो ताराण वुच्छामि ॥ १५७ ॥ १०८५ ॥ छावट्ठि सहस्साइं नव चेव सयाइं पंचसयराइं । एगससीपरिवारो

कालोदे त्रिगुणिताः शशिसूर्या धातकीखण्डे ॥ १५० ॥ धातकीखण्डात् प्रभृति उद्दिष्टास्त्रिगुणिता भवेयुश्चन्द्राः । आदिमचन्द्रसहिता अन-
न्तरानन्तरे क्षेत्रे ॥ १५१ ॥ ऋक्षग्रहतारकाग्राणि द्वीपसमुद्रयोरिच्छसि ज्ञातुं । तस्य शशिभिर्गुणितं ऋक्षग्रहतारकाग्रं तु ॥ १५२ ॥
बहिः पुनर्मानुषोत्तरनगात् चन्द्रसूर्ययोरवस्थिता योगाः । चन्द्रा अभिजिता युक्ताः सूर्याः पुनर्भवन्ति पुष्यैः ॥ १५३ ॥ चन्द्रात् सूर्यस्य
सूर्यात् शशिनश्चान्तरं भवति । पंचाशत् सहस्राणि योजनानामनूनानि ॥ १५४ ॥ सूर्यस्य सूर्यस्य च शशिनः शशिनश्चान्तरं भवति ।
बहिस्तात् मानुषनगात् योजनानां शतसहस्रं ॥ १५५ ॥ सूर्यान्तरिताश्चन्द्राः चन्द्रान्तरिताश्च दिनकरा दीप्ताः । चित्रान्तरलेश्याकाः शुभ-
लेश्या मन्दलेश्याश्च ॥ १५६ ॥ अष्टाशीतिश्च ग्रहाः अष्टाविंशतिश्च भवन्ति नक्षत्राणि । एकशशिपरीवारः इतस्तारकाणां वक्ष्ये ॥१५७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया

प्रत सूत्रांक ||१५८||

दीप अनुक्रम [१५८]

तारागणकोडिकोडीणं ॥ १५८ ॥ १०८६ ॥ वाससहस्सं पलिओवमं च सूराण सा ठिई भणिया । पलिओवमं चंदाणं वाससयसहस्समब्भहियं ॥ १५९ ॥ १०८७ ॥ पलिओवमं गहाणं नक्खत्ताणं च जाण पलियद्धं । पलियचउत्थो भाओ ताराणवि सा ठिई भणिया ॥ १६० ॥ १०८८ ॥ पलिओवमट्ठभागो ठिई जहण्णा उ जोइसगणस्स । पलिओवममुक्कोसं वाससयसहस्समब्भहियं ॥ १६१ ॥ १०८९ ॥ भवणवइवाणवंतरजोइसवासी ठिई मए कहिया । कप्पवईवि य वुच्छं बारस इंदे महिड्ढीए ॥ १६२ ॥ १०९० ॥ पढमो सोहम्मवई ईसाणवई उ भन्नए बीओ । तत्तो सणंकुमारो हवइ चउत्थो उ माहिंदो ॥ १६३ ॥ १०९१ ॥ पंचमए पुण बंभो छट्ठो पुण लंतओऽत्थ देविंदो । सत्तमओ महसुक्को अट्ठमओ भवे सहस्सारो ॥ १६४ ॥ १०९२ ॥ नवमो अ आणइंदो दसमो उण पाणउऽत्थ देविंदो । आरण इक्कारसमो बारसमो अच्चुए इंदो ॥१६५॥ १०९३ ॥ एए

षट्षष्टिः सहस्राणि नव चैव शतानि पंचसप्ततानि । एकशशिपरीवारस्तारकगणकोटीकोटीनां ॥ १५८ ॥ वर्षसहस्रं पल्योपमं च सूर्याणां सा स्थितिर्भणिता । पल्योपमं चन्द्राणां वर्षशतसहस्राभ्यधिकम् ॥ १५९ ॥ पल्योपमं ग्रहाणां नक्षत्राणां च जानीहि पल्योपमार्धं । पल्यचतुर्थो भागस्तारकाणां सा स्थितिर्भणिता ॥ १६० ॥ पल्योपमाष्टभागः स्थितिर्जघन्या तु ज्योतिष्कगणस्य । पल्योपममुत्कृष्टं वर्षशतसहस्राभ्यधिकं ॥ १६१ ॥ भवनपतिव्यन्तरज्योतिष्कवासिनां स्थितिर्मया कथिता । कल्पपतीनपि वक्ष्ये द्वादशेन्द्रान् महर्द्धिकान् ॥ १६२ ॥ प्रथमः सौधर्मपतिरीशानपतिस्तु भण्यते द्वितीयः । ततः सनत्कुमारो भवति चतुर्थस्तु माहेन्द्रः ॥१६३॥ पंचमकः पुनर्ब्रह्मा षष्ठः पुनर्लान्तकोऽत्र देवेन्द्रः । सप्तमस्तु महाशुक्रोऽष्टमो भवेत्सहस्रारः ॥ १६४ ॥ नवमश्चानतेन्द्रो दशमः पुनः प्राणतोऽत्र देवेन्द्रः । आरण एकाद-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ वैमानिक-अधिकार: आरभ्यते

बारस इंदा कप्पवई कप्पसामिया भणिया । आणाईसरियं वा तेण परं नत्थि देवाणं ॥ १६६ ॥ १०९४ ॥ तेण परं देवगणा सयइच्छियभावणाइ उववन्ना । गेविज्जेहिं न सक्को उववाओ अन्नलिंगेणं ॥ १६७ ॥ १०९५ ॥ जे दंसणवावन्ना लिंगग्गहणं करंति सामण्णे । तेसिंपिय उववाओ उक्कोसो जाव गेविज्जा ॥ १६८ ॥ १०९६ ॥ इत्थ किर विमाणाणं बत्तीसं वण्णिया सयसहस्सा । सोहम्मकप्पवइणो सक्कस्स महाणुभागस्स ॥ १६९ ॥ ॥ १०९७ ॥ ईसाणकप्पवइणो अट्ठावीसं भवे सयसहस्सा । बारस्स सयसहस्सा कप्पम्मि सणंकुमारम्मि ॥ १७० ॥ १०९८ ॥ अट्ठेव सयसहस्सा माहिंदंमि उ भवंति कप्पम्मि । चत्तारि सयसहस्सा कप्पम्मि उ बंभलोगम्मि ॥ १७१ ॥ १०९९ ॥ इत्थ किर विमाणाणं पन्नासं लंतए सहस्साइं । चत्तारि महासुक्के छच सहस्सा सहस्सारे ॥ १७२ ॥ ११०० ॥ आणयपाणयकप्पे चत्तारि सया ऽऽरणचुए तिन्नि । सत्त विमाणस-

---

शो द्वादशोऽच्युत इन्द्रः ॥ १६५ ॥ एते द्वादश इन्द्राः कल्पपतयः कल्पस्वामिनो भणिताः । आज्ञा ऐश्वर्यं वा ततः परं नास्ति देवानां ॥ १६६ ॥ ततः परं देवगणाः स्वकेप्सितभावनायामुत्पन्नाः । ग्रैवेयकेषु न शक्योऽन्यलिंगेनोपपातः ॥ १६७ ॥ ये व्यापन्नदर्शना लिंगग्रहणं कुर्वन्ति श्रामण्ये । तेषामपि चोपपात उत्कृष्टो यावद् ग्रैवेयके ॥ १६८ ॥ अत्र किल विमानानां द्वात्रिंशद्वर्णितानि शतसहस्राणि । सौधर्मकल्पपतेः शक्रस्य महानुभागस्य ॥ १६९ ॥ ईशानकल्पपतेरष्टाविंशतिर्भवन्ति शतसहस्राणि । द्वादश शतसहस्राणि कल्पे सनत्कुमारे ॥ १७० ॥ अष्टैव शतसहस्राणि माहेन्द्रे तु भवन्ति कल्पे । चत्वारि शतसहस्राणि कल्पे तु ब्रह्मलोके ॥ १७१ ॥ अत्र किल विमानानां पंचाशत् लान्तके सहस्राणि । चत्वारिंशत् महाशुक्रे षट् च सहस्राणि सहस्रारे ॥ १७२ ॥ आनतप्राणतकल्पयोश्चत्वारि शतानि

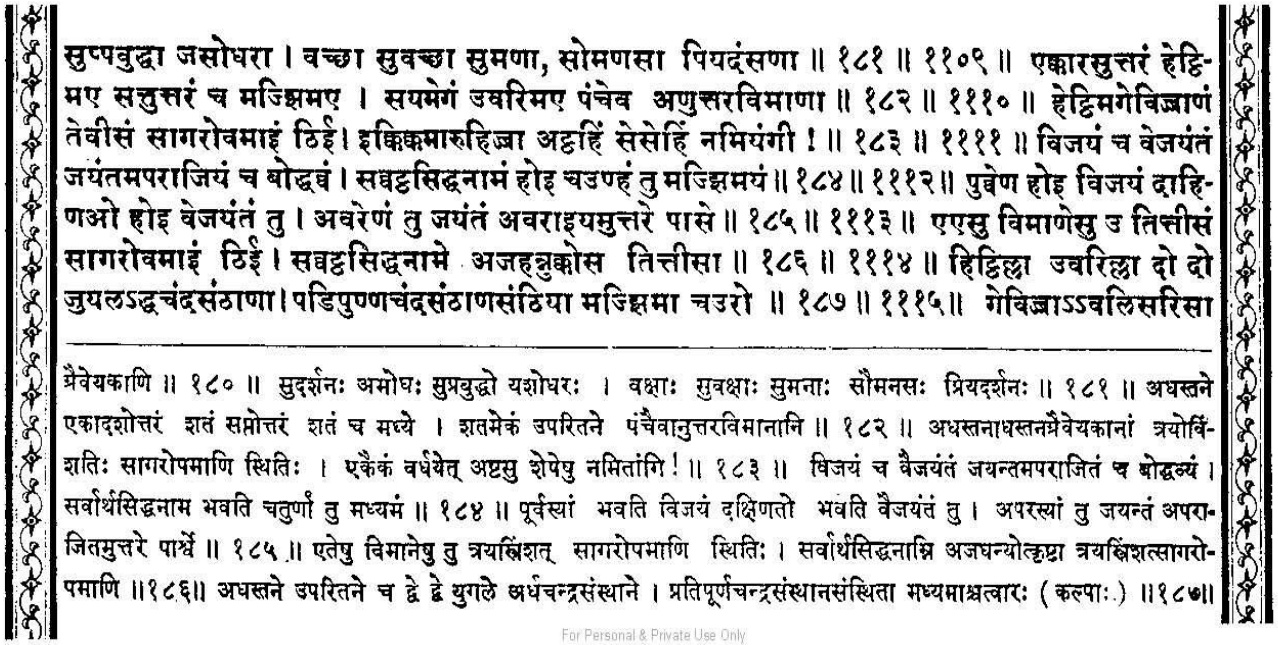
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

याइं चउसुवि एएसु कप्पेसु ॥ १७३ ॥ ११०१ ॥ एयाइ विमाणाइं कहियाइं जाइं जत्थ कप्पम्मि । कप्पवईणवि सुंदरि! ठिईविसेसे निसामेहि ॥ १७४ ॥ ११०२ ॥ दो सागरोवमाइं सक्कस्स ठिई महाणुभागस्स । साहीया ईसाणे सत्तेव सणंकुमारम्मि ॥ १७५ ॥ ११०३ ॥ माहिंदे साहियाइं सत्त दस चेव बंभलोगम्मि । चउदस लंतइ कप्पे सत्तरस भवे महासुक्के ॥ १७६ ॥ ११०४ ॥ कप्पम्मि सहस्सारे अट्ठारसु सागरोवमाइं ठिई । एगूणाऽऽणयकप्पे वीसा पुण पाणए कप्पे ॥ १७७ ॥ ११०५ ॥ पुण्णा य इक्कवीसा उदहिसनामाण आरणे कप्पे । अह अच्चुयम्मि कप्पे बावीसं सागराण ठिई ॥ १७८ ॥ ११०६ ॥ एसा कप्पवईणं कप्पठिई वण्णिया समासेणं । गेविज्जऽणुत्तराणं सुण अणुभागं विमाणाणं ॥ १७९ ॥ ११०७ ॥ तिण्णेव य गेविज्जा हिट्ठिल्ला मज्झिमा य उवरिल्ला । इक्किक्कंपि य तिविहं नव एवं हुंति गेविज्जा ॥१८०॥११०८॥ सुदंसणा अमोहा य,

आरणाच्युतयोस्त्रीणि । सप्त विमानशतानि चतुर्ष्वपि एतेषु कल्पेषु ॥ १७३ ॥ एतानि विमानानि कथितानि यानि यत्र कल्पे । कल्पपतीनामपि सुन्दरि! स्थितिविशेषान् निशमय ॥ १७४ ॥ द्वे सागरोपमे शक्रस्य स्थितिर्महानुभागस्य । साधिके ईशाने सप्तैव सनत्कुमारे ॥ १७५ ॥ माहेन्द्रे साधिकानि सप्त दशैव ब्रह्मलोके । चतुर्दश लान्तके कल्पे सप्तदश भवन्ति महाशुक्के ॥ १७६ ॥ कल्पे सहस्रारे अष्टादश सागरोपमाणि स्थितिः । एकोनविंशतिरानतकल्पे विंशतिः पुनः प्राणते कल्पे ॥ १७७ ॥ पूर्णा एकविंशतिः उदधिसनाम्नां आरणे कल्पे । अथाच्युते कल्पे द्वाविंशतिः सागरोपमाणां स्थितिः ॥ १७८ ॥ एषा कल्पपतीनां कल्पस्थितिर्वर्णिता समासेन । ग्रैवेयकानुत्तराणां शृणु अनुभागं विमानानां ॥ १७९ ॥ त्रीण्येव ग्रैवेयकाणि अधस्तनानि मध्यमान्युपरितनानि च । एकैकस्मिंश्च त्रिविधानि नवैवं भवन्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

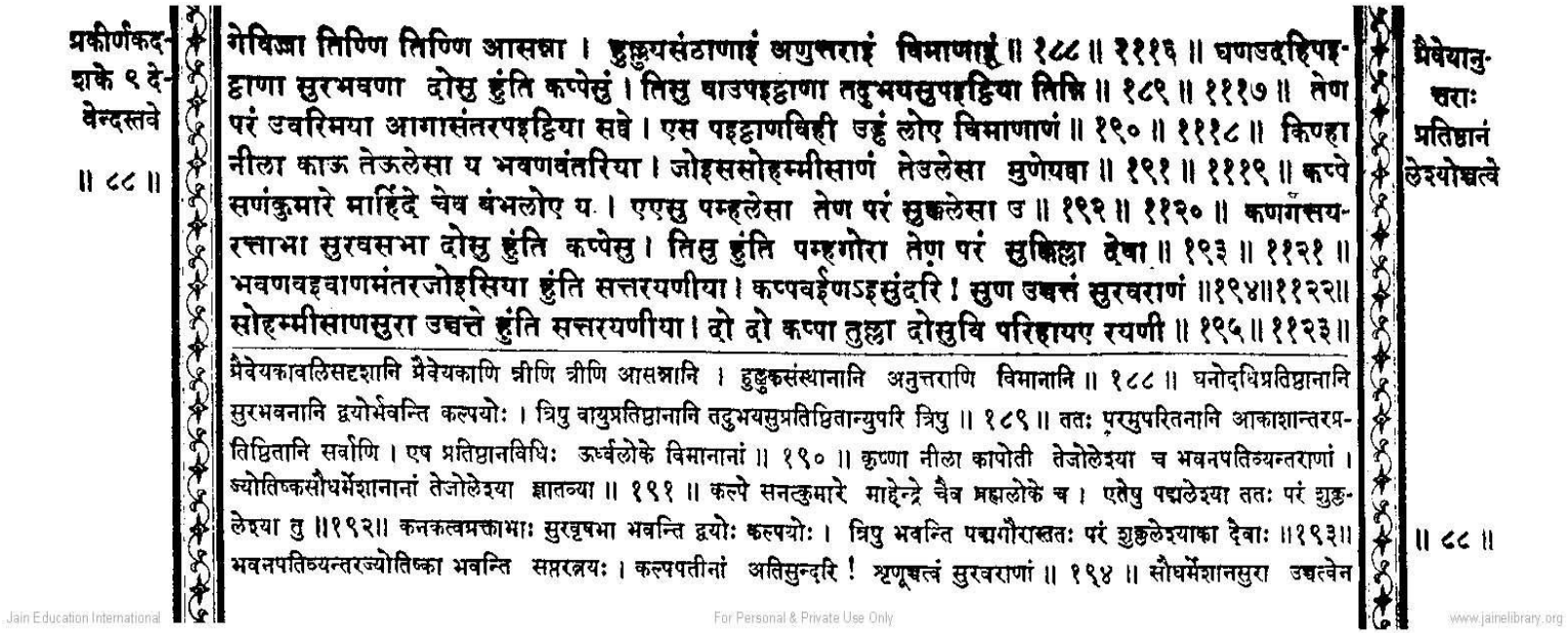
प्रत सूत्रांक ॥१८१॥ दीप अनुक्रम [१८१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया



सुप्पबुद्धा जसोधरा । वच्छा सुवच्छा सुमणा, सोमणसा पियदंसणा ॥ १८१ ॥ ११०९ ॥ एक्कारसुत्तरं हेट्ठिमए सत्तुत्तरं च मज्झिमए । सयमेगं उवरिमए पंचेव अणुत्तरविमाणा ॥ १८२ ॥ १११० ॥ हेट्ठिमगेवेज्जाणं तेवीसं सागरोवमाइं ठिई। इक्किक्कमारुहिज्जा अट्ठहिं सेसेहिं नमियंगी ! ॥ १८३ ॥ १११९ ॥ विजयं च वेजयंतं जयंतमपराजियं च बोद्धव्वं । सव्वट्ठसिद्धनामं होइ चउण्हं तु मज्झिमयं ॥ १८४ ॥ १११२ ॥ पुव्वेण होइ विजयं दाहिणओ होइ वेजयंतं तु । अवरेणं तु जयंतं अवराइयमुत्तरे पासे ॥ १८५ ॥ १११३ ॥ एएसु विमाणेसु उ तित्तीसं सागरोवमाइं ठिई । सव्वट्ठसिद्धनामे अजहन्नुक्कोस तित्तीसा ॥ १८६ ॥ १११४ ॥ हिट्ठिल्ला उवरिल्ला दो दो जुयलऽद्धचंदसंठाणा। पडिपुण्णचंदसंठाणसंठिया मज्झिमा चउरो ॥ १८७ ॥ १११५ ॥ गेविज्जाऽऽवलिसरिसा

ग्रैवेयकाणि ॥ १८० ॥ सुदर्शनः अमोघः सुप्रबुद्धो यशोधरः । वक्षाः सुवक्षाः सुमनाः सौमनसः प्रियदर्शनः ॥ १८१ ॥ अधस्तने एकादशोत्तरं शतं सप्तोत्तरं शतं च मध्ये । शतमेकं उपरितने पंचैवानुत्तरविमानानि ॥ १८२ ॥ अधस्तनाधस्तनग्रैवेयकानां त्रयोविंशतिः सागरोपमाणि स्थितिः । एकैकं वर्धयेत् अष्टसु शेषेषु नमितांगि ! ॥ १८३ ॥ विजयं च वैजयंतं जयन्तमपराजितं च बोद्धव्यं । सर्वार्थसिद्धनाम भवति चतुर्णां तु मध्यमं ॥ १८४ ॥ पूर्वस्यां भवति विजयं दक्षिणतो भवति वैजयंतं तु । अपरस्यां तु जयन्तं अपराजितमुत्तरे पार्श्वे ॥ १८५ ॥ एतेषु विमानेषु तु त्रयस्त्रिंशत् सागरोपमाणि स्थितिः । सर्वार्थसिद्धनाम्नि अजघन्योत्कृष्टा त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि ॥१८६॥ अधस्तने उपरितने च द्वे द्वे युगले अर्धचन्द्रसंस्थाने । प्रतिपूर्णचन्द्रसंस्थानसंस्थिता मध्यमाश्चत्वारः (कल्पाः) ॥१८७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



प्रकीर्णकदशके ९ देवेन्दस्तवे ॥ ८८ ॥

गेविज्जा तिण्णि तिण्णि आसन्ना । हुडुयसंठाणाइं अणुत्तराइं विमाणाइं ॥ १८८ ॥ १११६ ॥ घणउदहिपइट्ठाणा सुरभवणा दोसु हुंति कप्पेसुं । तिसु वाउपइट्ठाणा तदुभयसुपइट्ठिया तिन्नि ॥ १८९ ॥ १११७ ॥ तेण परं उवरिमया आगासंतरपइट्ठिया सव्वे । एस पइट्ठाणविही उड्ढं लोए विमाणाणं ॥ १९० ॥ १११८ ॥ किण्हा नीला काऊ तेऊलेसा य भवणवंतरिया । जोइससोहम्मीसाणं तेउलेसा मुणेयव्वा ॥ १९१ ॥ १११९ ॥ कप्पे सणंकुमारे माहिंदे चेव बंभलोए य । एएसु पम्हलेसा तेण परं सुक्कलेसा उ ॥ १९२ ॥ ११२० ॥ कणगत्तयरत्ताभा सुरवसभा दोसु हुंति कप्पेसु । तिसु हुंति पम्हगोरा तेण परं सुक्किला देवा ॥ १९३ ॥ ११२१ ॥ भवणवइवाणमंतरजोइसिया हुंति सत्तरयणीया । कप्पवईणऽइसुंदरि ! सुण उच्चत्तं सुरवराणं ॥१९४॥११२२॥ सोहम्मीसाणसुरा उच्चत्ते हुंति सत्तरयणीया । दो दो कप्पा तुल्ला दोसुवि परिहायए रयणी ॥ १९५ ॥ ११२३ ॥

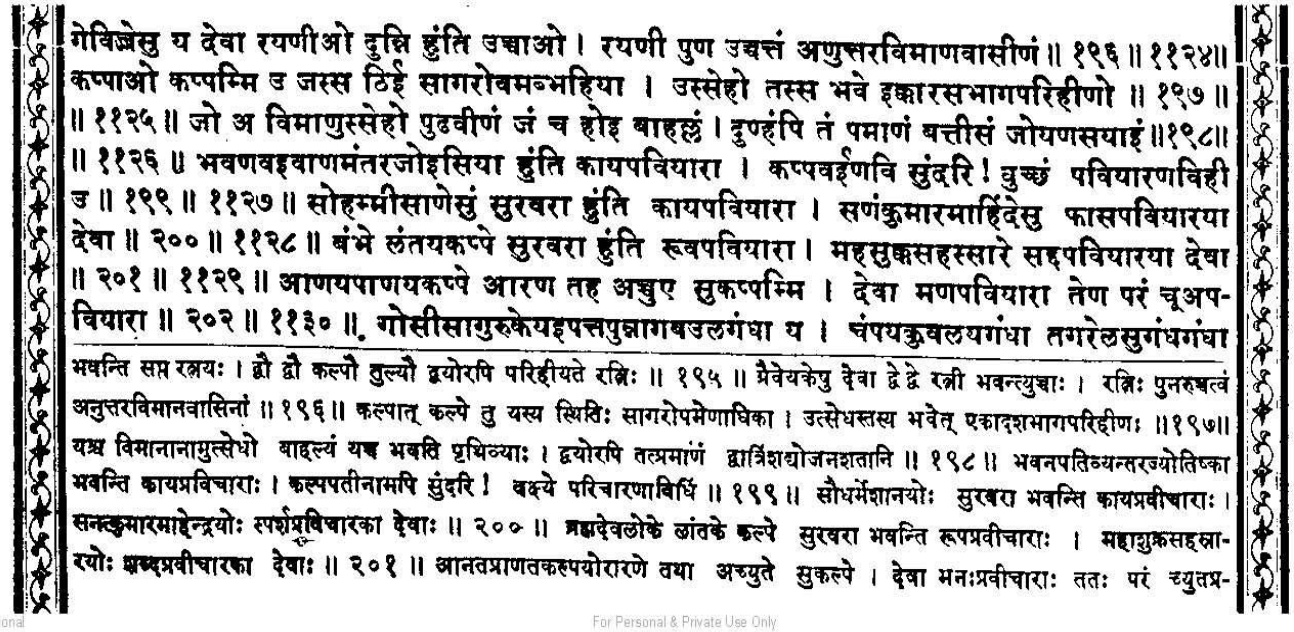
ग्रैवेयकावलिसदृशानि ग्रैवेयकाणि त्रीणि त्रीणि आसन्नानि । हुडुकसंस्थानानि अनुत्तराणि विमानानि ॥ १८८ ॥ घनोदधिप्रतिष्ठानानि सुरभवनानि द्वयोर्भवन्ति कल्पयोः । त्रिषु वायुप्रतिष्ठानानि तदुभयसुप्रतिष्ठितान्युपरि त्रिषु ॥ १८९ ॥ ततः परमुपरितनानि आकाशान्तरप्रतिष्ठितानि सर्वाणि । एष प्रतिष्ठानविधिः ऊर्ध्वलोके विमानानां ॥ १९० ॥ कृष्णा नीला कापोती तेजोलेश्या च भवनपतिव्यन्तराणां । ज्योतिष्कसौधर्मेशानानां तेजोलेश्या ज्ञातव्या ॥ १९१ ॥ कल्पे सनत्कुमारे माहेन्द्रे चैव ब्रह्मलोके च । एतेषु पद्मलेश्या ततः परं शुक्ललेश्या तु ॥१९२॥ कनकत्वमक्ताभाः सुरवृषभा भवन्ति द्वयोः कल्पयोः । त्रिषु भवन्ति पद्मगौरास्ततः परं शुक्ललेश्याका देवाः ॥१९३॥ भवनपतिव्यन्तरज्योतिष्का भवन्ति सप्तरत्नयः । कल्पपतीनां अतिसुन्दरि ! शृणूच्चत्वं सुरवराणां ॥ १९४ ॥ सौधर्मेशानसुरा उच्चत्वेन

ग्रैवेयानुत्तराः प्रतिष्ठानं लेश्योच्चत्वे

॥ ८८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

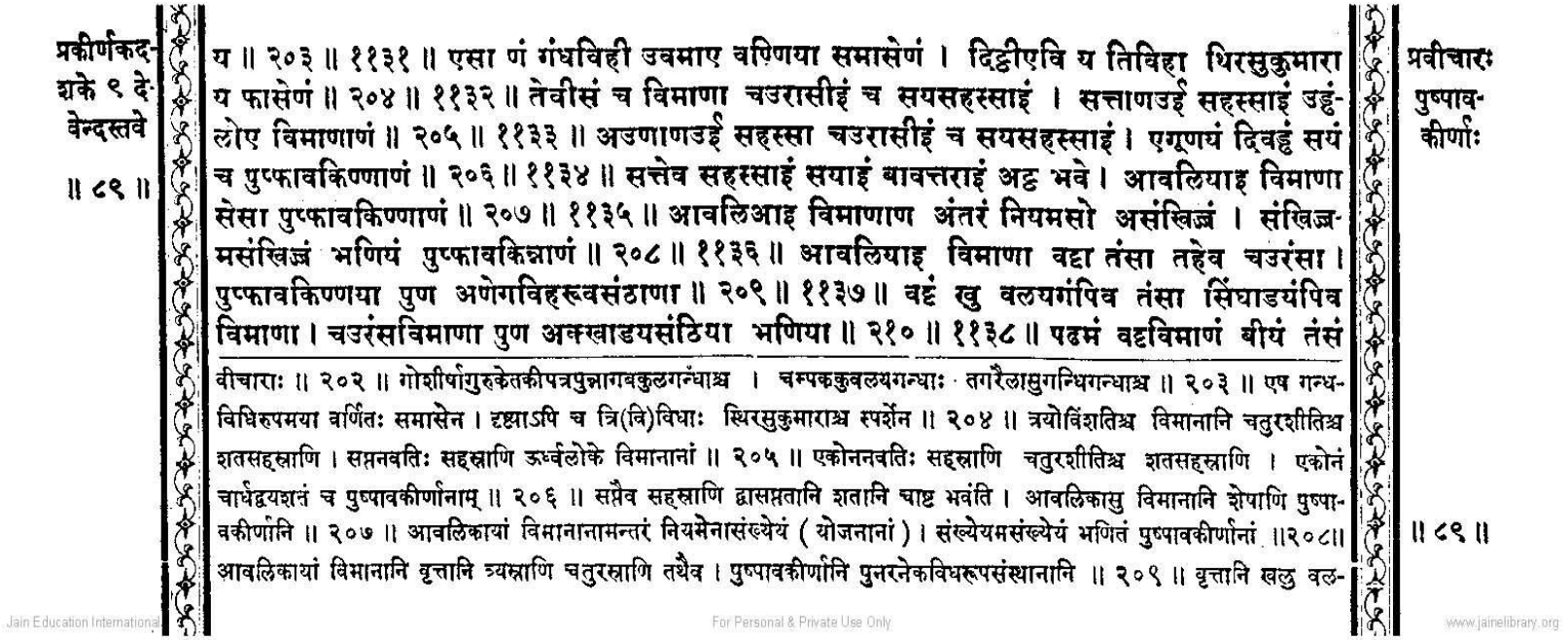
प्रत सूत्रांक ॥१९६॥ दीप अनुक्रम [१९६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया



गेविज्जेसु य देवा रयणीओ दुन्नि हुंति उच्चाओ। रयणी पुण उच्चत्तं अणुत्तरविमाणवासीणं ॥ १९६ ॥ ११२४॥
कप्पाओ कप्पम्मि उ जस्स ठिई सागरोवमब्भहिया । उस्सेहो तस्स भवे इक्कारसभागपरिहीणो ॥ १९७ ॥
॥ ११२५ ॥ जो अ विमाणुस्सेहो पुढवीणं जं च होइ बाहल्लं। दुण्हंपि तं पमाणं बत्तीसं जोयणसयाइं ॥१९८॥
॥ ११२६ ॥ भवणवइवाणमंतरजोइसिया हुंति कायपवियारा । कप्पवईणवि सुंदरि! वुच्छं पवियारणविही
उ ॥ १९९ ॥ ११२७ ॥ सोहम्मीसाणेसुं सुरवरा हुंति कायपवियारा । सणंकुमारमाहिंदेसु फासपवियारया
देवा ॥ २०० ॥ ११२८ ॥ बंभे लंतयकप्पे सुरवरा हुंति रूवपवियारा। महसुक्कसहस्सारे सद्दपवियारया देवा
॥ २०१ ॥ ११२९ ॥ आणयपाणयकप्पे आरण तह अच्चुए सुकप्पम्मि । देवा मणपवियारा तेण परं चूअप-
वियारा ॥ २०२ ॥ ११३० ॥ गोसीसागुरुकेयइपत्तपुन्नागवउलगंधा य । चंपयकुवलयगंधा तगरेलसुगंधगंधा

भवन्ति सप्त रत्नयः । द्वौ द्वौ कल्पौ तुल्यौ द्वयोरपि परिहीयते रत्निः ॥ १९५ ॥ ग्रैवेयकेषु देवा द्वे द्वे रत्नी भवन्त्युच्चाः । रत्निः पुनरुच्चत्वं
अनुत्तरविमानवासिनां ॥ १९६ ॥ कल्पात् कल्पे तु यस्य स्थितिः सागरोपमेणाधिका । उत्सेधस्तस्य भवेत् एकादशभागपरिहीणः ॥१९७॥
यश्च विमानानामुत्सेधो बाहल्यं यच्च भवति पृथिव्याः । द्वयोरपि तत्प्रमाणं द्वात्रिंशद्योजनशतानि ॥ १९८ ॥ भवनपतिव्यन्तरज्योतिष्का
भवन्ति कायप्रविचाराः । कल्पपतीनामपि सुंदरि! वक्ष्ये परिचारणाविधिं ॥ १९९ ॥ सौधर्मेशानयोः सुरवरा भवन्ति कायप्रवीचाराः ।
सनत्कुमारमाहेन्द्रयोः स्पर्शप्रविचारका देवाः ॥ २०० ॥ ब्रह्मदेवलोके लांतके कल्पे सुरवरा भवन्ति रूपप्रवीचाराः । महाशुक्रसहस्रा-
रयोः शब्दप्रवीचारका देवाः ॥ २०१ ॥ आनतप्राणतकल्पयोरारणे तथा अच्युते सुकल्पे । देवा मनःप्रवीचाराः ततः परं च्युतप्र-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



प्रकीर्णकदशके ९ देवेन्द्रस्तवे ॥ ८९ ॥

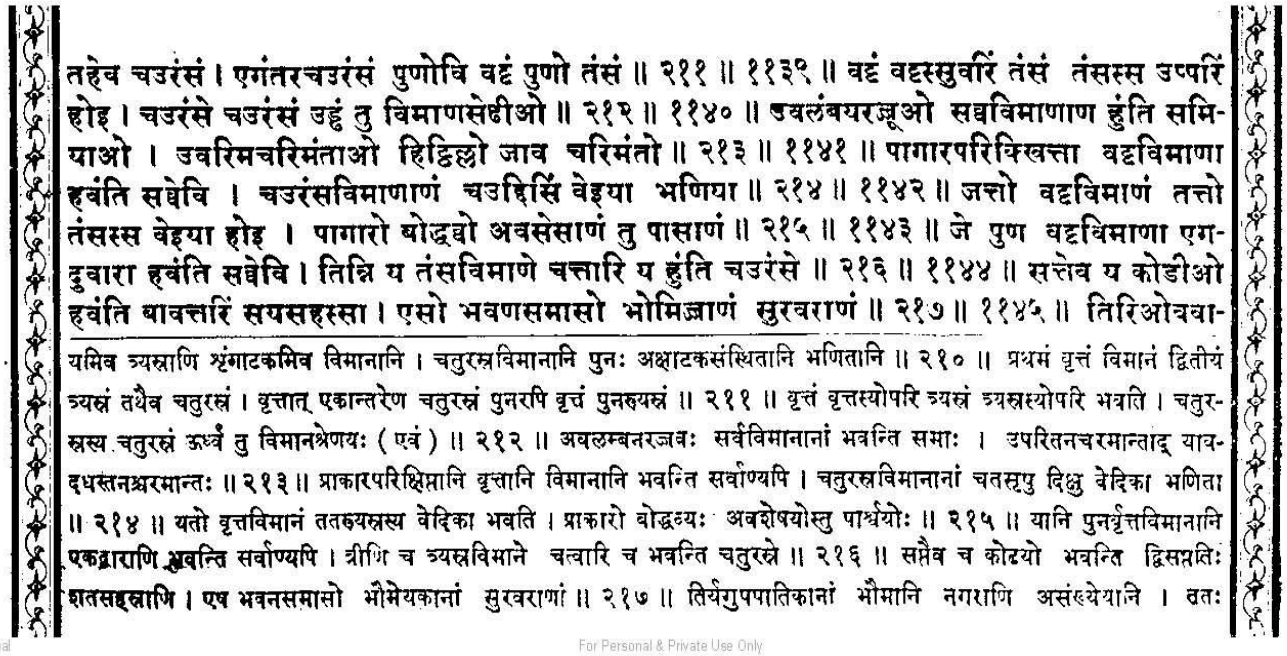
य ॥ २०३ ॥ ११३१ ॥ एसा णं गंधविही उवमाए वण्णिया समासेणं । दिट्ठीएवि य तिविहा थिरसुकुमारा य फासेणं ॥ २०४ ॥ ११३२ ॥ तेवीसं च विमाणा चउरासीइं च सयसहस्साइं । सत्ताणउई सहस्साइं उड्ढलोए विमाणाणं ॥ २०५ ॥ ११३३ ॥ अउणाणउई सहस्सा चउरासीइं च सयसहस्साइं । एगूणयं दिवड्ढं सयं च पुप्फावकिण्णाणं ॥ २०६ ॥ ११३४ ॥ सत्तेव सहस्साइं सयाइं बावत्तराइं अट्ठ भवे । आवलियाइ विमाणा सेसा पुप्फावकिण्णाणं ॥ २०७ ॥ ११३५ ॥ आवलिआइ विमाणाण अंतरं नियमसो असंखिज्जं । संखिज्जमसंखिज्जं भणियं पुप्फावकिन्नाणं ॥ २०८ ॥ ११३६ ॥ आवलियाइ विमाणा वट्टा तंसा तहेव चउरंसा । पुप्फावकिण्णया पुण अणेगविहरूवसंठाणा ॥ २०९ ॥ ११३७ ॥ वट्टं खु वलयगंपिव तंसा सिंघाडयंपिव विमाणा । चउरंसविमाणा पुण अक्खाडयसंठिया भणिया ॥ २१० ॥ ११३८ ॥ पढमं वट्टविमाणं बीयं तंसं

वीचाराः ॥ २०२ ॥ गोशीर्षागुरुकेतकीपत्रपुन्नागबकुलगन्धाश्च । चम्पककुवलयगन्धाः तगरैलासुगन्धिगन्धाश्च ॥ २०३ ॥ एष गन्धविधिरुपमया वर्णितः समासेन । दृष्टाऽपि च त्रि(वि)विधाः स्थिरसुकुमाराश्च स्पर्शेन ॥ २०४ ॥ त्रयोविंशतिश्च विमानानि चतुरशीतिश्च शतसहस्राणि । सप्तनवतिः सहस्राणि ऊर्ध्वलोके विमानानां ॥ २०५ ॥ एकोननवतिः सहस्राणि चतुरशीतिश्च शतसहस्राणि । एकोनं चार्धद्वयशतं च पुष्पावकीर्णानाम् ॥ २०६ ॥ सप्तैव सहस्राणि द्वासप्ततानि शतानि चाष्ट भवंति । आवलिकासु विमानानि शेषाणि पुष्पावकीर्णानि ॥ २०७ ॥ आवलिकायां विमानानामन्तरं नियमेनासंख्येयं (योजनानां) । संख्येयमसंख्येयं भणितं पुष्पावकीर्णानां ॥२०८॥ आवलिकायां विमानानि वृत्तानि त्र्यस्राणि चतुरस्राणि तथैव । पुष्पावकीर्णानि पुनरनेकविधरूपसंस्थानानि ॥ २०९ ॥ वृत्तानि खलु वल-

प्रवीचारः पुष्पावकीर्णाः ॥ ८९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||२११|| दीप अनुक्रम [२११]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया



तहेव चउरंसं । एगंतरचउरंसं पुणोवि वट्टं पुणो तंसं ॥ २११ ॥ ११३९ ॥ वट्टं वट्टस्सुवरिं तंसं तंसस्स उप्परिं होइ । चउरंसे चउरंसं उड्ढं तु विमाणसेढीओ ॥ २१२ ॥ ११४० ॥ उवलंबयरज्जूओ सव्वविमाणाण हुंति समियाओ । उवरिमचरिमंताओ हिट्ठिल्लो जाव चरिमंतो ॥ २१३ ॥ ११४१ ॥ पागारपरिक्खित्ता वट्टविमाणा हवंति सव्वेवि । चउरंसविमाणाणं चउदिसिं वेइया भणिया ॥ २१४ ॥ ११४२ ॥ जत्तो वट्टविमाणं तत्तो तंसस्स वेइया होइ । पागारो बोद्धव्वो अवसेसाणं तु पासाणं ॥ २१५ ॥ ११४३ ॥ जे पुण वट्टविमाणा एगदुवारा हवंति सव्वेवि । तिन्नि य तंसविमाणे चत्तारि य हुंति चउरंसे ॥ २१६ ॥ ११४४ ॥ सत्तेव य कोडीओ हवंति बावत्तरिं सयसहस्सा । एसो भवणसमासो भोमिज्जाणं सुरवराणं ॥ २१७ ॥ ११४५ ॥ तिरिओववा-

यमिव त्र्यस्राणि शृंगाटकमिव विमानानि । चतुरस्रविमानानि पुनः अक्षाटकसंस्थितानि भणितानि ॥ २१० ॥ प्रथमं वृत्तं विमानं द्वितीयं त्र्यस्रं तथैव चतुरस्रं । वृत्तात् एकान्तरेण चतुरस्रं पुनरपि वृत्तं पुनस्त्र्यस्रं ॥ २११ ॥ वृत्तं वृत्तस्योपरि त्र्यस्रं त्र्यस्रस्योपरि भवति । चतुरस्रस्य चतुरस्रं ऊर्ध्वं तु विमानश्रेणयः (एवं) ॥ २१२ ॥ अवलम्बनरज्जवः सर्वविमानानां भवन्ति समाः । उपरितनचरमान्ताद् यावदधस्तनश्चरमान्तः ॥ २१३ ॥ प्राकारपरिक्षिप्तानि वृत्तानि विमानानि भवन्ति सर्वाण्यपि । चतुरस्रविमानानां चतसृषु दिक्षु वेदिका भणिता ॥ २१४ ॥ यतो वृत्तविमानं ततस्त्र्यस्रस्य वेदिका भवति । प्राकारो बोद्धव्यः अवशेषयोस्तु पार्श्वयोः ॥ २१५ ॥ यानि पुनर्वृत्तविमानानि एकद्वाराणि भवन्ति सर्वाण्यपि । त्रीणि च त्र्यस्रविमाने चत्वारि च भवन्ति चतुरस्रे ॥ २१६ ॥ सप्तैव च कोट्यो भवन्ति द्विसप्ततिः शतसहस्राणि । एष भवनसमासो भौमेयकानां सुरवराणां ॥ २१७ ॥ तिर्यग्उपपातिकानां भौमानि नगराणि असंख्येयानि । ततः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इयाणं रम्मा भोम्मनगरा असंखिज्जा । तत्तो संखिज्जगुणा जोइसियाणं विमाणा उ ॥ २१८ ॥ ११४६ ॥ थोवा विमाणवासी भोमिज्जा वाणमंतरमसंखा । तत्तो संखिज्जगुणा जोइसवासी भवे देवा ॥ २१९ ॥ ११४७ ॥ पत्तेयविमाणाणं देवीणं छब्भवे सयसहस्सा । सोहम्मे कप्पम्मि उ ईसाणे हुंति चत्तारि ॥ २२० ॥ ११४८ ॥ पंचेवणुत्तराइं अणुत्तरगईहिं जाइं दिट्ठाइं । जत्थ अणुत्तरदेवा भोगसुहमणुवमं पत्ता ॥ २२१ ॥ ११४९ ॥ जत्थ अणुत्तरगंधा तहेव रूवा अणुत्तरा सद्दा । अचित्तपुग्गलाणं रसो अ फासो अ गंधो अ ॥२२२॥११५०॥ पप्फोडियकलिकलुसा पप्फोडियकमलरेणुसंकासा । वरकुसुममहुकरा इव सुहुमयरं नंदि (दंति) घोट्टंति ॥ २२३ ॥ ११५१ ॥ वरपउमगब्भगोरा सव्वे ते एगगब्भवसहीओ । गब्भवसहीविमुक्का सुंदरि ! सुक्खं अणुहवंति ॥ २२४ ॥ ११५२ ॥ तेतीसाए सुंदरि! वाससहस्सेहिं होइ पुण्णेण । आहाराऽवहि देवाणऽणुत्तरवि-

संख्येयगुणानि ज्योतिष्काणां विमानानि ॥ २१८ ॥ स्तोका विमानवासिनो भौमेया व्यन्तरा असंख्येयाः । ततः संख्येयगुणा ज्योतिष्कवासिनो भवन्ति देवाः ॥ २१९ ॥ प्रत्येकं वैमानिकानां देवीनां षट् भवन्ति शतसहस्राणि । सौधर्मे कल्पे तु ईशाने भवन्ति चत्वारि शतसहस्राणि ॥ २२० ॥ पंचैवानुत्तराणि अनुत्तरगतिभिर्यानि दृष्टानि । यत्रानुत्तरदेवा भोगसुखमनुपमं प्राप्ताः ॥ २२१ ॥ यत्र अनुत्तरगन्धास्तथैव रूपाणि अनुत्तराणि शब्दाश्च । अचित्तपुद्गलानां रसश्च स्पर्शश्च गन्धश्च ॥ २२२ ॥ प्रस्फोटितकलिकालुष्याः प्रस्फुटितकमलरेणुसंकाशाः । वरकुसुममधुकरा इव सूक्ष्मतरं नन्दिं घोषयन्ति (आस्वादयन्ति)॥२२३॥ वरपद्मगर्भगौराः सर्वे ते एकगर्भवसतयः । गर्भवसतिविमुक्ताः सुन्दरि! सौख्यमनुभवन्ति ॥ २२४ ॥ त्रयस्त्रिंशति पूर्णायां वर्षसहस्राणां सुन्दरि ! पुण्येन । आहारावधिर्देवानां अनुत्तरविमानवा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||२२५||

दीप अनुक्रम [२२५]

माणवासिणं ॥ २२५ ॥ ११५३ ॥ सोलसहि सहस्सेहिं पंचेहिं सएहिं होइ पुण्णेहिं । आहारो देवाणं मज्झि-
ममाउं धरिंताणं ॥ २२६ ॥ ११५४ ॥ दस वाससहस्साइं जहन्नमाउं धरंति जे देवा । तेसिंपि य आहारो
चउत्थभत्तेण बोद्धवो ॥ २२७ ॥ ११५५ ॥ संवच्छरस्स सुंदरि! मासाणं अद्धपंचमाणं च । उस्सासो देवाणं
अणुत्तरविमाणवासीणं ॥ २२८ ॥ ११५६ ॥ अद्धट्ठमेहिं राइंदिएहिं अट्ठहि य सुतणु ! मासेहिं । उस्सासो
देवाणं मज्झिममाउं धरिंताणं ॥ २२९ ॥ ११५७ ॥ सत्तण्हं थोवाणं पुण्णाणं पुण्णइंदुसरिसमुहे ! । ऊसासो
देवाणं जहन्नमाउं धरिंताणं ॥ २३० ॥ ११५८ ॥ जह सागरोवमाइं जस्स ठिई तस्स तत्तिएहिं पक्खेहिं ।
ऊसासो देवाणं वाससहस्सेहिं आहारो ॥ २३१ ॥ ११५९ ॥ आहारो ऊसासो एसो मे वन्निओ समासेणं ।
सुहुमंतरायनाहि ! (घणाहि) सुंदरि! अचिरेण कालेण ॥ २३२ ॥ ११६० ॥ एएसिं देवाणं ओही उ विसे-

च. स १६

सिनाम् ॥ २२५ ॥ षोडशभिः सहस्रैः पूर्णैः पञ्चभिः शतैर्भवति । आहारो देवानां मध्यममायुर्धरताम् ॥ २२६ ॥ दश वर्षसहस्राणि जघ-
न्यमायुर्धरन्ति ये देवाः । तेषामपि चाहारश्चतुर्थभक्तेन बोद्धव्यः ॥ २२७ ॥ संवत्सरे अर्धपञ्चसु मासेषु च सुन्दरि! । उच्छ्वासो देवा-
नामनुत्तरविमानवासिनाम् ॥ २२८ ॥ अष्टसु मासेषु सार्धसप्तसु सुतनो! रात्रिन्दिवेषु च । उच्छ्वासो देवानां मध्यममायुर्धरताम् ॥२२९॥
सप्तसु स्तोकेषु पूर्णेषु पूर्णेन्दुसदृशमुखि! । उच्छ्वासो देवानां जघन्यमायुर्धरताम् ॥ २३० ॥ यति सागरोपमाणि यस्य स्थितिस्तस्य ततिभिः
पक्षैः । उच्छ्वासो देवानां वर्षसहस्रैराहारः ॥ २३१ ॥ आहार उच्छ्वास एष मया वर्णितः समासेन । सूक्ष्मान्तरायनाभे! सुन्दरि! अचि-
रेण कालेन ॥ २३२ ॥ एतेषां देवानामवधिस्तु विशेषतस्तु यो यस्य । तं सुन्दरि! वर्णयिष्याम्यहं यथाक्रमं आनुपूर्व्या ॥ २३३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

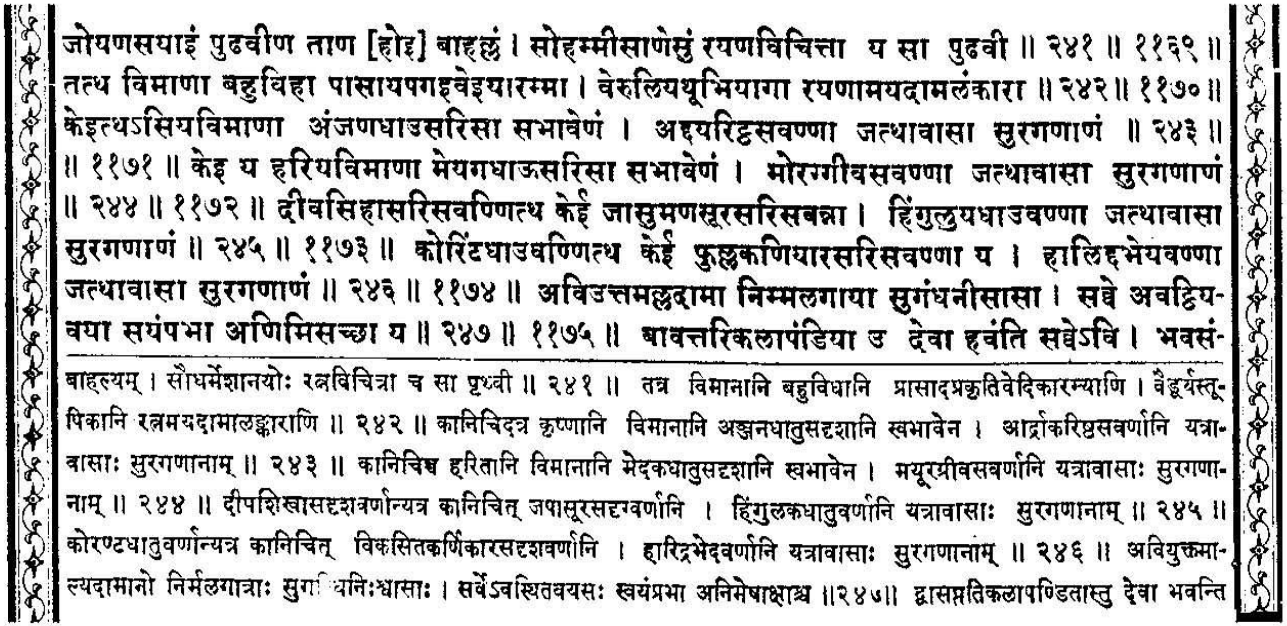
सओ उ जो जस्स । तं सुंदरि! वण्णेऽहं अहक्कमं आणुपुवीए ॥ २३३ ॥ ११६१ ॥ सोहम्मीसाण पढमं दुयं च सणंकुमारमाहिंदा । तइयं च बंभलंतग सुक्कसहस्सारय चउत्थिं ॥ २३४॥ ११६२ ॥ आणयपाणयकप्पे देवा पासंति पंचमिं पुढविं । तं चेव आरणच्चुय ओहियनाणेण पासंति ॥ २३५ ॥ ११६३ ॥ छट्ठिं हिट्ठिममज्झिमगेवियिा सत्तमिं च उवरिल्ला । संभिन्नलोगनालिं पासंति अणुत्तरा देवा ॥ २३६ ॥ ११६४ ॥ संखिज्जजोयणा खलु देवाणं अद्धसागरे ऊणे । तेण परमसंखिज्जा जहन्नयं पन्नवीसं तु ॥ २३७ ॥ ११६५ ॥ तेण परमसंखिज्जा तिरियं दीवा य सागरा चेव । बहुयरयं उवरिमया उड्ढं तु सकप्पथूभाइं ॥ २३८ ॥ ११६६ ॥ नेरइयदेवतित्थंकरा य ओहिस्सऽबाहिरा हुंति । पासंति सवओ खलु सेसा देसेण पासंति ॥ २३९ ॥ ११६७ ॥ ओहिन्नाणे विसओ एसो मे वण्णिओ समासेणं । बाहल्लं उच्चत्तं विमाणवन्नं पुणो वुच्छं ॥ २४० ॥ ११६८ ॥ सत्तावीसं

सौधर्मेशानाः प्रथमां द्वितीयां च सनत्कुमारमाहेन्द्राः । तृतीयां च ब्रह्मलान्तकाः शुक्रसहस्रारकाश्च चतुर्थीम् ॥ २३४ ॥ आनतप्राणतकल्पयोर्देवाः पश्यन्ति पञ्चमीं पृथ्वीम् । तामेवारणाच्युता अवधिज्ञानेन पश्यन्ति ॥ २३५ ॥ षष्ठीं अधस्तनमध्यमग्रैवेयकाः सप्तमीं चोपरितनाः । संपूर्णलोकनालिकां पश्यन्त्यनुत्तरा देवाः ॥ २३६ ॥ देवानामूनेऽर्धसागरोपमे आयुषि संख्येययोजनानि । ततः परमसंख्येयानि जघन्यतः पञ्चविंशतिं (पश्यन्ति) ॥ २३७ ॥ ततः परेऽसंख्येया द्वीपाः सागराश्चैव तिर्यक् । उपरितना बहुकं ऊर्ध्वं तु स्वकल्पस्तूपान् ॥ २३८ ॥ नैरयिकदेवतीर्थंकराश्चावधेरबाह्या भवन्ति । पश्यन्ति सर्वतः खलु शेषा देशेन पश्यन्ति ॥ २३९ ॥ अवधिज्ञाने विषय एष मया वर्णितः समासेन । बाहल्यं उच्चत्वं विमानवर्णं पुनर्वक्ष्ये ॥ २४० ॥ सप्तविंशतियोजनशतानि पृथ्वीनां तयोः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||२४१||

दीप अनुक्रम [२४१]



जोयणसयाइं पुढवीण ताण [होइ] बाहल्लं । सोहम्मीसाणेसुं रयणविचित्ता य सा पुढवी ॥ २४१ ॥ ११६९ ॥
तत्थ विमाणा बहुविहा पासायपगइवेइयारम्मा । वेरुलियथूभियागा रयणामयदामलंकारा ॥ २४२ ॥ ११७० ॥
केइत्थऽसियविमाणा अंजणधाउसरिसा सभावेणं । अइयरिट्ठसवण्णा जत्थावासा सुरगणाणं ॥ २४३ ॥
॥ ११७१ ॥ केइ य हरियविमाणा मेयगधाऊसरिसा सभावेणं । मोरग्गीवसवण्णा जत्थावासा सुरगणाणं
॥ २४४ ॥ ११७२ ॥ दीवसिहासरिसवण्णित्थ केई जासुमणसूरसरिसवन्ना । हिंगुलुयधाउवण्णा जत्थावासा
सुरगणाणं ॥ २४५ ॥ ११७३ ॥ कोरिंटधाउवण्णित्थ केई फुल्लकणियारसरिसवण्णा य । हालिद्दभेयवण्णा
जत्थावासा सुरगणाणं ॥ २४६ ॥ ११७४ ॥ अविउत्तमल्लदामा निम्मलगाया सुगंधनीसासा । सवे अवट्ठिय-
वया सयंपभा अणिमिसच्छा य ॥ २४७ ॥ ११७५ ॥ बावत्तरिकलापंडिया उ देवा हवंति सवेऽवि । भवसं-

बाहल्यम् । सौधर्मेशानयोः रत्नविचित्रा च सा पृथ्वी ॥ २४१ ॥ तत्र विमानानि बहुविधानि प्रासादप्रकृतिवेदिकारम्याणि । वैडूर्यस्तूपिकानि रत्नमयदामालङ्काराणि ॥ २४२ ॥ कानिचिदत्र कृष्णानि विमानानि अञ्जनधातुसदृशानि स्वभावेन । आर्द्रकरिष्ठसवर्णानि यत्रावासाः सुरगणानाम् ॥ २४३ ॥ कानिचिच्च हरितानि विमानानि मेदकधातुसदृशानि स्वभावेन । मयूरग्रीवसवर्णानि यत्रावासाः सुरगणानाम् ॥ २४४ ॥ दीपशिखासदृशवर्णान्यत्र कानिचित् जपासूरसदृग्वर्णानि । हिंगुलकधातुवर्णानि यत्रावासाः सुरगणानाम् ॥ २४५ ॥ कोरण्टधातुवर्णान्यत्र कानिचित् विकसितकर्णिकारसदृशवर्णानि । हारिद्रभेदवर्णानि यत्रावासाः सुरगणानाम् ॥ २४६ ॥ अवियुक्तमाल्यदामानो निर्मलगात्राः सुगन्धनिःश्वासाः । सर्वेऽवस्थितवयसः स्वयंप्रभा अनिमेषाक्षाश्च ॥२४७॥ द्वासप्ततिकलापण्डितास्तु देवा भवन्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया

प्रत सूत्रांक ||२४८||

दीप अनुक्रम [२४८]

कमणे तेसिं पडिवाओ होइ नायव्वो ॥ २४८ ॥ ११७६ ॥ कल्लाणफलविवागा सच्छंदविउव्वियाभरणधारी । आभरणवसणरहिया हवंति साभावियसरीरा ॥ २४९ ॥ ११७७ ॥ वत्तुलसरिसवरूवा देवा इक्कम्मि ठिइविसेसम्मि । पक्खग्गऽहीणमहिमा ओगाहणवण्णपरिमाणा ॥ २५० ॥ ११७८ ॥ किण्हा नीला लोहिय हालिद्दा सुक्किला विरायंति । पंचसए उविद्धा पासाया तेसु कप्पेसु ॥ २५१ ॥ ११७९ ॥ तत्थासणा बहुविहा सयणिज्जा मणिभत्तिसयविचित्ता । विरइयवित्थडभूसा रयणामयदामलंकारा ॥ २५२ ॥ ११८० ॥ छव्वीस जोयणसयाइं पुढवीणं ताण होइ बाहल्लं । सणंकुमारमाहिंदे रयणविचित्ता य सा पुढवी ॥ २५३ ॥ ११८१ ॥ तत्थ य नीला लोहिय हालिद्दा सुक्किला विरायंति । छच्च सए उविद्धा पासाया तेसु कप्पेसु ॥ २५४ ॥ ११८२ ॥ तत्थ विमाणा बहुविहा० (२४२) ॥ २५५ ॥ ११८३ ॥ पण्णावीसं जोअणसयाइं पुढवीण होइ बाहल्लं । बंभयलंतय-

सर्वेऽपि । भवसंक्रमणे तेषां प्रतिपातो भवति ज्ञातव्यः ॥ २४८ ॥ कल्याणफलविपाकाः स्वच्छन्दविकुर्विताभरणधारिणः । आभरणवसनरहिता भवन्ति स्वाभाविकशरीराः ॥ २४९ ॥ वृत्तसर्षपरूपा देवा एकस्मिन् स्थितिविशेषे । प्रत्यग्रा अहीनमहिमावगाहवर्णपरिणामाः ॥ २५०* ॥ कृष्णा नीला लोहिता हारिद्राः शुक्लाः विराजन्ते । पंच शतान्युद्विद्धाः प्रासादास्तेषु कल्पेषु ॥ २५१ ॥ तत्रासनानि बहुविधानि शयनीयानि मणिभक्तिशतविचित्राणि । विरचितविस्तृतभूषाणि रत्नमयदामालंकाराणि ॥ २५२ ॥ षड्विंशतियोजनशतानि पृथ्वीनां तयोः भवति बाहल्यम् । सनत्कुमारमाहेन्द्रयोः रत्नविचित्रा च सा पृथ्वी ॥ २५३ ॥ तत्र च नीला लोहिता हारिद्राः शुक्ला विराजन्ते । षड् शतान्युद्विद्धाः प्रासादाः तेषु कल्पेषु ॥ २५४ ॥ तत्र विमानानि बहुविधानि० ॥ २५५ ॥ पंचविंशतियोजनानि पृथ्वीनां भवति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

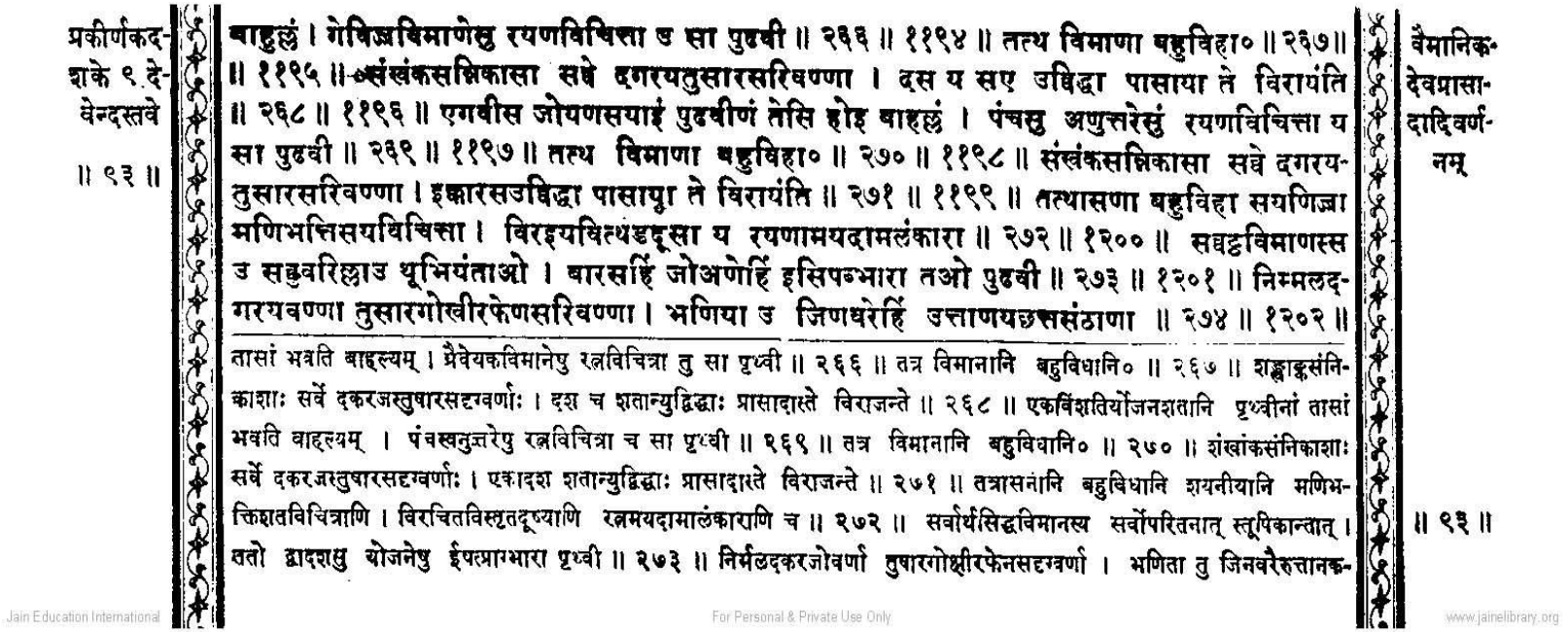
प्रत सूत्रांक ||२५६|| दीप अनुक्रम [२५६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया

कप्पे रयणविचित्ता य सा पुढवी ॥ २५६ ॥ ११८४ ॥ तत्थ विमाणा बहुविहा० ॥ २५७ ॥ ११८५ ॥ लोहिय-हालिद्दा पुण सुक्किलवण्णा य ते विरायंति । सत्तसए उविद्धा पासाया तेसु कप्पेसु ॥ २५८ ॥ ११८६ ॥ चउ-वीसं जोयणसयाइं पुढवीण होइ बाहल्लं । सुक्के य सहस्सारे रयणविचित्ता य सा पुढवी ॥ २५९ ॥ ११८७ ॥ तत्थ विमाण बहुविहा० ॥ २६० ॥ ११८८ ॥ हालिद्दभेयवण्णा सुक्किलवण्णा य ते विरायंति । अट्ठ य ते उ-विद्धा पासाया तेसु कप्पेसुं ॥ २६१ ॥ ११८९॥ तत्थासणा बहुविहा० ॥ २६२ ॥ ११९० ॥ तेवीसं जोयणसयाइं पुढवीणं [उण] तासिं होइ बाहल्लं । आणयपाणयकप्पे आरणच्चुए [रयण]विचित्ता उ सा पुढवी ॥ २६३ ॥ ॥ ११९१ ॥ तत्थ विमाणा बहुविहा० ॥ २६४ ॥ ११९२ ॥ संखंकसन्निकासा सव्वे दगरयतुसारसिरिवण्णा । नव य सए उविद्धा पासाया तेसु कप्पेसुं ॥ २६५ ॥ ११९३ ॥ बावीसं जोयणसयाइं पुढवीणं तासिं होइ

बाहल्यं । ब्रह्मलान्तककल्पयो रत्नविचित्रा च सा पृथ्वी ॥ २५६ ॥ तत्र विमानानि० ॥ २५७ ॥ लोहिता हारिद्राः पुनः शुक्लवर्णा-स्ते विराजन्ते । सप्त शतान्युद्विद्धाः प्रासादास्तेषु कल्पेषु ॥ २५८ ॥ चतुर्विंशतियोजनशतानि पृथ्व्या भवति बाहल्यम् । शुक्रसहस्रारयोः रत्नविचित्रा च सा पृथ्वी ॥ २५९ ॥ तत्र विमानानि बहुविधानि० ॥ २६० ॥ हारिद्रभेदवर्णाः शुक्लवर्णाश्च ते विराजन्ते । अष्टौ च योजनशतान्युद्विद्धाः प्रासादास्तयोः कल्पयोः ॥ २६१ ॥ तत्रासनानि बहुविधानि० ॥ २६२ ॥ त्रयोविंशतियोजनशतानि पृथ्वीनां तासां पुनर्भवति बाहल्यम् । आनतप्राणतकल्पयोरारणाच्युतयोश्च रत्नविचित्रा तु सा पृथ्वी ॥२६३॥ तत्र विमानानि बहुविधानि० ॥ २६४ ॥ शङ्खाङ्कसन्निकाशाः सर्वे दकरजस्तुषारसदृग्वर्णाः । नव च शतान्युद्विद्धाः प्रासादास्तयोः कल्पयोः ॥२६५॥ द्वाविंशतियोजनशतानि पृथ्वीनां

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ॥२६६॥ दीप अनुक्रम [२६६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया



प्रकीर्णकदशके ९ देवेन्द्रस्तवे ॥ ९३ ॥

बाहुल्लं । गेविज्जविमाणेसु रयणविचित्ता उ सा पुढवी ॥ २६६ ॥ ११९४ ॥ तत्थ विमाणा बहुविहा० ॥ २६७ ॥ ॥ ११९५ ॥ संखंकसन्निकासा सव्वे दगरयतुसारसरिवण्णा । दस य सए उविद्धा पासाया ते विरायंति ॥ २६८ ॥ ११९६ ॥ एगवीस जोयणसयाइं पुढवीणं तेसि होइ बाहल्लं । पंचसु अणुत्तरेसुं रयणविचित्ता य सा पुढवी ॥ २६९ ॥ ११९७ ॥ तत्थ विमाणा बहुविहा० ॥ २७० ॥ ११९८ ॥ संखंकसन्निकासा सव्वे दगरयतुसारसरिवण्णा । इक्कारसउविद्धा पासाया ते विरायंति ॥ २७१ ॥ ११९९ ॥ तत्थासणा बहुविहा सयणिज्जा मणिभत्तिसयविचित्ता । विरइयवित्थडदूसा य रयणामयदामलंकारा ॥ २७२ ॥ १२०० ॥ सव्वट्ठविमाणस्स उ सव्वुवरिल्लाउ थूभियंताओ । बारसहिं जोअणेहिं इसिपब्भारा तओ पुढवी ॥ २७३ ॥ १२०१ ॥ निम्मलदगरयवण्णा तुसारगोखीरफेणसरिवण्णा । भणिया उ जिणधरेहिं उत्ताणयछत्तसंठाणा ॥ २७४ ॥ १२०२ ॥

तासां भवति बाहल्यम् । ग्रैवेयकविमानेषु रत्नविचित्रा तु सा पृथ्वी ॥ २६६ ॥ तत्र विमानानि बहुविधानि० ॥ २६७ ॥ शङ्खाङ्कसंनिकाशाः सर्वे दकरजस्तुषारसदृग्वर्णाः । दश च शतान्युद्विद्धाः प्रासादास्ते विराजन्ते ॥ २६८ ॥ एकविंशतियोजनशतानि पृथ्वीनां तासां भवति बाहल्यम् । पंचस्वनुत्तरेषु रत्नविचित्रा च सा पृथ्वी ॥ २६९ ॥ तत्र विमानानि बहुविधानि० ॥ २७० ॥ शंखांकसंनिकाशाः सर्वे दकरजस्तुषारसदृग्वर्णाः । एकादश शतान्युद्विद्धाः प्रासादास्ते विराजन्ते ॥ २७१ ॥ तत्रासनानि बहुविधानि शयनीयानि मणिभक्तिशतविचित्राणि । विरचितविस्तृतदूष्याणि रत्नमयदामालंकाराणि च ॥ २७२ ॥ सर्वार्थसिद्धविमानस्य सर्वोपरितनात् स्तूपिकान्तात् । ततो द्वादशसु योजनेषु ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी ॥ २७३ ॥ निर्मलदकरजोवर्णा तुषारगोक्षीरफेनसदृग्वर्णा । भणिता तु जिनवरैरुत्तानक-

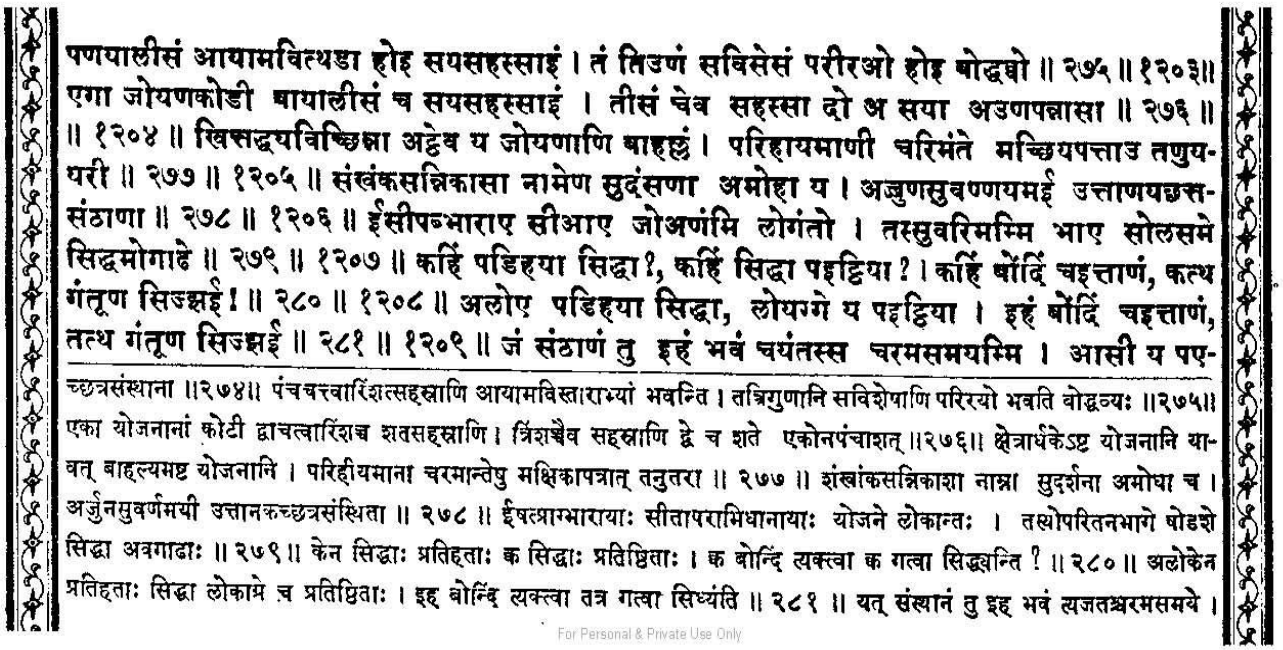
वैमानिकदेवप्रासादादिवर्णनम्

॥ ९३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ ईषत्-प्राग्भारापृथ्वी एवं सिद्ध-अधिकार: आरभ्यते

प्रत सूत्रांक ||२७५|| दीप अनुक्रम [२७५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया



पणयालीसं आयामवित्थडा होइ सयसहस्साइं । तं तिउणं सविसेसं परीरओ होइ बोद्धव्वो ॥ २७५ ॥ १२०३॥ एगा जोयणकोडी बायालीसं च सयसहस्साइं । तीसं चेव सहस्सा दो अ सया अउणपन्नासा ॥ २७६ ॥ ॥ १२०४ ॥ खित्तद्धयविच्छिन्ना अट्ठेव य जोयणाणि बाहल्लं । परिहायमाणी चरिमंते मच्छियपत्ताउ तणुयतरी ॥ २७७ ॥ १२०५ ॥ संखंकसन्निकासा नामेण सुदंसणा अमोहा य । अज्जुणसुवण्णयमई उत्ताणयछत्तसंठाणा ॥ २७८ ॥ १२०६ ॥ ईसीपब्भाराए सीआए जोअणंमि लोगंतो । तस्सुवरिमम्मि भाए सोलसमे सिद्धमोगाढे ॥ २७९ ॥ १२०७ ॥ कहिं पडिहया सिद्धा?, कहिं सिद्धा पइट्ठिया ? । कहिं बोंदिं चइत्ताणं, कत्थ गंतूण सिज्झई ! ॥ २८० ॥ १२०८ ॥ अलोए पडिहया सिद्धा, लोयग्गे य पइट्ठिया । इहं बोंदिं चइत्ताणं, तत्थ गंतूण सिज्झई ॥ २८१ ॥ १२०९ ॥ जं संठाणं तु इहं भवं चयंतस्स चरमसमयम्मि । आसी य पए-

च्छत्रसंस्थाना ॥२७४॥ पंचचत्वारिंशत्सहस्राणि आयामविस्ताराभ्यां भवन्ति । तत्त्रिगुणानि सविशेषाणि परिरयो भवति बोद्धव्यः ॥२७५॥ एका योजनानां कोटी द्वाचत्वारिंशच्च शतसहस्राणि । त्रिंशच्चैव सहस्राणि द्वे च शते एकोनपंचाशत् ॥२७६॥ क्षेत्रार्धकेऽष्ट योजनानि यावत् बाहल्यमष्ट योजनानि । परिहीयमाना चरमान्तेषु मक्षिकापत्रात् तनुतरा ॥ २७७ ॥ शंखांकसन्निकाशा नाम्ना सुदर्शना अमोघा च । अर्जुनसुवर्णमयी उत्तानकच्छत्रसंस्थिता ॥ २७८ ॥ ईषत्प्राग्भारायाः सीतापराभिधानायाः योजने लोकान्तः । तस्योपरितनभागे षोडशे सिद्धा अवगाढाः ॥ २७९ ॥ केन सिद्धाः प्रतिहताः क्व सिद्धाः प्रतिष्ठिताः । क्व बोन्दिं त्यक्त्वा क्व गत्वा सिद्ध्यन्ति ? ॥ २८० ॥ अलोकेन प्रतिहताः सिद्धा लोकाग्रे च प्रतिष्ठिताः । इह बोन्दिं त्यक्त्वा तत्र गत्वा सिध्यंति ॥ २८१ ॥ यत् संस्थानं तु इह भवं त्यजतश्चरमसमये ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया

प्रत सूत्रांक ||२८२||

दीप अनुक्रम [२८२]

सघणं तं संठाणं तहिं तस्स ॥ २८२ ॥ १२१० ॥ दीहं वा हस्सं वा जं संठाणं हविज्ज चरमभवे । तत्तो तिभागहीणा सिद्धाणोगाहणा भणिया ॥ २८३ ॥ १२११ ॥ तिन्नि सया छासट्ठा धणुत्तिभागो अ होइ बोद्धवो । एसा खलु सिद्धाणं उक्कोसोगाहणा भणिया ॥ २८४ ॥ १२१२ ॥ चत्तारि य रयणीओ रयणी तिभागूणिया य बोद्धवा । एसा खलु सिद्धाणं मज्झिमओगाहणा भणिया ॥ २८५ ॥ १२१३ ॥ इक्का य होइ रयणी अट्ठेव य अंगुलाइं साहीया । एसा खलु सिद्धाणं जहण्णओगाहणा भणिया ॥ २८६ ॥ १२१४ ॥ ओगाहणाइ सिद्धा भवत्तिभागेण हुंति परिहीणा । संठाणमणित्थंत्थं जरामरणविप्पमुक्काणं ॥ २८७ ॥ १२१५ ॥ जत्थ य एगो सिद्धो तत्थ अणंता भवक्खयविमुक्का । अन्नुन्नसमोगाढा पुट्ठा सव्वे अलोगंते ॥ २८८ ॥ १२१६ ॥ असरीरा जीवघणा उवउत्ता दंसणे य नाणे य । सागारमणागारं लक्खणमेयं तु सिद्धाणं ॥ २८९ ॥ १२१७ ॥

आसीच्च प्रदेशघनं तत् संस्थानं तत्र तस्य ॥२८२॥ दीर्घं वा ह्रस्वं वा यत् प्रमाणं भवेत् चरमभवे । ततस्त्रिभागहीना सिद्धानामवगाहना भणिता ॥ २८३ ॥ त्रीणि शतानि षट्षष्टिर्धनुषस्तृतीयो भागश्च भवति बोद्धव्यः । एषा खलु सिद्धानामुत्कृष्टावगाहना भणिता ॥ २८४ ॥ चतस्रो रत्नयो रत्नित्रिभागोना च बोद्धव्या । एषा खलु सिद्धानां मध्यमाऽवगाहना भणिता ॥ २८५ ॥ एका च भवति रत्निरष्टावेवांगुलानि साधिकानि । एषा खलु सिद्धानां जघन्यिकाऽवगाहना भणिता ॥ २८६ ॥ अवगाहनायां सिद्धा भवत्रिभागेन भवन्ति परिहीनाः । संस्थानमनित्थंस्थं जरामरणविप्रमुक्तानाम् ॥ २८७ ॥ यत्रैकः सिद्धस्तत्रानन्ता भवक्षयविप्रमुक्ताः । अन्योऽन्यसमवगाढाः स्पृष्टाः सर्वेऽलोकान्ते ॥ २८८ ॥ अशरीरा जीवघना उपयुक्ता दर्शने च ज्ञाने च । साकारत्वमनाकारत्वं च लक्षणमेतत्तु सिद्धानाम्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक ||२९०||

दीप अनुक्रम [२९०]

फुसइ अणंते सिद्धे सव्वपएसेहिं णियमसो सिद्धो। तेवि असंखिज्जगुणा देसपएसेहिं जे पुट्ठा ॥२९०॥ १२१८॥ केवलनाणुवउत्ता जाणंती सव्वभावगुणभावे। पासंति सव्वओ खलु केवलदिट्ठीअणंताहिं ॥ २९१ ॥ १२१९ ॥ नाणंमि दंसणम्मि य इत्तो एगयरम्मि उवउत्ता । सव्वस्स केवलिस्सा जुगवं दो नत्थि उवओगा ॥ २९२ ॥ ॥ १२२० ॥ सुरगणसुहं समत्तं सव्वद्धापिंडियं अणंतगुणं । नवि पावइ मुत्तिसुहं णंताहिं वग्गवग्गूहिं ॥ २९३ ॥ १२२१ ॥ नवि अत्थि माणुसाणं तं सुक्खं नवि य सव्वदेवाणं । जं सिद्धाणं सुक्खं अव्वाबाहं उवगयाणं ॥ २९४ ॥ १२२२ ॥ सिद्धस्स सुहो रासी सव्वद्धापिंडिओ जइ हविज्जा । णंतगुणवग्गुभइओ सव्वागासे न माइज्जा ॥ २९५ ॥ १२२३ ॥ जह नाम कोइ मिच्छो नयरगुणे बहुविहे वियाणंतो। न चएइ परिकहेउं उवमाए तहिं असंतीए ॥ २९६ ॥ १२२४ ॥ इअ सिद्धाणं सुक्खं अणोवमं नत्थि तस्स ओवम्मं। किंचि वि-

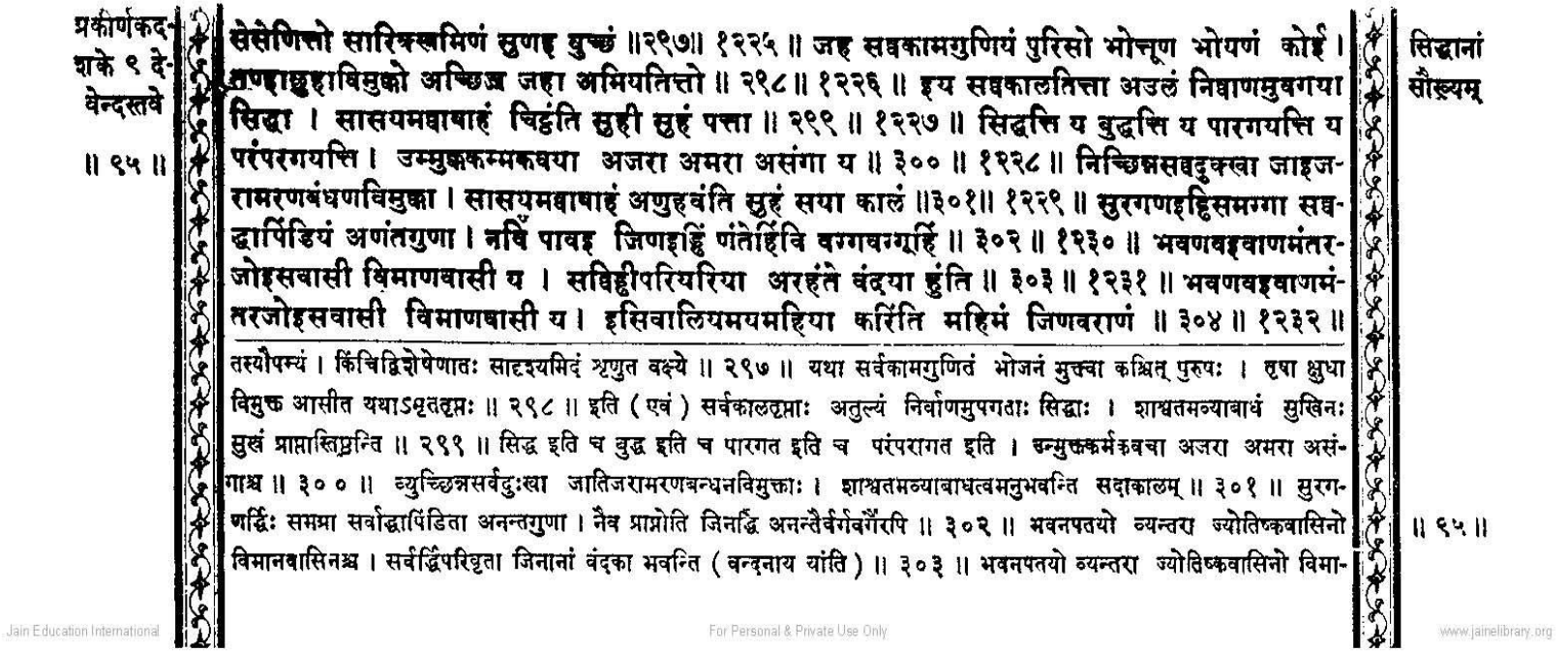
॥ २८९ ॥ स्पृशति अनन्तान् सिद्धान् सर्वप्रदेशैर्नियमतः सिद्धः । ये देशप्रदेशैः स्पृष्टास्तेऽप्यसंख्येयगुणाः ॥ २९० ॥ केवलज्ञानोपयुक्ता जानन्ति सर्वपदार्थगुणभावान् । पश्यन्ति सर्वतः खलु केवलदृष्टिभिरनन्ताभिः ॥ २९१ ॥ ज्ञाने दर्शने चानयोरेकतरस्मिन् उपयुक्ताः । सर्वस्य केवलिनो युगपद् द्वौ न स्त उपयोगौ ॥ २९२ ॥ सुरगणसुखं समस्तं सर्वाद्धापिंडितं अनन्तगुणं । नैव प्राप्नोति मुक्तिसुखं अनन्तैर्वर्गवर्गैः ॥ २९३ ॥ नैवास्ति मनुष्याणां तत् सौख्यं नैव च सर्वदेवानां । यत् सिद्धानां सौख्यमव्याबाधत्वमुपगतानाम् सिद्धस्य सुखराशिः सर्वाद्धापिण्डितो यदि भवेत् । अनन्तगुणवर्गभक्तः सर्वाकाशे न मायात् ॥ २९५ ॥ यथा नाम कश्चिन्म्लेच्छो नगरगुणान् बहुविधान् विजानानः । न शक्नोति परिकथयितुं तत्रासत्यामुपमायाम् ॥ २९६ ॥ इति सिद्धानां सौख्यमनुपमं नास्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[३२],प्रकीर्णकसूत्र-[०९] देवेन्द्रस्तव मूलं एवं संस्कृतछाया

प्रत सूत्रांक ||२९७||

दीप अनुक्रम [२९७]



प्रकीर्णकदशके ९ देवेन्द्रस्तवे ॥ ९५ ॥

सेसेणित्तो सारिक्खमिणं सुणह वुच्छं ॥२९७॥ १२२५ ॥ जह सव्वकामगुणियं पुरिसो भोत्तूण भोयणं कोई । तण्हाछुहाविमुक्को अच्छिज्ज जहा अमियतित्तो ॥ २९८ ॥ १२२६ ॥ इय सव्वकालतित्ता अउलं निव्वाणमुवगया सिद्धा । सासयमव्वाबाहं चिट्ठंति सुही सुहं पत्ता ॥ २९९ ॥ १२२७ ॥ सिद्धत्ति य बुद्धत्ति य पारगयत्ति य परंपरगयत्ति । उम्मुक्ककम्मकवया अजरा अमरा असंगा य ॥ ३०० ॥ १२२८ ॥ निच्छिन्नसव्वदुक्खा जाइजरामरणबंधणविमुक्का । सासयमव्वाबाहं अणुहवंति सुहं सया कालं ॥३०१॥ १२२९ ॥ सुरगणइड्ढिसमग्गा सव्वद्धापिंडियं अणंतगुणा । नवि पावइ जिणइड्ढिं णंतेहिंवि वग्गवग्गूहिं ॥ ३०२ ॥ १२३० ॥ भवणवइवाणमंतरजोइसवासी विमाणवासी य । सविड्ढीपरियरिया अरहंते वंदया हुंति ॥ ३०३ ॥ १२३१ ॥ भवणवइवाणमंतरजोइसवासी विमाणवासी य । इसिवालियमयमहिया करिंति महिमं जिणवराणं ॥ ३०४ ॥ १२३२ ॥

तस्यौपम्यं । किंचिद्विशेषेणातः सादृश्यमिदं शृणुत वक्ष्ये ॥ २९७ ॥ यथा सर्वकामगुणितं भोजनं भुक्त्वा कश्चित् पुरुषः । तृषा क्षुधा विमुक्त आसीत यथाऽमृततृप्तः ॥ २९८ ॥ इति (एवं) सर्वकालतृप्ताः अतुल्यं निर्वाणमुपगताः सिद्धाः । शाश्वतमव्याबाधं सुखिनः सुखं प्राप्तास्तिष्ठन्ति ॥ २९९ ॥ सिद्ध इति च बुद्ध इति च पारगत इति च परंपरागत इति । उन्मुक्तकर्मकवचा अजरा अमरा असंगाश्च ॥ ३०० ॥ व्युच्छिन्नसर्वदुःखा जातिजरामरणबन्धनविमुक्ताः । शाश्वतमव्याबाधत्वमनुभवन्ति सदाकालम् ॥ ३०१ ॥ सुरगणर्द्धिः समग्रा सर्वाद्धापिंडिता अनन्तगुणा । नैव प्राप्नोति जिनर्द्धि अनन्तैर्वर्गवर्गैरपि ॥ ३०२ ॥ भवनपतयो व्यन्तरा ज्योतिष्कवासिनो विमानवासिनश्च । सर्वर्द्धिपरिवृता जिनानां वंदका भवन्ति (वन्दनाय यांति) ॥ ३०३ ॥ भवनपतयो व्यन्तरा ज्योतिष्कवासिनो विमा-

सिद्धानां सौख्यम् ॥ ९५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ जिनऋद्धि दर्शयित्वा, पश्चात् उपसंहार: क्रियते

प्रत सूत्रांक ||३०५||

दीप अनुक्रम [३०५]

इसिवालियस्स भद्दं सुरवरथयकारयस्स वीरस्स। जेहिं सया थुवंता सवे इंदा पवरकित्ती ॥३०५॥१२३३॥ इसिवा०
तेसिं सुरासुरगुरू सिद्धा सिद्धिं उवणमंतु ॥ ३०६ ॥१२३४॥ भोमेज्जवणयराणं जोइसियाणं विमाणवासीणं ।
देवनिकाया णं (णंदउ) थवो सहस्सं [समत्तो] अपरिसेसो ॥ ३०७॥ १२३५॥ देविंदत्थयपइण्णं सम्मत्तं ॥ ९॥

नवासिनश्च । ऋषिपालितमतमहिता: कुर्वन्ति महिमानं जिनेन्द्राणाम् ॥ ३०४ ॥ ऋषिपालिताय भद्रं वीरस्य सुरवरस्तवकारकाय ।
येन सदा स्तुतिकारकाः सर्वे इन्द्राः परिकीर्त्तिताः (प्रवरकीर्त्तिताः) ॥ ३०५ ॥ ऋषिपालिताय भद्रं वीरस्य सुरवरस्य स्तवकारकाय ।
तेषां सुरासुराणां गुरवः सिद्धाः सिद्धिमुपनयन्तु ॥३०६॥ भौमेयव्यन्तराणां ज्योतिष्काणां विमानवासिनां । देवनिकायानां स्तवः [सङ्ख्या]
अपरिशेषः समाप्तः ॥ ३०७ ॥ इति देवेन्द्रस्तवः ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भाग 26	देवेन्द्रस्तव-प्रकीर्णकसूत्र [९] मूलं एवं संस्कृतछाया: परिसमाप्ता:

मूल संशोधकः सम्पादकश्च पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

किंचित् वैशिष्ट्य समर्पितेन सह पुन: संकलनकर्ता मुनि दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

	सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि भाग १ से ४० में कहां क्या मिलेगा?		
भाग	इस भागमे समाविष्ट आगम के नाम और आगम-क्रम		कुलपृष्ठ
01	आगम ०१ आचार मूलं एवं वृत्ति भाग-१ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- १,२		३१४
02	आगम ०१ आचार मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- ३ से ९, श्रुतस्कन्ध- २		५८६
03	आगम ०२ सूत्रकृत मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- १ से १३		४९८
04	आगम ०२ सूत्रकृत मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन १४ से १६, श्रुतस्कन्ध-२		३९२
05	आगम ०३ स्थान मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ स्थान- १ से ४		५९४
06	आगम ०३ स्थान मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ स्थान- ५ से १० संपूर्ण		४९४
07	आगम ०४ समवाय मूलं एवं वृत्ति.		३३८
08	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ शतक- १ से ६		५९२
09	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ शतक- ७ से ११		५५२
10	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-३ शतक- १२ से २०		५१४
11	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-४ शतक- २१ से ४१ संपूर्ण		३८४
12	आगम ०६ ज्ञाताधर्मकथा मूलं एवं वृत्ति.		५२२
13	आगम-७,८,९,१०उपासकदशा, अंतकृतदशा, अनुत्तरोपपातिकदशा, प्रश्नव्याकरण मूलं एवं वृत्ति.		५३८
14	आगम-११,१२, विपाक, उववाई मूलं एवं वृत्ति.		३८४
15	आगम १३ राजप्रश्नीय मूलं एवं वृत्ति.		३१४
16	आगम१४ जीवाजीवाभिगम भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. [प्रतिपत्ति-३-अतर्गत] सूत्र- १ से १३८		४८०
17	आगम१४ जीवाजीवाभिगम भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. [प्रतिपत्ति-३-अतर्गत] सूत्र- १३९ से प्रतिपत्ती-१० संपूर्ण		४८८
18	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. पद- १ से ५		४२६
19	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. पद- ६ से २२		५१४
20	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-३ मूलं एवं वृत्ति. पद- २३ से ३६ संपूर्ण		३३६
21	आगम १६ सूर्यप्रज्ञप्ति मूलं एवं वृत्ति.		६१०

	सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि भाग १ से ४० में कहां क्या मिलेगा?		
भाग	इस भागमे समाविष्ट आगम के नाम और आगम-क्रम		कुलपृष्ठ
22	आगम १७ चन्द्रप्रज्ञप्ति मूलं एवं वृत्ति.		६१४
23	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- १ एवं २.		३७६
24	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- ३ एवं ४.		४२६
25	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-३ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- ५ से ७.		३४४
26	आगम १९-३२ निरयावलिका, कल्पवतंसिका, पुष्पिका, पुष्पचूलिका, वृष्णिदशा, चतु:शरण, आतुरपरत्याख्यान, महाप्रत्याख्यान, भक्तपरिज्ञा, तंदुलवैचारिक, संस्तारक, गच्छाचार, गणिविध्या, देवेन्द्रस्तव मूलं एवं छाया		३१२
27	आगम ३३ थी ३९ मरणसमाधि मूलं एवं छाया, निशीथ, ब्रुहत्कल्प, व्यवहार, दशाश्रुतस्कंध, जीतकल्प/पंचकल्प, महानिशीथ मूलं एव		३३०
28	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-१, निर्युक्ति- १ से ५२१		४६६
29	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-२, निर्युक्ति- ५२२ से ९५१		४४२
30	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-३ निर्युक्ति- ९५२ से १२७३ अपूर्ण, [अध्ययन- १ से ४ अपूर्ण]		४६४
31	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-४ निर्युक्ति- १२७३ अपूर्ण से १६२३, [अध्ययन- ४ अपूर्ण से ६ संपूर्ण]		४२६
32	आगम ४१/१ ओघनिर्युक्ति मूलं एवं वृत्ति.		४७२
33	आगम ४१/२ पिंडनिर्युक्ति मूलं एवं वृत्ति.		३७६
34	आगम ४२ दशवैकालिक मूलं एवं वृत्ति.		५९०
35	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-१, अध्ययन- १ से ५		५२२
36	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-२, अध्ययन- ६ से २१		४८२
37	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-३, अध्ययन- २२ से ३६		४६६
38	आगम ४४ नन्दिसूत्र मूलं एवं वृत्ति.		५२८
39	आगम ४५ अनुयोगद्वार् मूलं एवं वृत्ति.		५६०
40	कल्प[बारसा]सूत्र... चतु:शरण, तन्दुलवैचारिक, गच्छाचार मूलं एवं वृत्ति.		३९४

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य आनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

आगम.[19-32]

पूज्य आगमोध्धारक आचार्य श्री सागरानंदसूरीश्वरेण संशोधिता: संपादिताश्च

१९.निरयावलिका, २०.कल्पवतंसिका, २१.पुष्पिका, २२.पुष्पचूलिका, २३.वृष्णिदशा

मूलं एवं चंद्रसूरिजी विरचिता वृत्ति:

२४.चतु:शरण,२५.आतुरप्रत्याख्यान,२६.महाप्रत्याख्यान,२७.भक्तपरिज्ञा,२८.तंदुल-वैचारिक,२९.संस्तारक,३०.गच्छाचार,३१.गणिविज्जा,३२.देवेंद्रस्तव- मूलं एवं छाया:

(किंचित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

मुनि दीपरत्नसागरेण पुन: संकलिता:

[८-१२] उपांगा: मूलं एवं वृत्ति:" नामेण (तथा)

[१-९] प्रकिर्णका: मूलं एवं संस्कृतछाया:" नामेण परिसमाप्ता:

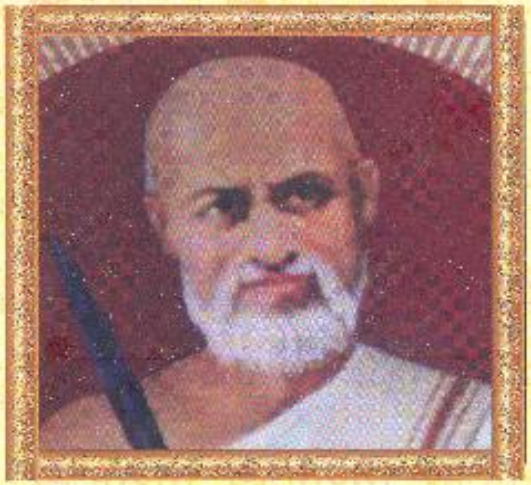
"सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि" श्रेणि, भाग-26


आगम
वाचना शताब्दी वर्ष

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

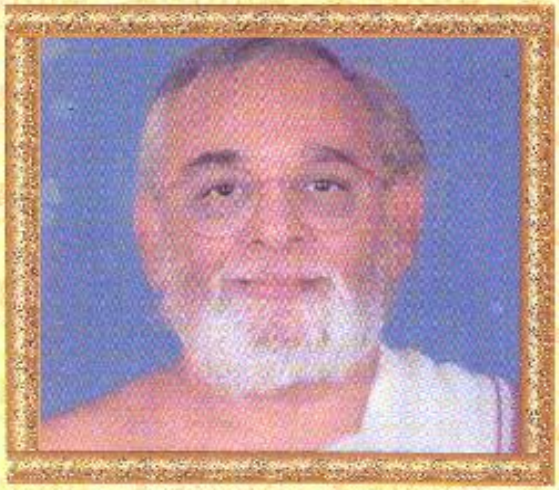
सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

मूल संशोधक



पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य
श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज

अभिनव-संकलनकर्ता

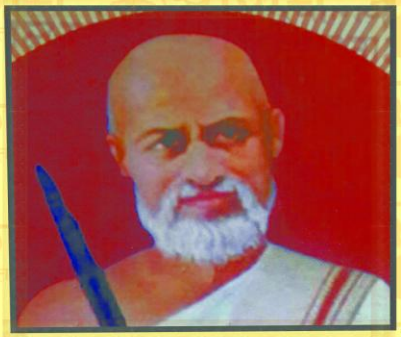


आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी
[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

प्रत-प्राप्ति और पेज-सेटिंग कर्ता : www.jainelibrary.org के चेरमन श्री प्रवीणभाई शाह, अमेरिका
मुद्रक : नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस अमदाबाद Mo 9825598855 / 9825306275

ईस प्रोजेक्ट के संपूर्ण-अनुदान-दाता





मूल संशोधक

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य

श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराजसाहेब

आगम १९-३२

१९.निरयावलिका,२०.कल्पवतंसिका,२१.पुष्पिका,२२.पुष्पचूलिका,२३.वृष्णिदशा मूलं एवं चंद्रसूरिजी विरचिता वृत्ति: २४.चतु:शरण,२५.आतुरप्रत्याख्यान,२६.महाप्रत्याख्यान,२७.भक्तपरिज्ञा,२८.तंदुलवैचारिक,२९.संस्तारक, ३०.गच्छाचार, ३१.गणिविज्जा,३२.देवेंद्रस्तव- मूलं एवं छाया

अभिनव-संकलनकर्ता

आगम दिवाकर **मुनिश्री दीपरत्नसागरजी**

[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

